॥ श्रीवीतरागायनमः ॥

* श्रीपाण्डवपुराणजी *

(भाषा छन्द बन्द)

जिसको

लाला जैनीलाल जैन मालिक जैन-ग्रन्थ प्रचारक पुस्तकालय मु० देवबन्द

ज़ि० सहारनपुर ने

अपने "जैनीलाल प्रिंटिंग" प्रेस मुक़ाम

देवबन्द

में

छपाकर प्रकाशित किया।

प्रथमवार १२००] वीराब्द २४४५ [मूल्य २॥)

पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय।

यह श्रावकाचार का अतिही उत्तम संस्कृत ग्रन्थ है सरल हिन्दी भाषा में टीका करके छपवाया है अहिंसा का स्वरूप इस ग्रन्थ में बहुत। वर्णन किया गया है मूल्य सिर्फ चार आना।

वसुनन्दी श्रावकाचार।

श्रावकाचार का यह भी बहुतही सुगम प्राकृत ग्रन्थ है प्रथम यह मराठी भाषाटीका सहित छपा था अब हिन्दुस्तानी भाषा में इसका सुगम अर्थ करके छपवाया है इसमें श्रावाचार के सर्व कथन को बहुत विस्तार के साथ वर्णन किया है और उपदेश भी उत्तम प्राप्त होता है सर्व भाईयों को यह ग्रन्थ अवश्य पढ़ना चाहिये मूल्य आठ आना।

भाषा पूजन संग्रह (भादों पाठ)

इस पुस्तकमें नित्यनेम तथाभादों मासकी सर्वही पूजन संग्र मोटे अक्षरों में शुद्धछपाई हैं इस पुस्तकके होते किसी अन्यपु की आवश्यक्ता नहीं आजतक ऐसा उत्तम संग्रह जिसमें सर्व हों छपा नहीं था यह उत्तम जिल्दसहित केवल ॥=) में ही

शत्रुंजय गिरिपूजन संग्रह जिल्द सहित उत्तम पुस्तक =)॥ सीता बारहमासा बड़ा ✓) सेठ सुदर्शनकी कथा बड़ी)॥। आलोचनापाठ भ त आत्मध्यान मङ्गलपाठ)॥ निश भोजन कथा)॥ न्यामतसिंह भजनमाला ॥) चौबीसी अखाड़ा चौबीस जिन स्तुति ✓) नेमनाथ का बारहमासा)॥ पा आत्मप्रकाश पद्य हिन्दी भाषा सहित ।=) देवशास्त्र गुरु पूजा संस्कृत प्राकृ भाषा सहित ≡) पुरुषार्थसिद्धयुपाय अर्थ सहित ।) जैनसुखदास भजनमाला। वसुनन्दी श्रावकाचार हिन्दी अर्थ सहित ॥)

नोट—१ एक प्रकार की एक साथ पांच प्रति मंगानेवालेको १ प्रति बिना मू और अधिक मंगानेवालेको और भी कमीशन दिया जायगा॥

नोट—२ हमारे पास सर्व जगह और सर्व प्रकार के छपे हुये जैनग्रंथ मौजूद जो सूचीपत्र आपको मिले चाहै वह किसी जगह का छपा हो प्र उसीको देखकर हमको लिखें हम उसी मूजिब पुस्तक भेजदेवेंगे व कमीशन काट देवेंगे। पुस्तकें मिलनेका पता—

लाला जैनीलाल जैन मालिक जैनग्रन्थ प्रचारक पुस्तकाल और "जैनीलाल प्रिंटिंगप्रेस" मु० देवबन्द ज़ि० सहारन

॥ श्रीः ॥

सर्व जगह और सर्वप्रकार के छपेहुये शुद्ध जैनग्रन्थ मंगानेका पता

लाला जैनीलाल जैन मालिक जैनग्रन्थ प्रचारक पुस्तकालय
मु० देवबन्द ज़ि० सहारनपुर

कुछ मुख्य २ ग्रन्थों की सूची है बाकी सर्वप्रकार की छोटी बड़ी पुस्तक मिलसक्ती हैं आपको बम्बई, इटावा, देवबन्द या अन्य किसी जगह के सूचीपत्र मूजिब पुस्तकें मंगानी हों तो आप उसी मूजब हमको लिख दीजिये हम आपको कमीशन काटकर पुस्तक भेज देवेंगे ॥

श्रीपांडवपुराण महानग्रन्थ	२॥)	द्रव्यसंग्रह भाषाटीका सहित	॥)
तेरहद्वीपपूजनपाठ विधान	२॥)	पूजनसंग्रह भाषा भादोंपाठ	॥=)
रत्नकरंडश्रावकाचार बड़ा	४)	पार्श्वपुराण भाषा	१।)
धर्म परीक्षा	१)	चौबीसीपाठ वृन्दावनकृत	१)
प्रवचनसार परमागम	१।)	प्रद्युम्न चारित्र	२॥)
परमात्मप्रकाश	।=)	वसुनन्दीश्रावकाचार	॥)
पुरुषार्थसिद्धोपाय	।)	ज्ञानार्णव	४)
भगवती आराधनासार	४)	समयसार आत्मख्याती	४)
जैनभजन दौलतराम	।=)	जैनभजन भागचन्दजी	।)
तथा भूधरदास	।-)	तथा द्यानतराय कृत	॥=)
तथा नैनसुखदास	॥)	बनारसीविलास	१।)

आराधनासार कथा कोष चौपाई बन्द जिसमें ११४ कथा बहुत उपयोगी हैं यह ग्रन्थ हर स्त्री पुरुषको अवश्य मंगाना चाहिये ३।)

आपका हितैषी—जैनीलाल जैन देवबन्द

शुक्लंच श्रावका चार भाषायां ॥ सवैया इकतीसा ॥

जीवा जीव आदि तत्व सम्यक निशै अर्थ देह भव भोग माहि बरनै निरभेद को । दान पूजा शील उपदेशै विस्तार कर, बन्ध मोक्ष हेतु फल भिन्न भनै भेदको । स्यात् अस्ति आदि नय, सात जे विख्यात अरु, भाषै प्राणी दया हित हिंसाके उच्छेदको । अंगी सरवांग संग, त्यागै होय सिद्ध अंग, सत्य कही कथा एही नाशै भव खेदको ॥ ८६ ॥

दोहा ।

ऋषि वशिष्ठ शुकव्यास अरु, दीपायन इन आदि ।
तिनकर भाषित कथन ये, सो विकथा बकवाद ॥९०॥
द्रव्य क्षेत्र अरु तीर्थ शुभ कालभाव फल और ।
प्रकृति सप्त ए अंग हैं, मुख्य कथा की ठौर ॥ ९१ ॥
ऐसी विधिये वर्ण के, कहियत हैं अब सोय ।
जो पुराण पावन पुरुष भारत नामा जोय ॥ ९२ ॥

श्री महावीर स्वामी का वर्णन । चौपाई ।

जम्बूद्वीप अनूपम लसै । पण्डित जन तामें बहु बसै ॥
भरत क्षेत्र अतिशोभित ताहि । आरजखण्ड सुमंडितयाहि ॥९३॥
देश विदेह विराजै जहां । सुर सम नर उपजें बहु तहां ।
सिद्धारथ नामा तहं भूप । नाथ बंश अवतार अनूप ॥ ९४ ॥
सर्व अर्थ की जाके सिद्धि । बरते नौनिधि आठोंऋद्धि ॥
तृशला रानी ताके गेह । रूपशील बहु सुन्दर तेह ॥ ९५ ॥
चेटक भूदर गिरिसमजान । तहंउपजी सुरसरित समान ।
सोसिद्धारथ सागर मिली । प्रीत कारणी गुणसों रली ॥ ९६॥
प्रथमहि ताके तट छयमास । सेवकरें सुर कन्या तास ।
रत्न वृष्टि जाके घर भई । धनेंद्र देवने आपुन ठई ॥९७॥
रात पाछली सोवत सही । सोलह स्वपने देखे तहीं ॥

[illegible] ॥ छप्पय [illegible] ॥

[illegible] जीव आदि तत्व [illegible] देह का भेद माहि [illegible] । दान पूजा शील उपदेशे विस्तार कर, बन्ध मोक्ष हेतु फल भिन्न भिन्न भेदनो । स्यात् अस्ति आदि नय, [illegible] विस्तार अरु, भाखे प्राणी दया हित हिंसाके उच्छेदको । अंगी सर्वांग संग, त्यागै होय सिद्ध अंग, सत्य कही कथा एही नाशै भव खेदको ॥ ८९ ॥

दोहा ।

[illegible] शुकव्यास अरु, द्वीपायन इन आदि ।
[illegible] कथन ये, सो विकथा बकवाद ॥९०॥
द्रव्य क्षेत्र अरु तीर्थ शुभ कालभाव फल और ।
[illegible] सात ये अंग हैं, मुख्य कथा की ठौर ॥ ९१ ॥
ऐसी विधि वर्णों के, कहियत हैं अब सोय ।
[illegible] पावन पुरुष भारत नाना जोय ॥ ९२ ॥

श्री महावीर स्वामी का वर्णन । चौपाई ।

जम्बूद्वीप अनूपम लसै । पण्डित जन तामें बहु बसै ॥
भरत क्षेत्र [illegible] नाहि । आरजखण्ड सुमंडित याहि ॥९३॥
देश विदेह विराजै जहां । सुर सम नर उपजैं बहु तहां ।
सिद्धारथ नामा तहं भूप । नाथ वंश अवतार अनूप ॥ ९४ ॥
सर्व अर्थ की जाको सिद्धि । बरते नौनिधि आठोंऋद्धि ॥
त्रिशला रानी ताके गेह । रूपशील बहु सुन्दर तेह ॥ ९५ ॥
चेटक भूपर गिरिसमजान । तहंउपजी सुरसरित समान ।
सो सिद्धारथ सागर मिली । प्रीत कारणी गुणसों रली ॥ ९६॥
प्रथमहि ताके तट छयमास । सेवकरें सुर कन्या तास ।
रत्न वृष्टि जाके घर भई । धनेंद्र देवने आपुन ठई ॥९७॥
रात पाछली सोवत सही । सोलह स्वपने देखे तहीं ॥

गज गोहर श्री माला दोय । चन्द्र सूर्य युगअम्बर लोय ॥६८॥
कुम्भयुग्म सरवर शुभजान । सागर अरु सिंहासन मान ।
व्योम जान ग्रह प्रथ्वी तना। मणि एसा गिनि धूमहि विना ॥६९॥
ये स्वपने शुभ देखत भई । जाग उठी तब पतिपे गई ।
हाथजोड़ फल पूछो जबै । उत्तर नृप सब भाषो तबै ॥१००॥
पुष्पोत्तर ते चय के देव । ताके गर्भ जुतिष्टो एव ।
सुदि अषाढ़ छटि गज नक्षत्र। कीने गर्भ कल्याणक तत्र ॥१०१॥
चैत्र चतुर्दशि सुदिके दिना । जन्मकल्याणक सुर पतिठना ।
वर्द्धमान जिन प्रगटो नाम । व्यापो यश जाको जगधाम ॥१०२॥
तीस वर्ष के भये कुमार । शुभ तरुनायो धारो सार ।
किंचित कारण तबही पाय । चित वैराग्य धरोअधिकाय ॥१०३॥
सब कुटम्ब सों ऐसे कही । एभव भोग विनेश्वर सही ।
लौकान्तिक सुर तबही आय । थुतिकरके सुरलोकहि जाय ॥१०४॥
तब सुरपति सुरगण सह आय। जिन पदवन्दे मस्तकनाय ।
फुनि न्हवाय भूषण पहराय। सुरगण भक्ति करीअधिकाय ॥१०५॥
चन्द्र प्रभा शिवका सुअनूप । चित्र विचित्रत नाना रूप ।
तापे चढ़ पुरबाहर गये । परिग्रह त्याग दिगम्बर भये ॥१०६॥
हस्तरिक्ष मृगसिर वदि दसे । सांझ समै जिन दीक्षालसे ।
षष्टम थापो मनको शोध । मन पर्यय तब उपजो बोध ॥ १०७॥
पारण हेत फिरे भू माहि । मौन रहे जिन बोले नाहि ।
बारह वर्ष व्यतीते जबै । जृम्भक ग्रामहि पहूंचे तबै ॥१०८॥
तह ऋजु कूला सरिता तीर । साल वृक्ष तल बैठे बीर ।
श्रेणी क्षपक चढ़े जिनराय । घाति कर्म घाते अधिकाय ॥१०९॥
तबही केवल उपजो तास । सकल लोक प्रति भासै जास ।
शोभित समवशरण जिनराय । गिर वैभारहि पहूंचे आय ॥११०॥
तरु अशोक धुनि दिव्य बखान । छत्र सिंहासन चामर जान ।

पुष्प वृष्टि भामंडल सजे। घन सम घोर सु दुंदुभि बजे ॥१११॥
सुरपति आपुनि लाये जसे। गौतमादि ते गण धर लसे।

श्रेणिक राजा का वर्णन ॥

मगध देश तहां शोभा वन्त। निवसे सुरसम नर जहंसन्त ॥११२॥
राज सदन पुर उत्तम तही। सर्व नगर को राजा वही।
भूतल भूषण मानो येहै। बहु मन्दिर कर शोभालहै ॥११३॥
श्रेणक भूपति है तिहि ठौर। नृपगण में गिनये सिरमौर।
सम्यक दृष्टि चित गंभीर। परम प्रतापी धीर सु बीर ॥११४॥
तृया चेलना जाके ग्रेह। आये जिन तिन जानो एह।
आदनाथ अयुध्यापुर ठये। भरत ताहि जो वंदन गये ॥११५॥
त्योंही श्रेणक भूपति चलो। दल चतुरंग सु साथहि रलो ॥
हिन हिनाट हय करते चले। गय मदमत्त सुगर्जत भले ॥१६॥
नाना भांति अरथ सो भरे। ऐसे रथ सारथि अनुसरे।
भटगण नृत्यत अतिही चले। बाजे बजे मधुर ध्वनि रले ॥१७॥
गावें यश बहु चारण भाट। ता श्रेणक के चलते बाट।
चलत राय सो पहुंचो तहां। समवशरण शुभ राजे जहां ॥१८॥
गज ऊपर ते उतरो तबै ॥ चमर छत्र तजदीने सबै।
सिंह पीठ पर जिनथिति करैं। छत्र तीन शिर शोभाधरैं ॥ ११९ ॥
चारु चतुरमुख चारों दिशा। रवि शम तेजहि बरते निशा।
सुरपति नरपति जाको नमें। तीनों भवन प्रशंसा पमें।
आठों अंग महीसों लाय। नमन कियो धर मनबचकाय ॥
पूजा कर थुति करो अनूप। सबविधि पूरण श्रेणक भूप ॥१२१॥

दोहा

स्तुति अरु स्तोत्र पुनि, स्तुति फल अवलोय
थुति आरम्भी बीर की, मन बच काय संजोय ॥१२२॥

चौपाई

तुम भगवंतभुवनपति सही। तुम थुतिकोसमरथकोउ नही ॥

सुरपतिभी असमर्थ हि भये। तुमगुण अन्त न काहू लये ॥ १२३ ॥
चित रहित चिन्मय चिद्रुप। इन्द्रिय वर्जित निर्मल रूप ॥
गंध विवर्जित ज्ञायक गंध। वेत्तारूप अरूप अमन्ध ॥ १२४ ॥
है नीरस अद्भुत रस ठनो। तुमतरुणाये रति पति हनो ॥
बालक क्रीड़ा कीनी जहां। देव नाग है आये तहां ॥ १२५ ॥
तिन को जीत तहां अभिराम। बीर नाथ यह पायो नाम ॥
बाल खेल तुम करते तहीं। मुनि युग नभते आये सही ॥ १२६ ॥
तुम देखत तिन संशय टरो। सन्मति नाम तिहारो धरो ॥
ज्ञानादिक गुण बढ़ते रहे। बर्द्धमान तुम तातें कहे ॥ १२७ ॥
ऐसो थुति कर बैठो राय। सभा मांहि नर कोठे जाय ॥
तब वानी श्री जिनवर तनी। होन लगी बहुगुण सों सनी ॥ १२८ ॥
तालु अधरगलहाले नाहिं। और अनक्षर गुण जिसमांहि ॥
धर्म विषै मन धारो भूप। द्वै विधि सों करुणारस कूप ॥ १२९ ॥
यति गोचर अरु श्रावक तना। आदि धर्म निरग्रंथहि भना ॥
ज्ञान आदि गुणतप को थान। ऐसो पद निर ग्रंथ हि जान ॥ १३० ॥
ग्रह गोचर सुन दूजो धर्म। दान शील तप साधे कर्म ॥
स्वर्ग तने सुख सोई लहै। शील सहित श्रावक व्रत गहै ॥ १३१ ॥
आहारादि चतुर्बिधि दान। त्रिविधिसुपात्राहि देहि सुजान ॥
भोग भूमि फल यासों लहै। फुनि जिन भावन भावत रहै ॥ १३२ ॥
निजस्वरूप चिद्रूप विचार। हृदय शुद्ध कर भावैं धार ॥
यही भावना जानो सही। यति श्रावक दोनो को कही ॥ १३३ ॥

दोहा

ऐसी विधिसों धर्म सव, सुन कर श्रेणक राय।
गमन कियो निज सदनको, बन्दे जिनवर पाय ॥ १३४ ॥

चौपाई

नृप गण कर सो सेवत महा। पहुंचो पुर नृप मंदिर जहां ॥

रमहि सुरानीचेलन संग। ज्यों रति साथ रमैहि अनंग ॥ १३५ ॥
चारू चित्त कर चिंतत रहे। जिन वच भाजन हिरदे लहे ॥
निरधन जनको दान सुदेत। सिद्ध अरथ शुभ साता हेत॥ १३६ ॥
बीर नाथ धुनि दिव्य बखान। देत चले भवि जन को दान ॥
करो सु स्वामी देश बिहार। जाको सुर पति सेवा धार ॥ १३७ ॥
अंग बंग कुरु जांगल ठये। कोशल और कलिंग जुगये ॥
महाराष्ट्र सोरठ कश्मीर। पराभीर कोकण गम्भीर ॥ १३८ ॥
मेद पाट भोटक करनाट। कर्ण कोस मालव बैराट ॥
इत्यादिक जे आरज देश। तहं जिन नाथ कियो परवेश ॥ १३९ ॥
भव्य रासि सम्बोदत बीर। देश मगध फुनि आये धीर ॥
गिरि बैभार बिभूषित भये। मानो रवि उदयाचल ठये ॥ १४० ॥
जिनविभूतिलखअलखअपार। विस्मयवन्तभयोबनपार ॥
नृप मंदिर सो तबही जाय। जहां सिंहासन बैठो राय ॥ १४१ ॥
श्वेत छत्र छवि रवि आताप। दूर करै सब टारै पाप ॥
मुकट मयूख नभस्तल गई। इंद्रधनुष रच शोभा ठई ॥ १४२ ॥
सूर्य चंद्र सम कुंडल कर्ण। रत्न जड़ित अति शोभन वर्ण ॥
हार मनोहर गलमें लसै। किरणों कर उडगन को हंसै ॥ १४३ ॥
दीरघ दृढ़ भुजबाजू बंध। अरु कर कटक हरै तनखंध ॥
भेट अनेक जु आवे लेय। तिन पै हित सों लोचन देय ॥ १४४ ॥
दंत मरीच अधिक ही धरैं। तिन कर भूतल उज्वल करैं ॥
मागध गुण गावें संगीत। तिन को सुनके धारें प्रीत ॥ १४५ ॥
नृप कुलीन बहु थुति कोकरैं। कर कृपान कर शोभा धरैं ॥
जान दियो दर बानो जबै। ऐसो भूपति देखो तबै ॥ १४६ ॥
नमस्कार कर तहं बनपाल। कीनी बिनती सुन भूपाल।
नाथ वंश में उपजो जोय। बीरनाथ जिन आये सोय ॥१४७॥

गिर वैभार विभूषित किय। फुनि भू मंडल अचरजालियो।
महा बाघनी करुणा ठान। गौसुत छीवे निज सुत जान ॥१४८॥
मारजार अरु मूषक रमैं। नाग नवल इक जागेपमैं ।
गज अरिशावक अरु गजराय। खेलें आपस में अधिकाय ॥१४९॥
सूके सरवर जलकर भरे। कोक मराल शब्द तहं करे।
सूके तरु फल फूले झूम। मानो जिन पद बन्दें घूम ॥१५०॥
तिसप्रभाव बन अचरजधरो। सब ऋतु के फल फूले भरो।
यह अचरज में देखो राय। तिनकी भेट करीमें आय ॥१५१॥

दोहा।

बचन सुने वन पालके, हरषो चित अतिभूप।
तृषावन्त ज्यों नरलहै, लखिके अमृत कूप ॥१५२॥

अडिल्लछन्द।

सुनत बचन बनपालहि राजा धाइके।
सात पैंड उठ प्रणमो जिन दिस जायके।
जा प्रसाद चित परमानन्द अनन्दियो।
ऐसे चरण कमल युग जिनके बन्दियो ॥१५३॥
वर्द्धमान गुणखान गुणी गुण पालहैं।
धर्मवन्त बृतवन्त सुसन्त दयाल हैं॥
सुजसदाय जगराय जयी जय अनुसरै।
नमस्कार कर जोर जेनुलदे सुतकरै॥ १५४ ॥

इति श्री मन्महाशीलाभरण भूषित जैनी नामकितायां लाला बुलाकी दास विरचितायां भारत भाषायां श्रेणिक जिनवन्दनोत्साह वर्णनोनाम प्रथमप्रभावः

राजाश्रेणकका वीर जिनकेसमवशरनमें

जाकर पाण्डव चरित्र सुनने को प्रश्नका करना ॥
और श्री महाराज का उत्तर में पाण्डवपुराण का वर्णन करना

मङ्गला चरण वीरनाथ नमस्कार ॥ सवैया तेईसा ॥

श्रीजिनवीर सदा जयवन्त सुसन्त अनन्त महाबलधारी ।
है अति नर्म लरो अरि कर्म हरो शिवशर्म धरो अघहारी ॥
ताहिके सेवत धारतहैं गति उत्तम अरु सब दुर्गति टारी ।
जैनुलदसुत ताकी करें थुतभक्ति संयुक्त अकीर्ति बिदारी॥

चौपाई ।

अबभूपति अति आनन्द धार । आनंद भेर दिवाई सार ।
सुनके आनंद पुरजन लयो । जिनवन्दन को उद्यत भयो ॥२॥
राजपुत्र पहरे सन्नाह । यात्रा हेत धरो उत्साह ।
करबंधन अश्वानि परज़ीन । स्वर्णमई बहु शोभा कीन ॥३॥
दंतघातते दिग्गज डरें । तिनगज ऊपर झूले परें ।
साजे सारथि रथ गण तबै । नृप मन्दिरते आये सबै ॥ ४ ॥
केइक घोड़े चढ़के गये । बृषभ पीठ पर केइकठये ॥
कोई इक बरछी करमें लिये । नृपति रूप गृह अंगनठये ॥ ५ ॥
नट नाटक कर नट गण नचैं। और निरत नर नारीसचैं ।
इस प्रकार सामग्री सबै । राजे नृप बहु शोभा फबै ॥ ६ ॥
भयसों रहित अभय सुत चलो । बारिषेण सुत दजोरलो ।
रानी चेलन निकसी साथ । बन्दन को जिन सन्मति नाथ ॥७॥
गजते उतर गये जिन तीर । समवशरण जहं बैठे बीर ।
बन्दन कर नर कोठे ठयो । धर्मसुनो बहु आनंद लयो ॥ ८ ॥
तब उठके नृप बन्दन ठान । गौतम गुरु सों बोले बान ।

अपगणकर वन्दित मुनिराज। नहि अगम्य कुछ तुनको काज ॥९॥
लोक प्रकाशक है तुम ज्ञान। सकल ऋद्धिकी एकहि खान।
परम नाथ तुम मेरे सही। गुरु अरु देव शरण हो तुही ॥१०॥
सर्व लोक वत्सलता रखे। तुम सर्वज्ञ तनुजहो भखे।
परम बन्धु तुमहो गुण ग्रेह। तुम उपदेश हरै सन्देह ॥११॥
परम पुरुष तुम सदा प्रसन्न। दयावान त्रिभुवन में धन्न।
एक बीनती तुम सें कहूं। पाण्डव चरित सुनो में चहूं ॥१२॥
पाण्डव पंच जगत विख्यात। कौन वंश उपजे किह भांत।
कुरु अन्वय किस जुगमें भयो। कौन कौन तिस बंसहि ठयो ॥१३॥
कौन कौन तीर्थंकर भये। कौन कौन शुभ चक्री ठये।
कुरवंशहि बरनो इहभाय। जो मेरो सब संशय जाय ॥१४॥
सुनियतहै परमत के मांहि। तासों संशय नाशैनांहि।
बंध्या के सुत शेखर भाय। नभ प्रशूनते गूंथे लाय ॥१५॥
सोई प्रथम कहतहूं अबै। सो सुनलीजे नीके सबै।
सांतन राजा युध के हेत। निकसो कबहूं सैन समेत ॥१६॥
तहां जानी रानी रतिकाल। आय उपाय रचो ततकाल।
तामे को इक भाजन लयो। अपनो बीरज तामें ठयो ॥१७॥
मुहर मूंद सो सिकरो गले। पत्री सहित सूबांधो भले॥
सो सिकरा अति दोरो जाय। आकर पहुंचा गंगाठाय ॥१८॥
सिकरा और तहां अनुसरो। अरुण पत्र लखि अतही लरो।
तिस पंछीने कीनो जोर। तामृपात्र तस डारो तोर ॥१९॥
मछली मुख में बीरज परो। ताके जठर गरभ अनुसरो।
सो मछली धींवर अनुसरी। उदर बिदारत निकसी नरी ॥२०॥
मच्छ गंधिका ताको नाम। पुत्री कर राखो निजधाम।
तनदुगंध सही नहिं गई। तब गंगा तट तानें ठई ॥ २१ ॥

द्रोणी वाहन तहं अनुसरै । उदर पूरणा तासों करै ॥
ऋषि पारासर आये तहां । कन्या नाव चलावै जहां ॥ २२ ॥
नाव बैठ गंगा में गये । तहं कन्या को भोगत भये ॥
ऋषि वीरज तें कन्या तही । द्वादश वरष गर्भ सों रही ॥ २३ ॥
व्यास नाम सुत ताने जनो । चारों बेद उदर में भनो ॥
जनमत ही सु जनक पै जाय । लई तपस्या तिन अधिकाय ॥ २४ ॥
सांतन राजा इतने तही । गंगा के तट आयो सही ॥
मच्छगंधिका देखी जबै । काम बान कर बींधो तबै ॥ २५ ॥
धीवर सों कह व्याही भूप । तासों द्वै सुत भये अनूप ॥
चित्र विचित्र कहाये सोय । यह एसी विधि कैसे होय ॥ २६ ॥
जो सांतन के वीरज भई । मच्छगन्धका पुत्रीठई ।
सो बिवाह क्यों कीनी प्रथा । करम करत यह आवे हया ॥२७॥
पानिगृहण तिन दोनों गहा । तात मरेतें नृपपद लहा ।
दोनों भ्रात मरणाता लही । चिन्ता तुरत व जननी भई ॥ २८ ॥
राजहेत तब आन्यो ब्यास । दोय बहू वे राची तास ॥
नयन अंध उपज्यो धृतरिष्ट । पाण्डु भयो जिन धारो कुष्ट ॥२९॥
विदुर चतुर तीजो अनुसरो । निंद्यकाज यह क्यों शिषिकरो ।
लघु भ्राता की बनिता जोय । पुत्री सम भाषे सबकोय ॥३०॥
अरु गंधारी शील अभंग । पिता विवाही सो अजसंग ॥
फुनिमारे अज ताके पिता । भूत होय सो तासों रता ॥ ३१ ॥
गर्भधरो गंधारी सोय । संगम देवनरी किम होय ।
तिनको गर्भ अपूरण मास । परतहि राखो फुनि कर पास ॥ ३२ ॥
पूरण मास व्यतीते जबै । सो कौरव तहां उपजे तबै ।
दुर्योधन है तिनमें आदि । यह उतपति है ऐसी बादि ॥ ३३ ॥
फुनि धृतराष्ट बिवाही सोय । गोलक सम यह जानोजोय ।
नभ प्रसून सम वर्णन करैं । मूढ़ लोक तिसहिरदे धरैं ॥ ३४ ॥

गोलक पांडु सुनामा भूप। स्वेत कुष्टकर कुष्टीरूप।
तिन कुन्ती अरु मन्द्री ब्याह। भुगते भोगरहै घरमाह ॥ ३५ ॥
एकसमें तिन दोनो संग। बनमें माडी मृगया रंग ॥
कैसे मृगया खेलें सोय। जीव दया के पालक जोय ॥ ३६ ॥
तापसि जुग तहां मृगतन धार। करन लगे रति क्रीड़ासार।
देख पांडु अति क्रोधित होय। बानमार मृग मारेसोय ॥ ३७ ॥
दियो तापसी नृपकोशृाप। ऐसोही तुम मरियो आप।
सुन शराप नृप अतिही लजा। नारी संगम ताने तजा ॥ ३८ ॥
सूर संग तब कुन्ती रमी। करणा बाट सुत करणाहि पमी।
सुनोनाथ कहुं देखे नाहिं। उपजे मानुष कर्णो माहिं ॥ ३९ ॥
फुनि कुन्ती भुगती सुरधर्म। जनो युधिष्टर तब शुभ कर्म।
पवनसंग जब कुन्ती रता। भयो भीम सुत भयको हता ॥ ४० ॥
मघवा संग जब मैथुन ठयो। अर्जुनसुत तब प्रापति भयो।
अश्वनीय सुर राच्यो जबै। मन्द्री सुत युग पाये तबै ॥ ४१ ॥
जिनका नाम नकुल सहदेव। जारज कुंड भये सो एव।
पूज्य पुरष पद दीजे देह। जारज कैसे कहिये तेह ॥ ४२ ॥
भीम महाबल प्रज्ञा वन्त। अल्प अहार जगत भासंत।
ताही को पुनि ऐसे कहै। दस मनको वह भोजन लहै ॥ ४३ ॥
गंगा के जल उपजा जोय। गुरु गांगेय कहाये सोय।
नदियों में नरलागे होन। तो तिरिया को ब्याहे कोन ॥ ४४ ॥
द्रोपदि सुता जो परगट सती। भाषै पंच पुरुष सोंरती।
जोई युधिष्टर सेतीरचे। तो औरन से कैसे मचे ॥ ४५ ॥
वे लघु देवर पुत्र समान। कैसे सेवैं तिन को जान।
अथवा लघु भ्राता सों रतै। तो क्यों जेठ युधिष्टर मतै ॥४६॥
जेठ पितामें भेदन रती। सो क्यों भोगे ह्वैके सती।
ऐसे सब ही गोतम स्वाम। बात कही है मिथ्या धाम ॥ ४७ ॥

इन बातन को ऐसे मेल । सिकता पीड़ निकारन तेल ।
नीर मथें जो घृतके हेत । ज्यों पाषाणहि बोवें खेत ॥ ४८ ॥
त्योंनहि नाशै संशय चित्त । पर पुराण के सुनते मित्त ।
तातें तुम अब सत्य पुराण । करुणा करके करहु बखान ॥ ४९ ॥
गंगाजल सम ऊज्वल घनो, गुरु गांगेय महातम भनो ॥
द्रोणाचारज बल उच्चरो । भीम पराक्रम बर्णन करो ॥ ५० ॥
कौन भांति उत्पाति हरिवंश । नाम नरायण बल सरबंश ।
पुरी द्वारका कैस बसी । जरासिंध लछि किह बिधि नसी ॥ ५१ ॥
कैसे पाण्डव कौरव बैर । क्यों दोनो मिल किनीगैर ।
पाण्डव पुत्र पर देशन गये । फेर आय निज ग्रह किमठये ॥ ५२ ॥
हरण द्रोपदी कहिये केम । दक्षिण मथुरा निवसे जेम ।
पाण्डव दिक्षा धरि अधिकाय । गिरि सैतुंजय पहुंचे आय ॥ ५३ ॥
जीतपरीषह केवल भयो । तीन यती पथ शिवको लयो ।
दोय अनुत्तर पहुंचे तबै । यह बृतांत सुनावो सबै ॥ ५५ ॥
प्रश्नमाल सुन बोले गणी । घन गर्जन सम भाषा भणी ॥
भाव मयूर आनंदित भये ॥ मुनिगण नृप परसन्नहि ठये ॥ ५६ ॥
यापुराण के सुनवे तनी । धारैं थे बहु इच्छा घनी ॥
सो अब सहजहि प्रापति भई । मनवांछा हम पूरण भई ॥ ५७ ॥
श्रेष्ट बचन तुम सम्यक दृष्टि । संशय नाशक पालकसृष्टि ॥
होय श्रेय सब सुनत पुराण । जिन शासन में एमबखान ॥ ५८ ॥
भरत आदिजेनृप गण भये । सब पुराण के श्रोता ठये ॥
देशावधि तिन तबहीलई । अंतकाल गति पंचम भई ॥ ५९ ॥
एम प्रशंसानृप की करैं । तब गुरु गोतम यों उच्चरैं ॥
भो श्रेणक तुम पूछी भलें । जाके सुनतदुरित सब टलें ॥ ६० ॥

श्री आदिनाथ स्वामी का बर्णन

यो पुराणक्षितिअतिविख्यात । सोअबबरणुंनीकीभांत ॥

याही क्षेत्र भरत की मही। भोग भूमि थिति क्षयजबलही ॥ ६१ ॥
एक पल्य को अष्टम अंश। तामें बीत गयो त्रतियांश ॥
तब मनुचौदह उपजे भले। कुल अनेक कारक गुण रले ॥ ६२ ॥
प्रथम हि प्राति श्रुतिसन्मतिमहां। क्षेमंकर क्षेमंधर जहां ॥
सीमंकर फुनि करधर जान। विपुल वाह अरुचक्षुपमान ॥ ६३ ॥
नवमयशर्स्वीफुनिअभिचन्द। शशिदुतिअरुमरुसुरसुखकन्द॥
जित प्रसेन तेरम जुपुनीत। चौदह मे न्रपनाभि सुमीत ॥ ६४ ॥
सकल आपदा हर बलबंड। हामाधिक ये तीनो, दंड ॥
नाभि सदन मरुदेवीरानि। खान गुणन कीअमृतबानि ॥ ६५ ॥
तिनके हेत अयोध्यापुरी। सुरपति आय बसाईखरी ॥
इंद्रादेश लहो धन ऐश। मणि बरषाये नाभि निवेश ॥ ६६ ॥
चयो देव सरवारथ सिद्धि। मरुदेवी उर निवसोविद्धि ॥
बदि अषाढ़ दिन दुतयाभली। छप्पन देवी सेवारली ॥ ६७ ॥
सुतनव मास व्यतीते जना। चैत्र बदी नवमी केदिना ॥
तबहीसुरपति आसन हलो। जानअवधसों सुरगणचलो ॥ ६८ ॥
ऐरापति चढ़आयो इन्द्र। द्वार जहां है नाभि नरिन्द्र ॥
जिन लावन को भेजी शची। जायतहां अति आनंदमची ॥ ६९ ॥
है प्रच्छन थिति कीनी तहां। अम्बा सहित जिनेश्वरजहां।
लीनो जिन तिस निद्रादई। राखो शिशु रचि माया मई ॥ ७० ॥
जिन तन परस लयोआनन्द। देखदेव आनन अरविन्द।
सुरपति कर तिन दीनो एम। उदयाचल रवि प्राची जेम ॥ ७१ ॥
इन्द्र चलो तब सुरगण साथ। क्षणमेंते पहुंचे गिरिनाथ।
पाण्डुक बनमेंपाण्डुकशिला। तहां सिंहासनशोभा रला ॥ ७२ ॥
तिस ऊपर शिशुथापोभले। मनबचकाय सु भावनिरले।
सुबरण मयघटसहस सम्हार। लेकर भर क्षीरोदधि वार॥ ७३ ॥
न्हवन करो बादित्र बजाय। श्रुतिकर फनिभूषण पहराय।

ऋषभ नाम धर गजबैठाय । पुरमें सुरपति पहुंचो आय ॥ ७४ ॥
नाभ निकट मरु देवी जहां । नींद निवार सुप्रणामो तहां ।
बालक अर्क सम बालक दयो । मेरुकथा सव भाषत भयो ॥७५॥
नट नटनी नट नाटक नटो । उत्कट विकट सुघाट हि घटो ।
जिन सेवा को सुरगण राख । नृप आज्ञा लीनी केभाख ॥ ७६ ॥
जन्म कल्याणक ऐसे ठयो । तवशतयज्वा नाकहि गयो ।
तीनज्ञान धारक जिनवाल । बाढ़े दिनदिन तन गुणमाल ॥७७॥
धारा जोवन ज्याहीं सोय । जसवति नन्द सुनन्दा दोय ।
कल्प वृक्ष क्षय हूवे जबै । क्षीण प्रजा सब हूई तबै ॥ ७८ ॥
नाभ निकट सब तबही जाय । करो पुकार भणों इह भाय ।
क्षुधावन्त हम सुन नृप एम । भोजन बिन तन राखें केम ॥ ७९ ॥
जनक समान कल्प तरु गये । क्षीण क्षुधाकर तिनबिन भये ।
जिहविधि उदर भरें हम भूप । सोई विधि अब कहो अनूप ॥८०॥
ऐसी सुन नृप शिखदे जबै । अपने सुताहि पठाये सबै ।
नाभिजके पद पकड़ेजाय । बहुविधि भक्तिकरी मनलाय ॥८१॥
जब तुम गर्भ कल्याणक भयो । हेम रत्न मय जग तब ठयो ।
तबते दारिद देखो नहीं । नाट गयो अकि नाशो तहीं ॥ ८२ ॥
अब हम भूख लगीहै नाथ। जिहि विधि जाय सुकीजे नाथ ।
देव रहैं तुम आज्ञा माहि । ताते तुम कुछ दुलर्भ नाहि ॥ ८३ ॥
तुम बैठे जो हम मरजांहि । कृपावन्त तुम केम कहांहि ।
ताते हमको पालो भले । हम तन क्षीण क्षुदा सों हले ॥ ८४ ॥
दीन बचन सुन करुणा ठान । तिन प्रति एम भणो भगवान ।
एजु मही रुह धौरे मही । नाना गुणाकर पूरण सही ॥ ८५ ॥
केइक भक्षण करने योग्य । और अभक्ष अनेक अयोग ।
भक्ष भेद तहं प्रथमहि कहे । ब्रक्षबेल तृण त्रियविधि लहे ॥ ८६ ॥
वृक्षनके अब सुनिये नाम । जम्बु जम्भीरी कदली आम ।

बीजा पुरुष रेजूरी भली । राजा दन पनसाली गली ॥ ८७॥
कैथ कमुक नारंगीढेर । महुवा चिंचण तेंदू बेर ।
चर्बा और मिलावे घणे । श्रीफल आदिक तरुये भणे ॥ ८८ ॥
दाख चिमेटा पेठेतने । इन आदिक बहु वेलें घने ।
श्रवण धार अब सुन तिन भेद । नासे जैमक्षुदाको खेद ॥ ८६ ॥
चावल मूंग उड़द रेवास । गेहूं सिरसों तिलकी रास ।
कांगू कोदों कुलथी चना । मटर मसूरी अरहर घना ॥ ९० ॥
मोठ बाजरा और जवार । जव आदिक ए अन्न हैं सार ॥
इन का भोजन कीजे भले । रोग क्षुदादिक तासों टलै ॥ ९१ ॥
भांडे और रसोई पाक । सब सिखलाए बुधि सों ताक ।
असि माशि कृषि अरु विद्याजान । वाणिज अरु पशु पालनठान॥९२॥
ये षट कर्म तनो उपदेश । प्रजा हेत कीनो वृषभेस ।
भरत आदि शत सुत गुण जुता । ब्राह्मी सुंदरि दोऊसुता ॥ ९३ ॥
इन को सीखदई अधिकाय । ज्ञान कला गुणदे बहुभाय ।
शुभहि महुरत लग्न विचार । राजदियो जब जनकवियार ॥ ९४ ॥
सुरपति सों तब नाभिज कही । देशथापना कीजे सही ।
कोशल आदिक उत्तम देश । निरमापित कीने सुरएश ॥९५॥
खेट द्रोण पुरपट्टन ग्राम । कर्वट बाहन बहु अभिराम ।
बहुत भेद इन आदिक लसें । वर्ण तीन शुभ तामें वसें ॥ ९६ ॥
क्षत्री वैश्य बरन शुभ जान । तीजोशूद्र अशुभ की खान ।
क्षत्री भेद अब सुनिये भले । चारवंश शुभतामें रले ॥ ९७ ॥
आद इक्ष्वाकु कहे सुर ज्ञान । दूजो शुभ कुरुवंश बखान ।
पुनि हरिवंश महा अभिराम । नाथ वंश चोथा गुणधाम ॥ ९८ ॥
ऋषभ देव तह कुरुके वंश । थापे नृप युग सोम श्रेयंश ।
देश महा कुरु जांगल नाम । रम्य मनोहर सुखको धाम ॥ ९९ ॥
हलो जु करिके जोती धरा । शोभित खेत बिराजे बरा ।

उन्नत गिरि की शोभालहै। बहु खलियान जु ऐसे वहैं ॥१००॥
शुभ नाजनकी जेजे जात। लागरहे बहु तिनकी व्रात।
उत्त[illegible]जे तरु की जात। तिनकर शोभित बनबहु भांत ॥१०१॥
नीर भरे सरवर हैं जहां। पंकज बन बहु शोभें तहां।
सब देशन में अधिपति यहै। बहु बिभूति कर शोभालहै ॥१०२॥
कुरु भूसम जहां भू अभिराम। ताहीते कुरु जांगल नाम।
उपजे नर जहं कुल निरमला। धर्म वन्त धारैं बहुकला ॥१०३॥
गज पुर तहं गज गण करभरे। तिन गर्जन सुनि अरिमदहरे।
लोकांतिक गिर सम आकार। चहूंओर जाके प्राकार ॥१०४॥
लवणो दधि सम गहरी खरी। ऐसी परिषा जलसों भरी।
मंदिर उज्जल अतिहीं वने। स्वेत सुधा सों धवलत ठने ॥१०५॥
जिन मंदिर जहं शोभा भरे। सुरनर तिरयग मनको हरे॥
बाजे बाजैं अरु कर केतु। हाबाहि भव्य बुलावन हेतु ॥१०६॥
धुजा किंकनी बाजे घनी। तिनहु बाणी ऐसी ठनी।
ज्यों हम उन्नत सबते खरे। एसी बिधि भवि जन अनुसरे ॥१०७॥
लोक सर्व दाता धनवंत। जितमत्सर ज्ञानी शुभसन्त।
भंग एक जहं केसों माहि और भंग कहुं बरते नाहि ॥ १०८ ॥
पाणि ग्रहन में जाचन लहै। ताडनि एक मृदंग न बहै।
पतन एक तरु पल्लव होय। फुनि लोपै की प्रत्यय जोय ॥१०९॥
दान विषै जहं सरधा धरैं। चोरी यह परचित को हरैं।
नाभि माहि जहं अतिनीचत्व। पाथर मांहि कहो विषमत्व ॥११०॥
ज्ञान हीन नर कोई नहीं। शील रहित अरु दूषित नहीं।
फल फूलन कर तरु जहं भरे। मन वांछित धन जन अनुसरे ॥१११
दान दया कर नाशैं पाप। तातैं होय न शोक अताप।
हाटन में रतनन की रास। जन प्रवीन बहु परखें तास ॥११२॥
नित्य अठाही पूजा महां। मंगल हेत करैं भवि तहां।

ग्रहमें सब जन मंगल काज । निशि में बालें दीपक साज ॥११३॥
चन्द्रमुखी घर वनिता तहीं । ताही तें तम नाशो सही ।
पान उगाल तनी जहं कीच । चल न सकै गज आंगन बीच ॥११४॥
योषित चरण लगी कस्तूरि । आय लगे तहां भौंरा भूरि ।
मधुर शब्द ते अतिही करें । कामीजन प्रतियों उच्चरें ॥११५॥
बनिता चरण कमल चित धार । ज्यों हम त्यों तुम सेवा सार ।
ऐसे नगर विषे वृषभेष । थापे सोम श्रीयंश नरेश ॥ ११६ ॥
सो कुरुवंश विभूषण भले । दोनों भ्राता सुख सों रले ।
सोम प्रिया तहं लक्ष्मी मती । सोम मुखी शुभ लक्षणवती ॥११७॥
जो प्रशस्त्र अति पद विन्यास । अलंकार परि भूषित जास ।
गूढ़ अर्थ गुण गौरव रमा । निर दूषण जिन भारत समा ॥११८॥
तार हार कुंडल के यूर । मेखल मुदरी शोभा पूर ।
मृग नयनी शशि बदनी भली । अष्टम चन्द्र सुमस्तक रली ॥११९॥
श्री फल पक्क पयोधर धरे । दैव रची तिय गण में सरे ।
जय कुमार सुत तिनके भयो । जयवन्ता भय हन्ता ठयो ॥१२०॥
ऋषभ देव अब बसुधा पाल । न्यायवन्त बहु वर गुणमाल ।
सुना सीर तब आज्ञा पाय । नृत्य रचो नट पेटक आय ॥१२१॥
नाचैं नीलज हो अपसरा । जिनवर आगे गुणकी धरा ।
हाव भाव सुविचक्षण महा । चंचल चाल चलै पग तहां ॥१२२॥
बीणा बंश बजै बरनाद । तरल ताल की लय मरजाद ।
धुनि समान गावैं संगीत । निरतत मानो राखी चीत ॥१२३॥
चित्रकार चीतो चित्राम । देखत थकित रही बाराम ।
आयु भई क्षय ताही ठाय । नाचत ही सो गई बिलाय ॥१२४॥
मूल बिना ज्यों तरवर ढरै । आयु बिना ज्यों प्राणी मरै ।
ताकी बिपत लखी जिनराय । चित बैराग जगो अधिकाय १२५
बिनाशीक जग जानों ऐम । अंजुलि को जल नाशे जेम ।

अहो कौन याभवमेंजीव । जीयो चाहै मूढ़ सदीव ॥ १२६ ॥
जलदपटल सम विनशैमहा । जगथितिमें मत कीजिकहा ।
यो बिचार चित में चिरकाल । राज दियो सुतभरत विशाल ॥ १२७ ॥
पोदनपुर भुजबल नृप ठये । देश देश अरु सुत सब गये ।
सुर न्हवाय भूषण पहिराय । शिवका चढ़ पहुंचे बनठाय ॥ १२८ ॥
बट तरुधर थिति नवमीदिना । चैत्र वदी कच लुंचे जिना ।
थापो योगतहांछहमास । भस्म करी बहुकलमष रास ॥ १२९ ॥
बीतो योग चले जिनराय । सब जन याके वन्दें पाय ।
दान तनी बिध जानें नाहि । और वस्तु ले भेटें ताहि ॥ १३० ॥
जहां जहां जिन पहुंचजाय । ले ले भेट मिले तहं आय ।
बर बाजहि उन्नत गजराज । कन्या मणि बस नासनसाज ॥ १३१ ॥
मुक्ताफल युत भूषण भले । आसन सयनकुशुमगन रले ।
इनको लेजिन आगे करैं । मुखसों बिनती बहुउच्चरैं ॥ १३२ ॥
मौन सहिताविहरन षटमास । आकर पहुंचे गजपुर पास ।
राय श्रीयंश निशामें तहां । सोवत सुपने देखे महा ॥ १३३ ॥
मेरु कल्पतरु अरु शशिसूर । सागर देखो गहरो भूर ।
नींद तजी नृप जागो जबै । सोम भ्रात सूं भाषो तबै ॥१३४॥
सोम भणे सुन भ्राता एम । इन स्वप्ननि को फल है जेम ।
बहु उतंग सुर गिरितें भाय । सुरतरुतें मन बांछित दाय ॥ १३५ ॥
शशितें जग आनंदित सही । सूरजतें सु प्रतापी वही ।
सागरतें जु अपारहि कहा । कोईकनर आवैगा महा ॥ १३६॥
तोलों मध्य दिवस के तहीं । ताके गृह आये जिनसही ।
तिह देखत पूरब भवज्ञान । उपजो तिनको आनन्द खान ॥१३७॥
जिन पद बन्दे दोनो भ्रात । बिधि अहार करी विख्यात ।
तीज दिवस बैशाखहि मास । इक्षु तनोरस दीनो तास ॥ १३८ ॥
गृह आंगन ताके तिन धरी । सुरगण कृत बसुधारा परी ।

पारण करि जिन बनकोगये । मौनसहित मनसोधन ठये ॥१३९॥
बरष हजार बितीते सही । फागुणबदि एकादशि लही ।
अद्भुत केवल उपजो जबै । उपजो चक्र भरतके तबै ॥ १४० ॥
खंड छहों साधन को चलो । बलमंडित दल साथहि रलो ।
एक सहस सुर रक्षित होय । सैनापति जय कीनो सोयं ॥१४१॥
साठ हजार बरष में जीत । आयो अवध भरत नृपमीत ।
रत्न चतुर्दश नवनिधि साज । भुगते भोग करै शुभराज ॥१४२॥

दोहा ।

मेघेश्वर गण जीतके, आयो जय निजधाम ॥
भरत धरो तबहेतसों, मेघेश्वरशुभनाम ॥ १४३ ॥
जलदेश्वर आनंद धर, बैठो गजपुर आय ॥
राज करै सो नीत मग, नितबन्दै जिनपाय ॥१४४॥

अडिल्लछन्द ॥

सुर नर मोहित होहि घने सुर दर सही ।
शुद्धचित्त शुभमीत मनोहर सरसही ॥
सकल जीत अरि नीत निवारे अघसबै ॥
चक्रवर्ति हृदयाम्बुज सूरज समफबै ॥ १४५ ॥
धर्मयोग जय जीतो सुरगण पलक में ॥
नाम पाय मेघेश्वर प्रगटो खलक में ।
धर्मवन्त नर जगमें सबकर मानिये ॥
जेनुलदे सुत सीख सुमन में आनये ॥ १४६ ॥

इति श्री मन्नमहाशीला भरण भूषित जैनी नामाङ्कितायां लाला बुलाकी दास बिरचितायां भारत भाषायां जय कुमार सैनापती पद प्राप्ति बर्णनो नाम द्वितिय प्रभावः ॥ २ ॥

अथ जय कुमार का बनक्रीड़ा करना

और नागनी के विचित्र दृश्यका देखना।

मगला चरण श्री आदिनाथ स्तुति ॥ सवैया तेईसा ॥

श्रीव्रष नायक सो सुखदायक अरु दुख छायक है व्रषदाई,
है बुद्धि आदि युगादि जिनेश्वर रिद्धि सुसिद्धि की प्रीति बढ़ाई।
होय दिगम्बर संग तजो जिन नासे अनंग अभंग महाई,
धारें महा मति टार मिथ्या मति जाकी सुरपति कीरति गाई॥

चौपाई।

सोम तने अरु चोदह पूत। बिजयादिक वहु गुण संयूत।
जिनमें अग्रज जय सुखदाय। पंद्रह सुतकर राजै राज॥ २॥
तब श्रीयांस पे राजबटाय। जयसुतको सब सोंपोराय॥ ३॥
ऋषभ निकट सो आपुनगयो॥ परिग्रह त्याग दिगम्बर भयो॥
बसुबिधि कर्म बिनाशे सबै॥ सोम परम पद पहुचों तबै॥ ४॥
राजकरै जय चाचा संग॥ भोगत भोग सुनाना रंग॥
एक समय सो बनमें जाय॥ क्रीड़ा करत लखे मुनिराय॥ ५
धर्म सुनत तहं अहि युगसार शुभ उपदेश सुनो चितधार।
सुनके धर्म नगर नृपठये नाग युगल ग्रह अपने गये ६।
बिजुली सों मरके वह नाग उपजो नाग अमर बड़भाग।
गजचढ़ बनमें पुनि जय आय। ताअहि की तिय देखीराय ७
नीच नाग संग रमते लखी क्रोध धरो नृप ऐसी अखी।
दोधीकर कमल सोंमार। सब लोगन में कीनोख्वार॥ ८॥
दंपति भाग चले वेजबै। प्यादों ने मिल मारे तबै।
लाठी पत्थर मारें ईंट। दोनो मार लिये घन पीट॥ ९॥
होय कुचलनी जो जग माहि। सबजनमारो चाहें ताहि।
भपति धारे जापर कोप। कौन बचावै ताको लोप॥ १०॥

कुचलन दोष कहे जग माहिं। चोरी जारी कीजे नाहिं।
धारे इनको जो नर नीच। होय खराब सकल जगबीच ॥११॥
इनसों रहित रहै नर वही। पूजनीक पद पावै सही।
नाग मरो वहु वेदन पाय। सुर सरिता में उपजो जाय ॥ १२ ॥
काली नाम सुजल की सुरी। क्रोध धरे दुख दाता बुरी।
फुनि पीछे वह नागन मरी। धर्म ध्यान कर सुरगति बरी॥१३॥
सो उपजी अपने पिय पास। नाग कुमार प्रिया सुख रास।
अपनी मृत्यु कही तिह ठाय। जयकुमार की चुगली खाय ॥१४॥
सुनके क्रोध अमर चित लयो। मारन जयको तिस गृहगयो।
सह न सको तिर जग भौरंच। तीयके पर भव सुनिके संच ॥१५॥
गेह बसत जय निशमें सही। कौतुक धार प्रिया सों सही।
सुन रानी जो देखो आज। कीनो नागनि खोटो काज ॥ १६ ॥
उत्तम नागतनी जो तिया। नीच सर्प तिन भरता किया।
नागनि चरित अखल नृप कहो। श्रीमति रानी सुन चित लहो॥१७॥
नाग कुमार सुनो बिरतंत। क्रोध तजो धर समता संत।
कहां नाग में तामस रूप। उत्तम क्षम कहं धर्म अनूप ॥ १८ ॥
धर्म सहाय भयो में देव। यासम और नहीं सुख हेव।
इम विचार जय पूजो तही। रत्न अभूषण देकर सही ॥१६॥
फुनि सुर अपनो कहि परपंच। कपट न राखो हिरदे रंच।
सुन जयराय कह्यो में तोहि। अपने काज सुमरियो मोहि ॥२०॥
ऐसे कहि गृह अपने गयो। चित कल्पित सुख भोगत भयो।
त्याग भ्रमन जय मुनि सम होय। नेम धरम शुभ पाले सोय ॥२१॥

राजा अकंपन की पुत्री सुलोचना का जन्म और उस के स्वयम्बर का वर्णन

और कथा अब सुनिये सही। काशी देश विराजे मही।
बिन आयास सकल सुख देह। भोग भूमि भू मानो एह॥२२॥
नगर बनारस तामें लसें। स्वेत सदन सो मानो हंसे।

मंदिर सोहैं स्वर्गविमान । अमर पुरी सम नगरी जान ॥२३॥
राय अकंपन पाति तिहि ठौर । ताके तेज डरें नृप और ।
नाम सुपरभा रानी एम । हिम कर संग किरण हैं जेम ॥२४॥
एक सहस सुत ताके भये । उपमा रवि सशि सुरकी लये ।
हेमागद अरु दुतीय सुकेत । अति सुकांत महा गुण खेत ॥२५॥
इन आदिक सुत उन्नत महां । दोय सुता शुभ राजैं तहां ।
हिमवन गिरि सर पदमहि भई । गंगासिन्धु सु समता लई ॥२६॥
नाम सुलोचना गुणकी भरी । लक्ष्मी मती है दूजी खरी ।
सो सुलोचना अधिक अनूप । तासम और न धारै रूप ॥२७॥

सवैया इकतीसा

सो है लोल लोचना सुलोचनाहि लोचन सों, सुरी है सुलोचना न लोचन अचल सों । शील सरिता सुकूल कमला अमल यही, कही कोऊ कमलान कर्दम अमल सों ॥ उर्वसी तिलोत्तमा मनोरमा सु केसी भनी, रंभा आदि रची सुर सभा में सकल सों । तातें यह सोच पचि बूलचन्द शचिहू तें, रचि है विरंच सुचि अति ही अनल सों ॥ २८ ॥

चौपाई

सुमती नामा ताकी धाय । सकल कला गुण पूरण ठाय ।
सुकल निशा शशि रेखा यथा । धाय बढ़ावे ताको तथा ॥२९॥
दिवस अठाई फागुण मास । जिनवर पूज करो उपवास ।
लई आसिका नृप पै गई । अंजुलि जोर पिता सो लई ॥३०॥
बहुत विनय सों आनंद धार । आसिक शीश धरी सुखकार ।
व्रत कर छीन सुतनुजा लखी । तासों नरपति ऐसे अखी ॥३१॥
हे पुत्री तुम पारण करो । बेगहि जाहु सदन अनुसरो ।
ऐसे कहि सो कीनी विदा । जोबन वन्त सुदेखी तदा॥३२॥
मंत्री भूप बुलाये सबै । नाम श्रुतारथ आदि हि फबै ।

दुतिय सिद्धारथ है बुधि वन्त । सर्वारथ बहु ज्ञाता सन्त ॥३३॥
चौथो सुमति महा मति रूप । तिन प्रति पूछी ऐसे भूप ।
यह कन्या अब दीजे काहि ! प्रथम श्रुतारथ बोलो ताहि ॥३४॥
भरत राय सुत है बुधिवान । अर्क जसावर बहु गुणवान ।
बर कुल रूप तरुण बय धार । विद्या ब्रत श्री पौरुष सार ॥३५॥
जे गुण बरके बरने सही । ते सब इकठे धारै वही ।
ऐसी सुन सिद्धारथ भने सांच कही पै नाही बने ॥ ३६ ॥

दोहा ॥

होय बड़ो जो आप तें, ताके संग सम्बन्ध ।
पण्डित जन चाहें नहीं, चाहें मूरख अन्ध ॥ ३७ ॥
आप बराबर देख के, सनबन्ध करौ विचार ।
जग में यश जे विस्तरे, अरु सुख होय अपार ॥ ३८ ॥

चौपाई ।

एय प्रभंजन रथ चर और । बल बज्रायुध है तिह ठौर ।
अरु मेघेश्वर भूभुज तहां। इन आदिक अरु भूपति महां ॥३९॥
इन में जो चित आवेताहि । कन्या अपनी दीजे व्याहि ।
ऐसी सुन सर्वारथ कही । भूचर सनबंधहै हमसही ॥ ४० ॥
नूतन सनबंध खेचर साथ। बहु सुख दायक है नरनाथ।
सुन के सुमति भणें योनाहि। बिधी स्वयम्बर रचियेयाहि ॥४१॥
सब सुख लायक विधिहै यही । भूप अकम्पन मानीसही ।
हेमांगद अरु तियहि बुलाय । तिनसो मंत्रकरो यहराय ॥४२॥
तिन हू मानो नीको एह । मानें नाथ बचन सब गेह ।
स्वामि बचन जो मानैं नांहि । सोई निवसे बहुदुख मांहि ॥४३॥

दोहा ।

भूप अकम्पन चहुदिशा, भजे चतुर सुदूत ।
भूपति हैं जे भूबिषे, आवेंदल संयुत ॥ ४४ ॥

शुभ सम्बन्ध तब जानके, चित्रांगद सुरराय ।
स्वर्गलोक सौधर्म ते, बोलो नृपसों आय ॥ ४५ ॥

सोरठा ।

हे राजन के राज, हमभी आये प्रीतिसों ।
याके देखन काज, रचि स्वयम्बर बिधि तुमें ॥ ४६ ॥

दोहा ।

ऐसे कहकर पुर निकट, ब्रह्म स्थान बिचार ।
पूरब मुख अरु गिरद मह, बहु भूमिक रचसार ॥ ४७ ॥
बुद्धिवन्त सु विशुद्ध दृग, प्रमुदित चित्त प्रवीन ।
मण्डप रचो स्वयम्बरा, तिष्टो सुर सुखलीन ॥ ४८ ॥

चौपाई छन्द ।

तबही नृप सब आये तिते । गिर सागरलों बरतें जिते ।
ताके लेख अरथ को जान । पहुंचे आय बनारस थान ॥ ४९ ॥
यथायोग सिंहासन देख । बैठे नृपगण उत्तम भेख ।
इन्द्र सभाहै मानो यँही । सुर सम सोभा राजे सही ॥ ५० ॥
अब सलोचना उद्यम धरो । श्माना भूषण मण्डन करो ।
सिद्ध सुमर जिन अर्चाकरी । सिद्ध आसिका माथे धरी ॥ ५१ ॥
महेंद्र दत्तहै कंचुकी नाम । रूपवन्त बहु गुणकी धाम ।
सो कन्या को रथहि चढ़ाय । मंडप मांहीं पहुंची आय ॥ ५२ ॥
रानी सहित सुराजा तबै । आये पुरतें शोभा फबै ।
मण्डप निकटहि बैठे सही । इन्द्रशची सम राजें तही ॥ ५३ ॥
हेमांगद सानुज तहं गयो । चहुंदिश मण्डप हितसों ठयो ।
सब दल को सन्नाह संजोय । दुष्टन को भय दाता सोय ॥ ५४ ॥
कन्या को अब सुन बिरतन्त । बैठी कंचुकी रथ शोभन्त ।
माला रतनन की कर गहै । कन्या प्रति तहं ऐसी कहै ॥ ५५ ॥
खग गण को दिखलावै वही । शोभा तिनको बरनत सही ।

नमिको पूत सुनमिक है महा । दक्षिण श्रेणि सुनायक यहा ॥५६॥
जो यह रुचै सुतो मन माहि । तो अब बरिये चलिये याहि ।
पुत्र विनमि को यह है और । सुविनमि नामा खग शिरमौर ॥५७॥
उत्तर श्रेणी अधिपति यही । यासम जगमें खग अरु नहीं ।
इन आदिक खगसब दिखलाय । फिर कंचुकि बोली यहभाय ।५८।
अर्क कीर्ति यह चक्री पूत । सूर प्रतापी गुण संयूत ।
हे कन्या जो बहु सुख चहै । चित रोचै तो बरिये यहै ॥ ५९ ॥
ताको भी तजि आगें जली । जयको देखो विभ्रम रली ।
देखत रूप सु बस ह्वै गई । होय थकी तहं ठाढ़ी भई ॥६०॥

दोहा ।

पिक बसन्त तज तरु सकल, बैठे बर सहकार ।
त्यों सुलोचना भूप गण, त्याग बरो जय मार ॥६१॥
तहं रत चित अति जान के, बोली कंचुकि बात ।
सोम पुत्र परवीण अति, यह जय जग विख्यात ॥६२॥
किहि विधि बरनों रूप इस, मन्मथ तें अति येह ।
कर कङ्कण अवलोक नें, दर्पण केम करेह ॥ ६३ ॥
उतर भरतहि जाय सुर, जीतो मेघ कुमार ।
सिंहनाद इन जब करो, टरो मेघ सुनिहार ॥ ६४ ॥
तब चक्री द्वै भुजनिसों, बीर पट्ट शिर बांध ।
नाम दयो मेघेश्वरो, सेनापति पद साध ॥ ६५ ॥
इतनी महिमा कंचुकी, बरनी विविधि बखान ।
अति चित हरषी माननी, सुनत श्रवण परवान ॥६६॥

सुलोचना का जय कुमार के कण्ठमें बरमाला का डालना और अर्ककीर्ति का क्रोधित हो जय कुमार साथ युद्धका करना

सोरठा ॥

रथ ते उतरी एह, कंचुकि कर ते माल ले ।
पूरब जन्म सनेह, बरिवे को उद्यम भई ॥ ६७ ॥

अडिल्ल छन्द ॥

कोमल करकरिऊंचेआदरमानसों,रतनमालगलमेली बाहुलतान सों औरन उपमायासमजगमेंदेखिये,ताहीतें इनहीकोइनकीलिखिये ।६८। शब्दघोरतब उपजे बाजेबाजते, लागेकरन महोत्सव सज्जन साजते । धन्य धन्य धुनि घोषी साधो बदन सों, यह स्वभाव साधन को सहजै जतन सों ॥ ६९ ॥ योग्य वस्तु जहां देखै तहां रतिमान ही, लख अयोग्य चित समता भाव सो आनही । दुष्ट दुष्टता करें सुजगमें जानिये, सोईअब सुन श्रेणक ताहि बखानिये ॥ ७० ॥ अर्ककीर्ति को सेवक दुर्मुख दुष्ट जो, पर बिभूति सहि सकै नआति ही रुष्ट सो । भूपनि सों वह भाषै रोष बढ़ायेर, भूप अकंपन तुमहि बुलाय अनादेर ॥७१ ॥ परासुत जुगअन्त तईं की तुम लई, सब नृपबैठे कन्या जय को इन दई । भरत पुत्र सुन एसे लज्जा चित लही,लख कुमार को लज्जित पुनि तिनयों कही ॥ ७२ ॥ हे कुमार अन्याय यहे जो तुम हुते, महा दुष्ट ने कन्या दीनी जय प्रते । देख दुष्टता जय की तुम भी जानियो , तोहि आन ग्रह माहिं अनादर ठानियो ॥ ७३ ॥ किंकर है जय तेरो तू सुत भरत है, तोहि छाड़ यह कन्या या को बरत है । यह विधि बचन प्रचंड पवन जबही लगी, कुमर हृदय में क्रोधानल तबही जगी ॥ ७४ ॥

दोहा

अर्क कीर्तियों चिंतवैं, मोहि अनादर ठान ।
कन्यादी इन जय प्रते, दुष्ट अकम्पन जान ॥ ७५ ॥
बीर पट्ट में तब सहो; चक्री को भय मान ।
अब यह माला क्यों सहूं, है सुभाग की हान ॥ ७६ ॥
या विधि तज मरजाद को, जो जुगांत को मेह ।
हेया हेय बिमूढ़धी, चलो युद्ध को तेह ॥ ७७ ॥

तब मंत्री अनवद्य बुधि, लक्षित लक्षन मंत्र ।
न्याय पथ्यहित कर बचन, भने कुमर सोंतंत्र ॥ ७७ ॥
परयोषित अभिलाप को, पौरुषनाहि प्रमान ।
क्यों तुम बिरथा करतहो, यह अपयश की खान ॥ ७८ ॥
जो अवश्य कर तुम लई, यह कन्या गुणरास ।
तौभी तुम तियह्वैनहीं, करै प्राणको नास ॥ ८० ॥
जस प्रताप संयुक्त जय, जो जीते तुमसाथ ।
तो अपयश या जगविषे, होय तिहारो नाथ ॥ ८१ ॥
जोयह साधन देखिये, सो यह नाहीं और ।
याके पक्ष अनेक हैं भूपन के सिरमौर ॥ ८२ ॥
वृथान्याय उलंघ मत, पुरुपारथ व्यवहार ।
जे दुर्लभ है जगत में, तेक्यों दीजे डार ॥ ८३ ॥
नृप कन्या आदिक रतन, जे कुछहैं भु मांहिं ।
ते सब तोको आनहूं, नीति तजो जो नांहिं ॥८४॥
सेवक स्वामी भेदनहिं, कह्यो स्वयंम्बर ठौर ।
जो कन्या को इष्टहै, ताहि बरै नहिं और ॥ ८५ ॥

सोरठा ।

परसै रंचक नाहि, कमल पत्र ज्यों जलतना ।
त्यों कुमार उर मांहि, न्याय बचन बिरथागये ॥८६॥

दोहा ।

बच उलंघ मंत्रीशका, सेनप लियो बुलाय ।
निकट पराभव आईये, बुद्धिहि कुमर नशाय ॥ ८७ ॥
रणभेरी भय कारणी, कुमर दिवाई साज ।
सबराजनिसों योंकही, आवहु निश्चय आज ॥ ८८ ॥
भेरी सुनकर नृपसबै, रणको कियो उछाह ।
कर झटकें भट खड्गले, गर्जत निष्टुर राव ॥८९ ॥

अंजनगिरि मम गजचले, कर कम्बल कर अंग ।
बरते तुरंग गण उदधि ज्यों, साजे तरल तुरंग ॥ ९० ॥
चपल तुरी लागे रथहि करते चक्र चिंकार ।
चलत चाल सबकी हरे, सूर सारथी धार ॥ ९१ ॥
जिनके कर असि चमकती, धरै कुन्तको दंड ।
आगे धावत रणविषे, चले नृपति परचंड ॥ ९२ ॥

सवैया तेईसा ।

संगलिए चतुरंग चमूं तब युद्ध सिंगार कुमार करोहै । ताहिको भाग सुहाग भरो इकजीतलही तिहठौर अरोहै । यांहीते रीझ भई उर साहिब घोर बिजय तिस नाम धरोहै ॥ सो चढके चलियो तिहि ऊपर भूप अकंपन ही पे अरोहै ॥ ९३ ॥

दोहा

यह असवारि कुमारकी, सुनी अकंपन राय ।
मंत्र कियो मंत्रीनसों, पठयो दूत सिखाय ॥ ९४ ॥
दूत कहै सुन चक्रिसुत, हम पर करो प्रसाद ।
मृषा बाद क्यों कीजिये, तजिये नहिं मरजाद ॥९५॥
इह बिधि बिनती बहु करी, कोपो कुमर तथापि ।
आय अकंपन सों कही, तब जय बोलो आपि ॥९६॥
लिपट्यो चाहै श्रृंखलनि, परदारा अभिलाख ।
कपि ज्यों कुमरहि बाधिहो, देखत सबकी आख ॥९७॥
मेघासुर की विजय में, भेरी पाई जोय ।
घन घोषा है नाम तिस, जय बजवाई सोय ॥९८॥
घूर्नित आर्णव घोर तिस, घूमें पट सुन कान ।
दंती मद माते तहां, चले तोड़ आलान ॥ ९९ ॥
बायु बेग बाजी चले, खणत भूमि खुर संग ।
सर्बायुध सों रथ भरे, साजे सुभट अभंग ॥ १०० ॥

नृत्य करत ध्वज बाहनर, चले बाहु ले केतु ।
परम प्रीति सों पत्तगण, धाये संजुग हेतु ॥ १०१ ॥
योषित भी उद्यत भई, धार सुभठ को भाव ।
बर्णन और कहा करूं, सुन भेरी आराव ॥ १०२ ॥
कंपित करते अरि गणहि. चलो अकंपन भूप ।
अर्क कीर्ति से युद्ध को, बांधे शस्त्र अनूप ॥ १०३ ॥
सूरज मित्र सुकेत अरु, जयबर्मा श्रीधार ।
देव कीर्ति इन आदि दे, मुकट बद्ध नृप सार ॥१०४॥
नाथ शोम वंशी अवर, मिले भूप जय आय ।
घन प्रभादि विद्येश भनि, विद्याधीश सहाय ॥ १०५ ॥
इन भूपन को संग ले, मकर व्यूह रच सार ।
जय कुमार राजे तहां, अरि गण को भयकार ॥१०६॥

सोरठा ॥

सुनमि प्रमुख जे खेट, तार्क्ष व्यूह तिनही रचा ।
अरि को भय उर भेट, चक्र व्यूह कुमरहि रचो ॥ १०७ ॥
लीने संग कुमार, बसु चन्द्रादिक खेचरहि ।
बांध बांध हथियार, अति उद्यम संग्राम को ॥ १०८ ॥
इक कन्या के काज, दोय अनी ये यों जुरी ।
भाजत आवै लाज, तातें भट सन्मुख भये ॥ १०९ ॥

अडिल्ल

न्याय युद्ध तहां होत भटाभट सारही, जो गजको असवार सु गज असवार ही । भिराहि सारथी साराथि हय सोंहयलरें, जो बल जैसाधरे ताहि तैसा अरे ॥ ११० ॥ धनुष कान लों खींच सु छोरे तीर ही, तिन के आनन तीक्षण अरि तनचीरही। वार पार सर निकसें उर को भेद के, केईक मारें दंड सु दंडहि छेदके ॥ १११ ॥ केईक खड्गाहि खड्ग भराभर बीत हैं,

गिरहिं मुंड कट धरणी यह रण रीत है। कवच टूट जब जाहि कचा दःच ह्वै परैं, सूरन के कर शस्त्र सुलरलर यों मरैं॥ ११२॥ कुंतहि कुंत चलावहि जोर फिरायकें, गिरहि सु साथहि दोऊ उधर भिदायकें। गर्ज गर्ज यह देह गदा गद तार ही, मूसल मूसल हल हल सिल सिल मार ही॥ ११३॥ भाल हि भाल सरासर अम्बर भूमिये, उमगै रुधिर प्रवाह अरुण ही ह्वैगये। केइक घायल घावहि बाधें चीर सों। केइक लोटहि धरनी अति ही पीर सों॥ ११४॥ रहे डूब गज रक्तहि बरछी कुंभ में, परे श्याम गिरि मानो रंग कसुंभ में। चरण हीन हय कीने सूरन खड़गसों। तोर तोर रथ डारे भूरितरंगसों॥ ११५॥ घोर घोर ललकारें सिर में खायके। शीश देहिंयश लेहिं सुरग में धायके। कायर ही रण माहिं सु सुमरें भवनको। सूर सूर लरजुड़ें सुसाहिब लवन को॥ ११६॥ लेंय घाव सन्मुख जो सायर सुर हैं। देंहि पीठरण माहि जो कायर कूरहैं। दीये इसके भोग सुघरमें भोगये। याहि छोड़ घर जाहिं सु कैसे योगये॥ ११७॥ सोरठ कोआलप ही मारू बज्जही। होहि सुर सुन हर्षित कायर लज्जही। रुधिर मांस मयप्रथवी भयकरती महां। कटहि मुंड धड़नाचहि सुरन के तहां॥ ११८॥ नीरनीर यों तरसें प्यासे पापसों। मार मार कर धावें केइक आपसों। खड़गमूठ गहिदंत सुकमरहि कोकसे फेरहाथ ले खडग सोसेना मधि धसे।११९। ठाड़ो ठाड़ोहोइ कहां तूजायरे, लेहुं बैर अब तोको मारूं ठायरे। घोरबीर संग्राम सु सुभटहि खातहैं, सकल सृष्टि यह मानो यमपुर जातहैं॥१२०॥ किधों आय यह बिधना क्रोधहि भेट कें, रचो बीर रस एकहि बसु रस मेट कें॥ तात भ्रात सुत समरथ कोइ नजो रखैं, छूट पुन्य नहिं और सहाई रण बिखैं॥ १२१॥

दोहा

धर्महि वज्र सन्नाह हैं, परम धर्म है ढाल ।
रक्षपाल यह जगत को, भजो याहि चिर काल ॥ १२२ ॥

अडिल

तहां कुमार सर छोड़ें अरि के सामही, आन ज्वाल समतीक्षण गगनहि धावही । लगै जाय तिनके तन धीरजत तजें। सिथल होहिरण खेतहि तजकें वे भजें ॥ १२३ ॥ महा मुख्य जे योधा जयकी ओरके, हृदय भेदकर तिनके धसें सुजोरके ॥ कुमर केई यक छेद जयके भटन को । उडहि पात ज्यों पवनहि लागे हटनको ॥१२४ ॥ छीदत सैन अपनी लख सानुज जय चढ़ो, वज्र काण्ड लेधनुष आप नीरस बढ़ो । जय कुमार सर छूट अरि मद हरनको, पनचखेंच आकर्ण हि भेजे गगनको ॥ १२५ ॥ वज्र दण्डय छोर मानो सुरपती, सूरजकी रवि किरण सुतिन बाणो हती । खेचरके प्रति खेचर अम्बरमें लरें, भये युद्ध ग्रह प्रमित सुविद्या संचरें ॥ १२६ ॥ खेचर गण सर भूचरसर अम्बर मरें, आपस में मुख लग थिति किंचित कर गिरें । या मिलाव की उपमा परगटही भले । मीतहिमीत सुमारग मांही मिल चले ॥ १२७ ॥ तोलो सानुज जय जम आकृति करलो । अश्व रूपपंचानन तापर चढ़ चलो ॥ सानुज जयको देख सुदौर नृपसबै, सूरवीर जो योधा इकठे ह्वैतवै ॥ १२८ ॥ पर आय ज्यों टीड़ी चहुंदिश आयके, करें युद्ध जे योधा जयसों धायके । कर कुमार संहार उलंघी गज घटा, लयो घेर तहां जयको कुमरनिके भटा॥ गजाधीश बिजयारध नामा जयतनो. जय कुमार तिहि चढ़कर रन करने टनो । तब कुमार रथनाम अरिंजय चढ़चलो, श्वेत अश्व करि शोभित बहु शोभा रलो ॥ १३० ॥ बज्रकाण्ड धनु दोय सुचक्रीने दिये, एक पुत्रको एकहि सैनापति लिये । वज्र

काण्डको दंड कुंवर सोकर धरैं, बन्दीगण जसगावहिं महिमा अनुसरैं ॥ १३१ ॥ धुजातोरि जब जयकी कुमरहि जयलई, अर्क कीर्तिकी कीरत कछु इक तबभई । बढो क्रोध तबजय उर अरिको देखके। करकृतान्त सम आकृति बिक्रम पेखिके ॥१३२॥

दोहा

धनुष पनिच जय खीच के, करी घोर टंकोर
दिग्गज गण को मद हरो, फैलो चहुंदिश सोर ॥१३३॥

अडिल्ल

कर कुमार के छूटे सर संघात ही, अर्क कीर्ति की दीपति छीजत जातही। हेरे सूर्य को तेज घना घन आयके, बाणनि सों त्यों राखो कुमरहि छायके ॥ १३४ ॥ वज्र दंड सर जयने मारे घन जबै, छत्र शस्त्र ध्वज छिदे कुमारहि के तबै। अष्ट चंद्र खग उमडो कुमरहि ओर सों, जय कुमार को भ्राता घेरो जोर सों ॥ १३५ ॥ हेमांगद अरु भुजबल दोनों यों लरें, ज्यों अनुमत गज मस्तक मारें टक्करें । अनंतसेन नृप रण में क्रोधहि धारके, लये भ्राता सब जय के तिन ललकारके ॥ १३६ ॥ लरहि परस्पर भूपति अति ही छोभसों, जोर मार तहां बरसे लोहा लोहसों। लेय शस्त्र अरि गण के जय जोधा हने, ज्योंमृगगणकोमृगपतिकर नखसों लुने। ॥ १३७ ॥ सोमपुत्र चक्री सुत दोऊ योंलरे, सिंहशाव जुग तरुण हि बनमें ज्यों अरैं। बाणहि बाण असिहि असि सैलहिं सैलहीं, आयुध सों यों आयुध ऐसे रेलहीं ॥ १३८ ॥

दोहा।

विष्टर कंपित जानके, नागासुर गुण रास ।
जय को दीने दोयसर, अर्द्धचंद्र अहिपास ॥ १३९ ॥

सोरठा।

देखहु पुन्य प्रताप, महाबिपत की ठौरमें ।
होसहाय सुर आय, ताते पुण्य बलीमहा ॥ १४० ॥

अडिल्ल ।

सुर पुनीत युग बाण लहे जय रण विखें, पुण्यवन्त को है सबठौर हि निधि अखें । बज्र काण्ड घन जोर चलायो सुरजबै करेत्तार रथ सारथि अरिगण के सबै ॥ १४१ ॥अष्ट चन्द्र इन आदिक भाजे ता समें, परहि जीव की जब तब मीत हि को रमें । छिन्न दंत कर हस्ती को इन अर्थ ही, यह कुमार की गति भइ रण में ब्यर्थ ही ॥ १४२ ॥ गयो मान अरु तेज प्रता पहि नाशियो, नीच कर्म भिक्कार जो इन कुमरहि कियो । चक्र वर्ति सुत बांधो जय कौरव वली । तिन हूं लई मति एसी और हि कथा चली ॥ १४३ ॥ सकल दुखी जग जीव कुमारग सो लहै, याही तें शुभ जीव सुमारगही गहै । अस्त्र सूर संकाम सु कुमरहि रथ धरो, जय कुमार सोआपुन गजपै अनुसरो ॥ १४४॥ नाग पास ते पासित कीने खग सबै, अरु विपत्ति जंजीरन जकरे जय तबै । लही जीत जब रणमें जय नृप नाथ ही सुवर्न बृष्टि सुर कीनी जय ध्वनि साथ ही ॥ १४५ ॥

दोहा

लखि घायल रण अवनि जे, तिन को करो इलाज ।
मृतकन की मरतक क्रया कीनी सब जयराय ॥१४६॥
भूप अकंपन सहित जय, कीनो पुरहि प्रवेस ।
जन पुनीत पूरण परम, शोभित ध्वजा सुभेस ॥४७॥
सकल भूप अब कुमरही, यथायोग स्थान ,
कुशल नियोगी साथदे, रखोदिलासा ठान ॥ १४८ ॥
जिन पद बन्दे विघ्नहर, दोऊ नृप परवीन ।
पूजा थुति करके जबै मनवांछित थुति कीन ॥ १४९ ॥
छोड़िपास खगईश सब, मिष्ट वचन मुखभाख ।
यथायोग्य आस्वासना, दीनी मानहि राख ॥१५०॥

चौपाई।

तब कुमार विष्टर बैठाय। नमस्कार कीनी सिरनाय।
भूप अकंपन अरु जय राय। थुति भाषी मुख सों इह भाय॥ १५१॥
हम दोनोंके तुमहि कुमार। बाढन पालन को आधार।
तुमही तें जग महिमा पाय। हम सेवक हैं तुम हो राय॥ १५२॥
अबतुमकारजकीजोसोय। हम जय तुमें तजें नहिं होय।
सुत सेवक अरु बंधव कोय। सो अपराध हि ठानें जोय॥ १५३॥
सकल सहें जेनर हैं महा। तिनहि क्षमा भूषण ही गहा।
कुमर तिहारो त्याग विवेक। यह अपराधकियो हम एक॥ १५४॥
बन्धु मृत्यु हम तेरे सही। क्षमाकरन को समरथ तुही।
कौन बात इस कन्या तनी। तुम सरवंश हमारे धनी॥ १५५॥
प्रथमहि जो तुम करते मनें। विधी स्वयम्बर क्यों हमठनें।
तुमशीतलजलसमजगपुष्ट। उदमकीन किहअग्निसुदुष्ट॥ १५६॥
ज्यों सुवारिफिर शीतलहोय। त्योंप्रभुतुम हमकों अवलोय।
यों संतोषिनकर फुनि ताहि। लघुपुत्री तिहदीनी ब्याहि॥ १५७॥
लक्ष्मीमती है ताको नाम। रूप शील गुणकरि अभिराम।
सोकुमार सुख दाता भई। अर्थ संपदा बहु संगदई॥ १५८॥
गज चढाइकें कुमरहितदा। बहु विभूति सों कीनों विदा।
औरनृपनिकोंअति संतोष। बहुगज वाहनदीने पोष॥ १५९॥
विदाअकंपन तबही करे। अपने अपने पुर अनुसरे।
तबनागा सुर भीतिह ठान। वस्तुकरी सब इकठीआन॥ १६०॥
संग सलोचन जयको व्याह। कीनो तिन ही बहुउच्छाह।
पुन्य तनों फल जानो एव। आवहि सुर गण धारें सेव॥ १६१॥
जय नृप और अकंपनतहां। एक उपाय उपायो महां।
सुमुख नाम नरअति परबीन। रतनभेट शुभताकरदीन॥ १६२॥
भरतराय पेभेजो ताहि। पहुंचो सोइ अयुध्या माहि।

भेट भरत के आगे धरी । कर प्रणाम कर अंजुलिकरी ॥ १६३ ॥
विनय सहित शुभविनतीकरै । चक्रवर्तिप्रतियों उच्चरै ।
राय अकंपन भयसें एव । कही बीनती करके सेव ॥ १६४ ॥
नाथ स्वयम्बर विधि मेंठई । तहँ कन्या जय नृप को दई ।
तहां कुमर भी किरपाकरी । पहले अनुमति तिन भीधरी ॥ १६५ ॥
पीछें किनहूं को पित करो । संजुग तातें तिन अनु सरो ।
सो तुम जानतहो सबबात । अवधज्ञान धरजगविख्यात ॥ १६६ ॥
तातें यतन करो शुभ भव्य । बहुत कलेश नहीं करतव्य ।
कोमल वाणी यह विधि भाख । सुमुखथयोबहुविनतीराख ॥ १६७ ॥
तब चक्री पर चक्र बिडार । भणे वचन शुभ नीतहिधार ।
तोहि अकंपन बात सिखाय । पठयो क्यों हमपैयहभाय ॥ १६८ ॥
पुरतें वे अब नाहीं घाट । रची स्वयम्बर की परपाट ।
मुक्तिराह पुर देवहि कियो । दान श्रेय नृप करता जियो ॥ १६९ ॥
ज्यों हम चक्री आदिहिभये । राजनिके सब मारग ठये ।
उनहुस्वयम्बर विधित्योंकरी । न्यायसुमारगसोंअनुसरी ॥ १७० ॥
यह विधिजोवेकरते नाहिं । तो क्यों करतोयाजगमाहिं ।
भोग भूमिने जोबिधिहरी । ते सबइनही परगट करी ॥ १७१ ॥
नूतन विधि शुभ जेनर करें । पूज्य तनों पद तेई धरें ।
उनको जगमें पूजहिं सन्त । मान्य पुरुषवेहैं इहभन्त ॥ १७२ ॥
अर्क कीर्तिसुतमेरो जोय । अपकीरति को दाताहोय ।
उज्जलयशशुभकालिमलाय । मलिनकियोयुगअन्तहिभाय ॥ १७३ ॥
विश्व ईशयों सुमुखहिपोष । करोविदा तिनअतिसंतोष ।
गयो अकंपन जयकेतीर । करिप्रणाम तहांबोलोधीर ॥ १७४ ॥
जो कुछ चक्रीयासों कहो । सो बिरतंतसबैतिन कहो ।
जय सुलोचना दोनोतही । बहुत दिवससुखभोगेसही ॥ १७५ ॥
गजपुर कोपुनि दाऊरले । भूप अकंपनसोंकाहि चले ।

हय गय कर जय पूज्यो तबै । गंगा के तट पहुंचे सबै ॥
गंगा तट सब सैना थाप । कछुइकजन संगलीनेआप ।१७६ ॥
जयनृपतबहि अयोध्यागयो । अर्ककीर्तितहँ सन्मुखभयो ॥ १७७ ॥
कुमर साथकीनोपरवेश । अमरपुरी ज्यों जाय सुरेश ।
सकलसभा शुभसाजेजहां । सभानाथकोप्रणम्यों तहां ॥ १७८ ॥
चक्रवर्ति जो जागा कही । जा जयवन्तो बैठो तही ।
बहु आदरदे चक्री कहै । हिरदे प्रेम अधिक ही लहै ॥ १८६ ॥
देखनको दुलहनहमभौन । चंद्रमुखी तुम आनी जौन ।
हम उत्कंठितहैं चितमाहिं । अब तुम आये तासंगनाहिं ॥ १८० ॥
और अकंपन सुरतविशार । हम नबुलायेब्याह मझार ।
जुगत नकीनी तिनयहबात । कैहम कीने बाहर पात ॥ १८१ ॥
पिता तुल्यहो तेरो महां । हमहि विसारोतुमभी तहां ।
प्रथम हिआगेकरकेंमोहि । कन्या परणवनी थी तोहि ॥ १८२ ॥
बचन अपूरबकहिचक्रीश । तिरपति कीनो सैना ईश ।
मानपाय बहु बिनयो तदा । नमस्कार कर लीनी बिदा ॥ १८३ ॥
आयो गज चढ गंगा तीर । मिलो चहत निज सुंदरधीर ॥
तहां जुकुसुगुन अतिही भयो । चिंतातुर अति हिरदे ठयो । १८४ ।

दोहा

सूके तरुकी डार पै, रवि सन्मुख ह्वैकाग ।
रोवत देख हि मूरछा, आई जय वड़ भाग ॥ १८५ ॥
चेतो शीतल वस्तुतें, वोले अहिसुर आय ।
भार्या को भय मत करो, वह बरते सुखठाय । १८६ ।
इतनी कहि सुर उठ गयो, हितधारी जय राय ।
ताके बचन प्रमाण कर, धसो गंग महि आय ॥ १८७ ॥

चौपाई

जय गज गंगा इह अनुसरो । पुष्करकरि मकराकृत धरो ॥
अहि कोजीव जुकाली सुरी । गंगा में थिति जिन अनुसरी । १८८ ।

अपनठौर में बैठो जोय । निर्बलभी बल वन्ता होय ।
जयको देखत रोषत भई । गज हि समेत सुखेंचत भई ॥ १८६ ॥

दोहा

मारो याहि डवोयके , इन मारे है मोहि ।
अब मेरे पाले परो, राखन समरथ कोहि ॥ १९० ॥
यातें वैर नकीजिये , जगमें काहू संग ।
जाको देखेनिबल जब, मांडत तब ही जंग ॥ १९१ ॥

चौपाई

हेमांगद आदिक तटठये । गजको बूढत देखत भये ।
सबनृप कूदे तबही दौर । बूढन लाग्यो गजतिह ठौर ॥ १९२ ॥
देख सुलोचन गोतही हान । सावधिउर सन्यासहि ठान ।
यह दुख देखो जोलों आज । तन भोजनको नोचों त्याज ॥ १९३ ॥
यह बिचारकर बहुतो संग । जाय धसे वह भी बिच गंग ।
गंग धसत तिनशोभा लही । गंगा देवी मानो यही ॥ १९४ ॥

दोहा

गंगा कुलहि निवासनी, कुल देवी है और ।
आसन कंपो जानके, इनको दुख तिहि ठौर ॥ १९५ ॥
ये सब काढे आय तिन, दुष्ट कालिका डाट ।
जय सुलोचना धर्म सों, पायो गंगा घाट ॥ १९६ ॥

चौपाई

गंगातीर सदन तिहि रचो , रत्नसिंहासन शोभा सचो ।
जय सुलोचना तहँ बैठाय, वस्त्राभरण दिये अधिकाय । १९७ ।
तिन सुलोचना प्रतियों कही, तोप्रशादमें यह मतिलही ।
नमोकार विधि तू मोदई, तासों गंगा देवी भई ॥ १९८ ॥
जय सुनबोलो रानी प्रतें, यह बिरतन्त कहो किह मतें ।
भयो सुलोचन बचन अनिंद्य, बिंध्याचल तहँ पुर विंध्य । १९९ ।
बिन्ध्यकेतु तहँ राजा बसे । प्रथगुसुन्दरी रानी लसे ॥

बिंध्यसुरी है तिनकीसुता । शील रूप गुणाकर अतिजुता ॥ २००॥
ताके जनक सुमेरे पास । गुण सीखन को राखी तास ।
क्रीडा करत सुमेरे संग । नाग डसो तहां ताके अंग ॥ १ ॥
तिलक बसन्त सुबनकेमाहिं । नमोकार में दीनों ताहिं ।
ताको ध्यावत सो यह मुई । गंगा तट सो देवी हुई ॥ २ ॥
धर्मसनेह धरो अधि काय । भई सहाय दुःख में आय ।
यह विरतन्त सुनो जय तदा । गंगा देवी कीनी बिदा ॥ ३ ॥
केतु सहित तहँ निजआवास । जय सुलोचना निवसेंतास ।
रात विताई तिन ही तहां । प्रात उठो जय रवि सम महां ॥ ४ ॥
गंगा ही के तट तट चले । प्रेम सहित ते गजपुर मिले ।
हेम कलश शुभ शीशहिसजा । चपल पताका मानोसजा ॥ ५ ॥
उज्जल सोहैं अत्त गवत्त । सुवरन तोरन ही उर बत्त ।
रत्न खचित मुख उन्नत छार । स्वर्ण कुटी सुअटारी मार ॥ ६ ॥
ऊंची पैड़ी शोभित पांव । तिन की कोर रतन नख ठांव ।
एसोपुर नरसम अधिकाय । देख अनंदा अति नर राय ॥ ७ ॥
साहितसुलोचनजयतहांधमो । भरत समान सुउपमालसो ।
सुख सों निवसे अपने धाम । भोगसु भुगतें बहुअभिराम ॥ ८ ॥

दोहा

मुख सुलोचना कमलहै, जय जयवन्तो भौर ।
सुरपति सम भ्रातासहित, भूपालै तिहि ठौर ॥ ९ ॥

जयकुमार औरसुलोचनाको कबूतरका जोड़ा उड़तेदेख जातीस्मरण का होना जिसकर मूरछाका आना फिर शांतिचित्तहो अपने पूर्व भवोंका वर्णन करना

चौपाई

एक समें चढ़ मंदिर शीश । क्रीड़ा करत भयो नर ईश ।
खग दंपति देखे गच्छन्त । हा प्रभावती कह भाषन्त ॥१०॥
खाय मूरछा जय नृपपरो । जाती सुमरन जय अनु सरो ।
तैसे खग जुगतिय लख तहां । भाषो हा में रति वर कहां ॥११॥

आई मूरछा वहभी गिरी। सब परवारहि खलबल परी।
हिम चंदन मिश्रित जल लेय । दंपति तिन छांटे बहु भेय ॥१२॥
हरी मूरछा तिन की जेम। रतन मरीच हरै तम जेम।
चेत दंपति विस्मयवन्त।विह्वल जन लखि जय भाषान्त॥ १३॥
हे सुन्दरि हम नाना भन्त । पूरब जन्म लहो विरतंत
सो सब वरनो तुमइह ठांय। ज्यों कुटम्ब जन संशय जाय॥ १४॥
होयशान्ति चित इनकोयथा। कौतुक सहित सुकाहियेकथा।
जय भूपति जब आज्ञा दई। मधुर बचन तिय भाषत भई ॥ १५॥
सुनो नाथ तुम मन बच धार। बरनू पूरब जन्म बिथार।
जम्बू दीप अनूपम एह । शोभित पूरब अधिक विदेह ॥ १६॥
पुष्कल देश तहां थिति करी। तहां मृनाल वती है पुरी।
नाम सुकेताहि नृप पदलहै। रतिकर्मक तहां वाणिक रहै ॥१७॥
कनकश्री है ताकी नार । सुत भवदेव सुतिन के सार।
और वैश्य हैं तहां श्रीदत्त । बिमलश्री तिस भार्या रत्त ॥ १८॥
राति वेगा है तिन की सुता। शीलरूप गुण कर सोजुता।
अरु अशोकसुर वाणिज तही। जिनदत्ता तिन बनिता लही ॥१९॥
सुत सुकान्त हैं तिन के भले। धर्म अर्थ शुभ गुण सों रले।
रतिवेगा भवदेवहि काज। मांगी मात पिता तिन साज॥ २०॥
रतिवेगा के माता पिता। दोनों ही मिल अंगी कृता।
दुर्मुख साथहि सो भवेदउ। गयो देशान्तर बणजहि हेउ॥ २१॥
चलती बार भणें श्रीदत्त। गमन कियो तुम कारण वित्त।
पीछे ब्याह तनी गति केम। सुन भवदेव भणी तब एम॥२२॥
द्वादश वरस अवधि जब करी। देशान्तर गति तवअनुसरी।
सब मर्यादा वीती जबै। मात पिता सो दीनी तबै ॥२३॥
बर सुकान्त ने ब्याही सही। राति वेगा रति दाता वही।
तवही देशान्तर से आय। साथ हि दुर्मुख है तिहठाय ॥ २४॥

ब्याह तनो तब सुन बिरतंत । कोपो दुर्मुख संग बहु भंत ।
सुन के तब ही बधु वर डरे । नाटे दोऊ बन अनु सरे ॥ २५ ॥
धान्य कमाल सुवनकोनाम । शक्तिखेम नृपवहँ अभिराम ।
इनने सरण गही तिस जाय निर्भय होय बसे शुभ ठाय ॥ २६ ॥
इन दोनों के मारन हेत । पीछे लाग रहो मनु प्रेत ।
शक्ति खेत के भयते सोय । भागो दुर्मुख उलटो होय ॥ २७ ॥
शक्ति खेत तहँ दीनो दान । चारण मुनि के भक्ति हिठान ।
दस वधूबर भावन भाय । कोमल चित कर करुणा लाय ॥२८॥
कबहूं दुरमुख संग भवदेउ । लाये तिन को मारन हेउ ।
तहं भवदेव लगाई आग । मरे बधू वर प्राणहि त्याग ॥ २९ ॥

दोहा

शक्ति खेत के सुभट तब, मारो दुर्मुख दुष्ट ।
भाज गयो भवदेवतहँ, पापी अधिक अनिष्ट ॥ ३० ॥

चौपाई

पुण्डरीक नी नगरी महां । प्रजापाल नृप राजै तहां ।
धनद मित्र तहँ सेठ अनुप । आदर राखे ताको भूप ॥ ३१ ॥
तसु बनिता है अगली तीस । नाम धनवर्ता तिनकी ईस ।
दोऊ उपजे ताके गेह । तिर्यग भये कबूतर देह ॥ ३२ ॥
जीव सुकांतका पूरबभनो । सो तहँ रतिबर नामावनो ।
रतिबेगा जो पहली कही । तिन रतिषेणा संज्ञा लही ॥ ३३ ॥
तंदुल कण जे ग्रहमें परे । तिनको चुग चुगउदर हिभरे ।
दाग पतिजुग बहु सुख लहे । पीत परस्पर निरभयरहे ॥ ३४ ॥
एक समें तहँ चारण दोय । चर्या कारण आये सोय ।
सेठ सेठानी देखे मुनी । भाव भक्ति अति हिरदे गुनी ॥ ३५ ॥
धनदमित्र तबमन बचधार । मुनिको दीनों शुभ आहार ।
पूरब भवसब मिथूनक पोत । जाने मुनि को दर्शन होत । ३६ ।

दोहा

चारण मुनि के चरणयुग, परसे पंख पसार।
तहँ अनुमोदन दान कर, लहो पुराय अघटार ॥ ३७ ॥

चौपाई

एक समय वेपंछी दोय। चुगन गये ग्रामान्तर सोय।
सो भवदेव भयो मार्जार। पूरव वैर हि लीने मार ॥ ३८ ॥
तहँ बिजयारध गिरहैमहां। दक्षिण श्रेणी शोभै जहां।
तहां देश गंधार सु ठाम। सीर वती शुभ नगरी नाम ॥ ३९ ॥
रवि गत ताकोनरपतिमही। इंदु प्रभातिन रानी लही।
तिन के सुतकी प्रापति होय। हिरणय वर्मा उपजो सोय ॥ ४० ॥
ताही गिर की उतम दिसे। गौरी देश अनूपम लसे।
तहीं भोग पुर वसै शुभेश। नाम वायुरथ लसै नरेश ॥ ४१ ॥
स्वयंप्रभा है रानी तास। शील रूप शुभ गुण की रास।
सो रतिषेण इन के सुता। उपजी नाम प्रभावति जुता ॥ ४२ ॥
जनक लखीमो योबनवंत। मंत्रिन प्रति बोलो इहभंत।
सुता प्रभावती दीजे किमे। कहो स्वयम्बर कीजे इसे ॥ ४३ ॥
सब खग बैठे मंडप जहां। वरो नकौऊ कन्या तहां।
मात पिता तिस पूछो एम। वरोन कोऊ कारण केम ॥ ४४ ॥
जो गतितें मोजी तें सही। कैहै प्रभावती वर मुझ वही।
फिर कें रचो स्वयम्बर तहां। सिद्धकूट चैत्यालय जहां ॥ ४५ ॥
दौरेखेट स्वयम्बर ठौर। आपस में बहु डारे सोर।
तब कन्या माला कर लई। चैत्य शिखर के डारत भई ॥ ४६ ॥
मेरुहि तीन प्रदक्षिण देय। कोऊ खेट सके नहिं लेय।
सबही खगगण हारत भये। तृषा वंतह्वै ग्रहको गये ॥ ४७ ॥
हिरणय वर्मा आयो जबै। गति संगरमें जीती तबै।
तब प्रभावती माला लई। हिरणय वर्मा के गल ठई ॥ ४८ ॥
सिद्ध कूट चैत्यालय माहि। विधिसों कन्या दीनी ब्याहि।

आये दोऊ अपने गेह । बहु सुख भुगतें दंपति एह ॥ ४६ ॥
जुगल कपोत प्रभावति रान । देखत पूरब भव शुभजान ।
हिरदे अतिही बिरकतिहोय । चारण मुनिको पूछो सोय ॥ ५० ॥
पूरब भव तिस मुनिवरभने । सबहि बभूवर आदिजुठने ।
मुनिवर मुखतें सुनिपरजाय । दंपति नेहबढ़ो अधिकाय ॥ ५१ ॥
अम्बर गति लखबादरलाल । चित बैराग धरो तिहिकाल ।
हिरण्यवर्म सुतराजहिथाय । दिक्षा लेवन निकसोआय ॥ ५२ ॥
राज करै सुत ताको सही । एक दिवस बैरागो वही ।
स्वर्णवर्म सुत दीनो राज । हिरण्य वर्म निकसो तपकाज ॥५३ ॥
तबहिं प्रभावती दीक्षालई । तपसौं तनमन सोखत भई ॥
विहरत दोऊ पहुंचे जहां । पुण्डरीकनी नगरी तहां ॥ ५४ ॥
गुरुनी संग प्रभावतिहोय । सेठ सदनमें पहुंची सोय ।
सेठ बधू यह देखी जबै । गुरुनीको तिन पूछी तबै ॥ ५५ ॥
कौन अर्जिका यहतासंग । प्रीत भई मोलख याअंग ।
भने प्रभावती आर्यासोय । अब क्यों भूलगईतू मोय ॥ ५६ ॥
याद करो तुम मोकोसोय । रतिषेना जुकबूतर जोय ।
सोई उपजी मानुष तिया । सेठ बधू सुन अचरज लिया ॥ ५७ ॥
सुन पूछी वहरातिवर कहां । कहो कि तिया धरहै महां ।
हिरण्य वर्मा मुनिवर होय । याही बनमें आयो सोय ॥ ५८ ॥
सेठ वधू प्रियदत्ता नाम । सुनत अनंदी गुण कीधाम ।
बहु उपदेश प्रभावतिदियो । दिक्षापद प्रिय दत्ता लियो ॥ ५६ ॥
जेबिरक्त नरहैं गुणखान । तिनको फल ऐसोही जान ।
हिरण्य वर्मा मुनिकाहूसमैं । योग मसान विषैं थितिपमैं ॥ ६० ॥
सात दिनाको धारो ध्यान । प्रतिमासन राजैं गुणखान ।
दासीइक प्रियदत्ता तनी । जाके मनहि कुटिलता घनी ॥ ६० ॥
पूरब भवमुनि आर्यातने । उन दासी ने सबही सुने ।

सो विलाव मर ताहीठौर । उपजो दुर्मति विद्युत चोर ॥ ६१ ॥
विद्युतसों तिन दासी कहे । जो भव इनहूं पूरब लहे ।
चोर त्रिभंगा वधि सोजान । गयो मसानैं क्रोधाहि ठान ॥ ६२ ॥
मुनिवर और प्रभावातिजये । एक चितामें दोऊ दिये ।
अगनिपरीषह सहिके मुये । प्राण तजे सुरस्वर्गहि भये ॥ ३३ ॥
स्वर्ण वर्म सुन कोपोतवे । विद्युत चोरहि मारूं अवे ।
दोऊ सुरतब अवधिहिजान । आये रूप यतीको ठान ॥ ६४ ॥
सुत को क्रोध निवारतभये । फुनि उठके सुरलोकहिगये ।
कबहुक आये फुनिवे देव । नरलोकहि अवलोकतएव ॥ ६५ ॥
भीम मुनीश्वर देखे तही । नमस्कार कर वैठे सही ।
परम विनय सों पूछो धर्म । धर्म अर्थको साधनपर्म ॥ ६६ ॥
बोले मुनिवर सुरयुग सुनो । धर्म तनी विधि जोमेंभनो ।
जीव दया अरु सांचे बैन । त्याग अदत्त विनाशै मैन ॥ ६७ ॥
संजम धरके संगहि तजे । धर्म अनूपम सोई भजे ।
धर्म तनी विधि एई पांच । सुनि सुर युगउर आनीसांच ॥ ६८ ॥
फुनि सुर पूछीमुनिसों एम । तरुणपनें ली दीक्षा केम ।
बोले मुनि तब ऐसी कथा । दीक्षा कारण उपजोयथा ॥ ६९ ॥
पुण्डरीक पुर हिंसककुले । भीम नाम में उपजो भले ।
एक समय मुनि मुखतैंधर्म । सुनकर लीनो श्रावककर्म ॥ ७० ॥
अष्ट मूल गुण अमृतधार । कह्यो पितातैं सकल विचार ।
सुनत पिता अति कोपितभयो । मैंउपदेश अधिकातिहदियो ॥ ७१ ॥
दीक्षाली हम ताही काल । जाती सुमरण चित्त संभाल ।
पूरव भव हमहैं भव देव । बैर बधो रति बेगा हेव ॥ ७२ ॥
तहां सुकांत रतिबेगाहिजार । है मार्जार कबूतर मार ।
पुनिहु उपजो विद्युत चोर । खग दंपति मारे तिहठोर ॥ ७३ ॥
ताही अघते दुर्गति गयो । जन्म मरन दुख भोगतभयो ।

तहँते निकस भयेहमभीम। गुरु प्रशाद सूंलहि सुखसीम॥ ७४॥

दोहा छन्द

सुर युग सुनके मुनि कथा, अधिक सु अचरज चित्त।
देखो हम योंही रहे, भीम भयो शिव मित्त ॥ ७५॥

चौपाई छन्द

यों चितवत सुर स्वर्ग मझार। पहुँचे सात उदाधिसुखधार।
भुगते भोग सुरांगन संग। राग व रंग गहैं निरभंग॥ ७६॥
पुण्डरीक पुर सुन अवजोय। निर्भय भीम मुनीश्वरहोय।
शुक्ल सूर हानि घाती रात। केवल ज्ञान लहो परभात॥ ७७॥
शिव सुख लीने तबमुनिभीम। जाके सुख बरने बिनसीम।
भीम मुकति को जब अनुसरो। ताको वन्दन हमभी करो॥ ७८॥
थुति कर फुनिहम स्वर्गहिगये। सुख भोगत आनंदितठये।
धर्म तणोफल अतिही लये। आयु वितीते हमहूंचये॥ ७९॥
भरत क्षेत्र गजपुर नृपचंद। ताके सुत जयतुम सुखकंद।
भूप अकंपन पुत्री भई। नाम सुलोचन तुम परणई॥ ८०॥
मैं रतिषेना उपजी आय। तुम रतिवर हो जय वर राय।
तातें युगम कबूतर देख। हम तुम पूरब भवकोपेख॥ ८१॥
मूर्छा खाय गिरे हमसाथ। जाती सुमिरन उपजो नाथ।
ऐसे कहते लज्जावंत। भये परस्पर दंपति सन्त॥ ८२॥

दोहा छन्द

बचन सुलोचनके सुनत, आनंदो जयराय।
जगमें तांपै कौननहि, तिय बचनामृत पाय॥ ८३॥

चौपाई छन्द

ऐसे सुखसों भुगतें भोग। काल बितावैं सुखसे योग।
विद्याधर भव विद्या जोय। आय मिली सब इनकोसोय॥ ८४॥
तेदोऊ विद्या पर भाव। विहरैं मेरु कुलाचल ठाव।

एक समैं वे गिरि कैलास। बनमें निवसे गुणकीरास ॥ ८५ ॥
निकट सुलोचनके कछुतही। भूप सरकके बैठे सही ।
तौलों देव सभामें इन्द। बरनो जयको शील अनंद ॥ ८६ ॥
अरु तैसाही ताकी नार। शील सुलोचन उज्जलधार।
ऐसे सुनकर रविप्रभु देव। सह न सको परशंसा एव ॥ ८७ ॥
सुरी कांचना भेजी तहां। सहित तिया जय भूपतिजहां।
जय प्रति बोली सुनियेराय। भरत यहे बिजयारध गाय ॥ ८८ ॥
उत्तर श्रेणि रतनपुर सार। भूप तहां पिंगल गंधार ।
नाम सुदरभा रानी तास। शील रूप बहु गुणकी रास ॥ ८९ ॥
विद्युतपरभा तिनके सुता। हाव भाव शुभ बिभ्रमजुता।
सोमंनामि की बनिताभई। मंदिर बन्दन बनमें गई ॥ ९० ॥
देखे तुम तहँ केलालसा। तबसें मोचित तुमहीबसा।
कर्म योग अबदेखो तोहि। सुखके हेत ग्रहो तुममोहि ॥ ९१ ॥
बोलो जय लखिकुलटानारि। मेरेपरत्रिय का परिहार।
पाप बचन मति मुखसों कहे। यों मेघेश्वर डाटी वहे ॥ ९२ ॥
तब अति कोपित देवी भई। राक्षस होय परीषह दई।
दंपति विपति लई तहँ जोर। जो जो बेदन दीनी घोर ॥ ९३ ॥
शील महातम से डर सुरी। भागगई बहु भयसों भरी।
शील वन्त नर नारी जेहि। तिनसों भयसुरगणहि करेंहि ॥ ९४ ॥
अपने स्वामी तटअधिकाय। इनको शील प्रशंसोजाय।
बिस्मय धर रबिप्रभ सुरधीर। आयो तबहीं दंपति तीर ॥ ९५ ॥
प्रणमो तिनको तहँसुरसंत। अपनो कहिकेसबबिरतन्त।
अब तुम मोपे कीजे क्षमा। मूरख होय अनादर पमा ॥ ९६ ॥
वस्त्र रतन कर पूजा करी। फुनि सुर गहिसुर थितिअनुसरी।
बनमें बिहरि सुवनितासाथ। फुनि आयो गजपुर नरनाथ ॥ ९७ ॥

जय कुमार और सुलोचना की दीक्षा

का वर्णन ॥ दोहा

नृप गण कर जो पूज्य जय, जानो जगत अनित्य।
घरसों चित बिरकत भयो, त्यागे भोग अनित्य ॥ २९८ ॥
गुरु पद बन्दे जाय कें, धर्म सुनो सुख दाय।
अनंत वीर्य सुतराज दे, भयो दिगम्बर राय ॥ २९९ ॥
निकसे नृप तिह साथ बहु, चार ज्ञान रिधि पाय।
इकहत्तरमों गणपती, भयो सुयाति जयराय ॥ ३०० ॥

अडिल छंद

तब सुलोचना बिरहनिभव सुख बिरकती, भरत राय की रानि सुभद्रा संगरती। भई अर्जिका दोनों ब्राह्मी पासही। तहां सोखतन तपकर बहु गुणरासही ॥ ३०१ ॥

अंत समय सन्यास मरण अनुसारियो, सोलहमे सुरलोक अमर पद धारियो। देश देश उपदेशहि देपुर देवही, आये फिर कैलाश शिखर स्वय मेवही ॥ ३०२ ॥

समव शरण दिन चौदह आगें खिर गयो, माघ श्याम तिथि चौदस सूरज ऊगयो। पद्मासन ह्वै प्राची दिश जिन मुख ठये, त्यागो तन तिन घाति अघाती शिव गये ॥ ३०३ ॥

तब उछाह निरवाण सुरासुर मिल कियो, सुकृत कर्म करि अपनो अपनों घर गयो। जय मुनीश हनिघाती केवल पाय कें, फुनि अयोग ह्वै निवसे शिवपुर जायकें ॥ ३०४ ॥

सर्व शत्रु बन दावानल जय गाइये, चतुर संघ निरभंग सदा सुख दाइये। भरतराय भव भोगी जोगी होय कें, प्रबल कर्ममल सकलहि डारें धोयकें ॥ ३०५ ॥

ऋषभ नाथ पग पावन परसे जासही, धवल वर्ण अति
उन्नत गिरि कैलाशही। तापर थिति कर भरत सुपंचम गति
गयो, अव्यय पद अविनाशी सुख सहजहिं लयो ॥ ३०६ ॥

दोहा

यह जैनी जन जस महा सुनिये सदा निसंक।
जोग जुगत जय जगत में, ज्यों प्रगटै निकलंक ॥ ३०७ ॥

इति श्री मन्महाशीलाभरण भूषित जैनी नामांकितायां लाला बुलाकी दास विरचितायां भारत भाषाया जय सुलोचना ख्यान वर्णनोनाम तृतीयः प्रभावः ॥ ३ ॥

मंगलाचरण ॥ अजित नाथ नमस्कार ॥ सवैया तेईसा

कर्म महा अरि भर्म बढ़ावत नृत्य करावत है भवमाही।
याही से दुःख भयो दुखिया जग याहीसों सुःख सबै विनसाही।
याही के घायक है जग नायक दूजे जिनेश्वर हैं शिवथाही।
जेनुलदे सुत ताहि नमैं पद जाके नमें जन शिवपुर जाही।१।

दोहा छन्द

अत्र अनंत वीरजनृपति, राज करो बहुकाल।
तिनही के सुत कुरु भये, शोभित उर गुण माल ॥ २ ॥
भये चंद कुरुवंश नभ, पुनि उपजे कुरुचंद।
तिनके तनुज सुभंकरो नृप गण में अरि वृन्द ॥ ३ ॥
तिनही के श्रीमाल सुत, फ़ानि धृतकारी जान।
तनुज धृतिंकर तास के, इन आदिक तिनमान ॥ ४ ॥
एनृप भये अनुक्रमहि, पुनि उपजे धृत देव।
गंगदेव धृतमित्र नृप, इन आदिकबहु भेव ॥ ५ ॥
उपजे पुनि नृप क्षेम धृत, अरु सुव्रत सुख कन्द।
परम विरत मंदिर भये, शिरीचन्द कुलचन्द ॥ ६ ॥
सुप्रतिष्ठ तिन ते भये, इन आदिक बहु भूप।

राज करो पुनि तप धरो, पहुंचे स्वर्ग अनूप ॥ ७ ॥
पुनि उपजे भूम घोष नृप, तिनहीं ते हरि घोष ।
हरिध्वज ते रविघोष नृप, महा वीर्य सुख कोष ॥ ८ ॥
तिन तें पृथिवी नाथ पर, पृथुगज वाहन भूप ।
इन आदिक वीते तबै, उपजे विजय सरूप ॥ ९ ॥
तिन ते सनत्कुमार नृप, तिन के सुत सुखकार ।
वर कुमार पुनि विश्व नृप, अरु वैस्वा नर सार ॥ १० ॥
तिन तें उपजे वैस्वध्वज, पुनि महीप वृह केत ।
पुनि सुकेत अंगद प्रभ्रति, वीते नृप संहेत ॥ ११ ॥
तिन पीछे तहँ नृप भये, विस्वसेन विख्यात ।
ताके सुत जिन शान्ति को, वरनू चरित सुभ्रात ॥ १२ ॥

शान्ति नाथ स्वामी के पूर्वभवोंका वर्णन

चौपाई छन्द

मध्य भरत विजयारध गिरी । दक्षिण श्रेणी शोभा धरी ।
रथनूंपुर पुर गण में महा । ज्वलन जटी नृप खग पति तहा ॥१३॥
वायु सुवेगा रानी तास । अर्क कीर्ति सुत तिस गुण रास ।
स्वयं प्रभा है ताकी सुता । शील रूप गुण शोभा जुता ॥१४॥
तहां मनोहर बन में मुनी । जगबंदन अभिनंदन गुनी ।
आये सुनकें भूपति गयो । मुनि युग चरणहि बन्दत भयो ।१५।
सुनकें धर्म सुदर्शन धरो । नुति कर के पुनि पुर अनुसरो ।
स्वयं प्रभा सुपिता के संग । धर्म लह्यो तहँ सुन निरभंग ।१६।
पर्वीव्रत कर दुर्वल सोय । जिनवर पूजे भगति समोय ।
जिन पग युग संग परसत भई । वही आसका जनक हि दई ।१७।
ज्वलन जटी जब देखी सुता । योवन वन्ती लज्जा युता ।
स्वयं प्रभा यह दीजे काहि । इम चिंता उपजी चित माहिं ॥१८॥

लीने मंत्री सब हि बुलाय। मन की बात कही समझाय।
बात सुनी जब नृप की सबै। सुश्रुत मंत्री बोलो तबै ॥ १९ ॥
उत्तर श्रेणी अलकापुरी। बहु ग्रीवा तिस प्रभुता बरी।
नील अंजना ताकी नार। तिनके सुत बलवंते सार ॥ २० ॥
अश्व ग्रीव है तिन में महा। नीलकंठ तहँ दूजो कहा।
बज्रकंठ तीजो विख्यात। महावली हैं तिन के भ्रात ॥ २१ ॥
अश्व ग्रीव की रानी भली। कनक विचित्रा बहु गुणरली।
अर्द्ध सहस सुत ताके महा। हरिसुमित्र मंत्री तिन महा ॥ २२॥
नैमित्तक तिस के सत विन्दु। सो त्रिखंड पृथिवी को इन्दु।
एसी विभव धरे यह ग्रीव। सुख भुगते मन बांछ सदीव ॥२३॥
ताहि सुता जो दीजे सही। अनुपम सुख तहँ भुगते वही।
ऐसी सुन बुधि सागर भने। ताहि दिये सुख रंचन ठनें ॥२४॥
वय में अधिक महा मद वंत। दीजे ताहि सुता किह भन्त।
जात्यादिक नवगुण जु धरेय। ऐसो बर लख कन्या देय ॥२५॥

दोहा छन्द

जाति अरोगी वयसमा, शील श्रुति वपु जान।
लक्ष्मी पक्ष परवारये, नव गुण वरहि वखान ॥ २६ ॥

तदुक्तं च श्लोक

अभिजात मरोगित्वं, वयं शीलं श्रुतंवपुः।
लक्ष्मीः पंक्त परिवारो, वरेनव गुणाःस्मृताः ॥ २७ ॥

दोहा छन्द

ताते वर बर औरही, गुण गण अरु चित जोय।
तुमहि कहत हूं देख कें, जो कन्या सुख होय ॥ २८ ॥

चौपाई छन्द

वल्लभ पुर सिंहरथहि नरेश। मेघ पुरहि नृप नाम कुशेश।
चित्रा नगर अरिंजय भूप। हेमरथो हय पुरहि अनूप ॥२९॥

राय धनंजय रत्न पुरीश । इन आदिक बहु हैं धरणीश ।
जो रोचै तुम कौं इन माहि । कन्या परणिहि दीजे ताहि ॥३०॥
सुनबच तिस श्रुत सागर कही । बर कहिये अब सुनिये सही ।
पुर सुरिंद्र कंतार उदीच । घन वाहन नृप है तिहि बीच ॥३१॥
मेघ मालनी रानी तास । विद्युत प्रभ सुत तिस गुण रास ।
ज्योतिष माला ताके सुता । शील रूप गुण कर अति जुता ॥३२॥
सिद्ध कूट घन वाहन जाय । वर धर्मा मुनि चारण पाय ।
धर्म सुनो तहँ पूजे मुनी । मोसुत के भव कहिये गुनी ॥ ३३ ॥
जम्बूद्वीप भणो मुनि एह । वत्सक देश सुभाग विदेह ।
पुरी प्रभाकर नंदन राय । जय सैना रानी तिस ठाय ॥ ३४ ॥
विजय भई सुत तानें लयो । एक समय सो बन में गयो ।
फल गिरतो लखबिरकित होय । मुनि पहताश्रवतहँ अवलोय ।३५।
संयम लीनो तिन निरभंग । चार सहस नृप निकसे संग ।
मरकर स्वर्ग महेंद्रहिगयो । चक्रक नाम विमानहि ठयो ॥३६॥
सात उदधिकी आयु लहाय । सो चयके तुम सुत उपजाय ।
याही भव लहिये निर्वान । यह विधि में सुनियो तिहिथान ।३७।
तातें कन्या दीजे ताहि । जोतिष माला तुम सुत ब्याहि ।
ऐसे सुनके मंत्री और । बोलो वचन सुमति तिहि ठौर ॥३८॥
कन्या याचक हैं खग घने । ताहि दिये सब बैरी ठने ।
वैर निवारक कारज यही । विधी स्वयम्बर कीजे सही ॥३९॥
ऐसे कहि के चुपह्वै रहो । मंत्र सबन को भूपति लहो ।
बहुत भले यह कहकर बिदा । कीने नृप ने सब ही तदा ॥४०॥

दोहा छन्द

पुराणज्ञ संभिन्न श्रुत, सकल कथा परवीन ।
भूपति ताहि बुलाय के, बरको प्रश्न सुकीन । ४१ ।
बोलो तब सम्भिन्न श्रुत, सुत रथनूपुर ईश ।

शास्त्र वचन मैं कहत हूं, जो बरने जगदीश ॥ ४२ ॥
सभा मांहि वृषभेश जिन, बरने सकल पुरान ।
भरत राय श्रोता भये, सम्यग्दृष्टि सुजान ॥ ४३ ॥
आदि कृष्ण संबंध तब, बरनो इह बिधि भाय ।
सो सुनिये अब खगपती, बरनत हूं इहठाय ॥ ४४ ॥

त्रिपृष्ट नारायण की कथा

चौपाई छन्द

जम्बूद्वीप अनूपम एह । पुष्कल देश सुप्राग बिदेह ।
पुंडरीकनी नगरी तही । ताके निकट मधुक बन सही ॥४५॥
नाम पुरूरव बनपति भले । मारग भृष्ट भयो सो चले ।
देखे मुनि तहँ सागर सैन । धर्म पंथ बतलायो ऐन ॥ ४६ ॥
मद्य अमिषतज सुकृत लयो । मरके प्रथमस्वर्ग सुरभयो ।
चयके उपजो आयमरीच । चक्री सुत पुर अयुध्या बीच ।४७।
सो दुरमारग को उपदेस । भरम्यो भव धर नाना भेस ।
विषय सुरम्य सुपोदन पुरे । परजापति नृप राजहि करे ॥४८॥
नाम मृगावती रानी लहै । तनुज त्रिपृष्ट भयो तिसवहै ।
विजय नामहै अग्रज तास । भद्रा जननि तनुज गुणरास ॥४९॥
अश्व ग्रीव को हति के अवै । राज करहिंगे दोऊ तवै ।
फुनि त्रिपृष्ट भव भ्रमके यही । अंतिम जिनवर होहै सही ।५०।
हे खगपतितुम नमि संतान । ज्वलनजटी बहु गुणकीखान ।
यह विरतंत कहो श्रुति माहिं । यामें रंचहु मिथ्या नाहिं ॥५१॥
सो त्रिपृष्ट केशव पद धार । कन्या को वर उत्तम सार ।
तिस त्रिपृष्टकर प्रभुतासोय । सब खगगण की मिलिहै तोहि ।५२।
होनहार यह ऐसो जान । बरनो आदि जिनेश बखान ।
ऐसे सुनकें खगपति मुदा । पौराणिक को पूजो तदा ॥ ५३ ॥

जयनामा नैमित्तक पुरा। देश नगर सब तिन उच्चरा।
नाम ठाम सब तासों जान। ज्वलन जटी बहु गुणकी खान।५४।
देय भेंट शिच्छा संजूत। इंद्र सुनामा भेजो दूत।
पोदनपुर परजापति जहां। छिन में दूतसुपहुंचो तहां ॥५५॥
सभा सिंहासन राजै भूप। देत भयो तहँ भेंट अनूप।
दूत बिनय सों यों उच्चरै। स्वयंप्रभा तुम लघु सुत बरै ॥५६॥
यो अशीश देदीनो लेख। भूपति बांचो हितसों पेख।
सुन विरतंत दई प्रति भेट। पूजो अरु वह दूत सुखेट ॥ ५७ ॥
दूत विदा ह्वै आयो तहां। रथनूंपुर खगपति है जहां।
नमस्कार कर विनयो तही। कारज सिद्धि भयो यों कही।५८।
ज्वलनजटी सुन हरषो तबै। काल विलम्बन कीजे अबै।
यह विचार कन्या ले चलो। वर विभूति सैना संग रलो।५९।
पोदनपुर धुज तोरण वंत। पहुंचो जाय तहां खग संत।
पोदन पुर पति संपति संग। संमुख आय मिलो तिहि अंग।६०।
आदर कर लीनो पुर माहिं। उचित ठिकाने थापो ताहिं।
तहँ खगपति कर अति उत्साह। स्वयंप्रभा तिस दीनी व्याह।६१।
सिंह तार्क्ष द्वै विद्या दई। बिजय त्रिपृष्ट सुप्रभुता लई।
खगाधीश रथनूंपुर गयो। तजचिंता सुख भोगत भयो ॥६२॥
अब कहिये प्रति केशव कथा। सुन श्रेणिक जिन भाषी यथा।
उत्तर श्रेणी अलकापुरी। अश्वग्रीव थिति तहँ अनुसरी ॥६३॥
ताके नगर बहुत उत्पात। होन लगे तहँ नाना भात।
ऐसे कबहुं न हूवे तहां। देखत जन भय लीनो महां ॥६४॥
नैमित्तिक सतविंदु बुलाय। पूंछो तिस हय कंठ सुराय।
इन उतपातन को फल केम। तब नैमित्तिक बोलो एम।६५।
सिंधुदेश जिन केसरि मार। लीनो यश तिन भुज बलधार।
तुझ प्रति प्रेषित भेट सुछीन। हठकर मारगते उन लीन ॥६६॥

स्वयंप्रभा जो खेचर सुता । ब्याह लईतिनबहुगुण जुता ।
वह नर तेरो अति दुखदाय । इन उतपात तनों फल राय ॥६७॥
अश्वग्रीव मंत्रिन प्रति कही । तुम ढूंढो वा नरको सही ।
ज्यों उपजत विष तरु अंकूर । ताही छिन वह कीजेदूर ।६८।
जन्मत अरि त्यों हनिये सही । नाहीं तो दुख देवै वही ।
तातें सब पृथिवी में ढूंड । वैरी को तुम छेदो मूंड ॥ ६९ ॥
सिंधव आदि पते बतलाय । सब ठौरन जासूस पठाय ।
तिनहूं परख लखो त्रिपृष्ट । पृथिवी माहि महा दुराधृष्ट ।७०।
अश्वग्रीव सों तिन यों भनी । पूतप्रजापति बलको धनी ।
अश्वग्रीव सुन ह्वै भयभीत । चितवो यों अबलो अरिजीत ।७१।
चिंता गति चित गति द्वै दूत । तिहप्रतिभेजे बुधिसंजूत ।
निकट त्रिपृष्ट गये ते खेट । नुति कर आगें धारी भेट ॥७२॥
प्रथम आगमन अपनो भाख । तब यौंबोलोआदर राख ।
भो त्रिपृष्ट भूपति परवीन । खगपति तुम पर आज्ञा कीन ।७३।
रथ आवर्त सुपर्वत नाम । हम आवहिंगे ताही ठाम ।
तुम भी मिलने आवो तहीं । मस्तक आज्ञा धरि के यहीं ।७४।

दोहा छन्द

तब त्रिपृष्ट कहि कोपसों, रेमूरख सिरमौर ।
उष्ट्र अश्व खरग्रीव नृप, सुने न काहू ठौर ॥७५॥
ऐसे सुन तब दूत कहि, खगनायक जगवन्द्य ।
रे त्रिपृष्ट तिस राय प्रति,बचन कहो मतिनिन्द्य ।७६।
अरे दूत पांखो सहित, तो स्वामी खगईश ।
तो पंछी को देखने, को आवै अवनीश ॥७७॥
कहै दूत मति बोलियो, विन देखे चक्रीश ।
जिहि देखत अरि डर मरत, डारहिगो तुझ पीस। ७८ ।
यों सुन बोलो दूत सों, चक्री होत कुम्हार ।

तासों क्यों नृप मिलत हैं, रचहि घटादिक सार ।७९।
ऐसे क्षुद्रन देखिये, खग चक्री अश्वग्रीव ।
मिलिये उत्तम नरनि सों, ज्यों सुख होय अतीव ।८०।

चौपाई छन्द

ऐसी सुन बहु कोपो दूत । मानो याको लागो भूत ।
बकन लगो अति बचन कठोर । राज सभामें कीनों सोर ॥ ८१ ॥
अश्वग्रीव के लायक जोय । कन्या रतन लियो तें सोय ।
यह तो तोहि पचन को नाहिं । लेहै चक्री इक छिन माहिं ।८२।
ज्वलनजटी वह कोन कुखेट । अपनो जीवन चाहत मेट ।
कोन प्रजापाति तेरो बाप । चक्री क्रोध भये आताप ॥ ८३ ॥
दूत भगो यों कहिकें तबै । स्वामी प्रति तिन भाषो सबै ।
अश्वग्रीव सुन धारो कोप । अब करिहों सब अरिगण लोप ॥८४॥

दोहा छन्द

बाजन लागे दुंदुभी, गर्जत ज्यों घनघोर ।
आज्ञा भई खगेश की, फैलो चहुँ दिश शोर ॥ ८५ ॥
रण भेरी सुन सुभट सब, बांध बांध हथियार ।
निकसे गृह तें युद्ध को, चक्री संग अपार ॥ ८६ ॥
कहत परस्पर सूरयों, क्रोध भये चक्रीश ।
अबको तिष्टै भूमिपर, छिन में डारे पीश ॥ ८७ ॥

अडिल छन्द

रथावर्ति गिरि ऊपर सैना साथही ।
तहां गाड़ रण खंभ मंडो रणनाथही ।
लगे होन उत्पात सु अतिही अनिष्ट पै,
ए अवतारी मानो जमके सृष्टि पै ॥८८॥
रुधिर वृष्टि हाकार अनाहद रुदनही,
भूमि कंप दिग दाह सुउल्कापतन ही ।

सुनो याहि जब आयो दोनों भ्रातही,
कर शरीर सन्नाह सुधाये आतही ॥ ८६ ॥
दोऊ ओर की सैना संगर को रली,
महासूर ये पूत प्रजापति के बली ।
सुभट हस्ति हय सारथि लरहि परस्परै,
घोर बीर संग्रामहि अरिसों अरि लरैं ॥ ९० ॥
महा युद्ध यह बरनों जाय न सर्वथा,
कहैं केवली एकहि नाहीं अन्यथा ।
तब त्रिपृष्ट हयग्रीवहि ले ललकार के,
घोर युद्ध तहँ माड़ो क्रोधहि धार के ॥ ९१ ॥
अश्वकंठ भी सन्मुख धायो छोह सों,
भयो युद्ध को उद्यत पूरब द्रोह सों ।
महासूर ते दोऊ डरहिं न मरण सों,
दोहु ओर की सैना छाई सरन सों ॥ ९२ ॥
हारजीत जब होय न शस्त्र समान सों,
तबहिं युद्ध आरम्भो विद्यावान सों ।
महाघोर संग्राम सुकरते चिर भयो,
अश्वग्रीव विद्याबल विरथा सब गयो । ९३ ।
तब खगेश ले चक्र चलायो अरि प्रते,
कर त्रिपृष्ट के आयो पूरब पुण्यते ।
नर त्रिपृष्ट बलधारो अधिकहि शक्रसों,
अश्वग्रीव को ग्रीवहि छेदो चक्रसों । ९४ ।
भरत अर्द्ध प्रति प्रगटे तबहि त्रिपृष्ट ही,
मागध व्यंतर भूचर खेचर सृष्टि ही ।
करहिं सेव सब जाकीबल हरि पद धरो,
दोऊ श्रेणी प्रभु रथनूपुर पति करो ॥ ९५ ॥

दोहा छन्द

महापुरुष संगति करै, क्या नलहै जग माहिं ।
जैनी जन संगति करैं, दुर्लभ है कछु नाहिं ॥ ९६ ॥
चक्र दंड असि शंख धनु, शक्ति गदा ये सात ।
रत्न लये ये विष्णुनें, सुर रक्षत सुख पात ॥ ९७ ॥
रत्न माल गेंद मुशल हल, लहे राम ये चार ।
रत्न त्रय अंतर सहित, भये सात शुभ सार ॥ ९८ ॥
हरि रानी षोड़श सहस, स्वयं प्रभादिक जान ।
राम तिया वसु सहसहैं, शील रूप की खान ॥ ९९ ॥

चौपाई छन्द

भूप प्रजापतिकी जो सुता । जोतिषमाला बहुगुण युता ।
अर्ककीर्त्तिको दीनी सोय । व्याहमहोत्सवविधिहि संजोय॥१००॥
तिनके पुत्रभयो अभिराम । अमित तेजहै ताको नाम ।
पुत्री भई सुतारा तास । शीलरूप शुभगुणकी रास ॥ १ ॥
नारायणके द्वै सुत भये । विनयादिकगुण तिनहूं लये ।
प्रथमपुत्र श्रीविजय अनूप । विजयभद्रहै द्वितियसरूप ॥ २ ॥
स्वयंप्रभासे उपजे सही । ज्योतिप्रभा तिन पुत्री लही ।
भये प्रजापति भवभयभीत । पिहिताश्रवगुरुकीने मीत ॥ ३ ॥
दिव्याधार दिगम्बर भये । क्रमसों पंचम गतिको गये ।
ज्वलनजटी यहसुनके काज । अर्ककीर्तिकों दीनो राज ॥ ४ ॥
जगनन्दन मुनितट तपलयो । शुक्लध्यानधरशिवपुरगयो ।
हरित्रिपृष्टकी पुत्री जोय । जोतिषपरभा उत्तम सोय ॥ ५ ॥
विधी स्वयम्बरताकोकरो । अमिततेज तिनसहजहिवरो ।
अर्ककीर्त्तिकी पुत्री भली । नाम सुतारा गुणसों रली ॥ ६ ॥
ताहि स्वयम्बर मण्डफ ठयो। तहँश्रीविजयसुबरतिनलयो।
केशव राज करो चिरकाल । पहुँचो मर अन्तिम पाताल॥ ७ ॥

अधिकाकियो चक्रीको शोग। हलधर त्यागे भवके भोग।
श्रीविजयको राजहिसाज। बिजयभद्र थापो जुगराज ॥ ८ ॥
कनककुम्भमुनितटबलिगयो। सातसहस्रनृपसंगतपलयो॥
शुक्ल ध्यान सोघाती नास। केवल उपजो गुणकी रास ॥ ९ ॥
अर्ककीर्त्ति सुन बल तप काज। अमिततेजको दीनोराज।
बिपुलमती चारण मुनि तीर। दीक्षाली तिन धरकें धीर ॥ १० ॥
आठकर्महनि मुक्तिहि गयो। अविनाशीसुखसहजेंलयो।
अमित तेज रथनूपुर लसै। श्री विजयपुर पोदन बसै ॥ ११ ॥
आपस में बहु धारें प्रीति। परजा पालें मारग नीति।
राजकरतचिरबीतेताहि। एक समें पुर पोदन माहिं ॥ १२ ॥
राजसभा में इक नर आय। दई असीस भनेंइहभाय।
सावधान ह्वै सुनि अवनीश। सातदिना पोदनपति शीश ॥ १३ ॥
महाबज्र परिहैं निरधार। तोहि कहतहूं यह सुविचार।
ऐसी सुन तबहीं युवराज। क्रोधधरो यों बोलो गाज ॥ १४ ॥
तादिन तो शिर परिहै कहा। कहुरे जो तोकोबिधि महा।
तब वह बोलो सुन नर ईश। रत्नवृष्टि मोपरिहै शीश ॥ १५ ॥
अरु अभिषेकसहितशुभतबै। बस्त्राभरण पहरहूं सबै ॥
अहंकारसों ऐसो कहो। सुनके भूपति अचरज लहो ॥ १६ ॥
राय कहै तुमबैठो भ्रात। सुनी जोकि तुम कहिये बात।
कौन गोततुमको अभिधान। कोनिमित्तयहको श्रुतज्ञान। १७।
इतनीबात कहो समझाय। जो सुनके हम संशय जाय।
तब नैमित्तक बोलोसोय। सुन भूपतिमैं भाषूं जोय ॥ १८ ॥
कुंडल नगर बसै जुअनूप। नाम सिद्धारथ तामें भूप।
सुरगुरुप्रोहित तिस गुणधाम। ताको शिष्यविसारद नाम।१९।
तुम ताऊ हलधर गुणरास। सकल पढ़ो सु विसारद पास।
मैं भी तासंग दीक्षालेय। सकलशास्त्र पढ़कंठ करेय ॥ २० ॥

शास्त्र निमित्त जुहै वसु अंग। सुनलोने में सब निर भंग।
जोतुम पूछोते किहभाव। तोअब सुनिये तिनकीजात ॥ २१ ॥

दोहा छन्द

अन्तरीक्ष[1] पुनि भौम[2] है, अंगग लक्षण[3] जान।
व्यंजन[5] पंचम छिन्न[6] छठ, स्वर[7] अरु स्वप्न[8] बखान ॥ २२ ॥
श्रुत निमित्त वसु अंग ये, इन के भेद अपार।
सब पढ़ पंडित में भयो, लहिके उर निरधार ॥ २३ ॥

चौपाई छन्द

भूख त्रपाकर व्याकुलहोय। दीक्षा तब तज दीनीसोय।
सदा काल में दुखको धाम। भ्रमतआयो पद्मनि ग्राम ॥२४॥
मातल मेरे निनभे तहीं। सोम सर्म निन संज्ञा लही।
हिरण्यलोमा पतिनाम। चंद्रमुखी पुत्री गुणरास ॥ २५ ॥
मो को देवसुता उलई। व्याह तनी विधिवार परनई।
धन को मैं उपजाऊं सही। श्रुतनिमित्त नितबोलो मही ।२६।
मातुलने जो शोकोदियो। सो सब माय हरिषी भयो।
मोहिनिपदह देपोभिया। हिरदे खेद अभिकाई लिया ॥२७ ॥
भोजन अवसर आंदू कही। यह धन ते उपजायो सही।
मो आगे जो फटककी थार। तामैंदीनी कौड़ीडार ॥ २८ ॥
याको शकुन विचारो यहै। पोदन पति शिर विज्जुली दहै।
मेरे तट तिय गेहिनहोय। हाथ धोय तिनडारौ तोय ॥ २६ ॥
फटक थार मोमुरति पेख। तापर जलकण परती देख।
तिह को निहचै यह चितलेव। लाभहोय अभिषेकसमेत ।३०।
सत्य वचन फगुण के धाम। अमोघ जित है मेरो नाम।
यह विरतंत सुनो नृपतदा। नैमित्तिक को कीनो विदा ॥ ३१ ॥
चिंतातुर है राजा तबै। मंत्री निकट बुलायो सबै।
अतिभय युक्त करी तिनबात। करहु विचार टरै यह घात ॥ ३२ ॥

मंत्री सुमति भणें तब एम। हे नृप तुम भयधारो केम।
लोह मजूषा तुमको राख। सागर जल में ताको नाख ॥३३॥
रक्षाकी विधि जानो येह। बिजुली को भय रंच नलेह।
तब सुबुद्धि मन्त्री यों कही। यह तो यतन जुगतहै नहीं ॥३४॥
मच्छ कच्छको भय तहँ होय। और यतन शुभ सुनिये जोय।
बिजयारध की दीरघ गुहा। हम राखेंगे नृप को तहां ॥३५॥
ऐसी सुनकें मंत्री और। बुधसागर बोलो तिहि ठोर।
प्रगट कथा यह कहिये जोय। सज्जन जन अब सुनिये सोय॥३६॥

॥ कुंभभूप और राक्षसकी कथा ॥

चौपाई

बसै सिंहपुर तापसि दुष्ट। संज्ञा सोम लहै अति रुष्ट।
तहँ पण्डित आयो जिनदास। तापसि कीनो बाद निरास ॥३७॥
तापसि मर भवमहिषा धार। चिरवीतो तहँ बाहत भार।
शक्तिहीन ह्वै मग में गिरो। तापर पुरजन मारग करो ॥३८॥
जाती सुमिरन उपजो ताहि। बैरहि बांध मरो मन माहि।
राक्षस उपजो भूमि मसान। रोस भयो बहु अघकी खान ॥३९॥
तहां सिंहपुर द्वै नृप रहैं। कुंभ भीम नृप संज्ञा लहैं।
कुंभ भूपका पाचक जोय। नाम रसायन पाकहि सोय ॥४०॥
कुंभ भूप अमिषासी जोय। अमिष संवार खवावै सोय।
एक समय नर मांस संवार। रांधो अधिक मसाले डार॥ ४१॥
कुंभराय तिस भोजन करो। स्वाद अधिक रसना से बरो।
स्वाद लोलुपी भूपति तही। सूपकार प्रति ऐसे कही ॥ ४२ ॥
यह नर मास सदा तुम करो। तिरयग मास सदा परिहरो।
सूपकार तब सोई करै। पुरजनके शिशु नितप्रति हरै ॥ ४३ ॥
तब लोगन मिल पकरो वही। सब बिरतंत कहो तिन सही।

नर भक्षक नृप जानो जबै । सचिवादिक मिलकाढ़ौ तबै ॥४४॥
कुंभ भूपके निकसो लार । रसायन पाक रसोईदार ।
एक समय नृप भूखो होय । खायो हितकर पाचक सोय ॥४५॥
भूमि मसान बसो नृप तहां । महिपासुर राक्षसहै जहां ।
इन राक्षस आराधो जबै । राक्षसरूप भयो नृप तबै ॥ ४६ ॥
राक्षस का बल कुंभ जुपाय । खात फिरै पुरजन अधिकाय ।
डरके तबही पुरजन भजे । तिनहूं और नगर घर सजे ॥४७॥
राक्षस कुंभ तहांभी जाय । कई यक मानुष दिन प्रति खाय।
पुरको नाम धरो सब जना। कुंभकार कट इह विधिठना ॥४८॥
भीत भये नर सब पुरमांहि । बांधी पंच निवारण ताहि ।
रांध ओदन इक गाड़ी भरो । और खाद्य नाना विधि धरो।४६।
एकहि मानुष दीजे संग । बारी बांधी यह निरभंग ।
राक्षस प्रति सब मिलयोंकही । और मनुष अब हनिये नहीं।५०।
ताहीपुर एक नाह्मी बसे । नाम चंड कौसिक तिस लसे ।
वनिता सोमश्री तिन लही। ताके सुत उपजतहै नहीं ॥ ५१ ॥
एक भूतकी सेवा बहै । दीजे सुत यों दिन प्रति कहै ।
द्विज वनिता नित सेवतभूत। कर्म योग तिन पायोपूत॥ ५२ ॥
ताल पीटते जैसे अंध । कागहि पकरै मुट्ठी बन्ध ।
तैसे सुत द्विज वनितापाय । भूतहि सेवधरी अधिकाय ॥ ५३ ॥
मुंड सुकौसिक राखो नाम। तरुण भयो बहु गुणको धाम ।
राक्षस बारी आई जबै। पंचन द्विज सुतलीनो तबै ॥ ५४ ॥

दोहा छन्द

राक्षस के भोजन निमित, सकट बैठि द्विज पूत ।
लिये जात मग में तहां, भये सहाई भूत ॥ ५५ ॥
भूतहि आपस में कहो, हम सेये इस माय ।
कर्म योग इन सुत लहो, सो भी मारोजाय ॥ ५६ ॥

तातैं अब रक्षा करैं, राक्षस देहि विडार ।
हम प्रभाव इक जग बढ़ै, और पुण्य है सार ॥ ५७ ॥
यों विचार सब भूत गण, गहे दंड कर माहि ।
रोस धारि कै चहुंदिसि, मारण लागे ताहि ॥ ५८ ॥

चौपाई छन्द

राक्षस कुंभ छिपो तब जाय । गिरि विजयारध कंदर ठाय ।
कर्म योग द्विज सुत छुटि गयो । नगर देश सब निर्भय भयो ॥ ५९ ॥
कर्म योग सुरकौं सहाय । कर्म योग नर मारो जाय ।
कर्म योग सुख अहिनिसि लही । कर्म बली इस जगमें सही ॥ ६० ॥
गिरि विजयारध की जो गुफा । राक्षस कुंभ बसै सो तहां ।
तातैं तहां भूप रहिये नाहिं । राक्षसको भय अंतर माहि ॥ ६१ ॥
ऐसे पथ्य वचन सुनताम । मति सागर बोलो गुणधाम ।
वज्र परे या नृपपै सही । सो नैमित्तिक भाख्यो नहीं ॥ ६२ ॥
पोदन पति सिर बिजली परै । सो नैमित्तक मुख उच्चरै ।
तातै यह सिंहासन ठौर । नृपकी जागहि थापो और ॥ ६३ ॥
तब मंत्री सुन याकी बान । करहि प्रशंसा नाना भान ।
रचि मानि बिंब सु नृपको तहां । सिंहासन पर थापो सही ॥ ६४ ॥
जो जानो इह पोदनईश । प्रति दिवसहि सब नावें शीश ।
तबहीं भूपति तजिकैं राज । बैठो जिन ग्रह पूजा काज ॥ ६५ ॥
दीनन प्रति तहँ दीनें दान । पढ़ै निरन्तर जिनवर बान ।
शान्तिक पूजा बहु उत्साह । कर अभिषेक जजे जिननाह ॥ ६६ ॥
वज्र परो दिन सप्तम जबै । सिर प्रतिबिंब विनाशो तबै ।
भयो उपद्रव जबहीं नष्ट । तबहीं हरषी सारी सृष्ट ॥ ६७ ॥
विविध नृत्य नट नाचे तहां । कीनो पुर नर उत्सव महा ।
तब नैमित्तिक पूजो भले । वस्त्राभूषण शोभा रले ॥ ६८ ॥
एक शतक तिस लागें ग्राम । पदमनि भेट दयो अभिराम ।

नृपसम तहां नैमित्तिकभयो। मनवाञ्छित सुखछिनमें लयो।६९।
जिस हिरदय वर विद्या केल। कामधेनु तिस चित्रा बेल।
चिंतामणि अक्षय भंडार। विद्या एक जगत में सार॥ ७०॥
कांचनकलश अमल जलभरे। कमलकुसम तिन मुख अनुसरे।
नृप अभिषेककरो यहभाय। सिंहासन आरोपो राय॥ ७१॥
सब मंत्रिन मिल उत्सवकियो। फिरके राजनृपति को दियो।
पोदनपति तब निरभय होय। भोग निरन्तर भुगते सोय।७२।
एक समय नृप चिन्तो यही। बन क्रीडा अब करिये सही।
जननी पेने अवनी राय। गगन गामिनी विद्या पाय॥७३॥

॥ सुतारा सती के हरण का वर्णन ॥

॥ दोहा छन्द ॥

कनककुंभ अभिषेक कर, राज अनुज को थाप।
सचिवन सों कहिके चलो, बन क्रीड़ाकोआप॥७४॥
संग सुतारा तरुनिले, बैठो तरल बिमान।
जो तिरबन रमने गयो, नन्दन सम सुखखान॥७५॥
मन बांछित लीला करत, विहरत अति रति चित्त।
बन बिरवा वर्णन बदत, हरपे दम्पति मित्त॥७६॥
अब सुनिये औरे कथन, चमर चंचपुर थान।
इंद्रासन खेचर नृपति, तासु आसुरी रानि॥ ७७॥
असनघोप तिनको तनुज, अपरी विद्या राध।
आवत पुरको सहजही, लखी सुतारा साध॥ ७८॥

चौपाई छन्द

कामबाण कर बेधित भयो। हरने को तसु उद्यम ठयो।
मिरग मनोहर माया मई। ताहि सुतारा देखति भई॥ ७९॥
कहो मनोहर सुनिये राज। लावो मृग यह रमने काज।

मृग कारण तब धायो भूप । तौलों खग धारो नृपरूप ॥८०॥
निकट सुतारा तबही आय । ऐसे बोलो प्रीति बधाय ।
आवो सुन्दरि पुरको चलैं । जो लौं दिनमनि आंथे रलैं ॥८१॥
ऐसे कहि गहि ताकी बांहि । ली बैठाय विमानहिं मांहि ।
गगन गमन तिनततछिणकियो।तव निजरूप प्रगटकर दियो।८२।
याकोरूप सुदेखत सती । चितवत चित ह्वै व्याकुल अती ।
कौनरूप यह नर को नीच । नानाविधि छल है इस बीच ।८३।
जात रहो मृग मायाजदा । फिर कर आयोनृप तहँ तदा ।
असन घोष सिसलाई जोय । वर वैताली विद्या सोय ॥ ८४ ॥
रूप सुतारा धरिके तही । आगेही वन बैठी सही ।
भूप प्रते सो बोली तबै । प्राणपती तुम सुनियो अबै ॥ ८५ ॥
कुर्कुटनाग डसी मो देह । बोलो जात न मोपै एह ।
सुरसुनिकटतियदेखतभयो । भूपतिचितअतिव्याकुलभयो ।८६।
सर्वमंत्र नृपज्यों ज्योंपढ़े । त्यों त्योंदुगुण दुगुणविष चढ़े ।
नाग दमन तब औषधि दई । तासों भी बहु पीड़ित भई ॥ ८७ ॥
विषहारी मणिनृप गलमाहिं । सोभी घिसकेदीनी ताहीं ।
तासोंभीविष उतरो नहीं । अतिहीविषमविष जान्योसही ॥ ८८ ॥
रानीको तब मृतकहि जान । सलरोपेतहँ ईंधन आन ।
तामें धर निज वनिता अंग । मरनलगे नरपति तिहि संग ॥ ८९ ॥
भूपति कर इक मुंदरी खरी । सूरज कांति रतन सों जरी ।
ता सन्मुखदे रविकी धूप । आग निकास जलाई भूप ॥ ९० ॥
ऊंची उठी बहु ज्वाला जबै । तामें कुदन लागो तबै ।
जोलों नृप निज व्याकुल होय । सलऊपर पगधारत सोय ॥ ९१ ॥
तौलों खगयुग आये तहां । उतर गगनतें नृपहै जहां ।
छेदन विद्या तिन होठनी । वरवैताली तासों हनी ॥ ९२ ॥
तामें पगकरि ताड़ी जबै । रहि न सकी तहँ क्षणभी तबै ।

अपनो रूप प्रकट करसोय। भागी कहूं अदर्शित होय॥ ९३॥
चरित सुयहनृपदेखतभयो। विस्मयवन्त अधिकअब ठयो।
खगयुग प्रति तब बोलो सही। कहिये मोंसो क्या छलयही॥९४॥
खग दोनों तब बोले एम। सुनिये हरि सुत कहिये जेम।
भरत क्षेत्र विजारध गिरी। दक्षिण दिश ज्योतिषप्रभ पुरी।९५॥
नाम सुभिन्न सुमेरो साचि। राजा करै तापुर में राचि।
मोवनिता वड गुणकी रास। सर्व कल्याणी संज्ञाताम॥ ९६॥
पुत्रदीप शिख मेरो सही। सोई मोसंग आयो यही।
रथनूपुर पति हमरो ईश। ताको नितहि नवावें शीश॥९७॥
क्रीडाकर फिर आये जबै। प्रभु संगते हमविछुरे तबै।
अपने पुरके मारग जाहि। बैठ विमान सुअम्बर माहि॥९८॥
वनिता रुदन सुनो हम तहां। करत बिलाप सुब्याकुल महा।९९
अहो नाथ श्री विजय अनूप। मोरक्षा अब कीजे भूप।
रथनू पुरपति पालहु मोहि। तुम भगनी अरु चोरत कोहि॥२००॥
ऐसी धुनि सुनिमें तहँ गयो। ताखगको ललकारत भयो।
कहुरे खेट कहा तो नाम। याहि हरत क्यों तू अघ धाम॥ १॥
एसी सुन वह बोलो तबै। क्रोध अधिक तिस हिरदै फबै।
असनघोस है विद्याईश। सब अरि मोहिं नवावत शीश॥ २॥
चमर चंचपुर प्रभु में सही। हरी सुतारा अबही यही।
सक्ति होय जो कछु तुम मांहिं। निहचै अबहि छुटावो ताहि॥३॥
एसी सुनि में चितोतही। मो प्रभु अनुजाहरि यह सही।
क्षत्री धर्म नहीं है एह। अरि सों डरत छिपावे देह॥ ४॥
याहि छिपाये बिन क्यों जाहि। अरिको मारों याही ठाहि।
युद्ध विषे में उद्यत होय। धनुष चढ़ाय हुंकारो सोय॥ ५॥
युद्ध करत जब मोकों लखो। तबहि सुतारा मोकों अखो।
युद्ध वृथा अब तुम मति करो। मेरे पतिहि खबर अनुसरो॥ ६॥

जोतिर बन पोदनपुर धीर। सो दुख तासों कहियो बीर।
ऐसी कहि उन भेजो मोहि। यह विरतन्त सुनायो तोहि। ७।
अरु तुम वैरी सिखाई सुरी। निन तुम तियकी सूरति धरी।
सो यह तेरे मारन काज। सत्व बनायो छलको साज॥ ८॥
यह विधि सुन नृप खग प्रति आह। पोदनपुर तू अबही जाह।
जननी अनुज प्रतैं विरतन्त। तुम सब कहियो खेचर सन्त॥९॥
तब खग पठयो अपनो पूत। सिखयो बहु विधि विनय संजूत।
तोलों पोदनपुरहि मझार। बहु उत्पात हुये भयकार॥ १०॥
तिनको देख सकल भयधरे। अमोघ जितसों परमन करें।
किंचित भय नृप पायो सही। सोभी निकस गयो अब नहीं।११॥
क्षेम कुशल ले नर इक अवै। तुमसों आय कहेगो सबै।
ताते तुम चित थिरता धरो। राजाको भय कछु मतिकरो॥१२॥
नैमित्तिक की सुनि यह गिरा। स्वयंप्रभादिक तिष्टे थिरा।
तोलों नभते आयो वही। दीप शिखामों खग सुत तहीं॥१३॥
करत सुभूषित भूपरवीन। स्वयंप्रभाको प्रणमन कीन।
ताके सुनको सब विरतंत। आदिहि अन्त सुनायोसन्त॥१४॥
क्षेम कुशल श्री विजय शरीर। तातें भय तजि धारो धीर।
हरन सुतारा आदिक सबै। स्वयंप्रभामों सुनियो तबै॥१५॥
दव सों दग्धी मानोलता। दीप शिखा मनुली मंदता।
स्वयं प्रभा भी ऐसे गता। तनुज तनुज तिय दुखतें हता॥१६॥

दोहा छन्द

ज्यों हंसी घनघोर सुनि, ऐसे शोकित होय।
स्वयं प्रभा चतुरंग बल, ले निकसी तब सोय॥ १७॥

चौपाई छन्द

खेट दीप शिख आगे कियो। विजय भद्रसुत साथहि लियो।
जोतिरबन तब पहुंची जाय। सानुज आवत देखी माय।१८।

श्री विजय उठ मिलियो तबै। स्वयंप्रभा गल लायो जबै ॥
दुःखित माता बोली यांहि। उठ सुत पोदनपुरको जाहि॥१६॥
तब श्रीविजय स्वपुरको चले। जननि अनुज सब संगहिरखे॥
पुत्र भयो तहँ सुख आधीन। माता तब दुख परसन कीन ॥२०॥
हरन सुतारा आदिक सबै। माता सों इन भाषों तबै ॥
हे माता यह खग संभिन्न। मो उपकारी परम सुधन्न ॥ २१ ॥
अमित तेजको सेवग एह। प्रीतिवन्त बहु गुणको गेह ॥
जो उपकार करो इन ताहि। करन सकै नर याभव माहिं॥२२॥
मात पुत्र यह बुधि अरु ठई। पौदम रच्छा अनुजहि दई॥
बैठ विमानहि दोऊ रले। रथनूपुर तट छिनमें मिले ॥ २३ ॥
अमित तेज सुन सन्मुख रलो। पित्र स्वसासुत सहितहिमिलो॥
अपने पुरले थापे तबै। विधि पाहुन गत कीनी सबै ॥२४॥
असन घोषको सुन विरतंत। दूत मरीच पठायो अंत ॥
असन घोष प्रति बोलो जाय। बात सलाह कही बहुभाय ॥२५॥
दुष्ट गिरा सुन ताकी तबै। आय अमितसों भाषो सबै॥
मंत्रिन संग सुमंत्र बिचार। अरिछेदनको उद्यम धार ॥ २६ ॥
अपने बंशहि आई चली। ऐसी विद्या गुण त्रय रली ॥
युद्ध वीर्य अरु बीणा भनी। बंध विमोचन तीजी गनी ॥२७॥
हरि सुतको ये दे निरभंग। पुत्र पंचसे दीने संग ॥
अरिपै भेजो पोदन ईश। संग बहुत दीने अवनीश ॥ २८ ॥
अमित तेजको जेठो पूत। सहस्ररस्मि बहु गुण संयूत ॥
ताको संगले गिरिहेमन्त। विद्या साधन बैठो सन्त ॥ २६ ॥
विद्या साधन सहता जोय। महा ज्वाल आराधै सोय॥
या अन्तर अब सुनिये और। असनघोष खगहे जिहिठौर ॥३०॥
हरिनन्दन आनन्दित हिये। रस्मवेग आदिक संग लिये॥
चमर चंचपुर चढ़ियो जबै। असन घोसने सुनके तबै ॥३१॥

अपने सुत तिन पठये बली । युद्धहेत बहु सैना रली ॥
नाम सुघोष सुफुन सतघोष । सहस घोष आदिक धररोष ॥३२॥

दोहाछन्द

असन घोष के तनुज यह, युद्ध विषें परवीन ।
ते सब हरिके पुत्रने, कीने निर्बल दीन ॥ ३३ ॥
सुत हार सुन वज्रधुनि, क्रोध धरो रणहेत ।
धायो सैना संगले, अरि सन्मुख ज्यों प्रेत ॥३४॥
करिबेको अरितन द्विधा, हरि सुत छोड़े बान ।
भ्रमरी विद्या कर खचर, रचे रूप द्वै जान ॥३५॥
पुनि खंडे तिन रूप द्वै, भयो चतुर गुण सोय ।
एक असन रणमें भयो, ज्यों ज्यों खंडन होय ।३६।
इतने विद्या साध के, रथनूपुर पति आय ।
महा ज्वाल सब छोड़िकें, दई हुताशन छाय ॥३७॥
अर्द्धमास संग्राम कर, भागो है असमर्थ ।
असन घोष के नीत बिन, भये शस्त्र सब व्यर्थ ३८
गिरिनाभिज पै विजय जिन, तिनकी सभा मझार।
जाय छिपो भय भीतह्वै, जिन शरणो भयहार ॥३९॥

चौपाई छन्द

ताको तिस पीछे ये लगे । श्री विजयादिक आये भगे ॥
मानथंभ तहँ दर्शन रलो । इनको मान सकलही गलो ॥ ४० ॥
तीन प्रदक्षण देके नये । कर युग जोर सुमस्तक नये ॥
असन घोस संग त्याग विरोध । ठये सभामें धार सुबोध ॥४१॥
असन घोषकी तबही माय । लेय सुतारा पहुँची आय ॥
हरि सुत वनिता सौंपी जबै । सुत भिक्षा इन मांगी तबै ॥४२॥
अब क्षमियो मोसुत अपराध । यों कहि तिनसंग प्रीतिहि साध ॥
तब खगपति पूछो शुभ धर्म । जिनपति बोले छेदत भर्म ॥४३॥

तत्व अर्थ समकित व्रत कहे। सुनत थकित सुरनर तहँ रहे ॥
अमित तेज तहँ पूछो एव । इनमो बह निहरी किस हेव ।४४।

सुताराके पूर्वभव तथा कपिलकी कथा

चौपाई

विजय केवली बोले तबै । उत्तर यह सुन खगपति अबै ॥
याही भरत मगध शुभदेश । अचल नाम तहँ ग्राम नरेश ॥४५॥
धरनी जट द्विज निवसै तही । नाम अग्नला बनिता लही ॥
ताकी कुच्च भये द्वै पूत । इंद्रभूत अरु अग्नि सुभूत ॥४६॥
दासी सुत इक ताके भयो । ताको नाम कपिलही ठयो ॥
वाको विप्र पढ़ावे नहीं । क्रोध धरै अति तापै सही ॥ ४७ ॥
औरनको जब शिक्षा देय । तब यह सुनकें कंठ करेय ॥
जितनी विद्या याने लही । इतनी और न काहू गही ॥ ४८ ॥
अति पंडित इस जानो जबै । काढ़ दियो यह घरसों तबै ॥
विप्रभेषधर पहुंचो तहां । नगर रतनपुर निवसे जहां ॥ ४९॥
नृप श्रीषेण सुतामें बसैं । दाता के गुण जामें लसैं ॥
ताके सदन सुरानी दोय । तिनकी संज्ञा सुन अब सोय ॥५०॥
सिंह नंदिता गुणकी धाम । फुनि आनंदितहै अभिराम ॥
दोय पुत्र तिनके शुभ ठये । इंद्र उपेंद्र सुनामा भये ॥ ५१ ॥
राज पुरोहित सत्यक नाम । जम्बू बनिता ताके धाम ॥
सत्य सुभामा ताके सुता । शीलरूप गुणाकर अति जुता ।५२।
विद्यारूप कपिलमें रले । सत्यकने यह देखो भले ॥
चर्चा वेद तनी अनुसरै । बहुत बड़ाई ब्राह्मण करै ॥ ५३ ॥
दासी पुत्र न माने आप। करै सुभारी अपने पाप ॥
विप्रोमें मिल जीमें सही । अपनो भेद बतावे नहीं ॥ ५४ ॥
सत्यकने तब मनमें कही । याहि सुता परनाऊं सही ॥
यह विचारकर दीनी ब्याह । बहुतो सोबो अंरपो ताहि॥५५॥

रहिबे को इक मन्दिर दयो । निशि में रतिको समयो भयो ॥
रति लीलाको लागो जबै । खोटी चेष्टा देखी तबै ॥ ५६ ॥
सत्य सुभामा मनमें कहै । कुल लच्चण नाहि यामें बहै ॥
नृपकर पूजित मुनिके याहि । धरनि जटी चिंतो मनमाहि ।५७।
अपने सुतपै अबही जाय । छेदहुं दालिद धनको लाय ॥
यो बिचार चित आयो तहां । झूठो छली कपिलहै जहां ।५८।
देख दूरतें उठकें नयो । ले मंदिर में भोजन दयो ॥
वस्त्राभूषण देकें कही । मेरे जनक सु पंडित यही ॥ ५६ ॥
धरनि जटी भी सबसों कहै । मेरो सुत है उत्तम यहै ॥
फुनि एकान्त बुलायो यहू । पावों पड़कर पूछो बहू ॥ ६० ॥
कहो ससुरजी सांची बात । पुत्र तिहारो कैसी जात ॥
उत्तम जात न लागै मोह । ताही तें ही पूछू तोह ॥ ६१ ॥
एसी सुनके ससुरो भनें । मेरो ही सुत उत्तम ठनें ॥
बारंबार सु पूछत याहि । बिप्र यथारथ माने नाहि ॥ ६२ ॥
तब इन लोभ दिखायो याहि । बहुतो कांचन दीनो ताहि ॥
मीठी वस्तु खवाई घनी । मेवा सों बहु मिश्री सनी ॥ ६३ ॥
आछे चीर अधिक पहराय । बहुरे पूछो उसही भाय ॥
ब्राह्मणको तब लागो लोभ । याकी बुद्धि लयो अति छोभ ।६४।
लोभ करत नर अपयश लहै । लोभ करत गति नीची बहै ॥
बोलो द्विज सुन पुत्री बात । नीच बिप्र है याकी जात ।६५।
दासी जनित सु मेरो सून । सोतेरो पति द्विज है ऊन ॥
ऐसे कहिकें भागो सही । गयो देशान्तर निबसो तही ॥६६॥
क्या न करै धन जगमें काज । ऊंच नीच सब यासों साज ॥
अपनो पति जब जानो नीच । भई सुविरकित मनके बीच ।६७।
हालाहल जो विषको खाय । मरि है तो बर है अधिकाय ॥
नीच कुलीकी संगत करै । धर्म कर्म सब जासों टरै ॥ ६८ ॥

शील भंग भय हिरदय धार । रानी शरण गई सु विचार ॥
सिंहनंदिता रानी जोय । पुत्री कर राखी तिन सोय ॥ ६६ ॥
सत्य सुभामा नृपसों कही । जो चेष्टा प्रिय याके लही ॥
राजा सुन चित कोपे जबै । नीच नगरतें काढ़ो तबै ॥ ७० ॥
करे सुनित मति पूजा दान । शुभ उदयागत पहुंची आन ॥
एक समय राजग्रह ठाय । आये युग चारण मुनि राय ॥ ७१ ॥
नाम अमित गति प्रथमहि मुनी । दुतिय अरिंजय अतिही गुणी ॥
सो पड़गाहे भूपति जबै । चरण बंदना कीनी तबै ॥ ७२ ॥
बर आहार जुतिन को दियो । भक्ति भाव चित अतिही ठयो ॥
दान समै नरपति श्री षेन । पुण्य लह्यो अघछेदो ऐन ॥ ७३ ॥
या नृपकी जो रानी दोय । सत्य सुभामा तीजी सोय ॥
तीनों मिल अनमोद्यो दान । पायो पुण्य सु नृप सामान ।७४।
भोग भूम उत्कृष्टी आव । बांधी चारों मिल तिहि ठाव ॥
कृत कारित अनुमोदो तीन । इनमें भेद न रंच न कीन ॥७५॥
अब कोशाम्बी नगरी जहां । भूप महाबल निवसै तहां ॥
नाम श्रीमति रानी तास । शीलादिक बहु गुणकी रास ॥७६॥
श्री कांता है तिनकी सुता । शीलरूप गुणाकर अति जुता ॥
इन्द्रसैनको दीनी सोय । व्याह तनी विधिसब संजोय ॥ ७७ ॥
रूपवंत इक दासी भली । ता संग सो बहु आई चली ॥
सो उपेंद्रने देखी जबै । लुब्ध भयो चित तापै तबै ॥ ७८ ॥
ऐसे सुनके याको इन्द्र । क्रोध धरो अति जेम फणिन्द्र ॥
है सनद्ध पहरो सन्नाह । कारण युद्ध करो उच्छाह ॥ ७९ ॥
तब उपेंद्र भी उद्यत भयो । बांधे आयुध लरने ठयो ॥
पुर बाहर उद्यानहि ठोर । बंधे मोरचे दोनों ओर ॥ ८० ॥

दोहा छंद

भूपति इनको युद्ध सुन, लागो करन सलाह ।
सिंह साव सम अडिर हैं, याकी मानैं नाह ॥ ८१ ॥

कहा न मानत पुत्र जब, पिता सु बहु दुख मान ।
विष प्रसूनको सूंघ के, भूपति त्यागे प्रान ॥ ८२ ॥
सब रानी ह्वै दुःखनी, मनमें कियो बिचार ।
अब हम जीवन केम है, विधवा भई असार ॥ ८३ ॥
तिनहूं भी विष कुशुम को, सूंघ तजे असुवास ।
ताही विधि जीवन तजो, सत्य भाम गुण रास ॥ ८४ ॥
धातकी खंड सु पूर्व दिस, कुरु उत्तर भू भोग ।
सिंह नंदिता नृपतिअरु, भये सुदंपति योग ॥ ८५ ॥
अरु अनंदिता दुतिय तिय, तहँ उपजो पुल्लंग ।
सत्य भाम द्वै बल्लभा, रमहि सुता के संग ॥ ८६ ॥
पल्य तीन सुख भोग कें, प्रथम स्वर्ग श्रीषेन ।
श्री प्रभनामा सुर भयो, सुख भुगतै दिन रैन ॥ ८७ ॥
सिंह नंदिता तहँ भई, विद्युत प्रभ तिस तीय ।
सो अनंदिता सुर भयो, बिमल प्रभा नामीय ॥ ८८ ॥
द्विज पुत्री ताकी तिया, सुकल प्रभा अति धान ।
पंच पल्य ये आयु धर, भये सुखन की खान ॥ ८९ ॥

चौपाई छन्द

नृप श्रीषेन सुचयके वही । अमित तेज खग उपजो सही ।
सिंह नंदिता पूरब जोय । जोति प्रभा अबलो तिय होय ॥ ९० ॥
सो अनंदिता ह्वै कर देव । यह श्री बिजय भयो नृप एव ।
द्विज तनुजा तो अनुजा एह । भई सुतारा सुंदर देह ॥ ९१ ॥
कपिल कथन अब सुनिये सही । भवबन में बहुभरमो वही ।
भूत रमन बनमें गंभीर । ऐरावत सरताके तीर ॥ ९२ ॥
तापस आश्रम बहुअभिराम । तहां तापसी कोसिक नाम ।
चपल सुवेगा बनिता कहै । आय भयो सुत ताके वहै ॥ ९३ ॥
मृग श्रृंगी सो संज्ञा धरै । तापसही को तप अनुसरै ।

चपलवेगखग निकसो आय । ताकी बिभव लखी अधिकाय ।९४।
बांध निदान सुतापसि मरो । असन घोष यह खग अवतरो ।
याहिं ऊपजो पूरब नेह । ताते हरी सुतारा एह ॥ ९५ ॥
है खग पति नवमे भव सही । पंचम चक्री हो है सही ।
षोड़शमो तीर्थंकर जान । शान्ति जिनेश्वर गुणकी खान ॥ ९६ ॥
तीजो कामदेव पद धार । पावोगे तुम भवको पार ।
वचनचांदनी जिनशशिलीन । खगपतिकुमुदविकासितकीन ।९७।
असन घोष जननी संयुक्त । स्वयं प्रभासु सुतारा युक्त ।
इन आदिक बहुते नर नरी । सुन उपदेशहि दीक्षा धरी ॥ ९८ ॥
जिन पद बन्दन करके तबै । खग पति हरि सुत आदिक सबै ।
अपने अपने पुर को गये । मन बांच्छित सुख भोगत भये ॥ ९९ ॥
अमित तेज विद्या धर तदा । पर्बी प्रोषध पालै सदा ।
प्रायश्चित्त बिचारै चित्त । वसु विधि पूजत जिनपद नित्त ॥ ३०० ॥
नित प्रति दान सुपात्रहि ठनैं । सुन सुन धर्म कथा चित गनैं ।
सम कित वन्त सुसमतावन्त । अमित तेज निरदोषी सन्त । १ ।
परजा पालत जैसे पिता । दोय लोक हित उद्यत निता ।
विद्या बहु तिन सहजहि लही । संज्ञा तिनकी सुनये सही ॥ २ ॥

दोहा

प्रज्ञप्ती अरु स्थंभनी, नीर बहू की जान ।
काम रूपनी मानये, बिश्व प्रकाशनी आन ॥ ३ ॥
अप्रतिघात सुगामिनी, अम्बर गामिनी और ।
उत्पतनिभव संकरा, आवेशनि तिह ठौर ॥ ४ ॥
शत्रु दमा प्रस्थापनी, आवर्तनि प्रह रीन ।
मोहनि और बिराटनी, संग्रामनि संग्रीन ॥ ५ ॥
भुंज नीच प्रवर्तनी, अरु प्रहापनी जान ।
प्रमद नीच प्रभावती, फुन पलायनी मान ॥ ६ ॥
निक्षेपव चंडालनी, सर्वरि गौरी संग ।

अव द्रांगी श्री मग्दुणी, सत संकुलमा तंग ॥ ७ ॥
कुष्मडी अरु रोहिणी, वर बेगामिन लेख ।
सह बेगामिन बेगनी, चंड बेगनी पेख ॥ ८ ॥
पर्णलघी चलघूकरी, चपल बेग दरहाल ।
बेगवती मह ज्वालनी, शील उश्न बेताल ॥ ९ ॥
सब विद्या संछेदनी, बंध मोचनी चीन्ह ।
प्रहरावनी भ्रामरी, युद्ध बीरजा लीन्ह ॥ १० ॥
और भोगनी आदि दे, विद्या बहु गुण रास ।
सुकुल सुजाति प्रसाधिता, आई खगपति पास । ११ ।
बल पायो विद्यान को, गिरसैनी ह्वै मद्ध ।
अमित तेज अधिपति बिदित, भई राज सों ब्रद्ध । १२ ।

चौपाई ।

एक समय आए तिस धाम । चारण मुनिवर दमवर नाम ।
तिनको दान दियों आहार । पंचाचार्य भए तिह बार । १३ ।
अमित तेज श्री बिजइ एव । बनमें देखे गुरु सुर देव ॥
वंदन करके सुन उपदेश । प्रश्न कियो श्री बिजय नरेश । १४ ।
मेरे और पिताके जोय । भव सम्बंध सो कहिये सोय ॥
तव बोले मुनिवर सुरदेव । भव त्रपृष्टिके भाषे एव ॥ १५ ॥
बिश्वनंद महातम जेम । बरनो मुनिवर सबही तेम ॥
ताकी महिमा सुनके कान । हरिसुत बांधो चितहि निदान । १६ ।
जैसो पद पायो त्रपृष्ट । ऐसो पद मो मिलहु बिशिष्ट ।
पुनि दोऊ गृह अपने गए । सुख अमृत नित पीवित भए । १७ ।
एक समयदै मुनिवर मिले । तप शीलादिक गुण सौं रले ।
बिपुलमती पुनि बिमलमतीश । नमत भए खग अरु भूमीश । १८ ।
बात सुनी तिह मुनिके पास । आयु रही सब एक ही मास ।
धर्म दया अति उद्यत होय । अमित तेज बैरागी सोय ॥ १९ ॥

अमित तेजको उत्तम पूत। अर्क तेज बहु गुण संजूत॥
ताको परजा पालन काज। कलश ढारके दीनों राज॥२०॥
श्री दत्ता सुत हरि सुततनों। ताको राजमही पति ठनो॥
दोनों नृप मिल ताहीं घरी। सार अठाहीं पूजा करी॥२१॥
पीछे चंदन बनमें गए। चंदन मुनि पै दीक्षित भए॥
प्राण तजे करके सन्यास। पहुंचे आनत सुरग सुवास॥२२॥
नंदावती विमाने धाम। उपजो खग रवि चूलक नाम॥
स्वस्तिक नाम विमाने ठयो। हरि सुत मणि चूलक सुरभयो॥२३॥
सागर बीस भुगतके आव। चयके उपजे याही ठाव॥
प्राग विदेह सुवत्सक देश। नगर प्रभाकर है शुभ भेश॥२४॥
सुमति उदधि नृप तहं गुणरास। नाम वसुंधर रानी तास॥
सो रवि चूल भयो तिसकूख। अपराजित नामा सुख रूख॥२५॥
अनुमति नामा तासु विमात। रूपशील बहु गुणकी पात॥
ताके उपजो सो मणिचूल। अनंत वीर्य नामा गुणमूल॥२६॥
प्रीतवंत दोऊ यह भ्रात। गुण आकर अत्नाकर सात॥
जगत नैत्र कमलाकर रवी। नित्य उदय यह उपमा फवी॥२७॥
इनको जनक भयो वैराग। आतम काज लहो अनुराग॥
दोऊ सुतको नृपपद दियो। आप स्वयं प्रभ जिन तटगयो॥२८॥
तजके संग दिगम्बर होय। रिद्धि फनिंद्र तनी अवलोय॥
ताके पदको लालच करो। बांध निदान सु मूरख मरो॥२९॥
पद धरणिंद्र लियो तिन जाय। या निदानको धिक् दुखदाय॥
अभिराजित अपराजित भूप। अनुजअनंत सुवीर्य अनूप॥३०॥
शोभित इंद्र प्रतेंद्र समान। सकल वसुंधर फेरे आन॥
भूर भूपजे भूतल मांहि। इनकी सरवर कोऊ नांहि॥३१॥
एक समय किनहू इन तटीं। भेट सुकर भेजी ढेनटी॥
नृत्य करै जो चपला छुटी। दरको सशिमुख कुटकन लटी॥३२॥

कवरि अंगुरी पंखुरी फटी। अंबर उघरत चम्कत कटी॥
चरण धरत धरणी छवि अटी। हाव बिभावहि अपछर हटी।३३।
सिंहासन बैठे जुग भ्रात। इनको नृत्य लखो तिह भांत॥
इतने कौतुक देखन काज। आयो तहं नारद ऋषिराज॥३४॥
नृत्याशक्त कुंवर जुग तही। ठाड़ो नारद देखो नहीं॥
पवन अनादर लागी याहि। रोस अगन चमकी उरमांहि।३५।
तप्त भयो तन ताको एम। चंड किरन रवि भभको जेम॥
अति रोपित ह्वै आयो तहां। दमनारी प्रति केशव जहां॥३६॥
सकल सभाजनको श्रृंगार। सिंहासन बैठो दमनार॥
ऐसे खगपति देखो जबै। अम्बर ते यह उतरो तबै॥ ३७॥
जबहि असीस दई इन ताहि। खगपति उठ नुतकीनी याहि॥
बहुत मानकर आदर दियो। आसनदे बैठावत भयो॥ ३८॥
तब दमतारी बोलो एम। कहिये ऋषि तुम आए केम॥
ऐसी सुनके नारद कही। तेरे काज भ्रमतहूं मही॥ ३९॥
सार बस्तु जे जगके माहि। भ्रमन करूं अबलोकन ताहि॥
निशदिन सुनरन तेरो मोहि। उत्तम बस्तु बताऊं तोहि।४०।
दोय नटी हम देखी भली। रम्भा उरवसी उपमा रली॥
तुम लायक वे नटनी महां। सह न सको मैं लखके तहां।४१।
चूड़ामणि जो पगके मांहि। किंचित शोभा लागे नांहि॥
अपराजित भोगो बरआस। अनुज अनंत बली है तास।४२।
तिनके ग्रह बेलागत एम। रंक गहे मणि उत्तम जेम॥
तातै उनके सोहत नहीं। अपने ग्रह तुम आनो सही॥४३॥
ऐसे सुन खग भेजो दूत। भेंट सहित बहु गुण संयूत॥
पहुंचो खेट प्रभाकर पुरी। नृप जुग देख उपायन धरी।४४।
नमस्कार कर बोलो तबै। भो नरपति जुग सुनिये अबै॥
दमतारी चक्री खग धीर। तिनने भेजो तुमरे तीर। ४५।

जुग नटनीके मांगन काज । ते अब दीजे प्रीती साज ॥
ऐसी सुन ग्रह भीतर जाय । बोलो मंत्रिन प्रति यह भाय ।४६।
किह विधि कारज कीजे यही । ऐसी पूछत बैठो सही ॥
पुन्य जोगते आई तबै । तीजे भवकी विद्या सबै । ४७ ।
अपराजित सो बोलो सही । हे नृप चिंता कीजे नहीं ॥
अगित तेज भव विद्या लई । सो हम तुमको सहजे भई ।४८।
यो कहके कर जोरे खरी । सब बिपत्त क्षय कारक वरी ॥
विद्यागत जब पायो राय । हिरदे बल धारो अधिकाय ।४९।
दोऊ भात नटीके रूप । होकर निकसे अधिक अनूप ॥
दूत संग यह दोऊ चले । छिनमें शिव मंदिरपुर मिले । ५० ।
तहँ दमतारी सभामें जाय । दोऊ नृत्य करो अधिकाय ॥
बिस्मति होकर खगपति कही । उत्तम नृत्य करो तुम सही ५१
कनक श्री पुत्री इन हाथ । सोखनको सौंपी खग नाथ ॥
ताको लेय अनंदे चित्त । गीत कला सिखलावत नित्त । ५२ ।
लघु भ्राता सो रानी सोय । दोऊ अंतर प्रीत समोय ॥
ताको लेते गगनहि गयो । खगपति सुनके क्रोधित भयो ।५३।
भेजे सुभट चले सो धाय । अपराजित ने दिए भगाय ॥
पुनि भेजे भट बहु परचंड । ते भी तिन कीने सत खंड ॥५४॥
तब खगपति चिंतो मन मांहि । यह तो खल नटनीको नांहि ॥
आपुनहीं तब रण अनुसरो । राम संग बहु संगर करो ॥५५॥
जे विद्या पाई बलदेव । तिनसों युद्ध करो बहु भेव ॥
तब अनंत वीरजको लखो । दमतारी बहु क्रोधित अखो ॥५६॥
रे भूगोचर तस्कर महां । अब तू भाग जायगो कहां ॥
केसव बोलो रे खग नीच । अब आई है तेरी मीच ॥ ५७ ॥
ऐसे कह कहकर तब गिरा । घोर वीर संयुक्त अनुसरा ॥
युद्ध करो चिर जब खगराय । चक्र चलायो तब भयदाय ॥५८॥

स्वयं प्रभा चक्रको नाम । एक सहस आरे अभिराम ॥
इक इक आरे लख लख चार । सुन्दर दसन बनो विस्तार ॥५९॥

दोहा।

चक्र आय हरि निकटही, दई प्रदक्षणा तीन ।
पूरब पुन्य प्रभावते, करमें थित तिन कीन ॥६०॥
सोई चक्र चलाय के, मारो खगपति ठौर ।
जीत लही हलधर हरी, फैलो जस चहुं ओर ॥६१॥
आय नये खगपति सबै, भए त्रिखंडप भूप ।
अपनी नगरीको चले, संपत सहित अनूप ॥६२॥
केवल ज्ञानी कीर्ति धर, देखे मारग मद्ध ।
वंदन कर बैठे सभा, लही धर्मकी बद्ध ॥६३॥
कनकश्री भव आपने, सुन के भई विरक्त ।
दीक्षा ले जिनतट गई, राग द्वेष परि मुक्त ॥६४॥
बलहरि ताहि प्रशंस के, जिनको करो प्रणाम ।
समव शरणते निकसके, पहुंचे अपने धाम ॥६५॥

आडल्ल

मार शत्रु को टारो सकल विषादही । जस प्रताप आरोपो लोप विवादही ॥ पूजनीक बुध जनकर जिनके चरन हैं। सुकृत रूप जुगभूप सो दुख के हरन हैं ॥ ६६ ॥

हलधर जो अपराध न राजिस राजसों । लाजत निज चित अह निस आतम काजसों ॥ अरि अजने दमतारी हतो धर धीर्यही । राज धुजाधर चक्र अनंत सुवीर्यही ॥ ६७ ॥

धर्मवंत सुखकंत सुसंत विख्यातए । प्रीतवंत गुणवंत सो दोऊ भ्रातए ॥ यह चरित्र अतिपावन इनको जानिए । जैनु लदे सुत के नित हिरदे आनिये ॥ ६८ ॥

इतिश्री सम्यक्त्व भौवाभरण भूषित जैनीभाषा कितायां लाला बुलाकी दास विरचितायां श्री शांतिनाथ भव वर्णनो नाम चतुर्थ प्रभावः ॥४॥

अथ शांतिनाथ स्तुति ।

सवैया तेईसा

हे वसुभेव करै बहु खेद सुछेद सुज्ञान कुज्ञान प्रकाशै ।
अष्ट हने गुण चारठने गति नंतचतुष्टय सर्व विनाशै ॥ एसे महा
अरि शांति किये जिनसों जिन शांति जुकांति सुभासे । जैनुलदे
सुत नमें नित ताहि जुशांति करो मुभको शिवजासे ॥ १ ॥

चौपाई

केशव मृत्यु लई शिवभोग । प्रथम नरक पहुँचो अघजोग ॥
अनंत सैन जो हर सुत एव । ताको राज दियो बलदेव ॥ २ ॥
आप जसोधर मुनिपे गयो । दीक्षित होय अवध धर भयो ॥
एक मासका कर सन्यास । अच्युत इंद्र ठयो सुखरास ॥ ३ ॥
इनको जनक फणिंद्र सुभयो । प्रथम नरकसों सुत पहिगयो ॥
जिन वाणी उपदेशी जबै । दृढ़ सम्यक उन धारो तबै ॥ ४ ॥
भुगती आयू बरस संख्यात । चयके आप भयो नरताज ॥
भरत यही खचराचल जहां । उत्तर श्रेणी शोभित तहां ॥ ५ ॥
व्योम वल्लभा नगरी तही । मेघ वाहन नरपति है सही ॥
मेघमालनी ताकी जोय । ताके उदर भयो सुत सोय ॥ ६ ॥
मेघनाथ ताको अविधान । द्वै सेनी जिस मानें आन ॥
मेरु ऊपर नंदन बन जोय । प्रज्ञप्ति तहँ साधे सोय ॥ ७ ॥
अच्युतपति ने देखो तही । भवफल कह सम्बोधो सही ॥
लब्ध बोध है दीक्षत भयो । नंदन गिरि प्रतिमासन ठयो ॥ ८ ॥
अश्वग्रीवको अनुज अनिष्ट । नाम सुकंठ महाई दुष्ट ॥
भव अनेव अवगाहत वहै । असुर भयो मुनि देखो यहै ॥ ९ ॥
यह अरिहर सुत मेरो वही । याही हनूंमें अबही सही ॥
मेरो अग्रज याके पिता । बलको पाय सो रणमें हता ॥ १० ॥

इह विध क्रोध धरो अधिकाय। बहु उपसर्ग दियो तिंहठाय ॥
विचलो नाहिं सही तिन त्रास। पहुंचो अच्युत धर सन्यास ।११।
पद प्रतेंद्र इन पायो तहां। मघवासह सुख भुगते महा ॥
आयु व्यतीते अच्युतपती। चयके आयु भयो या छती ।१२।
जम्बूद्वीप अनुपम यही। प्राग बिदेह बिराजे तही।
मंगल देस सुरग सम मान। रतन संचपुर तामें जान ॥ १३ ॥
क्षय मंकर राजा गुण रास। सुबरण माला रानी तास।
ताकी कोखहि उपजो वही। वज्रायुद्ध तिन संज्ञा लही ॥ १४ ॥
जब याके तन जोबन ठयो। चंद बदन कर तामस हनो।
राजसुता लक्षमीवत सोय। वज्रायुद्ध को ब्याहीं सोय ॥ १५ ॥
इन दोनोंके उपजे वही। जीव प्रतेंद्र अच्युतको सही।
सहसायुद्ध तिन संज्ञा लई। श्री खेना तिय ताके भई ॥ १६ ॥
सहस्रायुद्धके सुत अभिराम। कनक सात उपजो गुण धाम।
पुत्र पौत्र कहियोसो अनूप। राज करत क्षयमंकर भूप ॥ १७ ॥
एक समय सुरपति ईसान। बैठो सभा करत बाख्यान।
वज्रायुद्ध नृप उज्जल जोय। उज्जल दर्शन धारे सोय ॥ १८ ॥
यासम समकित औरन धरैं। इहविध स्तुति सुरपति करैं।
चित्रचूल सुर ऐसो सुनो। सहनसकोथुति संशय गुनो ॥ १९ ॥
और रूप धारो सुर धीर। आयो वज्रायुध के तीर।
यथायोग्य नृप आदर दियो। बाद करनको तहँ अरुठयो ॥ २० ॥

दोहा

चित्र चूल एकांत नय, अनेकांत नरराय।
इनको बाद बखानिये, वातें रूप वनाय ॥ २१ ॥

अथ सुर नृपेकांत निकांत संवाद

वचन का

प्रथम ही सुर बोलो कि हे राजन! जीवादिक सप्त तत्व नव पदार्थ के विचार विषे तुम पण्डितहो तातें तुम कहो कि

पर्याय और अपर्याय विषे भेदहै कि नहीं ? जो तुम कहोगे कि पर्याय ते अपर्याय भिन्न है तो वस्तु का अभाव होयगा। जैसे घटके अभावतें माटी काभी अभाव होय औरजो एकत्व कहोगे कि एकही है तो द्रव्य अपर्याय ऐसें भिन्न कथन का अभाव होयगा तुम्हारी युक्ति घटने की नाहीं। तुम्हारे मतका अभाव होयगा और जो तुम कहोगे कि द्रव्य और पर्याय यह दोनों आपस में अगोचर हैं प्रगट नाहि मिलरहे हैं तो द्रव्य एक है पर्याय अनेक हैं एकत्व दोनोंमें कैसे कहिये। और जो कहोगे कि समस्त जगत एकात्म है संसार विषे भिन्नता नहीं पुन्य पाप के फल की प्राप्ति का अभाव होयगा। संसार विषे कोई मनुष्य दुखी कोई सुखी क्यों देखये ? समस्त समान नही हैं और जो पुन्य पाप के फल का अभाव कहोगे तो बंध तत्व का अभाव होयगा। बंध के अभावते मोक्ष का भी अभाव होयगा। और जो क्षणिक मानोगे तो कृया का अभाव होयगा और कृया के अभावते वस्तुकी सत्ताकाभी अभाव होयगा और सत्ता के अभावते वस्तुका अभाव होयगा और दोनोंके अभाव मे शून्यता सधैगी और जो शुन्यता मानोगे तो मेरे पक्ष की सिद्धि होयगी तुम्हारे पक्षका अभाव होयगा ताते तुम्हारा मत कल्पना मात्र है बनाया है सप्ततत्व नव पदार्थ भी काल्पतहैं इन में वृथा वाद काहे को करो हो कुछ सधता नाही कल्पित मतका श्रद्धान करो माति। ऐसे चित्रचूल नाम देवके बचन सुनकर राजा वज्रायुद्ध बोले:—

राजा वज्रायुद्ध - भोमित्र ! तुम सुनो यह बातें ऐसे नाहीं जैसे तुम कहो हो ताते तुम सुनो याको उत्तर जिन मत के अनुसार कहूं हूं सो तुम सावधान होकर सुनो। जोतुम क्षणक अथवा शुन्य मानोगे तो एकांत नय कर तो द्रव्य सधने का

नाहीं जिस तिस भांति दुषण होय है सर्वथा विरोध उपजे है ताते बीतराग के वचन विरोध मथन हैं क्योंकि स्याद्वाद सरूप है द्रव्य के सिद्ध करने के निमित्त, भव्य जीवोंके संदेह निवारणे के निमित्त, मिथ्यातियों के निरास करने के निमित्त बीत राग सर्वज्ञ देव ने सप्त भंगी बानी कही है तिन के प्रथम नाम सुन। हे मित्र ! स्यात अस्ति ॥ १ ॥ स्यात् नास्ति । २। स्यात् अस्ति नास्ति ॥ ३ ॥ स्यात् अवक्तव्य ॥ ४ ॥ स्यात् अस्तिअवक्तव्य ॥ ५ ॥ स्यात् नास्ति अवक्तव्य ॥ ६ ॥ स्यात् अस्ति नास्ति अवक्तव्य ॥७॥ यह सप्तनय मुख्यहैंइनमें गर्भित अनेक नय हैं ताते जिन मत अनेकांत स्वरूप है ताते पर्याय द्रव्यार्थिक नयनके भेदन कर द्रव्यके लक्षणका भेद दिखावें हैं॥

उक्तं च पंचास्तिकाय गाथा

उप्पत्तीव विणासो दव्वस्स य णत्थि अत्थि सब्भावो ।
विगमुप्पादधुवत्तं करंति तस्सेव पज्जाया: ॥

संस्कृत छाया।

उत्पत्तिर्वा विनाशो द्रव्यस्य च नास्त्यस्ति सद्भावः ।
विगमोत्पादध्रुवत्वं कुर्वन्ति तस्यैव पर्यायाः ॥

पदार्थ – (द्रव्यस्य) अनादिनिधन त्रिकाल अविनाशी गुण पर्याय स्वरूप द्रव्यका (उत्पत्ति) उपजना [वा] अथवा (विनाशः) विनसना (नास्ति) नहीं है, [च] और[सद्भावः] सत्तामात्रस्वरूप [अस्ति] है [तस्य एव] तिस ही द्रव्य के [पर्यायाः] नित्य अनित्य परिणाम [विगमोत्पादध्रुवत्वं] उत्पादव्ययध्रौव्यको [कुर्वन्ति] करते हैं।

भावार्थ--अनादि अनन्त अविनाशी टंकोत्कीर्ण गुणपर्याय स्वरूप जो द्रव्य है, सो उपजता विनशता नहीं है परन्तु उसी

द्रव्य में कइएक परिणाम अविनाशी हैं. कई एक परिणाम विनाशीक हैं। जो गुणरूप सहभावी हैं वे तो अविनाशी हैं और जो पर्यायरूप क्रमवर्ती हैं ते विनाशीक हैं। इस कारण यह बात सिद्ध हुई कि द्रव्यार्थिकनयसे तो द्रव्य ध्रौव्य स्वरूप है और पर्यायार्थिकनयसे उपजै और विनशै भी है। इस प्रकार द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक दो नयों के भेद से द्रव्यस्वरूप निराबाध सधै है। ऐसा ही अनेकान्तरूप द्रव्यका स्वरूप मानना योग्य है।

आगें द्रव्य और गुण में अभेद दिखाते हैं।

प्राकृत

दव्वेण विणा ण गुणा गुणेहिं दव्वं विणा ण संभवदि।
अव्वदिरित्तो भावो दव्वगुणाणं हवदि तह्म ॥ १२ ॥

संस्कृत छाया

द्रव्येन बिना न गुणा गुणैर्द्रव्यं विना न सम्भवति।
अव्यतिरिक्तो भावो द्रव्यगुणानां भवति तस्मात्॥ १२ ॥

पदार्थ—[द्रव्येन विना] सत्तामात्र वस्तुके बिना [गुणाः] वस्तुको जनानेवाले सहभूतलक्षणरूप गुण [न सम्भवति] नहीं होते [गुणैः विना] गुणों के बिना [द्रव्यं] द्रव्य [न सम्भवति] नहीं होता [तस्मात्] तिस कारणसे [द्रव्य गुणानां] द्रव्य और गुणोंका [अव्यतिरिक्तः] जुदा नहीं है ऐसा [भावः] स्वरूप [भवति] होता है।

भावार्थ—द्रव्य और गुणोंकी एकता (अभिन्नता) है अर्थात् पुद्गलद्रव्य से जुदे स्पर्श रस गन्ध वर्ण नहीं पाये जाते सो दृष्टान्त विशेषताकर दिखाया जाता है। जैसे एक आम (आमूफल) द्रव्य है और उसमें स्पर्श रस गन्ध वर्ण गुण हैं जो आमूफल न होय तो जो स्पर्शादि गुण हैं, उनका अभाव

हो जाय. क्योंकि आश्रयबिना गुण कहां से होय ? और स्पर्शादि गुण नहीं होय तो आमका (आमूफलका) अभाव होय क्योंकि गुण के बिना आमका अस्तित्व कहां ? अपने गुणों कर ही आमका अस्तित्व है । इसी प्रकार द्रव्य और गुणकी एकता (अभेदता) जाननी. यद्यपि किसी ही एक प्रकारसे कथनकी अपेक्षा द्रव्य और गुण में भेद भी है, तथापि वस्तु स्वरूपकर तो अभेद ही है ॥

आगे जिस के द्वारा द्रव्य का स्वरूप निराबाध सधता है, ऐसी स्यात्पदगर्भित जो सप्तभङ्गिवाणी है, उसका स्वरूप दिखाया जाता है ।

प्राकृत

सिय अत्थि णत्थि उहयं अव्वत्तव्वं पुणो य तत्तिदयं ।
दव्वं खु सत्तभंगं आदेसवसेण संभवदि ॥ १४ ॥

संस्कृत छाया

स्यादस्ति नास्त्युभयमवक्तव्यं पुनश्च तत्त्रितयं ।
द्रव्यं खलु सप्तभंगमादेशवशेन सम्भवति ॥ १४ ॥

पदार्थ—[खलु] निश्चयसे [द्रव्यं] अनेकान्तस्वरूप पदार्थ [आदेशवशेन] विवक्षाके वश से [सप्तभंग] सात प्रकार से (सम्भवति) होता है । वे सात प्रकार कौन कौन से हैं सो कहते हैं,–(स्यात् अस्ति) किस ही एक प्रकार अस्तिरूप है, (स्यात् नास्ति) किस ही एक प्रकार नास्ति रूप है, (उभयं) किस ही एक प्रकार अस्तिनास्ति रूप है (अवक्तव्यं) किस ही एक प्रकार वचनगोचर नहीं है, (पुनश्च) फिर भी (तत्त्रितयं) वे ही आदि के तीनों भंग अवक्तव्यसे कहिये हैं, प्रथम ही (स्यात् अस्ति अवक्तव्यं) किसही प्रकार द्रव्य अस्तिरूप अवक्तव्य है, दूसरा भंग–(स्यात् नास्ति

अवक्तव्यं) किस ही एक प्रकार द्रव्य नास्तिरूप अवक्तव्य है और तीसरा भंग-(स्यात् अस्ति नास्ति अवक्तव्यं) किस ही एक प्रकार द्रव्य अस्ति नास्तिरूप अवक्तव्य है। ये सप्तभंग द्रव्यका स्वरूप दिखाने के लिये वीतरागदेव ने कहे हैं। यही कथन विशेषताकर दिखाया जाता है।

१ स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल और स्वभाव इस अपने चतुष्टयकी अपेक्षा तो द्रव्य अस्तिस्वरूप है अर्थात् आपसा है।

२ परद्रव्य, परक्षेत्र, परकाल और परभाव इस परचतुष्टयकी अपेक्षा द्रव्य नास्ति स्वरूप है अर्थात् पर सदृश नहीं है।

३ उपर्युक्त स्वचतुष्टय परचतुष्टयकी अपेक्षा द्रव्य क्रम से तीन काल में अपने भावनिकर अस्तिनास्तिस्वरूप है, अर्थात् आपसा है पर सदृश नहीं है॥

४ और स्वचतुष्टयकी अपेक्षा द्रव्य एक ही काल वचन गोचर नहीं है, इस कारण अवक्तव्यहै अर्थात् कहनेमें नहीं आता

५ और वही स्वचतुष्टयकी अपेक्षा और एक ही काल स्वपर चतुष्टयकी अपेक्षासे द्रव्य अस्तिस्वरूप कहिये तथापि अवक्तव्यहै

६ और वही द्रव्य परचतुष्टयकी अपेक्षा और एकही काल स्वपर चतुष्टयकी अपेक्षा नास्ति स्वरूप है तथापि कहा जाता नहीं।

७ और वही द्रव्य स्वचतुष्टयकी अपेक्षा और परचतुष्टयकी अपेक्षा और एकही वार स्वपरचतुष्टयकी अपेक्षा अस्तिनास्तिस्वरूप है तथापि अवक्तव्य है।

इन सप्तभङ्गों का विशेष स्वरूप जिनागमसे (अन्यान्य जैन शास्त्रोंसे) जान लेना हमसे अल्पज्ञोंकी बुद्धिमें विशेष कुछ आता नहींहै। कुछ संक्षेप मात्र कहतेहैं। जैसें कि- एक ही पुरुष पुत्रकी अपेक्षा पिता कहाताहै और वही पुरुष अपने पिता की अपेक्षा पुत्रकहलाताहै और वही पुरुष मामाकी अपेक्षा

भाणजा कहलाताहै और भाणजेकी अपेक्षा मामा कहलाताहै स्त्री की अपेक्षा भरतार (पति) कहलाताहै बहनकी अपेक्षा भाई भी कहलाताहै तथा वही पुरुष अपने वैरी की अपेक्षा शत्रु कहलाताहै और इष्टकी अपेक्षा मित्रभी कहलाता है इत्यादि अनेक नातोंसे एकही पुरुष कथंचित् अनेक प्रकार कहा जाताहै उसही प्रकार एक द्रव्य सप्तभङ्गकद्वारा साधा जाताहै।

ताते हे मित्र ऐसे नाहीं जैसे तुम एकांतकर द्रव्यका नाश बतावोहोसो ऐसी बात नाहीं एकांतसे द्रव्यका नाश होयहै द्रव्य के नाशते समस्त लोकका अभाव होयहै और लोकके अभावते समस्त वस्तुका अभाव होयहै सो ऐसे नाहीं लोक अस्ति रूपहै यातें हे मित्र लोकद्रव्य सहित अस्तित्वहै। तातें अनेकांतमत वीतराग देव कथित प्रमाणहै एकांतरागी द्वेषी मिथ्यातियों कर के कथितहै तातें प्रमाण नाहीं। तातें हे मित्र यह एकांत खेद तजो अनेकांत अंगीकार करो।

ऐसी भांति वज्रायुधके वचन सुनके देव बहुत प्रसन्य हुवा और हृदयमें जाना कि वज्रायुध स्याद्वाद सम्मतिके विषय दृढ़ है शुद्ध सम्यक् दृष्टीका धारकहै जैसे स्वर्गलोक विषय इंद्र महाराजने कहाथा तैसाही है यामें संदेह नाहीं ऐसे निसंदेह सुर भया कहा कि वज्रायुध तुम धन्य हो तुम शुद्ध सम्यक् दृष्टी हो।

इति एकांतानेकांत सम्वाद सम्पूर्णम्

अथ राजा क्षयमंकरकी दीक्षा।

दोहा

दर्शनले सुर नृप प्रते, भाषो निज विरतंत।
वस्त्रादिक सो पूज के, गयो स्वर्ग द्युतिवंत ॥ २२ ॥

चौपाई

अथ क्षयमंकर राजा ओय । स्वयं बुद्धि बैरागो सोय ॥
सुरलोकांतिक आवत भए । थुति करके सुरलोकहि गये ॥२३॥
उद्यतहोय सो दीक्षा काज । बज्रायुध को दीनों राज ॥
होय दिगम्बर बनमें ठयो । काल पायके केवल लयो ॥ २४ ॥
तीर्थंकर पद धारो तही । समवशरण कर राजित यही ॥
राज धरा बज्रायुध धेरै । भवतन भोग सदा अनुसरै ॥ २५ ॥
एक समय सब रानी लई । ऋतु बसंत बन क्रीड़ा ठई ॥
नाम सुदर्शन सरवर महां । नृपजल क्रीड़ा करते तहां ॥२६॥
नभते इक विद्याधर दुष्ट । सिल डारी नृपपे हो रुष्ट ॥
फुनि बांधो अहि फांसी डार । पूरबभव को अरि भयकार ॥२७॥
ताही छिन नृप भुजके जोर । तोर फांस सिल डारी फोर ॥
भागो खग तब ही भययूत । विद्युदंष्ट्र द्रमतारी पूत ॥ २८ ॥
बज्रायुधभी तिय गण संग । पुरहि प्रवेश कियो निरभंग ॥
उपजो आयुध शाला तास । चक्र रतन निधि सहित प्रकास २९
चक्रवर्त्त बज्रायुध जान । छहों खंड प्रथिवी में आन ॥
बिजयारध दक्षिण दिस रले । शिवमंदिर पुरता में भले ॥३०॥
मेघ वाहू नृप बिमलारान । सुवरन माला पुत्री जान ॥
कनकसांतको ब्याही सोय । ब्याह महोत्शव सब संजोग ॥३१॥
स्तोक सारपुर ताही ठौर । समुद्र सैन राजा सिरमौर ॥
जयसैना बनिता गुण जुता । तासु बसंत सुसैना सुता ॥ ३२॥
कनक सांति सोभी परनई । द्वै बनिता सुखदाता ठई ॥
एक समय बन क्रीड़ा हेत । कनक सांति द्वै तिया समेत ॥३३॥
बनमें केल सुकरते तहां । बिमल प्रभु मुनि देखे तहां ॥
बंदनकर सुनके वृष तही । बिरकत ह्वै तिन दीक्षा लही ॥३४॥
बिमलावशानी तट ह्वै रान । भई अर्जका संजम ठान ॥

कुलवंती तियते जगमांहि। पिय बिनते ग्रह तिष्टो नांहि ॥३५॥
सिद्धाचल पे बैठे गुनी । कनक सांति प्रति मासन मुनी ॥
केईयक अरि खग दुख दियो। सहके केवल ज्ञानी भयो ॥ ३६॥
पोतेको केवल अवलोय । बज्रायुध बैरागो सोय ॥
सहसायुध को नृप पद देय । क्षेमंकर तट दीक्षा लेय ॥३७॥
सिद्धाचल ऊपर अनुसरो । एक बर्ष प्रति मासन धरो ॥
अस्वग्रीवके सुतथे दोय । रतन कंठ रतनायुध सोय ॥ ३८ ॥
भवभ्रम भये असुर जुगखाम। प्रतिबल और महाबल नाम ॥
दोऊ दुख देनेको तबै । लागे बज्रायुध को जबै ॥ ३९ ॥
रम्भा और तिलोत्तम जोय। केल करत तहँ अपछरा दोय ॥
दोऊ असुर भगाए तिन्हे। मुनितन रक्षा कीनी इन्हे॥ ४० ॥
मुनिको प्रणामन अरचन ठयो। अपछर जुग फुनिसुरगे गयो॥
अब सहसायुध बिरकत भयो । दीक्षाको चित उद्धित ठयो ।४१।
लघुसुत सांति बली अभिराम। ताको राज दियो सुखधाम ॥
पिहताश्रव पे आपुन जाय । भयो दिगम्बर मन बच काय ।४२।
बज्रायुध सहसायुध मुनी । दोउ बिहरें साथे गुनी ॥
अंत समय पर्बत बईभार। दोऊ बैठे मौनहि धार ॥ ४३ ॥
धर्म ध्यानसों त्याग शरीर । ऊरध ग्रीवक पहुंचे धीर ॥
अंत बिमान सुमनके ईस । आयु लही सागर उनतीस ॥४४॥
जम्बूद्वीप अनूपम यही । प्रगट बिदेह बिराजै सही ॥
पुष्कल देश बिषै शुभपुरी । पुंडरीकनी शोभा भरी ॥ ४५ ॥
घणरथ भूपति है तिहठौर। जाके तेज डरें नृप और ॥
तसु मनोहरा रानी जान । शीलरूप शुभ गुणकी खान ॥४६॥
ताकी कोख उपजो सोय। बज्रायुध अहमिंदर जोय ॥
जनमत उत्शव ताको भयो। नाम मेघरथ ताको ठयो ॥ ४७ ॥

तिय मनोरमा दूजी ऐव । ताके उपजो दूजो देव ।
जो पूरब सहसायुध वही । द्रढ़रथ संज्ञा ताने लही ॥ ४८ ॥

दोहा

तरुण भयो जब मेघरथ, पिता परनयो सोय ।
प्रिय मित्रा व मनोरमा, भई बल्लभा दोय ॥ ४९ ॥
राज सुता सुमती भली, द्रढ़रथ ताको ब्याहि ।
भवके सुख भुगते सदा, चिंता रंचक नाहि ॥ ५० ॥
तनुज मेघरथ के भयो, नंद सुबर्द्धन नाम ।
द्रढ़रथके बरसैन सुत, उपजो बहु अभिराम ॥ ५१ ॥
जैसे उड ससि सूरसों, राजें मेह गरीस ।
त्योंही सुतके सुत सहित, शोभित घनरथ ईस ॥ ५२ ॥

चौपाई

एक समय घनरथ बैराग । राज भार सब सुतपे त्याग ।
लौकांतिक सुर थुति कर गए । स्वामी बनको उद्यत भए ॥ ५३ ॥
तपकल्याणकसुरपति ठयो । बहुत महोत्सव करके गयो ।
बहुर अनुक्रम घाती हते । केवल उपजो शोभित अते ॥ ५४ ॥
समवशरन आदिकसबसभा । कोटिक रवितें अधिकीप्रभा ।
तीर्थंकर पद एसो धार । घनरथ स्वामी सोहै सार ॥ ५५ ॥
अब सु मेघरथ काहू समै । रमन सुनामा बनमें रमै ।
तियगण संग सुक्रीड़ितभए । निस पति कांत सिलापैठए ॥ ५६ ॥
तौलों खग गच्छत आकाश । अम्बर बाहन थाको ताश ।
किन रोको मो बाहन एह । ता अरिकीमें छेदूं देह ॥ ५७ ॥
यों चितवत दस दिसअवलोय । भूप सिलापर देखो सोय ।
तबही खग सिल नीचेपगो । रोषित होय उठावन लगो ॥ ५८ ॥
तौलोनृप चित जानो भले । आयोशत्रु शिलाके तले ।
अग्र प्रदेश चरण अंगुष्ट । दाबो नृपपीड़ो खग दुष्ट ॥ ५९ ॥

भार परो बहुसिलको जबै । होअसमर्थ सुरोपो तबै ।
तबही खेचर ताकी तिया । पति को रुदन सुनत भयलिया । ६० ।
सरनमेघरथकी तिन लई । भरतरि भिच्छा जांचत भई ।
तबप्रिय मित्रा रानीकही । यापर करुणा कीजे सही ॥ ६१ ॥
तबक्रमप्रष्ट सुसीधो कियो । दान अभय ता खगकोदियो ।
प्रिय मित्रा तबपूछी एम । कहिये प्रभुयह कारनकेम ॥ ६२ ॥
बोलेनृप बिजयारध गिरी । अति शोभिततहँ अलकापुरी ।
विद्युद्दंष्ट खगपालक जास । तासु तिया निलबेगाआस ॥ ६३ ॥
तनुज सिंहरथ तिनकोसही । जिनबंदनको निकसोबही ।
अमितबाहको बंदसुचलो । गगन बाहमो ऊपर रलो ॥ ६४ ॥
थकित बिमान कियो इसजबै । मोदेखतयह रोषोतबै ।
सिलतल आयहमारो वही । जबहीउठावन लागोसही ॥ ६५ ॥
तबदाबो हमपद अंगुष्ट । याको मान हलोहो रुष्ठ ।
याहीकीयह बनिता सांच । पति भिच्छानिज जाचतराच ॥ ६६ ॥
ऐसे आपुस मैं संतोष । खेचर भेजो आनंद पोष ।
एक समय नृपदमबरमुनी । दानसोदीनो बिधिसों गुनी ॥ ६७ ॥
चारन रिद्धी पोषौ जबै । पंचाचार्य लहे नृप तबै ।
बहुरि अठांई अरचनकरो । भक्ति भावसों प्रोषध धरो ॥ ६८ ॥
प्रतिमा जोगधरो तिनध्यान । निसमें अचल सुगिरीसमान ।
तौलों इंद्र सुरग ईसान । बैठो देवसभा सुर ज्ञान ॥ ६९ ॥
अवध जोगतिन जानी एह । ध्यानवंत नृप निहचल देह ॥
सनमुख मुखसे थुति उच्चरी । धन्य मेघरथ थिरताधरी ।७०।
परम धीर्य चित आतम बिदा । नमस्कार तुमको है सदा ॥
छेदकहो संसारा सांत । नमनकरूं तुमको बहु भांत ॥ ७१ ॥
इह बिध थुतिभाषत हर लखो । सब सुर सुरपति सौं यों अखो ॥
काकी थुति तुम कीनी देव । सुरगपती तब बोलोएव ॥७२॥

भूप मेघरथ सम्यकदृष्टि । प्रतिमा जोग विराजै श्रष्टि ॥
पूजनीक गुण ज्ञानी गनो । नमस्कार में ताको ठनो ॥७३॥
उकतपाक सासन की यही । साहि नसकी द्वै अपछर तही ॥
अतिरूपा समरूपा नाम । आईपरखन नृपके धाम ॥ ७४ ॥
विभ्रम हाव विभाव विलास । गीत निरत कीने तिसपास ॥
जलपन चुम्बन कीनेघने ।ताहि डिगावनको बहुठने ॥७५॥
सबउपसर्ग गयो सो वृथा । सुरगिर ऊपर बिजली जथा ॥
जबदेखो नृप निहचल ऐन ।मानो सांच सचीपति वैन ॥७६॥
नमस्कार कर उठकर गई । संशय त्याग असंशय भई ॥
ऐक समय अधिपति ईसान।मध्य सभा इसि वरण वखान ।७७।
रूपवती प्रय मित्रा महां । ऐसो वर्णन कीनो तहां ॥
सुनत अचरजी अपछरा दोय।रतिषेता रतिनामा सोय ॥७८॥
कैसै रूप धरै वहनरी । जाकी थुति सुरपति अतिकरी ॥
देखन रूप सु आई तहां । मंजन अवसर रानी तहां ॥ ७९ ॥
तेल उबटना तनसों सना । देखी बसनाभूषण बिना ॥
बिसमय वंत भई युगसुरी । रूप तनी थुति मुखउच्चरी ।८०।
रानी तन सिंगारी जदा । कैसो रूप सु है है तदा ॥
शोभित तन अति बिन शृंगार। कविके बचन नपावत पार ।८१।
इंद्र वचनमैं श्रद्धा धरी । रानी सों तब बोलो सुरी ॥
हे रानी तुम देखन काज । सुरगलोक ते आई आज ॥८२॥
इंद्र वखानो जैसो रूप । तैसो ही तुम धरो अनूप ॥
ऐसो सुनकर रानी कही । इक छिनको तुम तिष्टो सही ।८३।
रानीकी तब आज्ञा मान । बैठी अपछरा ताही थान ॥
तौलो करके तन शृंगार । निकट बुलाई अपछरा सार। ८४ ।
अपनो रूप दिखायो जबै । सीस हिलायो अपछरा तबै ॥
तब रानी बोली यह केम । भाषो अपछरा सुनिए एम ।८५।

सुरपति बरनो जो तुम रूप । सो हम देखो न्हात अनूप ॥
वह शोभा अब नाहीं रानि । छिन छिन बरते तनमें हानि ।८६।
ऐसी कह अपछरा दिवगई । रानी सुनके विरकत भई ॥
दिक्षा उद्यत रानी लखी । तब नृप तियसों ऐसे भखी ॥ ८७॥
दिक्षा धरेंहैं हम तुम साथ । यों समझाई तिय नर नाथ ॥
एक समय अब पुरतट तहां । नाम मनोहर बरनो महां ।८८।
तामें आए घनरथ स्वाम । समवशरण लछमीको धाम ॥
तब नृप आय जयोजिन पाय ।पूछो धर्म सकल सुखदाय ।८९।
तब जिनवर बोले ईंह भात । धर्म सुकरुना मय द्वै जात ॥
ग्यारह विध बरनो सागार । त्रेपन किरया गर्भित सार ।९०।
सप्तम अंग उपासक धेय । श्रावक धर्म कहो बहु भेय ॥
और महाव्रत मुनिवर तने । रहित परिग्रह सबही भने ॥९१॥
जिन पति कथित धर्म जब सुनो। नृपति मेघरथ विरकत ठनो ॥
दृढ़ रथसों तब बोलो एह । या नृपपदको अब तुम लेह ।९२।
हम सेवें तप वनमें अबै । यों सुन दृढ़रथ बोलो तबै ॥
भो अग्रज या नृप पद मांहि । जो तुम दूषण देखो आहि ।९३।
मैं भी दोष वही लख लियो । क्षतिपति चितमें चिंत न भयो ॥
लेकर तजिये पीछे जोय । तजिये क्यों न प्रथमही सोय ।९४।
पंक लगे पीछे जो धोय । दूर रहैं ते अच्छे सोय ॥
सुनके ऐसी विरकत बात । भोग विमुख तब जानो भ्रात।९५।
अपनो सुत सिंहासन साज । मेघसैन को दीनो राज ॥
सात सहस नरपति संग लियो। सानुज भूपति दीक्षित भयो ।९६।
अब धारें तहँ ग्यारह अंग । षोड़स भावन भावें संग ॥
इह विधि भावत उत्तम धर्म। बांधो तिन तिर्थंकर कर्म ॥ ९७॥
गगन तिलक गिरि ऊपर मुनी ।तन भोजन तज बैठे गुनी ॥
दृढ़रथ सहित सुएके मास । प्राण तजे धरके सन्यास॥ ९८ ॥

दोहा

तन त्यागो मुनि जुग जबै, गए सरवारथ सिद्ध ।
प्रभावंत लेस्या सुकल, ली अहमिंदर रिद्ध ॥ ९९ ॥
आयु उदधि तेंतीस की, एक हस्तकी काय ।
बीते पक्ष तेंतीस जब, तब उसास उर आय ॥ १०० ॥
बर्ष सहस तेंतीस गत, अमृत मनसा हार ।
अवध विक्रिया जानिये, जितनो लोकाकार ॥ ८१ ॥
एके भव धरनो रहो, शिवपुर जानो मांहि ।
ऐसे सुख भुगतें सदा, प्रविचार जहँ नांहि ॥ २ ॥

मेघरथ और दृढ़रथ का अंतिम भव

वर्णन । चौपाई

जम्बू द्वीप अनूपम भेश । क्षेत्र भरथ कुरुजांगल देश ॥
हस्तनागपुर उत्तम बसै । बिस्वसैन नृप तामें लसै ॥ ३ ॥
ऐरापति रानी तिस गेह । गुणवंती अति सुंदर देह ॥
श्रीं ह्रीं आदिक देवी आय । ताकी सेव करें अधिकाय ॥ ४ ॥
षोड़स सुपने पाछलि रैन । देखे रानी सोवत सैन ॥
उन्नत गज जब मुख में धसो । तबही मेघरथ सुर उर बसो ।५।
भादव बदी तिथ सातम एव । सरवारथते उतरो देव ॥
तबही माता निद्रा तजी । वस्त्राभूषण शोभा सजी ॥ ६ ॥
पति तट जाय प्रणामन कियो । अर्धासन नृपताको दियो।
पूछो फल सुपननको तहां । सुनके हिरदे हरषो महां ॥ ७ ॥
तब सुरपति सुर चतुरन काय । गर्भ कल्याणक कीनो राय॥
पंद्रह मासकरी मणि वृष्टि । रिद्धिलही नृपसम सब श्रष्टि ॥८॥
श्रणबंधत बाधा नहि भई । दीपत देह अधिक तिनलही ॥
जेठबदी चौदश दिन ठनो । उदित सूरसम सुत तिन जनो ॥९॥

तीन लोक तब शोभित सजे। संख भरि हरि घंटा बजे ॥
मुकट हले इंद्रनके तबै। अवध जान तब आये सबै ॥ १० ॥
जिनवरको मंदिर ले जाय। क्षीरनीरघट कनक न्हवाय ॥
बसनाभूषण भूषित करे। शांति नाम धर ग्रह अनुसरे ॥११॥
मात पिताको सौंपत भए। मेरु कथा कह स्वर्गहि गए ॥
लाख बरस आयु धर ईस। अंग उतंग धनुष चालीस ॥१२॥
उन्नत जोबन धारो सार। कनक बरण तन शांति कुमार॥
बिस्वसैनकी दूजी रान। जसवति नाम सुगुणकी खान ॥१३॥
ताकी कूख सुउपजो सोय। भाषो पूरब दृढ़रथ जोय ॥
नाम धरो चक्रायुध तास। पंडित जन सेवैं नित जास ॥ १४ ॥
दोनों तनुज तरुण जब भये। बिस्वसैन नृप तब परणाये ॥
राजसुता जे गुण भूषिता। तिनसों जो जिन कीनी पिता ॥१५॥
कुंवरपने क्रीड़ित सांतीस। बीते बरष सहस पच्चीस ॥
बिस्वसैन तब आनो राज। कर अभिषेक समर्पो साज ॥१६॥
अधिकतेज तब जिनवर सजा। न्याय सुमारग बरते प्रजा ॥
ज्यों दिन पतितैं तम क्षयजाय। यों जिन राज नसो अन्याय।१७।
कालपाय पुनि चक्री भए। छहों खंड भूपालक ठए ॥
आयुध शाला भये मणिचार। चक्र, छत्र, असि, दंडे सार ।१८।
लक्ष्मी ग्रेह पदारथ तीन। कर्म सुचूड़ा काकणि लीन ॥
सात रतन एहैं जड़रूप। इतनेही हैं चेतन भूप ॥ १९ ॥
स्वपत परोहित ग्रेहपति और। सैनापति चौथो तिह ठौर ॥
बिजयारधते आये तीन। कन्या हय गय अति परवीन ॥२०॥
नवनिध भी आई तिस गेह। भोग दसांग सुभुगते एह ॥
इह बिध काल व्यतीतो महां। जात न जानो छिन सम तहां।२१।
अलंकार आलयमें जाय। करत अलंकृत अपनी काय ॥
अवलोकत दरपन तिह ठाय। द्वे प्रतिबिम्ब लखे जिनराय ॥२२॥

बिसमय सहित सु चिंतावंत। भ्रमको देख बिरक्तो संत ।
कहां भोग भवतन हैं केम । सकल बिनासी जाने एम ॥२३॥
लब्ध बोध जाने सब तत्व । घट अंतर धारो एकत्व ॥
लौकांतिक सुर आवत भए। शुतकरके गेह अपने गए ॥२४॥
तौलों इंद्रादिक सुर आय। अरु अभिषेक बसन पहराय ॥
लाए सुर पहराये हार । थापे भूषित शिव का सार ॥ २५ ॥

दोहा ।

सहस्र आम्र बनमें गये, सिल ऊपर थित सोच ।
अलंकार टारे सकल, पंच मुष्ट कच लोच ॥ २६ ॥
चौथ जेठ बदि सांझको, षष्टम थापो नाथ ।
चक्रायुध आदिक सहस, नृपति किये तिन साथ ॥२७॥
मन पर्यय धारक भये, होत दिगम्बर अंग ।
फुनि सुमित्र नृपके सदन, अन पायो निरभंग ॥२८॥
ऐसेही छद्मस्त सों, षोड़ष बर्ष बिताय ।
दिक्षाही के बन बिषै, फुनि आये जिनराय ॥२९॥
पल्यंकाशन प्राग मुख, षष्टम ब्रतधर जान ।
पोषबदी दशमी दिना,, उपजो केवल ज्ञान ॥३०॥

अडिल्ल

तब इंद्रादिक आय समवशर्न अनुसरो ।
द्वादश कोठे सुन्दर भव जिनसों भरो ॥
भये बीस षट ऊपर गणपति तासही ।
चक्रायुध इन आदिक बहु गुण रासही ॥ ३१ ॥
आर्य देश में बिहरत धर्म्म बखानते ।
रही आयु अब शेष सुमास प्रमानते ॥
जेठ कृश्न तिथि चौदश गिर सम्मेदही ।
सिद्ध थान तहँ पहुंचे तन त्रिय छेदही ॥ ३२ ॥

चक्रायुध इन आदिक नव सहसे मुनी ।
कर्म कदंबक नाश सो निवसे शिव गुनी ॥
सकल सुरासुर तबही शिव उत्सव कियो ।
पुन्य बंधकर अपनो अपनो ग्रह लियो ॥ ३३ ॥
सकल शत्रु हरि नाश उपद्रव भूपये ।
चक्रवर्ति तीर्थंकर काम स्वरूपये ॥
कीर्त नीति सों प्रीति सु विद्या सदनए ।
शांति रूप जिन शांति सु निसपति बदनए ॥३४॥

दोहा

सुनिये शांति पुरान यह, जैनी मन वच काय ।
सुथिर थान थिर तिष्ठयो, सहज शांति पद पाय ॥ ३५ ॥

इति श्री सम्यक्ह्शीलाभरण भूषित जैनी नामांकितायां बुलाकीदास विरचितायां भारत भाषायां श्री शांतिनाथ पुराण वर्णनो नामा पंचमो प्रभावः

अथ कुंथनाथ स्तुति

मंगलाचरण ॥ सवैया तेईसा ॥

कुंजर कुन्थव आदिक जीव जु सुरपुर रहे बहु या जग माहीं ।
हैतिनको अति प्रीतम जीवन जाके गये तनसो छुट जाहीं ।
ताहिते निर्भय सर्व किये जिन कुन्थ जिनेश्वर सत्य कहाहीं ।
देहजजैनीको ताही जजै नित जाके जजै रज कर्म नसाहीं ।१।

दोहा

भूप भये सुत सांतके, श्री नारायण नाम ।
शान्ति वर्द्ध तिनके भयो, शूर वीर गुण धाम ॥ २ ॥
शान्ति चन्द्र ताको तनुज, चन्द्र चिन्ह पुनिजान ।
पुनि उपजे कुरु नामनृप, जस प्रतापकी खान ॥ ३ ॥

कुरु वंशी इन आदिनृप, भये अनुक्रम भूर ।
सूरसेन उपजे नृपति, मानो ग्रीषम सूर ॥ ४ ॥
नहिं अनीति जिस राजमैं, अधिक नीति सों प्रेम ।
ईत भीत विपरीत नस, उड़गन रविते जेम ॥ ५ ॥
जिस प्रतापतें अपर नृप, पत्तन सज्जन छोर ।
उरके गिर कन्दर विषय, सोवत निद्रा तोर ॥ ६ ॥

चौपाई

श्री कान्ता शुभ बनिता तास । शीलरूप बहु गुणकीरास ।
शशिमुखखखजसपदमातसी । सदन त्यागजलकमलहिवसी ।७।
ताहीते तुम जानो मीत । चन्दपदम में नाहीं प्रीत ॥
जासु उरज उरनिधि भण्डार । बसततहां अहिवत् बरहार ॥ ८ ॥
जाकी सेव करें सुर नार । श्री आदिक षट दिव्या सार ।
धन धाराधर धनद सुदेह । रतन वृष्टि जलवत् जिसगेह ॥ ९ ॥
षोडस सुपने पश्चिम रैन । देखत रानी सोवत सैन ॥
दुंदुभिनाद सुन जागी तबै । स्नान क्रिया कर मण्डितसबै ॥ १० ॥
तियतन दीपत विद्युतप्रभा । सभ उद्योतन कीनी सभा ।
पतिपद पंकज प्रनमन करो । अर्द्धासनपै आसन बरो ॥ ११ ॥
कीन्हो प्रश्न सुपनफल यदा । अवधि बोध नृप उपजोतदा ।
तिनको फल बरनो क्रमधार । त्रिभुवन पति सुतहो सीसार ॥ १२ ॥
योंसुन तिय आनंदित एम । चन्द्र किरनते कमलनि जेम ।
सावन बादि दिनदसमी लसो । उत्तरवासी सुरउरबसो ॥ १३ ॥
तबही सुरपति आवत भयो । गर्भकल्याणक कर घर गयो ।
मुक्ताफल ज्यों सीपी माहि । भून बधत यों बाधा नाहिं ॥ १४ ॥
रतन खानसम सोहे रानि । गूढ़ अरथको करे बखानि ।
जोजो प्रश्न सुरङ्गन ठने । तिनको उत्तर माता भने ॥ १५ ॥

। अथ पहेलिकालंकार ।

दोहा । अंतर लापिका ।

रविते किम किम कवि वदन, किम अर्जुन किम गंग ।
कहो देव भागीरथी, चहुं विधि उत्तर संग ॥ १६ ॥

। भागीरथी ।

रवितें भाकवि वदन गी, रथी इन्द्र सुत धीर ।
सुर सरिता भागीरथी, गंगा मुनि मन नीर ॥ १७ ॥

अथ वहिरलाप ॥ अडिल्ल ॥

काहा सार संसार सुसुख संज्ञा कहा ।
सुःख दुःख को कारन जगमें को महा ॥
आादि वर्ण को पृथक् सु पृथक् बखानिये ।
अन्त वर्ण कहि एकहिं और न आनिये ॥ १८ ॥

(धर्म, शर्म, कर्म)

कहो येम जिन जननी जैनी जन प्रते ।
धर्म सार संसारहि वरनों जिन मते ॥
शर्म नाम है सुखकों आगम में लहो ।
कर्म यही करताहै दुख सुख को कहो ॥ १९ ॥

चौपाई

इह विध परशन उत्तर रास । बरनत बीते पूरन मास ।
जनत भई सो सुतको एम । पूरब दिश दिन पतिको जेम ॥ २० ॥
सुदि वैशाख सुपूरव भली । जन्म कल्यानक महिमारली ।
आय सुरासुर सबसुर ईस । लेय गये गिरि मन्दिर सीस ॥ २१ ॥
सिंहासन परथापे तहीं । जिन थुति उचरत मुखसों सही ।
कलश भरे त्तीरोदधि बार । जिनतन ढारे भावनि धार ॥ २२ ॥
वसनाभूषण शोभा करी । कुन्थनाम धरि थुति अनुसरी ।
पुनि गजपुरको आवत भये । मात पिताको देके गये ॥२३॥

पंच हजार बरस कर हीन । लाख बरस शुभ आयुध लीन ॥
तन प्रमान धनुष पैंतीस । कुन्थ कनक द्युति करुना ईस ॥ २४॥
तरुन भये नृपपद शुभ लयो । कहों खंडपति चक्री भयो ॥
पूरव भव जब सुमिरे चित्त । भवतन भोग भयो सुविरत्त ॥२५॥
लोकांतिक सुर आवत भये । थुति नुति कर पंचम दिवगये ॥
राजत राज तनुजको दियो। आपुन शिवका आसन कियो ।२६।
इंद्रादिक सुर सहित चले । नाम सहेतुक वनमें रले ॥
सुदि बैसाख सुपरवा दिना । संग सहस नृप लूचन ठना ।२७।
संग तजो जिन षष्टम वृती । तब उपजे मन पर्यय मती ॥
धर्म मित्र गृह ताही पुरे । पार न पायो पापस वरे ॥ २८ ॥
पंचाचार्य सदन तिस भये । पुनि जिन पति बनहीको गये ॥
षोडस वर्ष रहे छद्म मस्त । दीक्षाहीके बन पुन तस्त ॥ २६ ॥
तिलक वृक्षतल षष्टम धार । चैत तीज सुदि संध्या बार ॥
घाती हतिके केवल भयो । सुरपति समवशरन तब ठयो ॥३०॥
आदि स्वयंभू है गण ईस । इन आदिक गिनिये पैंतीस ।
पूरव पाठी उत्तम धीर । सात शतक मुनि जिनवर तीर ॥३१॥
गिनिये शिष्य सहसतेताल । ऊपर डेढ़से शिष्या पाल ॥
तीन ज्ञान धारिक परवीन । सहस अठाइस संख्या लीन ॥३२॥
तीन सहस अरु द्वै सौ जान । केवल ज्ञानिन गुनकी खान ॥
विक्रुप रिद्धि विभूषित मुनी । इक्यावन सौ गिनियें गुनी ॥३३॥
चार ज्ञान धारक मुनि ईस । तिनकी गिनती शतक तेंतीस ॥
उत्तर वादी मुनि गुनरास । दोय सहस ऊपर पंचास ॥ ३४॥
सबकी गिनती सुनिये सार । संजम धरिये साठ हजार ॥
साठ सहस शत तीन पचास । भावन आदिक गणना तास ।३५॥
तीन लाख श्रावकनी सही । दोय लाखहैं श्रावक लही ॥
असंख्यात हैं देवी देव । तिर्यंच शुभ संख्याते येव ॥ ३६ ॥

इह विधि संग सहित दे वेश। विहरे सकल सु आरज देश॥
मास प्रमान रही जब आउ। सम्मेदाचल आये ठाउ॥ ३७॥
एक सहस मुनि लीने साथ। मुक्ति पुरीको पहुंचे नाथ॥
सुदि बैशाख सु प्रतिपद दिना। शिव कल्यानक सुरपति ठना॥३८

पद्धडीछन्द

जम्बू सुद्वीप पूरब विदेह। सीता सुकूल दच्छिन सुलेह॥
तहँ वत्स देश सीमा पुरीस। है नाम सिंघरथ बुद्धि ईस। ३९।
उल्का सुपात लखि ह्वै विरक्त। वृषभादि तीर सुन धर्म सत्त॥
दीच्छित सुहोय तजि राज भार। षोड़ष सुभावना भाय सार।४०।
लहि आयु अंत सर्वार्थ सिद्ध। भुगती सु पाई अहिमिन्द्र रिद्ध॥
तांते सु आय जिन कुन्थ नाम। जो तीर्थंकर पति चक्र काम।४१।

दोहरा।

कुन्थ नाथ पद तिन धरे, तिनको पूर्ण पुरान।
बरनो यह संक्षेप सों, जैनुलदे सुत आन॥ ४२॥

इति श्री सम्यक्त्वशिलाभरण भूषित जैनीनामांकितायां बुलाकीदास विरचितायां भाषाभाषायां कुन्थनाथ पुराण प्ररूपणनाम षष्ठम प्रभावः॥

अथ अरहनाथ स्तुति।

मंगला चरण॥ सवैया तेईसा॥

देह जु दुर्ग विषैमन दुर्जन जो रस जैन तजे असना को।
जाको है पूत कपूत महा शुभ शील हरे न टरे रुख जाको॥
ताहिके साहिक पंच महा परचण्ड सुमण्डल हे रुख वाको।
सो अरिनाश कियो अरनाथ कृपाकी कृपान सोहै बल वाको।१।

दोहरा

भूपति कुरुबंशी बहुत, बीते नीति सुवन्त।
तिसी बंश तहँ अवतरो, नृपति सुदर्शन सन्त॥ २॥

चौपाई

मित्र सुसेना रानी सजी । बसुधारा सो धनपति सजी ।
षोड़ष सुपने लख सुख बीज । गर्भ धरो फागुण सुदि तीज ॥३॥
देव चतुर्बिधि आवत भये । प्रथम कल्यानक करके गये ।
भून भारसों रहिता रानि । सो है मानो मणिकी खानि ।४।
मंगसिर सुदिदिन चौदश भना । रविसम सुत जिनजननी जना ।
आये सुरासुर गिरिले गये । जिन तनको अभिशेषत भये ।
अरु संज्ञा धरि आये पुरे । मात पिताके निवसे घरे ।
क्रमसों तरुन भये अरदेव । सहसों कन्या ब्याही एव ॥ ६ ॥
तीस धनुषकी काया फवी । शोभित तन चामि कर छवी ।
बरस सहस चौरासी आउ । कोटिक सुर पूजत जिस पाउ ।७।
राज उदय पायो बहु भूप । उपजो जा गृह चक्र अनूप ॥
छहों खंडको प्रगटो ईस । सेवहिं नृपति सहस बतीस ।८।
कोटि अठारह घोड़े खड़े । लख चौरासी गय मय भरे ॥
गज गनती सम पृथुरथ जान । नृप गनती सम देश प्रमान ।९।
सहस छानवें नारी बरी । सहस बहत्तर उत्तम पुरी ।
सहस निन्यानवे द्रोण सु ईस । पतन सहस हैं अड़तालीस ।१०।
खेट सहस सोलह अभिराम । कोट छानवें आछे ग्राम ॥
दीप उदधिके छप्पन भले । चौदह सहस सुहावन रले ।११।
सहस बतीस सुनाटक भने । स्थाली भाजन कोटिक गने ॥
तीन कोटि गनि गोकल तही । एक कोट हल ग्रह के सही ।१२।
कुच्छ वास सत सातें उर्ग । सहस अठत्तर अटवी दुर्ग ॥
अठदश सहस सुबाहन सभे । नवनिधि रतन सु चौदह पर्मे ।१३।
चक्रीकी द्वै पाद सुजान । विष मोचक नामा सुख दान ॥
कवच अभेद सुदृढ़ अभिराम । अजितंजय है रथको नाम ।१४।
वज्र काण्ड धनु उत्तम फबै । सर अमोघ है ताके सबै ॥

वज्र सुतंडी बरछी महा । कुंथ नाम सिंघोटक कहा ॥ १५ ॥
नन्दा नाम असी है सही । ढाल भूत मुख संज्ञा लही ॥
चक्र सुदर्शन अति बलबंड । चंडवेग शुभ नामा दंड ॥ १६ ॥
वज्र मई मानि चर्म सुगने । चिंतामणि अरु काकणि भने ॥
अश्वरतन पवनंजय नाम । प्रकट विजय गिरि गज गुणधाम ।१७।
द्वादश भेरी चक्री तनी । तिनमें आदि अनन्दी गिनी ॥
द्वादश ढोल सुजिनपति संग । विजय सुघोष प्रभृति निरभंग ।१८।

दोहा

सिद्धि वृद्धि इम विध धरे, शरद अभ्र अवलोय ।
भये बिरक्त जिनयती, तिन सम त्यागी सोय ॥ १९ ॥

चौपाई

अपनो सुत अरविन्द कुमार। ताहि दियो नृप निजपद सार॥
लोकान्तिक सुर आवतभये । धर्म पंथ कहि थुतकर गये॥ २०॥
विजयती शिवकापे रले । त्रिदश त्रिदश पति बैठत चले ॥
पहुंचे बनहि सहे तुकछती। कच लूंचे जिन षष्टम व्रती ॥ २१ ॥
मंगसिर सुदिदशमी दिनअंत। संग सहस नृप निकसे संत ॥
तूर्ज बोध धर अर धीमान । आय चक्रपुर पारण ठान ॥ २२ ॥
अपराजित नृप दीनो अन्न । सुरगन भाषे धन्य सुधन्न ॥
पंचाचर्य सदन तिस भये । भोजनकर जिन बनको गये ।२३।
ऐसी बिधि छद्मस्ते तबै । षोड़स वर्ष बितीते जबै ॥
आयु सहे तुक वनके मद्ध । घाति हते ले केवल रिद्ध ॥२४॥
तरु सहकारे थिरता धार । कातिक शुदि तिथि द्वादशि सार ॥
षष्टम व्रततें पंचम ज्ञान । उपजो जिनको येम प्रमान ॥ २५ ॥
सकल सुरासुर तबही आय । समवशरन कीनो अधिकाय ॥
विहरत आरज देखो सही । एक महीना आयुष रही ॥ २६ ॥
चैत बदी सु अमावस दिना । संमेदाचल बैठे जिना ॥

संग सहस मुनि मूकतहि गये । अरु जिनवर निरवानी भये ।२७।
सुपर्वाण उत्सवको ठान । कीनो कल्यानक निर्वाण ॥
पुन्य संच अघमोचित कीन ।पुनि गृह अपनो अपनो लीन ।२८।

पद्धड़ी छंद

जम्बू सुदीप सीता नदीत । तहं कच्छ देश उत्तर तटीत ॥
धनपति सु ईशपुर छेम आस । रानी ति काम धेनु सु तास ।२९।
सुनकं सुधर्म जिन नंद तीर । दीक्षा सुलीन तजिराज धीर ॥
भावन सुभाई संजय बिमान । उपजो सुजाय अहमिंद्र थान ।३०।
ताते सु आय अरनाथ नाम । है धर्म ईश चक्रीश काम ॥
अरु है पुरान संक्षेप येम । जैनी त्रिकाल सुनधरो प्रेम । ३१ ।

इति श्री मन्महाशीलाभरण भूषित जैनीमामांकितायां
लाला बुलाकी दास बिरचितायां भारत भाषायां अरनाथ पुरान ।
प्ररूपणो नाम सप्तमो प्रभावः ॥ ७ ॥

अथ सुमति जिन स्तुति प्रारम्भः

मंगला चरण ॥ सवैया तेईसा

जो जगदीश मुनीश, अधीश जु सो सुमतीस जिनेश गनी
जे । सोई महेश गनेश धनेश सुदीपति चन्द दिनेश कही जे ।
जाकी महामति धारत ही चित साहित में गति पंचम लीजे ।
ताहि नमें नंदलाल को बालक, हे जग पालक सुमती दीजे १

दोहा

अर सुत श्री अरबिन्द नृप, ताके पुत्र सु चार ।
उपजो सूरज चार में, ताके भूप सु सार । २ ।
तनुज भयो पुनि भूप को, नाम पद्मरथ धीर ।
ताको पुत्र रथी भयो, तासु मेघरथ वीर । ३ ।
तासु तीय पद्मावती, शील रूपकी खान ।
उपजे तिनके द्वै तनुज, विश्नु पद्मरथ जान । ४ ।

कछु कारन सों मेघरथ, विरकत भयो अदीन ।
पद्मपुत्र को राज दे, विश्नु संग तपलीन । ५ ।

चौपाई

राज करे गजपुर नृप पद्म । और कथा अब सुन सुख सद्म ॥
देश अवन्ती उत्तम जहां । नाम उजैनी नगरी तहां । ६ ।
श्री वर्मा राजा तहँ भले । मंत्री चार सुता के रले ॥
तिनमें नाम सुबलि है आदि । नमुचि वृहस्पति अरुप्रहलाद ।७।
एक समय मुनि आये तही । नाम अकंपन ताको सही ॥
सात शतक मुनि ताके संग । ज्ञानी धीर दिगंबर अंग । ८ ।
संग प्रते गुरु ऐसे भने । अब तुम जल पन जुगतन बने ॥
राजादिक जन आवें जबै । एक मौन तुम साधो सबै । ९ ।
और भांति सुख संग कौनही । अवधि ज्ञान मुनि ऐसे कही ॥
अपने मंदिर नृप थिति करे । चारों मंत्री तट अनुसरे । १० ।
पूजालेले श्रावक चले । भक्ति भाव चित अतिही रले ॥
शोभित परजा देखी राय । मंत्रिन प्रति पूछी इहभाय । ११ ।
कौन तीर्थ ए पूजन जांहि । बहु उछाह हम नगरी मांहिं ॥
ऐसो सुनके मंत्री भनें । मुनिगण वाहर बनमें ठनें । १२ ।
तिनको बन्दनपुर जन चले । धर्म हेतु शुभ कारज रले ॥
सुनके राजा ऐसी कही । हम भी तिनको बंदे सही । १३ ।
ऐसे कहिके राजा चले । तासंग मंत्री चारों रले ॥
भूपजाय मुनि बंदनठई । नृपहि असीस न काहू दई । १४ ।
मुनिगन की थुति नृपयों करे । देह विषय नहि ममता धरे ॥
ध्यानारूढ़ महा गुन धार । निर बांछक ए मुनिवर सार ।१५।
हांस वचन मुख मंत्री कहे । दुष्ट बुद्धिते हिरदे लहे ॥
ए मुनि मूरख बलध समान । मिथ्या मौन धरत विज्ञान ।१६।
ऐसे कहि नृप मंत्री चले । आगे मुनि इक मगमें मिले ॥

श्रुत सागर मुनि ताको नाम । भोजन करसो आवत ठाम ।१७।
ताको देख जु मंत्रिन कही । तरुन वृषभ इक आवत सही ॥
उदर पूरना मूरख करे । ज्ञान अंश नहिं हिरदे धरे । १८ ।
ऐसी सुन मुनि कियो विवाद । मंत्रिनको छेदो उनमाद ॥
जीतो मुनिवर आयो तहां । गुरू अकंपन बैठे जहां । १६ ।
नमस्कार कर गुरुसों कही । बाद कथा जो मारग लही ॥
बोले मुनि तुम खोटी करी । दुष्टनसों बानी अनुसरी । २० ।
संग उपद्रव कारन कियो । महा पापतें सिरपर लियो ॥
ऐसी सुन श्रुत सागर कहे । संग हेत बहु चिंता लहे । २१ ।
शुभ उपाव तुम मोसों भनो । संघ उपद्रव कारन हनो ॥
एकाकी जो निसमें जाय । जोग धरो तुम चरचा ठाय । २२ ।
सहो परीसह ऐसी जबै । सकल सङ्घको जीवन तबै ॥
दयो जोग मुनि निशिमें जाय । कीनों बाद जुताही ठाय । २३ ।
ध्यानारूढ़ अचल समधीर । भयसो रहित उदधि गम्भीर ॥
चारों द्विज खिसियाने भये । बादहि हारसो घरको गये ।२४।
धार कुमति ए चारों रले । लेले खड्ग सु निशिमें चले ॥
मारगमें मुनि देखो वही । आपसमें तब ऐसे कही । २५ ।
मान भंग जिन कीनोंसही । मारन जुगत जु मुनि है यही ॥
बांट समानी हत्या लेहु । चारों मिल अस यातना देहु ।२६।
जुगपत ही काढ़त तलवार । पुर सुरकीले ताही बार ॥
नांगी असि करलीने खरे । मानो तोरण शोभा करे । २७ ।
भोर समय पुरजन जब गये । खड्ग गहो द्विज देखत भये ।
मंत्रिनको सब धिक धिक कहें । मुनिवर महिमा मुखसों गहें २८।
क्रोध धरे नृप सुनके आय । द्विज काढ़े खर पीठ चढ़ाय ॥
मान भंगसों आकुल ठए । भ्रमन करत ते गजपुर गए ॥२६॥
पदमरायसों मिलके कही । मंत्री पद बलि पायो सही ॥

कुंभ नगर नृप हरिबल रहे। नित्य उपद्रव यासों बहे। ३०।
जीत सके यह रणमें नहीं। चिन्तातुर अति मनमें सही॥
चिन्ता करते दुर्बल भयो। बल मंत्री तब पूछत ठयो।३१।
हमसे मंत्री तुम तट ठये। कारन किस तुम दुर्बल भये॥
मंत्री प्रति नृप ऐसी भनी। मोचित चिंता हरबल तनी। ३२।
ऐसी सुन दलबल संग लियो। आज्ञा लहि सिंहबल पै गयो॥
ताको गढ़ अति ऊंचो साल। बुद्धि योग तोड़ो तत्काल। ३३।
बांधो हरिबल तबही फिरो। आय पद्मके आगे करो।
ऐसो काज सुधारो जबै। बहुत अनंद्यो राजा तबै॥ ३४॥
चारों प्रति नृप भाषो एह। जो तुम मांगो सो तुम लेह।
बलि मंत्री तब भाषो सार। यह बर नृप राखो भण्डार॥३५॥
जब कुछ कारज हमको होय। जब चाहें तब दीजो सोय॥
ऐसी सुन नृप चुपकर रहो। बहुत हेत तिन ऊपर बहो॥३६॥
तही अंकपन मुनिवर गये। सात शतक मुनि तासंग ठये॥
लेले पूजा भविजन चले। देखत मंत्री मनमें जले॥ ३७॥
राग द्वेष करि मत्त उनमाद। पूरब बैर कियो तब याद॥
भूप भक्ति तिनको अति जाना। पद्म प्रती बर याचन ठाना३८
सात दिवस नृप दीजे राज। अब जरूर बहु हमको काज।
सकल राज तब बलिको दियो। अन्ते बर उठ राजा गयो॥३९॥
आतम जोग दियो मुनि जहां। घेरो मंडप बलि ने तहां॥
यज्ञ काज आरम्भो तही। नाम धरा नर मेध जु सही॥ ४०॥
नरकादिक गतिको दातार। धरम तरोवरको कुरहार॥
अस्ति चर्म जिवादिक रुम। होमत तिस बहु उपजो धूम॥४१॥
सकल संगके मारन हेत। बहु उपसर्ग परो सहदेत॥
महा धीर मुनि आसाताजी। मान लई निश्चल तासजी॥४२॥
अब मिथिला नगरी जहँ बसे। सार चन्द्र आचारज लसे॥

अर्ध रात्रि तिन अम्बर विषे । श्रवन नक्षत्तर कंपित लसे ॥४३॥
अवध ज्ञान सों ऐसे कहे । हाहा मुनिगन बहु दुखलहे ॥
पुष्प दन्त क्षुल्लक तिहपास । सुनके बोले बचन बिलास ॥४४॥
कौनठौर कितको दुखहोई । सब बिरतन्त कहो तुम मोई ॥
पुष्प दन्त विद्याधर सुनो । सब बृतन्त अब तोसो भनो ॥४५॥
सूर अकम्पन गजपुर माहि । मुनिगन संग परीषह ताहि ॥
फिरके क्षुल्लक पूछन करे । सो सन्ताप अब कैसे टरे ॥४६॥
सुनके गुरु तब ऐसी कही । अवधिज्ञान मुन हिरदे लही ॥
धरणिजु भूषण गिरिहै जहां । बिश्नु कुमार मुनीश्वर तहां ॥४७॥
रिद्धि बिक्रिया उपजी ताहि । सो समरथ इस कारज माहि ।
ऐसो सुन क्षुल्लक तहँ गयो । पांयलाम सम्भाषत भयो ॥४८॥
परखन को भुज लम्बी करी । दीरघ है सागर अनुसरी ॥
बिक्रिय निश्चै मुनितब लयो । अम्बर मगचल गजपुर गयो ॥४९॥
पद्मप्रती मुनि बोलो एम । सुनउपसर्ग कहो तुमकेम ॥
सोमराय कुल उज्जल महा । तोसों दुर्मति उपजोतहां । ५० ।
ऐसेसुनके नृप उच्चरो । बलिको बरमें देनो करो ॥
सोपापी अबमुझपै लियो । सकल राज मैं ताको दियो । ५१ ।
बचन बंध अंतेपुर लयो । यह कार्यमें नाहीं कियो ।
ऐसी सुन बलि बामन रूप । वेद बचन धुनि भनहि अनूप ॥ ५२ ॥
यज्ञ हूम विधिवेद प्रवीन । बलि राजा तब परसन कीन ।
बामनसों नृप बोलो तबे । जोकुछ चाहिय लीजे अबै ॥ ५३ ॥
ऐसी सुनके बामन कही । तीन पैंड मुझ दीजे मही ।
और विप्र बहु बोले तहां । रे बामन तू गहलो महा ॥ ५४ ॥
बलिसो दाता तुमको देह । जो बहु बहुत अर्थ कछुलेह ।
बार बार लोभी यों कहें । अधिक याचना नाहींबहें ॥ ५५ ॥
हस्त उदक विधि बलिने करी । दान प्रतिज्ञा हिरदे धरी ।

रूप विक्रिया तब मुनि करो। प्रथमहि पग मन्दिरमें धरो ॥ ५६ ॥
मानुष उत्तर परबत जहां। पैड़ दूसरी धारी तहां।
त्रितिय पैड़को नाहीं ठौर। कहा क्षोभ बल दीजे और ॥ ५७ ॥
औरमही अब दीजे मोहि। नाहिं कलंक लगे अब तोहिं।
बचन बन्ध बलि बोलोवान। धारहुपगमो सीस सुजान ॥ ५८ ॥
बलिकी पीठ दये जब पांव। जुरेजु मंत्रि सकल तिहठांव।
विश्नुकुमार शरन सबआय। नमस्कार करि लागे पाय ॥ ५६ ॥
अम्बर बानी देवन करी। पुष्प बृष्टि मुनिपै अनुसरी।
नारद आदिक देव प्रवीन। रचि संगीत भगति थुतिकीन ॥ ६० ॥
करुणा सागरतुम मुनि राय। चरणकमल जुग लेहु उठाय।
ताही छिन कीने परसन्न। सकल सुरासुर भाषो धन्न ॥ ६१ ॥
तहँ चामर सुरहै सन्तुष्ट। घोषा और सुघोषा सुष्ट।
महाघोष पुनि अम्बर सुरा। घोषवती एवीणा वरा ॥ ६२ ॥
खग नरेशजे आये तहीं। तिनको दीनो बीणा सहीं।
बचन बंध बलि हारो जबै। मुनि उपसर्ग निवारो तबै ॥ ६३ ॥
मुनि चरननको सेवक भयो। चारो मिल श्रावक बृतलयो।
विश्नु कुमारसु गुरुपै आय। लीनो पुनि छेदो परस्थाय ॥ ६४ ॥
देखो पुरजन धर्म प्रभाव। हिरदे धर्मधरो अधिकाव।
पद्मभूप बहु कीनो राज। मन वंछित सुख भुगते साज ॥ ६५ ॥

दोहा

क्रमतें उपजो बिक्रमी, पद्म नाभि बलवण्ड।
महापद्म तिनको तनुज, पुनिसु पद्म परचण्ड ॥ ६६ ॥
ताकोपुत्रसु कीर्तिधर, पुनिसु कीर्तिबसु कीर्ति।
पुनिते उपजे बासुकी, इहि बिधि बहुत वितीर्थ ॥ ६७ ॥
पुनि उपजो कुरु वंशमें, सातन नाम नरेश।
कहिवेको सु नरेश हैं, गुन कर सत्य सुरेश ॥ ६८ ॥

चौपाई

शिवकी नामा ताकी नार । शुभगुन कर सीता उनहार ।
पुत्रपराशर तिनकोजान । बहु बलवन्त सुगुण की खान । ६९ ।
अब विजयारध रतन सुरेश । जन्ह सुनामबसेखगएश ।
गंगा नाम सु ताकी सुता । गंगासम निर्मल गुण युता । ७० ।
सत्यवान नैमेत्तिक जान । जन्ह खगेश बचन तिस मान ।
पाराशर की देवी सुता । पाणिग्रहण विधि हितसोंकृता । ७१ ।
पाराशरऔर गंगारानि । दंपति अतिहितसुखकी खानि ।
भुगतेंभोग निरन्तरकाम । निवसें अहनिस सुन्दर धाम । ७२ ।
गंगा उदर तनुज उपजेय । ताको नाम धरो गंगेय ।
बालचन्द्र समधारे बृद्ध । कपतेंली सब विद्या रिद्ध ॥ ७३ ॥
सीखो बान धनुष संधान । छेदे सूक्षम थूल निशान ।
चारण मुनी निकट तिनजाई । करुणा धर्मलहो सुखदाई ।७४।
देखोपुत्र अधिकबुध साज । जनक दियो तबपद युगराज ।
योग्य शिष्य सुत देखे जबै । उत्तम पद गुरु सौंपे तबै । ७५ ।
एक समय पाराशर धीर । क्रीडा करतसु जमना तीर ।
तहँइक देखी धींवर सुता । शील रूपगुणकर अतिजुता । ७६ ।
देखतरूप नृपति चितहरो । ताप्रति तब ऐसे उच्चरो ।
कौन जात काकी तुमसुता । अपनो भेद बताओ इता । ७७ ।
ऐसी सुनके बोली वही । सुन नरेन्द्र अब भाषूं सही ॥
नावरियनको अधिपति जोय । जमुना तीरबसत है सोय ।७८।
अधिक लाडली ताकी सुता । नाम गुणवती शुभ गुण जुता ॥
जनक तनी मैं आज्ञापाय । नाव चलावत हो इह ठाय ॥७९॥
जो कुलवन्ती कन्या होय । मात पिता बच मानत सोय ॥
ताको इच्छत छतिपति भयो । तासु पितापै जाचन गयो ।८०।
धींवरने अति आदर करो । तब नृप तासों इमि उच्चरो ॥

गुणवति नामा जो तुम सुता। होहु तिया हम शुभ गुणजुता॥८१॥
यों सुनि धींवर बोलो ताहि। औरहि बरहि विवाहों याहि॥
तोहि न देहुँ सुता गुनरली। गंगा सुत तुम नंदन बली॥८२॥
राज जोग तिस बैठे साज। हम दुहिता सुत है किमराज॥
तातें दूर करो यह बात। भूप निषेधो तिन इहि भांति॥८३॥
मलिन बदन है घरको गयो। सुत गंगेय सु देखत भयो॥
बदन विवर्ण पिताको लखो। अपने चितमें ऐसे अखो॥८४॥
कै मैं विनय उलंघो कही। आज्ञा किनहि न मानी सही॥
कै मो माता सुमरन कीन। जासूं जानन जनक मलीन॥८५॥
यों विचार पूछो मंत्रीस। क्यों चिंतातुर है अवनीस॥
सब वृतन्त इन जानो जबै। तो पति गृह इह आयो तबै॥८६॥
तब गंगेय भने इम बान। सुन ए धींवर निश्चै आन॥
नृपति निरादरयो तुम आज। अति अनुचित यह कीनो काज॥८७॥
धींवर बोलो सुनहु कुमार। जा कारन नृप दीनों टार॥
सौत तनुजपर तनुजादेय। अंध कूप सों डारे लेय॥८८॥
तुम नर रतन सुपतनी पूत। सब गुन पूरन बलसों यूत॥
केहरि गर्जे बनमें जहां। किम न बसैंमृग सुखसों तहां॥८९॥
मो तनुजा सुत उपजोजोय। तिनको सुख नहिं दुखही होय॥
किह विधि संपय पावहि बीर। विपदाआवे अति तिनतीर॥९०॥
राज लच्छ यह ताको त्याग। और पुरुष संग कैसे लाग॥
बारिधको तजि सरितामहा। और सुठौर मिले वह कहां॥९१॥
तब गंगेय धरो करि प्रेम। हे माता ये सुनिये एम॥
तुम चित है अति भ्रमआलीन। सारे बंश बराबर कीन॥९२॥
अन्य वंश कुरु बंशहि मांहि। अंतर बहुत बराबर नांहि॥
सोम बंश बहु गुणकी खान। इनहि बराबर तू मति जान॥९३॥
कहिबेको पंछी सब नाव। काग हंस नहिं एक सुभाव॥

गंगा हूते अधिक सुभाइ । गुणवति नामा मेरी माइ । ६४ ।
बाहु उठाउ कहो तिन एम । एक सुनहु तुम मेरी नेम ॥
गुनवति सुतही नृप पद करे । गंगाको सुत राज न करे । ६५ ।
नौकापति भनि सुन सुकुमार । जे उपजे तेरे सुत सार ॥
ते बलवंत सुकुल मद छके । नृपपद तिनको देख न सके । ६६ ।
तब गंगा सुत ऐसे कही । यह भी चिंता नाशूं सही ॥
सुन माता यह शंशय मेट । सुनहु सिद्ध गंधर्व सुपेट । ६७ ।
अबतें ब्रह्मचर्य में लयो । सकल जन्म तिय त्यागी भयो ॥
भूचर खेचर अरु जिनदेव । सबकी साख लयो प्रति एव । ६८ ।
तब बुलाय तिन दुहिता दई । गंगा सुतकी थुति अरठई ॥
तोसम गुणी न जगमें आज । लीनों शील पिताके काज । ६९ ।
इक बिरतंत जु सुनहु कुमार । एक समय जमुनातट सार ॥
तरु अशोक तल थित हमकुता । गिरत गगनमें पाई सुता । १०० ।
रहो सदामें चिन्तावान । कल न पड़े मो बिन सन्तान ॥
रूपवती देखी सुत जान । विस्मय धार लई सुख खान ॥ १ ॥
तब बानी अंबरसों ठनी । सो मैं अपने कानों सुनी ॥
सुखकी खान रतनपुर जहां । चित्राङ्गद नृप राजा तहां ॥ २ ॥
रानी रतनवती गुन जुता । ताके उदर भई यह सुता ॥
याके जनक तनो अरखेट । तिनहर डारी क्रोधहि भेट ॥ ३ ॥
ऐसी सुन तब आयो गेह । अपनी तियको दीनों एह ॥
नाम गुणवती धरके सही । कृत्रिम पुत्री पाली यही ॥ ४ ॥
तात हेतसो अबतें लई । इह बिधि याकी उत्पति कही ॥
ऐसी सुन कन्या ली संग । गजपुर आयो कूंवर गंग ॥ ५ ॥
बहुत बिनयसों जनकहि दई । बिधि बिवाहकर नृप पर नई ॥
अधिक सुखीसो भये तब राय । ज्यों निरधन जन धनको पाय । ६ ।

दोहा

द्वितिय नाम तिय गंधते, जोजन गंधा कीन ।
तातैं उपजो सुत सुभग, व्यास व्यसन कर हीन ॥ ७ ॥
अघहारी धरमात्मा, सभा सीस सो व्यास ।
लही सुभद्रा भामिनी, भये तीन सुत तास ॥ ८ ॥
आदि तहां धृतराष्ट्र हैं, द्वितिय पांडु बलवन्त ।
तृतिय विदुर विद्वान वर, सन्तनमें महा सन्त ॥ ९ ॥
यह विधि व्यास विकास मति, अधिक सुजसको हेत ।
राज करैं गजपुर विषै, तीनो पुत्र समेत ॥ १० ॥

सोरठा

उत्पति सुनिये एव, हे श्रेणक हरि वर्ष की ।
जो भाषो पुरदेव, बरनतहूं संक्षेप सों ॥ ११ ॥

चौपाई

भरत यही हरि वर्षे देश । भूप प्रभंजन भोग पुरेश ।
नाम मृकुंडा ताकी रानि । मानों इंद्र सहित इन्द्रानि ॥ १२ ॥
अब कोसाम्बीपुर है जहां । नाम सुमुख नरपति है तहां ॥
वीरदत्तकी तिय तिन हरी । बनमाला तिस संज्ञा धरी ॥१३॥
सुनके दान भली गति गयो । आप प्रभंजन को सुत भयो ।
सिंह केतु तिस संज्ञा ठयो । रविसों अधिक सु दीपत भयो ।१४।
वज्र घोष तहँ सील पुरेष । नारि सुपरभा तसु शुभ भेष ।
ताकी कुख उत्पन्नी वही । जो पहिले बनमाला कही ॥ १५ ॥
विद्युतमाला संज्ञा रखे । सिंहकेतु सू व्याही भले ।
बीरदत्त मरि उपजे देव । चित्राङ्गद सो आयो एव ॥ १६ ॥
पूरब बैर सुमर चित अती । क्रीड़ा करत हरी दम्पती ।
सूरज प्रभु सुरता को पार । तिन यह बरजो भारत सार॥१७॥
चम्पापुर तट डारित भये । दोऊ सुरघर अपने गये ।

चन्द्र कीर्त नृप चम्पा बीच । पुत्र बिना तिन पाई मीच ॥१८॥
तहँ दन्ती यह दम्पति देख । करले कलश करो अभिषेख ।
सिंहकेतु तहँ पायो राज । सब्र बिरतन्त कहो जिन साज ॥१९॥
राज धुरन्धर जानो जबै । सकल लोक मिल पूजो तबै ।
तनुज मृकुंडा को इम भये । तातें प्रगटो मार्कण्डेय ॥ २० ॥
ताके सुत नृप हरगिर भये । हेम गिरी पुनि तातें ठये ।
तापीछे बसु गिरि छतिपती । इह विध बंस बितीतो अती ॥२१॥
पुनि उपजे जुग भ्राता धीर । अग्रजसूर अनुज नृप बीर ।
सूरभूप तिय सूर सुन्दरी । सूर नगरकी प्रभुता बरी ॥ २२ ॥
अंदक वृषी तिनके पूत । उपजो बिनय सुनय संयूत ।
ताकी बनिता भद्रा नाम । इंद्र मुखी बहु गुनकी धाम ॥२३॥
ताके दश सुत गुनके गेह । दश विधि धर्म तनी मुनि देह ।
आदि समुद्र बिजय है तहा । सुमति समुद्र सु दूजो कहा ॥२४॥
तीजे हिमवन चौथे बिजै । पुनि बिजियाचल पंचम सजै ।
षष्टम धारण पूरण सात । अष्टम सुख बहु सुखकी पात ॥२५॥
अभिनन्दन है नवमो एव । जगमें प्रगट दशम सहदेव ।
पुनि ताके अति उत्तम सुता । कुन्ती नाम सकल गुण युता ॥२६॥
कनक कुम्भ कच करपर धरे । चंद्र बदनते निस तम हरे ॥
कल्पलता भुज चिंचुका अम्ब । कटकेहरि गुरु अति नीतम्ब २७
दूजी पुत्री माद्री नाम । मुहर करी मनुरस की काम ॥
सुन श्रेणक संज्ञा मनुधार । समुद्र विजय आदिककी नार ।२८।
प्रथम शिवाशिव सुखकी खान । पुनि धृति धात्रि धृतकी दान ॥
स्वयंप्रभा सुप्रभा सो भरी । नीत बतीसु सुनीता खरी ॥२९॥
सीता नाम सु सीता समा । प्रिय भाषिनि प्रिय बैनी रमा ॥
प्रभावती सुप्रभा भूषिता । कनक सुबर्ण कलिंगी कृता ॥ ३० ॥
नवमी प्रभा सुपूरन प्रभा । नौ भ्रातनकी एतिय शुभा ।

अब सुबीर नृप मथुरा बसे । पद्मावति तिय ताके लसे ।३१।
भोजक वृष्टि तासु सुत जानि। शुमती नामा ताकी रानि॥
तिनके पुत्र भये शुभ तीन । उग्रसेन है प्रथम प्रवीन ॥३२॥
महासेन दूजो अभिराम । देवसैन तीजो गुन धाम ॥
गंधारी पुन ताकी सुता शशि वदनी शुभ गुनकर युता ॥३३॥
उग्रसेन आदिककी नार । तिनकी संज्ञा सुन क्रम धार ॥
पदमावती महसेना जान। देव सुसैना गुनकी खान ॥३४॥

दोहा ।

अब पुरीराज मही विषय, भूप बृहत रथ नाथ ।
ताघर बनिता श्रीमती, श्री समान अभिराम ॥३५॥
तिनको सुत सुचि सुरसम, जरासिंध चक्रीश ।
नरसुर सव्य त्रिखण्ड पति, पत हर नवम अधीश ।३६॥

चौपाई

अब धृतराष्ट्र सु नृप बुध साज। पांडु अनुजके ब्याहन काज॥
कुन्ती कन्या जांची जबै । अंदक वृष्ट बिचारी तबै ॥ ३७॥
मंत्र कियो है दश सुत संग। पांडु दोष है याके अंग।
तातें तनुजा दीजे नहीं । अपयश आवै जगमें सही ॥ ३८ ॥
कौरव जांची बारम्बार । बैठ रहो पुनि मौनहि धार ।
रूपवती अति कुन्ती सुनी । पांडु भूप चित चिन्ता ठनी ॥३९॥
रवि बिनमारन रतिके यमें । व्यास तनुज तो आरत भमें ।
सुमिरत ताहि सुपीरो भयो । ज्वर पीड़ितसों बिहवल ठयो ।।४०॥
एक समय तिन करत सुकेल। बनमें देखो मण्डप बेल ।
सुमन सेज शुभ साजी जहां । मुदरिक एक परी लखि तहां ४१॥
पांडु मुद्रिका लीनी जबै । को इक खग तहां आयो जबै ॥
तब इत उत ढूंढत खग लखो। पांडुराय तब ऐसे अखो ॥४२॥
अहो मित्र तुम ढूंढत कहा । ऐसी सुनि खग बोलो तहा ॥

हम ढूंढतहैं मुदरी परी । इन दिखाय तब आगे करी ॥४३॥
ढूंढत मुदरी महा नर होय । सो किह कारन शंसय मोय ॥
या वनमें तुम भूली केम । खगसों कौरव पूछो एम ॥ ४४ ॥
चतुर गगन चर बोलो धीर । बिजया रथवासी हम बीर ॥
बज्र सुमाली मेरो नाम । आयो रमन इहां संग भाम ॥४५॥
क्रीड़ा करके चलती बार । गिरी मुद्रिका करते सार ॥
वेगहि गगन गयो सो बिसार । तवही याद करी चितधार ।४६।
आयो मुद्री देखन काज । सो अब तुमसों पाई राज ॥
ऐसी सुन पुनि पूछी यही । कौन काज यह आवे सही । ४७।
खगपति बोल्यो सुनि गुन गेह । काम रूपनी मुद्री येह ॥
दायकहै मन वंछित रूप । ऐसे सुनके बोलो भूप । ४८ ।
जो यह ऐसी है खगनाथ । तो मुझ दीजो राखूं हाथ ॥
कारज करके को इक दिना । देऊं पीछे तो शुभ जना । ४९ ।
पर उपकारी बज्र सु माल । जाचकते दीनों दर हाल ॥
कौरव कर मुद्रीको पमे । गयो सूरपुर ताही समे । ५० ।
जदुपति के अन्ते बरठाय । काय छिपाइ सु निसमें जाय ॥
कुन्ती सदन सो पहुंचो जबै । आसन बैठी देखी तबै । ५१ ।

दोहरा

थकित भयो अति पांडु चित, कुन्तीको अब लोय ।
उपमा बिबिध बितर्कना, बरनत चकृत होय । ५२ ।

सवैया इकतीसा

काम केलि साला है कि बाला रति कल्प बेल माला किधो माला ताकी बिधिना संवारी है । यक्षगी नगी सुरीक आसुरी कि रोहिनी कि व्यंत रीक किन्नरीक सुना सीर प्यारी है ॥ सुगुरु की शिक्षा है कि जोबन की रक्षा किधों रूपकी परीक्षा शील सरिता बिथारी है । राम जूकि रानीहैं कि रमा हू कि राजधानी, जैनी जैन बानी किधों कुन्तीही कुमारी है ५३

दोहरा।

कुन्ती की छबि देख के, चित विहवल हो पांडु।
प्रकट अङ्ग अपनो कियो, लगे काम शर चाराडु ॥ ५४ ॥
या बिन जीवन जगतमें, जुगत नहीं छिन एक।
जोबन धन पायो सकल, यों ध्यावत चित टेक ॥ ५५ ॥
कुन्ती याको रूप लखि, भई सु विहबल चित्त।
चकित है यों चितवे, सुनिये श्रेणिक मित्त ॥ ५६ ॥

सवैया इकतीसा

गुनको है धाम किधो काम अभिराम किधो जपे जाहि आठो जाम राम नाम नर है। सुर है कि सुरपति शशि है कि सूर किधौं, किन्नरी को पती है कि किधौं कल्पतरु है॥ पति है सुहाग को कि भागपति नागपति गुनी जन हँसनको मानों मानसरूप है। शोभाको निवास सुत ब्यासको प्रकाश किधौं जैनी जनमतहै कि शारदाको बरु है॥ ५७ ॥

दोहा

जाके मस्तक अर्द्ध शशि, मुकुट वन्ह सुख भास।
वच्छस्थल श्री लक्षसम, तिय निधि भुज आहियास ॥ ५८ ॥
इह बिधि देखत पांडु को, कुन्ती ध्यावत चित्त।
मो मन्दिर दुर लंघ यहि, आयो कौन निमित्त ॥ ५९ ॥
बोली साहस सो सहित, कौन नाम तुम राज।
कौन तुम्हते सद्म मो, आये कौनहि काज ॥ ६० ॥

चौपाई

ऐसी सुनि नृप बोलो तबै। सुन सुन्दरि अब भाषों सबै॥
देश भलो कुरु जंगल लसे। बिदुरराय शुभ जामें बसे ॥ ६१ ॥
ताको लघु भ्राता मैं पंडु। पृथवी प्रकट महाबल बंड ॥
जो यौगी धारे शिव ध्यान। सुमरत मदन जथारत रान। ६२ ।

तैसेही मैं तो चित धरो । तेरो सुमिरन निस दिन करो ॥
बोली कुन्ती तब नृप साथ । मैं अविवाही कन्या नाथ । ६३ ।
जो हम तुम अब संगम करें । अपकीरति जगमें अनुसरें ॥
जो तुम ऐसो भाषो भले । युक्ति स्वयम्बर जग में रले । ६४ ।
करहि पिता शुभ आज्ञा जबै । बरइ स्वयम्बर कन्या तबै ॥
तातें न्याय सुमारग एहु । मोको जाच पिता पै लेहु । ६५ ।
ऐसी सुन मदनातुर राय । कुन्ती प्रति बोलो इह भाय ॥
मंत्र अकर्षन तेरो नाम । तासों आयों मैं इह ठाम ॥ ६६ ॥
कामबान उर लागे जिन्हे । आज्ञा लंघन भये नहिं तिन्हे ॥
आज्ञाको भय तुम मत करो । मेरे बच तुम हिरदे धरो ॥ ६५ ॥
हे कामन निश्चय मन आन । जग निन्दाको भय मत ठान ॥
त्रिया बेलिको छेदन करो । काम भोगसों संग अनुसरो । ६८ ।
मदन करो मदपुरवै जबै । नीति भीतको ढाहे तबै ॥
तौलों जगमें लज्जालता । जौलों धर्म नहीं रहुरता । ६९ ।
शास्त्र ज्ञान भी तौलों रटे । जौलों कामन दन्ती छुटे ॥
तौलों नर माने कुल लाज । तौलों ही भय व्यापे राज । ७० ।
तौलों जनकादिक मरजाद । जौलों मारन है उन्माद ॥
तातें सुंदरि भाषों तोहि । अपनो तन अब दीजे मोहि ।७१।
अथवा अपने करसों नार । मेरी मृत्यु करो अविचार ॥
कै मो बदनहि बदन मिलाय । पोषो मुफ अधरामृत प्याय ।७२।
मनदे बचदे काया देहि । दीने ते याचक सुख लेहि ॥
बिन दीने याचक नहिं रजे । भंग याचना दुखही सजे ।७३।
सारस नैनी आरस त्याग । विध पहुनेर करो बड़ भाग ॥
पांव नमें अब तेरो सही । जाचन भंग सुकीजे नहीं । ७४ ।
इतनी सुनत लगे शरकाम । अधिक भई चित मोहित भाम ॥
पंच बानके बान प्रचंड । नर नारी चित कीने खंड । ७५ ।

दोहा

लज्जा जगह उठायके, मद आतुर नर नारि ।
काम केल रति केल फल, सींचत प्रीति सुनारि । ७६ ।

अथारुप संयोग वर्णनम् । सवैया तेईसा

कुन्ती को कोमल कंठ लये कर ह्वै मधुवा मुख चुम्बन कीने । अरु अधरामृत पीवत ही सुख पायो अपूरब पांडु प्रवीने ॥ नीवी विमुंचित जाग्यो मनोज सुदूरि करो तब चीर नवीने । एकहि हाथ उरोज गहे जुग जंघहि जंघ पगे पग लीने ।

दोहा

कुन्ती तन चन्दन बिपन, बिरह ताछै भयलीन ।
पांडु नरिन्द्र फणिन्द ह्वै, बहु आलिंगन कीन ॥ ७८ ॥
बलान चुम्बन करत बहु, खंडन क्रीड़न हास ।
अधिक प्रीति चित दम्पती, बाढ़े बिबिध बिलास ॥७६॥

चौपाई

इह बिधि तृप्त भयो बहु राय । कौन न तृप्ते प्यारी पाय ॥
यो प्रछन्न तन नित प्रति जाय । कुंति संग सुख भुगते भाय ।८०।
एक समय सो देखो धाय । कुंती संग रमत कुरुराय ॥
कौन अर्थ यह कौन सु नाम । क्यों आयो कुंतीके धाम ।८१।
इर्भचित तब धात्री बिध हरी । चित बिहवल अतिही अनुसरी ।
निकस गयो जब गृहते राय । कुंती प्रति तब बोली धाय ।८२।
सांच बचन तुम बोलो सुता । कोनर तो गृह आवत निता ॥
यों पूछत तन कंपत भई । चपल चत्तु ह्वै बोलन ठई ॥ ८३ ॥
मेरी कृत सुनिये दे कान । क्या न करे कामी अघ खान ॥
कौन कौन नर नष्ट न भये । कर्मन के बश अपगति गये ।८४।
रावनादि नर नीती सही । कर्म जोग तिन दुर्मति गही ॥
दुधेर काज करमही करे । जगमें जीव करम बश फिरे । ८५ ।

हे माता सुन करुना ठान । एक समय संध्या अवसान ॥
अकस्मात नर आयो येह । बिधिके योगन क्या क्या भेह ।८६।
कुरु जांगल शुभ देश प्रकाश । गजपुरको प्रभु राजा व्यास ॥
ताको सुत यह पांडु अनूप । रक्त भयो सुनके मो रूप । ८७ ।
तिन बनमें इक मुदरी पाय । आयो तासों रूप छिपाय ॥
भोग अर्थ इन मेरे तीर । प्रकटो अपनो रूप सुधीर । ८८ ।
ऐसी सुनके बोली धाय । कंपित तन शोभित अधिकाय ॥
हे पुत्री तुम कीनो कहा । यह कारज अति निंदक महा ।८९।
बाला वृद्धा जोवन वती । अरु गहली सु अपठिता अती ॥
बर्जनीक यह नरते नारि । होय अनिष्ट सु और प्रकारि । ९० ।
हे कन्या यह कुल यदुवंश । अति उज्जल मानो शशि अंश ॥
सो या निन्द करमके करे । अवस कलंकित ह्वै है खरे । ९१ ।
जो जनकादिक अब यह सुने । तो क्या जाने क्या क्या ठने ॥
ऐसी सुनके कुंती डरी । गद गद स्वर है यों उच्चरी । ९२ ।
हे उपमाता जो तुम भनो । सोई कारज अब मैं ठनो ॥
तातें मोपर करुना ठानि । भाषो मोसों उत्तम बानि । ९३ ।
कृत अपकीरति मेरी यही । मृत्यु बिना जो नासे नहीं ॥
तो तुरतहि मैं अबही मरूं । अपने प्राण छिनकमें हरूं । ९४ ।
मरन प्रती तिस उद्यत जान । बोली धाय तबै हित मान ॥
हे पुत्री तुम भय मत लहो । अपने चितमें हर्षित रहो ॥९५॥
जैसी बिधि तुमको सुखरले । तैसो काम करोगी भले ॥
ऐसी बिधिसों बहु आस्वास । दोष छिपावे नित प्रति तास ।९६।
यहि बिधिही कुछ बीतो काल । कुंती गर्भ भयो सो बिशाल ॥
कठिन जठर त्रिबलको भंग । प्रथम चिन्ह यह प्रगटो अंग ।९७।
मुखसों थूक अधिक ही बमें । पीरो तन जल पन तुछ पमें ॥
कनक बरन तन उज्जल भये । सुत आगम आनंदित ठये ॥९८॥

कुच चूचक जुग कालिम जगी। मानों अरिगन मुख मसि लगी।
जल सींचे बल्लभ फल फले। गर्भ भारयो कुच जुग रले ।६६।
एक समय तिस माता पिता। गर्भवती सो देखी सुता ॥
धाय प्रती तब बोले सही। अति छोभित ह्वै ऐसी कही ।२००।
रे दुष्टनी नीच अघलीन। यह कृत कुन्ती संग किन कीन।
कौन पुरुष तें आन्यो गेह। अति अनिष्ट किन कीनो येह ।१।
जार संग ते बेटी बहू। कुलको दोष लगावत सहू।
रक्षा कारन सौंपी सुता। सो तैं रिच्छा ऐसी कृता ॥ २ ॥
जाके दोष नृपनिकी सभा। बैठत छीजत हमरी प्रभा।
सबको देख अधोमुख होय। तिहँगे मसि कई समोय ॥३॥
कुल निपातनी सरिता सही। कुलके पातिक बनिता कही।
नदी नार में अन्तर नहीं। रस सिंगारहि धारे सही ॥ ४ ॥
नाग नखी नारी नर दुष्ट। इनको नाहिं पतीजे सुष्ट।
तजिये नितही तिय विश्वास। अरु विशेष उन्मत्ता तास ५॥
नागनि खाय सुकोपे धारि। बिन कोपे निगले यह नारि।
रक्षा हेत सुता तुम देई। सो रक्षा तें ऐसे ठई ॥ ६ ॥
ज्यों बिल्ली पय रक्षा हेत। राखतते आपे पीलेत ॥
ऐसी तैं रखवारी करी। पति इज्जत सब कुलकी हरी ॥७॥
ऐसी सुनके डरि बहुधाय। स्वेद चली तन कम्पी काय।
आनन की छवि जाती रही। साहसधर नृपसों यों कही ॥८॥
जदुकुल पालक तुम गुणवान। असरन शरन कृपाकी खान।
सावधान हो सुनियें सबै। जो विनती मैं भाषों अबै ॥ ९ ॥
कुन्ती को नहिं दोष नरेश। नहिं दूछन मेरो लवलेश।
केवल दोष कर्मको सबै। क्या नहिं नाच करम नट फबे ॥१०॥
कुरुवंशी कुरुजंगल देश। गजपुर स्वामी पांडु नरेश।
तिन कुन्ती जांची बहु भाय। तुम नहिं दीनी ताको राय ॥११॥

लुब्ध भयो सुन याको रूप । एक समय तिन बन में भूप ।
एक बेलको मण्डप तहाँ । तामें कुंवर आ बैठे सही ॥ १२ ॥
सुंदरी एक तहांपर परी । काहू खग के करते गिरी ।
नाना रूप सु तासों लहे । ताको पहर सु आयो वहे ॥१३ ॥
जहां न कोई कन्या तीर । पाइ एकली ब्याही धीर ॥
बिन पूछे मुझ तिन एकान्त । उरसों लाय लई इस भांत॥१४॥
रमत भयो यो दिन २ मांहि । मैं जब देखो पूछो याहि ।
सांच कहो इन मोसों तबै । सो मैं तुम से भाषों अबै ॥१५॥
अबलों रक्षा मैं बहु कीन । अबतें तुम जानों परवीन
जो कुछ योग जुगत जगमांहि । शुभ विचार तुम कीजो याहि १६।
दोऊ दम्पति ऐसी सुनी । अपने चितहि विचारो गुनी ।
धाइ प्रती तब ऐसे कही । ढकियो दूषण नीके यहीं ॥ १७ ॥
जनकादिकको भाषो नाहिं । तौभी फैल गयो जग मांहिं ।
तेल बूंद ज्यों जल में परे । फैले त्यों जग निन्दा करे ॥ १८ ॥
अब बीते जद पूरन मास । पुत्र जन्यो तिन रविसम भास।
उपज्यो सुत तब पुरजन जान । बात कहें सब कानों कान ।१९ ।
छिप २ के नृपके भय जोग । निन्दा भाषैं सारे लोग ।
कानों बात चली पुर धाम । तातें कर्ण धरो तिस नाम ॥२०॥
मंत्र कियो मन्त्री संग राय । शिशु थाप्यो मंजूषा ठाय ॥
रतन कवच बालक तन करो । कानों कुण्डल शोभा भरो ।२१ ।
कर्ण नाम लिख अक्षर भले । जन्मपत्र बहुधन सो रले ।
जहं जमुना की तीक्षण धार । तहां मंजूषा दीनो डार । २२ ।
बहो मंजूषा पहुंचो तहां । चम्पापुर जमुना तट जहां ।
सदन घने जहां राजे सेत । कुंभकरन के तिनपर केत । २३॥
जिनमन्दिर बहु शोभा खने । तिनमें भविजन पूजे घने ।
वासु पूज्य को गर्भ प्रसूत । भयो सुतातें पुरि अतिपूत।२४।

जाको बन अति शोभा लीन । जहँ कल्यानक बरतें तीन
अग्नि दिशाकी शोभित मही । बहुत गुनीजन उपज तही २५
शशिबदनी मृगनैनी नार । उपजे जहँ नर बहु दातार ॥
ता नगरीके राजा भान । अधिक प्रतापी भानु समान ॥२६॥
अस्त होत है निसदिन भान । याको उदय सदा द्युतिखान ।
कविजन ताको ऐसे कहें । कल्पवृक्ष चिन्तमणि यहे ॥ २७ ॥
कामधेनु नहिं कोऊ और । सब गुनकी यह एकै ठौर ।
शस्त्र शास्त्र की बिद्या लसे । जाको नाम सुनत अरि नसे२८॥
राधा नाम सुरानी तास । शीलरूप शुभ गुणकी रास ।
सोहै लागी यों नृप अंग । कल्पवेल ज्यों सुरतरु संग । २९ ।
रंभा उर सम शोभा लहे । मानो सुरपति की तिय यहे ।
तामें दूषन एकहि ठने । सुत विनता को बंध्या भने ॥३०॥
एक समय सो राजा भान । नैमित्तिक प्रति बोलो बान ।
मेरे सुत ह्वै है की नहीं । सत्य वचन तुम कहियो सही ३१ ॥
नैमेत्तिक जब प्रश्ने सुनो । चित विचार के उत्तर भनो ।
मेरे बैन सुनो रवि राय । शास्त्र निमित्त कहे यह भाय ॥३२॥
बालक सहित मजूषा भले । आवेगो यह जमुना जले ।
तनुज तिहारो ह्वै है सही । यामें मिथ्या रंचक नहीं ॥ ३३ ॥
तबहीते नृप यमुना तीर । राखे सुभट महा मति धीर ।
नित देखैंथे ताकी राह । तिनको दूर सिन्दूखा पाय । ३४ ।
सिन्दूखा तट आयो जबै । लै पहुँचे वह नृपपै तबै ॥
बोलत निकसो बाल अनूप । अपने अंक लियो तब भूप ३५॥
नैमेत्तिक तब बच चितवते । बोलो राधा प्रति तब इते ॥
हे राधे यह बालक लेहु । रबिते अधिक स्वरूपी येहु ॥ ३६ ॥
ऐसी सुनत सुराधा जाय । लीनों दोउ कर सुतै उठाय ॥
सुतको लेत सु राधा रानं । कान खुजावत देखी भान ॥ ३७ ॥

तातैं कर्ण धरो तिस नाम। दिन २ बाढ़े ताको धाम।
बालचन्द जों बहु गुन रला। बाढ़े नित श्रीशोभा कला ३८॥

दोहा।

जैनी यह बिधि पुन्यतें, भयो कर्म का छीन।
कुन्ती कुख सुउपजके, चम्पापुर सुखलीन ॥३९॥
ताते पुन्य महाबली, सब ठौरन सुखदाय।
अग्नि नीर जल थल करे, सुर नर करहिं सहाय ४०
अनुभव सेवन जिन भजन, यह निश्चय व्यवहार।
जैनी जे नर सरद हैं, ते पावहिं भव पार ॥ ४१ ॥

छंद

कहा भानुवर भूप सुलै निज गृह गयो।
अधिक प्रीति धर सुतकर निज तियको दियो।
पूरब पुन्य प्रभाव सबै सुख पाइये।
ताहीतें नित जैनी जिन गुन गाइये॥
कहां धाम यदुराय सुअंधकवृष्टि को।
कहां पांडु संजोग सुकुन्ती इष्टको॥
जन्म पाय तहँ कर्ण सुनीर बहाइयो।
पुन्यजोग पुर चम्पा निकट सुआइयो॥४२॥

इति श्रीमन्महाशीलाभरणभूषित जैनीनामांकितायां लालाबुलाकीदास विरचितायां श्रीकर्णकुमारोत्पत्ति प्रकरणोनामअष्टमप्रभावः।

॥ अथ सम्भवनाथ स्तुति ॥

मंगलाचरण सवैया तेईसा।

श्रेय निधायक एन बिधायक सो शिवनायन लाइक साईं। जाको शुभानन है शुभ दर्पन विश्व पदारथ भाषन जाईं॥ सो शुभ सम्भव दम्भ हरे सव ज्यों असिरंभ सुथम्भ की नाईं। लाल बुलाकी नमें तिरकाल सुभाल नवाई स्वसिद्धिके ताईं १॥

दोहा

सुन श्रेणिक संसारमें, महा मूढ़ हैं लोग ।
ऐसे कर्णकुमारको, कारण कहत अजोग ॥ २ ॥
कान कान बातें चली, जन्म समें पुर ग्राम ।
तातें अंधक वृष्ट नृप, कर्ण धरो तिह नाम ॥३॥
खाज उठी राधा श्रवण, बालक लेती बार ।
ताते राजा भानुने, भाषो कर्ण कुमार ॥ ४ ॥
कर्ण भयो जो कर्णते, तो यह सारी सृष्टि ।
क्यों नहिं उपजे श्रवणते, तातें झूठ अनिष्ट ॥५॥
कर्णनाश कारण भये, देखे सुने न कोय ।
ताते उत्पति कर्णते, कर्णतनी किमि होय ॥ ६ ॥
होय न पय गौश्रृंगते, बंझा जनै न पूत ।
गगन कुसुम सिल सस्य ज्यों, त्यों नर कर्ण प्रसूत ७
अहि मुख अमृत श्रृंग शशि एकहु उपजे नाहिं ।
त्यों उत्पति नर कर्णते, होय न या जगमाहिं ॥८॥
तातें यह शुभ कर्णकी, जानो उत्पति सत्य ।
यासों जो विपरीत है, सो सब कही असत्य ॥९॥
कुन्ती रवि संगामकियो, उपजो कर्ण अनित्य ।
नर तिय रविसंयम कहां, तातें सकल असत्य ॥१०॥
पालो यह नृप भानुने, तातें रविसुत जान ।
नन्दगोप सुत कृष्ण जो, जग गोपाल बखान ॥११॥
अब कोरव पांडव तनी, जो जिन शास्त्र प्रणीत ।
ताही विधि में अब कहूं, सुनिये श्रेणिक मीत ॥१२॥

चौपाई

एक समय नृप अंधक वृष्ट । नृपन बुलाये सकल सुइष्ट ।
मंत्र विचारो तिनसों साज । कुन्ती पाव ग्रहनको काज ॥१३॥

और नृपति को दीजे जदा । दोषवती है कुन्ती तदा ।
और सुवाको ऐसी जान । नाहि ग्रहन कीजे मतिमान ॥१४॥
तातें बात भली है यही । पांडु चतुर को दीजे सही ।
ठीक यहू कर भेजो दूत । व्यासराय पै बुद्धि संयूत ॥१५॥
द्वारपाल भीतर लेगयो । भेटदई इन प्रनमन ठयो ।
बहुत बिभूति नृपतिकी लखी अधिक विनयसों ऐसी अखी १६
सुनिये व्यास महा सुविसिष्ट । सोरीपुर पति अंधक वृष्ट ।
तिनही भेजो तुम तट मोहिं । एक संदेशो भाषूं तोहि ॥१७॥
पांडु तनुज तुम कुन्ती सुता । व्याह करनको उत्सव कृता ।
ऐसी सुनके नृप यों कहे । या कारज को कौन न चहे ॥१८॥
सुंदरी मणिको शुभ संयोग । जो बरजे सो मूरख लोग ।
तहँ रातो सुत को अति जान । बोलो दूतप्रती निजबान १९
जहँ उद्यत जदुपति को चित्त । सोई हम चाहत हैं मित्त ।
सब राजनके आगे एम । ठीक कियो नृप धरिके प्रेम ॥२०॥
बसनाभूषण दूतहिं देय । भेंट सहित दिन लगन कहेय ॥
जबही दूत सु कीनों बिदा । किनसों पांडु सो ब्याहन तदा ।२१।
तन भूषण नाना लंकार । उज्जल छत्र सु मस्तक धार ॥
बाजे बाजहिं नट बहु नचें । मंगल गीत सु कामनि सचें ।२२।
सिद्धि असीस सो माता दई । मंगलकारी सब बिधि ठई ॥
पांडु चले जब ह्वै असवार । संग बराती भये अपार ॥ २३ ॥
कोऊ हय चाढ़े कोउ गजे । कोऊ रथपै शोभा सजे ॥
बन शोभा देखत मन मांहि । दुलहू संग बराती जांहि ।२४।
देखहि दुलहूको इक कहे । अति गहरी यह सरिता बहे ॥
कमल कलित निर्मलजल भरी । मानों भूषित बनिता परी ।२५।
कोइक बोलो और प्रवीन । देखहू परबत शोभा लीन ॥
बंस बिरे करि सोहे हरा । शुभ बंसी मनु भूषित खरा ॥२६॥

नचे मयूरी देखहु नाथ । ऊंचे करके करपर हाथ ॥
देखहु नृप तरु झूमें फले । मानों तुम मन हारहिं रले ।२७।
निरखो प्रभु यह बनमें कोल । पंक फूल मनु स्याम निचोल ॥
है कोऊ अरि तुम निसि आय। तुम मूर्ति बैठो बन ठाय।२८।
योवन शोभा देखत सबै । सोरीपुर तट पहुंचे जबै ॥
जदुपति सुनके सन्मुख ठयो । कण्ठ लगाके भेटत भयो । २९।
कुशल पूछके पुरमें जाय । शुभ मंदिर थापो कुरुराय ॥
सुमुहूरत शुभ लगन बिवाह । वेदी रच कीनो उत्साह ॥ ३०॥
कामनि गावत धरके प्रीति । नाना बिधि आनत संगीत ॥
रंग बिरंगे सतिये रचे । भल चन्दोवा मण्डप सचे ॥ ३१ ॥
कलस कनक के ऊपर सजे । रवि शशि कीते शोभा लजे ॥
फटक मई तहँ भीतें भली । मनु धवला गिरि तटनी रली।३२॥
तिय प्रति बिम्ब सु अपनो नहीं। देख सौकि उर मारत सही ॥
इह शोभा तहँ अतिही बनी । स्वर्ग लोककी उपमा सनी ।३३।
बाजे बजें अती गम्भीर । पाणिग्रहण कीनों कुरुधीर ।
पांडु बरोतब कुन्ती एम । शुभ कवित्तको भारत जेम ॥ ३४ ॥

दोहा

माद्री कुन्ती प्रीतिते, बचन जनक को पाय ।
उत्सव सों कौरव बरी, जो सीता रघुराय ॥ ३५ ॥
हय गय रथ चीराभरन, कनकायुध बहु देय ।
पांडुक बर कीनों बिदा, आदर अधिक धरेय ॥३६॥
कन्या दै ले है सुखी, गयो नागपुर मांहि ।
प्रविसत पुर नारी लखी, सार काज तजि जांहि।३७॥

चौपाई

को इक पूछें ऐसी भांत । हे भद्र सुन मेरी बात ॥
पांडुराव किह बिधि कहँ जाय। कैसी भांति बिभूति लहाय॥३८॥

कोइक बोली शुभगे आउ । जो देखनको तोको चाउ ॥
पांडुराय दिखलाऊं तोहि । तब स्याबासी दीजे मोहि ।३९।
कोइक मंजन करते तिया । आवत राय श्रवन सुन लिया ॥
होरी पहिरे आधो चीर । केश सीसते सरवे नीर ॥ ४० ॥
कोइक भोजन करते भाम । पांडु समागम सुनके ताम ॥
निकसी गृहते भोजन त्याग । झूठा अन्न रहो मुख लाग ।४१।
रोवति शिशु अपने तज दिये । अर्भक औरें अंके लिये ॥
कोइक दौरी इह बिधि नार । सकल बिचार दियो उरटार ।४२।
कोइक जेंवत पतिको त्याग । नृप देखनको निकसी भाग ॥
दौरी फिरे नगर बाजार । कहियत ताही पागल नार ॥४३॥
दर्पणमें मुख देखत कोइ । लीये दर्पण भागी सोइ ॥
कंठाभूषण कटिमें धार । कोइक भाजी बिहबल नार ॥४४॥
कोइक तिय आभरण पिटार । खोल करत तन सालंकार ॥
आवत नृपको सुनिके सोय । दौरी अतिही आतुर होय ।४५।
अंजन मस्तक तिलक संजोय । नैन तिलककर निकसी कोय ॥
कंचुकीते बाहर कुच लसे । कोइक जाय हंसे जन तिसे ॥४६॥
कोइक बृद्धा थूला जोय । और सखी प्रति बोली सोय ॥
नृप देखनको ले चल मोहि । बहुत असीस देऊंगी तोहि ।४७।
गर्भ भारतें कोइक तिया । फूली फिरत महा भ्रम लिया ।
कोइक मारग पावें नांहि । देहि देहि मग एम कहांहि ॥ ४८॥
कोइक तरुनी दौरत नार । और तरुनि तिय दी तिन डार ॥
चपल चालसों पगमें चले । चंचल बीची ज्यों जल रले ॥ ४९॥
द्वै तिय जुत नृप सुत जब लखो । कोइक तिय तब ऐसे अखो ॥
हे सखि कहि इन दोऊ तिया । कौन पुन्य पूरब भव किया ५०
जासों यह बर अधिक प्रवीन । पायो पांडु महा सुख लीन ॥
को इनने बहु दीनों दान । उत्तम पात्र त्रिबिध पहिचान ॥५१॥

कै कीनी श्री गुरु की सेव । कै पूजो बहु जिनवर देव ।
कै मुनि जनको भोजन दियो । अथवा दुर्धर संजम लियो।५२।
कै करुना पाली सुबिचार । श्रावक व्रतको पालान हार ॥
कै जिन बानी मन बच सुनी । कै पोषे बहु पंडित गुनी ॥५३॥
कै परवी वृत प्रोषध धार । शील सहित तज घर व्यापार ॥
और भांति ऐसो भरतार । किह बिधि पावे जगमें सार । ५४।
शोभित छत्र धवल अति जास।पांडु प्रचंड यही गुणरास ॥
जिन सब बैरी कीने खंड । सोई नृप यह पांडु प्रचंड ॥ ५५ ॥
हाथ भेंट ले पुरजन आय । मुखसों थुति भाषें अधिकाय ॥
व्यास नृपति तब संसय भरे । द्वै मंदिर इनको अनुसरे। ५६ ।
तिनमें कुंती माद्री रहे । पांडु संग सब सुखको चहे ॥
जाको पुन्य सबल है महा । ताको दुर्लभ जगमें कहा । ५७।

दोहा

कुंती मुख पंकज सुरभ, चंचरीक ह्वै राय ।
नित प्रति लेत अतृप्त है, तृस्ना ह्वै अधिकाय ॥ ५८ ॥
कुच परसन चुम्बन बदन, कल भापन स्मृत हास ।
इच्छुण करत कटाच्छ तें, दम्पति प्रीति प्रकाश । ५९ ।
एण भयो चित पांडको, काम पास तिय बाहु ।
प्रेमालिङ्गनते बंध्यो, मानत अति उत्साहु ॥ ६० ॥
हितसों जो द्वी ओषधि, सेवत रोगी नित्त ।
त्यों अमृत सम द्वै बधू, भोगी कौरव मित्त ॥ ६१ ॥
कबहुक क्रीडित सदन बन, कबहुंक मण्डप बेल ।
कै गिरि और सरिता बिपुल, कै बापी जल केल। ६२ ।
कबहूं रत क्रीड़ा करत, कबहुं गेंदको खेल ।
कबहुं हिंडोला झूलियत, कबहुं जलमें हेल ॥ ६३ ॥
इह बिधि पूरब पुन्यतें, नाना बिधि के भोग ।
पांडु राय भुगतें सदा, द्वै बनिता संयोग ॥ ६४ ॥

चौपाई

अबजो भोजक वृष्टी भूप । पुत्री तास अधिक सो रूप ॥
गंधारी शुभ ताको नाम । इन्द्रमुखी मृगनैनी भाम ॥ ६५ ॥
सो धृतराष्ट्र विवाही येम । पत्नी जसु वानिता भज जेम ॥
होनहार जाके सत पूत । साहस बुद्धी बल संयुत ॥ ६६ ॥
देवक नृपकी पुत्री भली । नाम कुमुदवति शुभ गुन रली ॥
पाणिग्रहण बिधि तासों कीन। धरकर प्रेम बिदुर परवीन । ६७ ।
अब कुंतीकी सुनिये कथा । श्रवननको सुख उपजे यथा ॥
एक समय तिस अंतिम जाम। सोवत कुंता सुंदर धाम । ६८ ।
शुभ सुपने तिन देखे भले । आदि गयंद महा मद रले ॥
पुनि देखो बारिध गंभीर । लोल कलोलन गरजत नीर। ६९।
पुनि देखो तिन पूरन चंद । जिह देखत उपजत आनंद ॥
कल्पवृक्ष जिस शाखाचार । अरथीको धन देत अपार । ७० ।
ए सुपने लख जागत भई । तन मण्डनकर पतिपै गई ॥
प्रनमनकार अर्धासन ठई । सुपननको फल पूछत भई ॥ ७१ ॥
बोल्यो नृप गजको फल एह । है है सुतही सुन्दर देह ॥
सागरते अतिही गंभीर । बुधिवंत गुणवन्त सुधीर ॥ ७२ ॥
शशिते दायक जगदानंद। सुखलायक सबको सुख कंद ॥
सुर तरुते मन बंछत दाय । ऐसो सुत तुमपै उपजाय ॥७३॥
शाखाचार जो तरुसों लगी। जो तुम देखी शोभा पगी ॥
ताको फल यह सुनियेसार । होनहार तसु भ्राता चार ।७४।
ऐसी सुनके कुंती सती । भई सुहर्षित हिरदे अती ॥
अच्युत नाम सुरगते चयो । ऐसो देव गरभ ते ठयो ॥ ७५ ॥
पुन्य जोग कुछ दुर्लभ नहीं । सुत आदिक सब लहिये सही ॥
ज्यों ज्यों गर्भ बिरधिको लहे। त्यों त्यों सज्जन आनंद गहे।७६।
देख गरभ तिस भूपति पांडु। धरयो चित्त अति हर्ष अखंड ॥

रतन खान सम कुंती लसे। त्रिबलि भंग उदरतें नसे ।७७।
मानो अगिन ह्वै है भंग । ताको सगुण भयो यह अंग ॥
मातहिं माटी भावै घनी । तातैं ह्वै है सब भू धनी ॥ ७८ ॥
उन्नत उरज स्वजन परकाश। चुंबक स्याम बदन अरिनाश ॥
सयनाशन अरु भोजन मांहि । कुंताको चित लागे नांहि ।७९।
जिन पूजनमें तत्पर रहे । धरमविषै चित हितसों बहे ॥
जिन बंदनको दो हल भयो । और सूर तनहिं चितठयो ।८०।
दीरघ नयन कमल समजास । आनन सोहे शशिसम तास॥
ताके जन्मत निशितम नसो। सूर उदय मनुभुव महिलसो ।८१।
आनंद भेरि बजी नृप गेह । मानो पावस घन धुनि एह ॥
पटह झल्लरी शंख अभङ्ग । बीणा कहत ताल मिरदङ्ग ॥ ८२ ॥
पणव दुंदभी आदिक सबै । बाजत घोर मधुर धुनि फबै ॥
अपच्छर सम शुभ सुंदरीनटी। नाचत छविसों पृथ्वी अटी ।८३।
पौर पौर पुरवी थी जहां । चंदन छट शुभ राजे तहां ॥
तोरन मंडप रतनो तने । घर घर साजत शोभा सने ॥ ८४ ॥
सुत प्रसूत सुन पांडु सुजान । घनसम बरसत धारा दान ॥
जबलों याचक जाचन करें। तब लग धन तिनके कर धरें।८५।
सागर सम कुरु बंश बखान। ताको यह शिशु शशी समान॥
जुध थिरताको दोहल भयो। तातैं नाम युधिष्ठिर दियो। ८६।
गरभ धरत चित धर्महि गुनो। तातें नाम धरम सुत भनो ॥
अबशिशु स्तन पीवत पय झरे। मानो जस दस दिन अनुसरे ।८७।
हंसत हंसत मचले मुसकाय । बचन कहत रसना तुतलाय ।
रतन जड़ित गृह आंगन भूम । तिहपर चले सुघंटवन घूम ८८
दोय सखी मिल पकड़े बांह । याहि चलावें पांवों पांह ।
गद गद बानी बोलो जबै । मात पिता अति हर्षे तबै ८९॥
सकल कला गुण साखा रूप । इहविधि बाढ़त बाल अनूप ॥

अन्न असनतें पोषे ताहि । लेपन आदिक सूत्र कराय ॥९०॥
क्रमते जोबन धारो सार । मानो मार भयो सुकुमार ॥
कला सु बाणी विद्या वही । जो कुछ कुंवर युधिष्ठर गही ॥९१॥
ज्ञान शील द्युति सोई कहो । जो कुछ राय युधिष्ठिर लहो ॥
या सम और नहीं नर देह । एकै नर विधि कीनो येह ।९२।

दोहा।

रतन मुकुट निरमल लसत, जाके भाल विशाल ।
कलश सहित मुनि गिरपती, आय भयो भूपाल । ९३ ।
जाके देखत दुख नसे, ऐसो मुख सुख दाय ।
शशि मंडल मनु शरदको, पूरण कला धराय । ९४ ।
युग कपोल मनु आरसी, रवि शशि कुंडल कर्ण ।
नासा वंश सुगन्धया, नैन कमल त्रिय वर्ण ॥ ९५ ॥
मदन धनुष सम भूलता, ललित स्याम अभिराम ।
पनच बिनाहीं खेंचिये, बस कीजे सब भाम । ९६ ॥
अरु अधर मनु बिम्ब फल, बोलत अमृत बैन ।
रसना रस अति भनत सत, कमल पाखुरी ऐन । ९७ ।
कम्बु कंठ कंठी सहित, घन सम धुनि दातार ।
बच्छस्थल अति विपुल वर, शोभित मुक्ताहार ॥ ९८ ॥
जग धरवे को थम्भ सम, ऐसे दृढ़ भुज दंड ।
रण में जय लक्ष्मी लहे, मानो दिग्गज सुंड ॥ ९९ ॥
राजे अम्बर हस्त तल, लक्षण उडगन रास ।
शंख चक्र गद कुर्म रुख, तोरण आदिक तास । १०० ।
कटिक मुद्रिका आदि कर, भूषन भूषित अंग ।
भूषनांगमन कल्प तरु, शोभित शोभा संग । १ ।
परिपूरण लावन्य जल, गहरी नाभि सुकूप ।
रसित सरस कूम मायका, जोधा भामि अनूप ॥ २ ॥

सघन जघन तिय मन हरन, तिन पे शुभ्रदुकूल।
फेन सहित मनु राजवी, रति सरिता जुग कुल ॥ ३ ॥
पीन उरू जुग कनक द्युति, कामराय परवीन।
अपने गृह की थित निमित, मानो थम्भ सुकीन । ४ ।
मानो तरकस काम के, ऐसी जंघा दोय।
भव समुद्रको लंघ के, ह्वै है शिवपुर सोय । ५ ।
कूर्म पृष्ट सम क्रम जुगम, नमत जिन्हें बहु राय।
नख नक्षत्र दर्पण किधों, निरखे नृप मुख आय । ६ ।
रूप अनूपम तास को, बरन सके नहिं कोय।
याको उपमा दीजिये, जो जग दूजो होय ॥ ७ ॥

सवैया इकतीसा

जगत मुकुट मणि सुघट सुभट किधौं अघट विकट अध गिरत सु ठानिये। असरन सरन की विघन अगनि घन सुगन सदन दुख हरन बखानिये ॥ नित्यको निवास आम कहत बुलाकीदास शत्रुनको जमबास वासक प्रमानिये। सुथिर सुमेर सम जुद्ध में सुथिर बुद्धि जैनी जैनमत जुत धर्म सुत जानिये

चौपाई

ता पीछे सुत उपजो भीम। कुंती कूख सुगुनकी सीम ॥
जासों रणमें अरिभय लहे। तातैं भीम कहावत यहे ॥ ९ ॥
महा काय महा जसको धनी। महा कान्त यह रूपी गुनी॥
रणमें सब सुभटनकी टेक। भीम भरत भू भूषन एक ॥ १० ॥
तिह पीछे सुत उपजे और। नाम धनंजय गुनकी ठौर ॥
अरुगन दारु करे जिनद्वार। सत्य धनंजय संज्ञा धार ॥ ११ ॥
दुजो नाम सु अर्जुन तास। अर्जुन सम सज्जन गुनरास ॥
सुपन शक्रको माता लहो। शक्र शून्य यह तातैं कहो। १२।
सो रसना द्वै कविके जऊ। कहिन सके गुनयाके तऊ॥

तीन तनुजये कुंती जने । तीन भुवनकी शोभा सने ॥ १३ ॥
ता पीछे सुत माद्री जनो । नाम नकुल शुभ ताको ठनो ॥
दुर्जय अरिकुल नाशक जान । तेज प्रताप सुयशकी खान ।१४।
पुनि सहदेव भये तसु पूत । अचरज कारी गुन संयूत ॥
दोय तनुज ए माद्री जने । शस्त्र शास्त्रकी विधिसों सने ।१५।
पांडु पंच सुत सोहें एम । पंच अक्षसों काया जेम ॥
अब धृतराष्ट्र भ्रमर सम निता । गंधारी मुख पंकज विता ।१६।
केल करत नहि तिरपत होय । दंपति प्रीत सु अधिक समोय ॥
ज्यों बिजली घनसों आलीन । त्यों नृप रति लीला प्रतिकीन।१७।
इह बिधि भोग करत अधिकाय । धारे गर्भ धरम परभाव ॥
लोक विषे वह वस्तुज कौन । पुन्य जोग नहिं लहिये जौन ।१८।
पूरन मास वितीते जबै । सुखसों तनुज जनोतिन तबै ॥
तब बड़ बाहन नायन धाय । ताहि असीसदई इह भाय ।१९।
सौ सुत जनियो तुम सुख खान । चिरंजीव गंधारी रान ॥
जिहसंग जूद्ध सु दुखते होय । नर दुरयोधन कहिये सोय ।२०।
जो धृतराष्ट्र निकट नर गयो । सुतको जनम सुनावत भयो॥
ताको दान अधिकही तूठ । दीनो छत्र सिंहासन छूट । २१ ।
बंदीजन जकरे जंजीर । ते सब छोड़े नरपति धीर ॥
ते पंछी बहु पिंजरे परे । ते सब छोड़े निरभय करे ॥ २२ ॥
निरत करे नट बाजे बजें । चारण भार सुयश मुख सजें॥
क्रमते तरुन भयो सुकुमार । दुर्योधन बहु विद्या धार । २३ ।
तिह पीछे दुःसासन जनो । पुन दुरदख अरु दुरमुख ठनो ॥
पुनि चौथे रण श्रांत सु ठने । अरु सु माघ बही षष्टम भने ।२४।
सर्बसहा अनुबिंद सुभीम । पुनि सुबाहू दुस्सह गुन सीम ॥
दुस्सल और सुगान दुकर्ण । दुःश्रव फुन वर बंशी कर्ण ॥२५॥
दीरघ दरस सुलोचन ठए । पुन उपचित्र बिचित्रे भये ॥

चारु चित्र शर आसन जनो। दुर्मद तहँ चौबीसम ठनो ॥ २६ ॥
द्रुप गाह जू जुत सुरी महां। त्रिकट सो औरन नाभी तहां ॥
पुनि सु नाभ आनन्द बखान। अरु उपनन्द सु चित्तर बान।२७।
चित्र वर्म शुभ बर्म प्रवीन। दुर्विमोच आयु बाहु सोलीन ॥
महां बाहु श्रुतवान सु और। पद्म नयन गनियत तिह ठौर २८
भीम बाहु पुनि भीम बलीस। अरु सुसेन गन द्वै चालीस ॥
पंडित और सुता जुधएह। और सुवीराज दंड धरेह ॥ २९ ॥
और महोदर सैंतालीस। चित्रायुध भन अड़तालीस ॥
पुनि निसूङ्ग पासक बृन्दार। शत्रुंजय शत्रू सह सार ॥ ३० ॥
सत्य संध दुस्सह सुख रास। गनहू दरसन खट पंचास ॥
चित्र सेन सेबाहनि साज। दुष्य पराजय और पराज ॥३१॥
कुंठ साय इक सठमो भयो। बिशालाक्ष पुनि आजई ठयो ॥
पुनि दृढ़ हस्त सु हस्त बखान। वात सुवेग सुबर्च सुजान ।३२।
आभितकेतु कह्यो बहाशी। पुनि निबंध भाषो प्रिय आशी ॥
कव चीरण कर सुंड कुमार। कुंड धरी धनुर्धर सार ॥ ३३ ॥
उग्ररथी पुनि भीम रथीय। सूरबाहू आलोलपलीय ॥
अभय कुमार इकासी ठाम। रुदन करम अरु दृढ़ रथ नाम ३४
अनादिष्ट चौरासी ठये। कुंड सुभद्र पंचासी भये ॥
और बिराजी दीरघ नैन। प्रथम प्रमादी दीरघ बैन ॥ ३५ ॥
वीरज वन्त सु दीरघ बाहु। महा बृच्छ दृढ़ बृच्छा आहु ॥
और सुलच्छण कनकाहि साज। कांचन सुध्वज सुभुज अराज ३६

दोहरा।

इह बिधि उपजे सौ ननुज, गंधारी की कूख।
क्रम क्रमते तरुने भये, ज्यों बरनेके रूख ॥३७॥
शस्त्र शास्त्र विद्या विविध, पढ़के भये प्रवीन।
पांडव कौरव बढत इमि, रहत सदा सुख लीन।३८।

अमल पितामह शीलधर, गुरु गंगेय सहेत ।
पाल लाल इनकी करे, नित प्रति शिक्षा देत ॥३६॥
पुनि पितृव्य सु द्रोण गुरु, हितसों विद्या देय ।
परम उदय इनको चहे, अरु प्रतिपाल करेय ॥४०॥
धनुर्वेद सागर गहे, देवी सम गुरु द्रोण ।
तारक सरणा गतनको, चलत कृपाकी पौन ॥४१॥
द्रोण सिखाई सबनको, विधिते विद्या चाप ।
करत भयेते विनय तसु, विद्य बिनयते प्राप ॥ ४२॥
विद्या प्रापति है सकल, बिनय करत जग मांहि ।
गुरुकी सेवा बिनय बिन, विद्या पावे नांहि ॥ ४३ ॥
अर्जुन अतिही सरल है, करत द्रोण की सेव ।
चित्त प्रसन्न है गुरु तदा, दई विद्या बहु भेव ॥४४॥
शब्द बेध विद्या महा, द्रोण दई पुनि ताहि ।
दुर्लभ किमि गुरु बिनयते, सबहै बिनये माहि ॥४५॥
धनुष पनिच लक्षण सकल, सीखो अर्जुन धीर ।
मुट्ठी गह चुटकी पकरि, दिष्टि निशाना तीर ॥४६॥
धनुर्वेद विद्या निपुन, अर्जुन गुरु को दास ।
राज सभामें यों दियो, ज्यों निसपति आकास ॥४७॥

पद्धड़ी

इह विधि अनेक सुख मांहि काल । बीतो शुभ तिनको करत ख्याल
विद्या बिलास निसिदिवस ठान । इम जात बरस इकाछिनक मान
जहँ पांडुराय पंडित अखंड । जाके सु पुत्र पांचो प्रचण्ड ।
वादी सु सैन नासे अरात । हस्ती सो घोटक रथ पदात । ४८ ।
जे पांडु पुत्र शुभ धर्म पुत्र । शुभ धर्म काज उद्यत पवित्र ॥
ताको सु भ्रात बर भीम जान । तामस बिपक्ष नासक सु भान ।५०।
शुभ शक्र सून अर्जुन सुपार्थ । सो नाम तीन एहलहई सार्थ ॥

सो शस्त्र शास्त्र विद्या प्रवीन। कुन्ती सूं सुनए प्रगट तीन ५१
अरि गज गयंद हरि नकुल बीर। ताको सु अनुज सहदेव धीर॥
माद्री सु पूत येद्वै विख्यात। ऐ पांच पुत्र इम दोय मात ॥५२॥
दुर्योधन आदि कौरव समस्त। धारे सुशक्ति बहु जग प्रशस्त।
उत्पात्ति इन्हेंकी जान एम। जैनी सुनित्त सुन धरके प्रेम ।५३।

इति श्री मन्महाशीलाभरणभूषित जैनीनामांकितायां
लाला बुलाकीदास विरचितायां पांडव कौरव
उत्पत्ति वर्णन नाम नवम प्रभावः

अथ अभिनन्दननाथ स्तुति।

सवैया इकतीसा

आतम शुद्ध स्वभाव लखो जिन सत्य सुआगम को उप-
देशी। तारक हैं भवसागर को अरु हैं शिवमारगको परवेशी॥
सो अभिनन्दन आनंदकंद सुवन्दक को भवफन्द हनेसी।
जैनुलदे सुत जाचतहै नित दीजे सुबुद्धि तुम्हारी है जैसी ॥१॥

चौपाई

एक समय नृप पांडु प्रवीन। वन रमनेको मनसा कीन।
होन लगी दुंदुभि की घोर। निकसी सैना सब सुन शोर २॥
चौर मनोहर शीसहि रले। चपल अनिल सम हय बहुचले।
अंजन गिर मनु जंगम पमे। ऐसे गज तिस आगे रमे ॥३॥
रवि रथ समरथ साजे घने। सुर बिमान सम शोभा सने।
घनसम गरजत पति संकोप। दौरहि कंध धनुष आरोप ॥४॥
नृप आज्ञा ले माद्री चली। बसनाआभूषण छबिसों रली।
शिवका चढ़ि सो बनमें गई। तरु शोभा तहँ देखत भई ५॥
सालवृक्ष अति सरल उतंग। द्रुम सहकार कुसुम बहु संग।
भामिनि पग तारे है हरे। तरु अशोक जहँ शोभा भरे ॥६॥

जोषित कुरलों सींचे फले । ऐसी बकुल कुसुम सों रले ।
बनिता लिंगनितें त्रिकसाय । ऐसे कुरुवक वृत्त लहाय ॥७॥
मदन ईश जस गावें अंग । कुहकत कोकिल पुलकत अंग ।
कामिनि गीत मधुर अति तहां । पगपग ऊपर सुनिये सही ८
माद्री संग रमे भूपाल । पगपग पेखत नृत्य विशाल ।
रति आलिंगन आदिक हास । माद्री पतिसों करत विलास ९
कबहुंक चन्दन मिश्रित नीर । डारे तिय बसन में धीर ।
कबहुंक तियके खेंचत चीर । काहूके मुख मलत अबीर ॥१०॥
काहू तिय मुख चोवा सनो । राहु नक्षत्र रवि शशिपे मनो ।
काहुक तियके देखे नैन । कबहुंक बोले अच्छे बैन ॥ ११ ॥
इह विधि रम तब तिरपत भये । कबहुंक जनकी क्रीड़ा बहे ।
बापी सरवरमें तिय संग । नीर परस्पर डारे अंग ॥ १२ ॥
चन्दन जल कनि उछलत घनी । पहुप बृष्टिवत् उपमा सनी ।
इतने नृप तन व्याप्यो काम । बांह पकर संग लीनी बाम १३
न्यारी ठौर सुढूंढत तहां । लत मंडप इक निरखो तहां ।
जहँ सुनिये मधुकर गुंजार । हरित वर्ण बर्तत बहु सार ॥१४॥
नृप तहँ मंडप बल्ली तने । लीने कुसुम सुरभता सने ।
तिनकी सेज बनाई राय । माद्री सहित ठयो तिह ठाय १५।
भोग करनको उद्यत भयो । बनिता तन आलंगिन ठयो ।
करसों कुच मुखमुखहि मिलाय । सेवत रति जुर मदनबढ़ाय१६
पूंलि पठो नृप तियके अंग । ज्यों अहिपति पदमावति संग ।
तौलों तहँ मंडप इक ओर । रति क्रीड़त मृग जुगतिहिठौर १७
हरनी हरन करत संयोग । देखो नृपति भोगते भोग ।
देखो तिरजग मो खिज करे । ऐसी चितवत कोपे धरे ॥१८॥
तबही धनुष करत संधान । मृग तन मारो तीक्षण बाण ।
भोग लुब्ध मृग खायो तीर । लटत परो पृथिवी लहि पीर १९

लुब्ध होय नृप मारो साय। ऐसी गति लुब्धनकी होय।
तबही भई नभते धुनि देव। तोहिं जुगति नाहीं नृप एव २०
निंद करम यह दुखको दाय। याते प्रानी दुर्गति जाय।
निर अपराधी बन में रहे। जो नृप इनको मारग बहै ॥२१॥
इतर लोग तो राखे केम। सबही मारन लागे एम।
सापराध मो हनिये नहीं। पंडत जनको कारज यही ॥२२॥
एतो देव हते मृग आद। इनकी हिंसा करनी बाद।
हने न काहू चोर धना। क्यों हतिये रे मृग सज्जना ॥२३॥
संतहि पाल असंतहि नाश। भूप सुलच्छण भाषो तास।
क्यों तुम विफलकरो यहबात। करुनात्याग करत पशु घात२४
जे नृप निरदे है पशु हतें। ते अपराधी दुरगत रतें।
तन पर्पालिका लागें जोय। दुख थापे जानत सबकोय ॥२५॥
ते क्यूं मारे मृगको बान। जाके लागत छूटे प्रान।
तातें मृगया अघकी खान। हेय कही यह जिनवर बान २६।

उक्तं च श्रावकाचारभाषायां। सवैया तेईसा।

चौंक उठे तनमें तिन लागत देह पराई जुआयुध डारे। वा सम मूरख नाहिं कोई जो खेलि शिकार समय शुभ टारे॥ दुरगति दुष्ट लहैं छिनमें वह जन्म मनुष्यको नाहिं कहारे। धारि दया चित त्याग अखेट जुसो छिनमें गति पंचम धारे ॥२७॥

चौपाई

जे हिंसा ते धरमचहे। ते गो सींगहि पयको दुहे।
कमल अगनमें विषते जीव। अहिमुख अमृत जलमें घीव २८
निशिते रवि नहिं सिलते धान। त्यों हिंसा ते धरम न जान।
ताते हिंसा तजिये चित्त। करुना गहिये भूपति मित्त ॥२९॥

उक्तं च श्रावकाचार भाषायां॥ सवैया इकतीसा।

शुभही हरता जुकरता है दुर्गतिकी साला बेल जारिवे को आग कीसी शिखा है। जसहीकी छेनी यह लेनी है अजसही

की पापकी निशानी यह देनी अमनिखा है । हिंसाहीको चित्त धार भई है धनश्री नार सकल कुटुम्ब मार कुगतिको दिखाहै । नन्दलाल सुन भने धनी नर दयावन्त अदयाको बरनन त्याग हेत लिखा है ॥ ३० ।

चौपाई

ऐसी सुन नृप नभकी बान । भवतन भोग सुभंगुर जान ।
बिरकत है यों चितवत राय । इन्द्री विषय सो दुर्गतिदाय ३१।
वृथा प्राण बध कीजो जहां । कौन सिद्धि है मेरी तहां ।
कहा राजते मेरो काज । जन्तुघात जहं अघको साज ॥ ३२ ॥
विषय अर्थ भुगते दुख घने । अमित दोषते विषयासने ।
पूरब जनम अनंती बार । भुगते भोग विषय संसार ॥ ३३ ॥
सोई सुख उच्छिष्ट समान । भुगते कौन सु है मति मान ।
भोगत भोग सुलागे मिष्ट । विष फल सम ये भोग अनिष्ट ३४
लहे न तिरपति प्रानी जहां । सक्र चक्र सुख भुगते तहां ।
निरदेई सुख भुगतत सोय । किहि विधि तिरपति याकी होय ३५
उदधि नीर वड्वी तज रजै । किमि तिरपति तिस उसही सजे ।
अब इनते मो नाहीं प्रीत । आतम सुख है मेरो मीत ॥ ३६ ॥
या जग में रागादिक बुरे । सब अनीतिसों येही भरे ।
राग करत यह तियसों रचें । प्राणहि तज है दुर्गतिमचें ॥३७॥
सिनक भरो तिय आनन यहां । नैन कपोल चरम मय तहां ।
ऐसे मुखसों मूढ़ बखान । पूरणमासी चन्द समान ॥ ३८ ॥
तिमर रोग तिस नैनन होय । भाष तरु पोषी यह सोय ।
अलिसम नील अलिक गजगाह । चन्द उपरिमनु धायो राह३९
तेतो स्याम अपावन खरे । जूं काके घर मलसों भरे ॥
जे देखत तिस मोहे मूढ़ । तिनकी मति भ्रमसों आरूढ़ ॥ ४०॥

मांस पिंडमय कुच तिय तने । सुधा कुम्भते मूढ़हि भनै ।
पिसित पाद जो बायस रजै । त्यों तिनपेते मूरख सजे ॥ ४१॥
सघन जघन बिड मूत्रे झरें । कामी जन तहँ रति अनुसरें ।
ते नर सूकर सम भुवि बीच । बिष्टाठौर रचें ते नीच ॥ ४२ ॥
सात धातु मयकाया जासु । अघकी दायक पटकी रास ।
याको जेलावें निज अंग । ते नर जग में निरधन रंक ॥४३॥
विषइह जानत कीच समान । तोभी संत रमत हितमान ।
धिक मो हिया जगनके बीच । जीवहि नाच नचावत नीच ४४
तिय तनमें नर मानत रली । अघम वस्तुको जानत भली॥
दश मुख आदिक तियके काज । दुरगतिली मर खोयो राज । ४४ ।
करउ कहां कहँ बैठूं जाय । कौन ठौर है सुख की दाय ।
कौन भूप के सेवूं पाय । प्राणी चितवत नित इह भाय । ४५ ।
कौन ठौरतें लहिये लच्छ । तिया कौनसी रूप सु अच्छ ।
अपने अरि मैं हनहों कदा । इह बिधि चितवत मोही सदा ।४६।
कीनो: करत सुकरिहों याहि । योधावत मूरख मन मांहि ।
तौलों काल अचानक आय । हने अहेड़ी ज्यों मृग धाय ।४७।
जोलों यहि बिधि चितवत भाय। दश दिशाको अवलोकत राय॥
तौ लो मुनिवर सुब्रत नाम । आये बिहरत तिसबन ठाय।४८।
जोग जुगत जोगी बृतवान । सर्वबुद्धि शुभ धारत ज्ञान ॥
सप्त सुमति षट् जीवन काय । इनके पालक मुनिवर राय ।४९।
आतम चिंता बृत आलीन । भव तन भोग बिरक्त प्रवीन ।
बारह भावन भावत धीर । सहित सुलच्छन छीन शरीर ।५०।
निर्जित अच्छ सुसज्जित छिमा । निरबांछिक बंछित सिवरमा ।
श्री कटाचते अरि दुर्लच्छ । दच्छ सुपतनय गहत सुपच्छ ।५१।

छिन छिन मांहि करम क्षय करे। क्षेमहि आनि अक्षेमहि हरे।
जाके पद पूजत क्षितईश । किल बिषहारी परम मुनीश॥५२॥
संख चतुर बिधि लीने सङ्ग । परिग्रह रहित दिगम्बर अङ्ग ॥
ऐसो जतिपति देखो राय । चित आनंद लखो अधिकाय ॥५३॥
चरन कमल तसु बन्दत भयो । धरम बृद्धि मुनि आशिष दयो॥
पृथवी मांहि उठो जब भूप । तब मुनि बोले धर्म अनूप ॥५४॥
हे भूपति यह भव कन्तार । भ्रमत जीव न पावे पार ॥
तातें धर्मी जन कर धर्म । सेवनीक नित दाता सर्म ॥ ५५ ॥
द्वै बिधि भाषो जिनवर सोय । अनगारक सागारक जोय ।
भव दुखहारी जतिको धर्म । शिवको दायक क्षायक कर्म ॥५६॥
पंच महाबृत गुपति सु तीन । पंच सुमति जति धर्म प्रवीन ।
षट् काइनकी रक्षा बहे । मन बच कायन हिंसा लहै ॥ ५७ ॥
प्रथम महाव्रत सोई जान । सुख दायक बहु गुणकी खान ।
हित मित सत्य बचनजो भने। द्वितिय महाव्रत तामें बने॥५८॥
जो आदत्त धन त्यागे सबै । तृतीय महाबृत ताको फबै ॥
सुरनर तिर्जग कर्तिम नार । चारों बिधकी तजे बिचार ॥५९॥
ब्रह्म महाब्रत चौथो धरे । शिव बनिता को सोई बरे ।
दशविध बाहर परिग्रह ठने । चौदह भेद सु अन्तर गने ॥ ६० ॥
ये सब त्यागे जोनर महा । होय महाबृत पंचम तहा ।
आरत रुद्र सुरत आहार । अरु परलोक बिकल्प असार ॥ ६१ ॥
सोवत त्यागे चितसो सोय । मनकी गुपति सुपालक जोय ।
बिकथा चारों जो परिहरे । बचन गुपति मन सोई धरे ॥ ६२ ॥
चिंतक आदि कर्मके जोग । अथवा कष्ट परीषह रोग ।
इनमें काय बिकारन धरे । काया गुपति वही मुनि बरे ॥६३॥

रविके होत सु मारग चले । नैननि लखि पग जन्तु न दले ॥
आदि समिति सो ईर्जा नाम । जिनवर भाषी करुना धाम ॥६४॥
करकश बचन जु दश परकार । ताको तजि बोले बच सार ।
भाषा समिति कहावे सोय । जाके पालन शुभ गति होय ॥६५॥
दोष रहितजो षट चालीस । सो आहार करे मुनि ईश ।
सुमति ऐषना ताको पमे । शिव बनिता सों सोई रमै ॥ ६६ ॥
भूमि झारके निरखें बरे । तब उपकर्ण उठावें धरे ।
सो आदान नत्तेपन नाम । चौथी समिति कही अभिराम ६७॥
श्लेषम मूत्र मलादिक सन्तु । डारे भूमि निरखि निरजन्तु ॥
प्रतिष्टापना सुमति सुएम । धरें दिगम्बर यासों प्रेम ॥ ६८ ॥
ऐसीभांति अधिक बिस्तार । जतिको धर्म कहो मुनिसार ॥
ऐसीही पुनि श्रावक धर्म । पांडु भूप प्रतिभाषो पर्म ॥ ६९ ॥
मुनिवर बहुरि नृपतिसों कही । धर्म विषय रति धारो सही ॥
सुरग लोक सुख जासों लहे । क्रमसों मुक्ति पुरीको गहे ॥७०॥
और सुनो तुम भूपति सही । थोरी आयु तुम्हारी रही ।
तेरह दिन सब जीवन रहा । ताते कीजें जिनवृत महा ॥७१॥
सावधान अब हूजेमीत । विषयनसों मत धारो प्रीत ।
ऐक महरति निरमल बुद्धि । धरम धरेते है सुर सिद्धि ॥७२ ॥

दोहा

इहविधि मुनिके बचन सुन, पांडु भयो भयवन्त ।
जीवन संपय तड़ित सम, जान छिनक छय सन्त ॥७३॥
तब चितमें थिरता धरी, बंदे मुनिके पाय ।
अधिक भगति कर थुति करी, चलो नगर को राय ॥७४॥
भूप भूमि कंपित करत, पहुंचो निज आवास ।
परिजन धृतराष्ट्रादि सब, तबहि बुलाये पास ॥ ७५ ॥

मुनिके मुखकी बात सब, कही सुतिनसों राय ।
ते सुनिके दुःखित भये, रुदनकरत अधिकाय ॥ ७६ ॥
छाती मनु बिजली हती, हा हा करत बिलाप ।
नैन नीर बर्षत तऊ, अधिक होत उर ताप ॥ ७७ ॥
कुन्ती लोचन जलधि हैं, बरसत असुवन धार ।
मूरछा खाइ अमंगला, भूपर लई पछार ॥७८॥
मानो चेतन तज गयो, परी मृतक सम बाल ।
पुनि शीतल उपचार तें, सोवत उठी बिहाल ॥ ७९ ॥
अति दुःखित चिंता कुलित, देखो पिय की ओर ।
कछु न बसाई काल तें, कै सोई हो जोर ॥ ८० ॥
पांडु राय बोलो तदा, सब को अति आस्वास ।
सावधान होकर सुनो, मो बच सुख की रास । ८१ ।

चौपाई

जनम मरण करते ही जीव । या भव मांही फिरत सदीव ।
मरण भये तब दुख है कहा । मरण जन्मके साथे गहा । ८२ ।
भरत राय जो चक्री भये । छहों खंड के अरजिन जये ॥
सो भी काल बदन में गयो । कालवली किनहू नहिं जयो ।८३।
मेघासुर जिन जीते जाय । ऐसो जब नृप बल अधिकाय ।
सो भी पहुंचो तजि के प्रान । काल रहत जहँ शिवपुर थान ८४।
यह कुरुवंश गगन सम जान । उपजे शशि सम नृप परधान ।
ते सब काल कवल कर लिये । तन तजके परलोकहि गये ।८५।
दुखमय या भव सागर मांहि । कोई पुरुष सनातन नांहि ॥
कौन हेत तहँ करिये शोक । जगमें जीवन है अति तोक ।८६।
कौन कौन नर बिनशे नांहिं । भोग भोगके या जग मांहिं ।

भोग तनी अब मुझ किमआस। मगरी आयु बितीती जास।८७।
घन मंदिर शशि बदनी नार। बसनाभूषण हय गय सार॥
बिनाशीक यह चंचल सबै। ओस बूंद सम उपमा फबै।८८।
यह बिधि सम्बोधत बहु भेय। धरम बुद्धि बुधजनको देय।
पांडुराय जिन पूजा करी। बसु बिधि दर्ब भगति अनुसरी।८९।
गीत नृत्य बाजित्र बजाय। जिनगृह सब कीनों अधिकाय॥
जैसा धर्मो उत्तम चित्त। जिनको दीनो बहु बिधि वित्त।९०।
दान चतुर्बिधि तत्पर होय। सन्तन को संतोषत सोय॥
राज सहित सतपंच बुलाय। सौंपे ते धृतराष्ट्रहि राय॥ ९१॥
अपने सुतसम इनको जान। प्रति पालन कीजो गुणखान॥
पुनि कुन्तीको शिक्षा दई। सुत पालो तुम गृह में ठई। ९२॥
पुत्र युधिष्टिर आदिक जोय। रुदन करत अति मोहित होय॥
तिनको असीस दई गुनपांत। अपनो राज रहै जिस भांत।९३।
जे कुरु बंशी गोती भाय। सबसों छिमहि छिमा करवाय॥
तजके नेह परीग्रह गेह। तबही निकसो गृहते एह। ९४।
जाय ठयो गंगा के पास। प्रासुक ठौर लियो सन्यास॥
यावत् जीवत ज्यों आहार। गुरुकी साखसुसमताधार। ९५।
सब जीवन सों मैत्री भाव। मुनिजन पे कर हित अधिकाव॥
तन उपकारण बंछित चित्त। नहिं सुमरे हिरदे प्रिय मित्र। ९६।
तप करते तन दुर्बल जान। बाढ़ो अति परमेष्टी ध्यान॥
तपते तन दुर्बलता लई। करी प्रतिज्ञा कृस नहिं भई।९७।
जे महन्त जन दृढ़ बृतवन्त। यह स्वभाव है तिनको अन्त॥
रुधिर मास सब सूखो सही। चरम अस्ति मय काया रही।९८।
सीस सिद्ध चित जिन आलीन। मुखते साधु जपन तिन कीन॥

दृष्टिधरी परमातम मांहि । ध्यान करत मन विकलप नांहि ।९९।
परम मन्त्रको श्रवनन सुने । ताही को पुनि रसना भने ॥
परम कोठरी अन्तर चित्त । तातें राख निरंजन मित्त ।१००।
इह विधि ध्यावत त्यागे प्राण । तनको भार तजो दुख खान ॥
उपजो जाय स्वर्ग सोधर्म । जहँ भुगते मन वाञ्छित शर्म । १ ।
तहँ उपपादक सज्ञा जहां । जाय जन्म इन लीनों तहां ॥
अन्त महूरत जोवन लयो । मानो सोवत उठके भयो । २ ।
शुभ लक्षण आभूषण पूर । माला मुकट कुंडलके मूर ॥
कलप वृक्षतें ताही बार । वृष्टि भई सुकुसुम की सार । ३ ।
त्योंही दुंदुभी बाजी घोर । जाको व्यापो दश दिशि शोर ।
जल कण कीर्त पवन तहँ चली । शीतल और सुरभता रली ॥४ ॥
तब सुर दश दिशि दीनी दृष्टि । हिरदे बिस्मय धार बिशिष्ट ॥
को मे को यह परम सुधाम । कौन करत ए निरत सुभाम ॥५ ॥
कौन ठौरतें उपजो आय । कोकुल को यह मञ्जा ठाय ॥
मोमन मोहत ए तिय कौन । अति शोभित यह काको भौन ॥६॥
यों ध्यावत तिस उपजो ज्ञान । सब जानो तिन अवधि प्रमान ॥
पांड तनो भाषो परयाय तप को फल यह पायो आय ॥७॥
यह सुरलोक बिमान सुठाम । मोको ए सर करत प्रनाम ॥
ये अप्सरा बहु भूषित अंग । नृत्य करत बर विभ्रम संग ॥८ ॥
मधुर गीत ए गावत भले । मुरज मद्र धुनि साथे रले ॥
अवधि जोगये जानो सबे । सेवक सुर तसु बोले सबे ॥९ ॥
नमस्कार कर बिनती करे । सुनिये हे प्रभु यों उच्चरे ॥
प्रथम नाथ मंजन अनुसरे । ता पीछे जिन पुजन करे । १० ।
ता पीछे यह सुरकी सेन । सो तुम देखहु अपने नैन ।

पुनि बैठो तुम निरत सुठाय। नचै नृत्यकी जहँ अधिकाय ।११।
भुगते भोग देवगन संग। नाना बिधि भूषित करि अङ्ग।
सुरपद को फल भूगतो अबै। ऐसी सुन तिन कीनी सबै। १२।
नानाबिधि इमि सुख को करे। जिनवर भक्ति सदा चित्त धरे।
अब माद्री सुन लियो बियोग। पतिके हेत तजो भव भोग।१३।
कुन्तीको सुत सौंपे तबै। गृहको भार तजो तिन सबै।
यद्यपि परिजन बरजी घनी। तदपि विकसी बिरकत ठनी।१४।
गंगा तीर धरो सन्यास। पान अहार तजो सुख रास॥
दर्शन ज्ञान चरण तप भाय। इन्द्री छीन भई अधिकाय ।१५।
प्रान तजे तिन भरता संग। नाही स्वग लयो शुभ अंग॥
पति के साथ सुरांगन होय। मन बंछित सुख भुगते सोय ।१६।

दोहा।

तब कुन्ती शोकत अती, सुनके पति की मीच॥
तिसी ठोर बिलखत चली, असुवन करती कीच॥ १७॥
हार तोर कच लुंचत, मलत हाथ सों हाथ।
कुच बिदार छाती हने, पीटत पुनि सिर माथ॥ १८॥
हा कौरव नभ चन्द्रमा, हा प्रीतम हा नाथ।
क्यों छोड़ी मैं रोवती, क्यों न लई तम साथ॥ १९॥
आभूषण बगराय के कर फारत तन चीर।
दंतनि अंगुरी दाबके, सीसहि धुनति अधीर। २०।
हे पति तभ मुख चन्द्रमा, सबही को सुख दाय।
कर्ण कपोल सुवर्ण द्युति, कुंडल छवि अधिकाय। २१।
हा पिय वाणी बीन धुन कंठु कंठ पिरु भांत।
बक्षस्थल सु बिशाल तुम, कीरति जग बिख्यात। २२।
मुझ बिरहन को छोड़कर, गये कहां सुर ज्ञान।

तुम बिन मोको जगत में कोई न देहे मान । २३ ।
तुम बिन सोहे धाम नहि कहा करूं कित जाऊं ॥
मदन अगन मोतन दहे तुम पाऊं कित ठाऊं । २४ ।
जहां जाउं तहँ दुख लहूं कहीं न मोको चैन ।
तातें नाथ प्रसन्न ह्वै दीजे अपने बैन । २५ ।
तुम बिन भोजन नहिं रुचे तुम बिन तृषा न नीर ।
तुम बिन नीद न रैन को तुम बिन धरों न धीर । २६ ।
तेरे पुत्र पवित्र ए तुम बिन कहा करेय ।
राज भार सहनों कठिन एह कुंवर किमलेय ।२७।
निराधार में तुम बिना जो बेहूली तरु हीन ।
पति बिन तिय ज्यों चंद बिन लागत रैन मलीन ।२८।
हार लता ज्यों मणि बिना रंचन शोभा देय ।
त्यों जगमें विधवा तिया कहूं न रति को लेय ।२९।
यह बिधि ताके रोवते, रोवत पांचों पूत ।
लोचन असुवन भरि रहे, कौरव नृप संजूत ॥ ३० ॥
प्रजा राज्य यह है जनक, तो बिन भुगते कौन ।
तो बिन सोहे देश नहिं, तो बिन भलो न भौन ॥३१॥
तुम बिन हम शोभा नहीं, ज्यों बिन द्विज गज ऊन ।
तुम बिन राज न सोहिये, ज्यों बिन बास प्रसून ॥३२॥
इह बिधि तिनको रोवते, बरजत बुधिजन भूर ।
मुनि तप धरके मर गये, जो रोवें सो क्रूर ॥ ३३ ॥
हे शुभ गति के भोगता, इन को शोक अजोग ।
शोक जु तिनको कीजिये, मरैं जु लहि दुख रोग ॥३४॥
दुखदायक यह शोक है, सबही को जग मांहि ।
तातें जे पंडित सुनर, शोक करैं ते नांहि ॥ ३५ ॥

धर्मसुतादिक सबन को, इह विधि बहु समझाय ।
कौरव वंशी नृप सबै, बैठे पुरमें आय ॥ ३६ ॥

चौपाई

अब धृतराष्टर तहां नरिन्द्र । राज करें मनु स्वर्ग महीन्द्र ।
गंधारी मुख कंज सुवास । लुब्ध मधुप नृप बृनहै तास ॥३७॥
पुत्रनको सुसिखावे नीत । राखो पुरजन सो तुम प्रीत ॥
तहां विराजें पांडव चन्द्र । धरें अखंड मही को दण्ड ॥ ३८ ॥
संकट रहित विकट बलवन्त। पट्ट पंडिततें पांचों सन्त ॥
गंगा सुतकी संगति रहे । ताहीको तिन आज्ञा चहे ॥ ३६ ॥
पुनि गुरु द्रोण सु पूरण पच्छ । सकल विपत्त विदारण दच्छ ॥
तिह तट पांडव पांच प्रवीन । धनुर्वेदको अर्थ सुलीन ॥ ४० ॥
एक समय राजा धृतराष्ट । निकसो बन रमन को सुष्ट ॥
दुन्दुभि नाद बजें तिहि संग । दश दिशि भाषत जाको अंग ।४१।
क्रीड़ा करत विपिनमें राय । आनंद बाढ़ो चित अधिकाय ॥
एक अशोक बनो कह भले । देखो भूपति शोभा रले ॥४२॥
लाये भेद कुसुम फल साज । बनके पालक सुखके काज ॥
तातल फटक शिला निरमली । दर्पन सम तिस उपमा रली ।४३।
जामें झलक रहे तरु सबै । चित्रकूट की उपमा फबै ॥
कैधों भींत विषै चित्राम । ऐसी शोभित शिल अभिराम ।४४।
ताके ऊपर बैठे मुनी । अंगदिगम्बर ज्ञानी गुनी ॥
विपुल मती बहु धारे रिद्ध । मानो सिद्ध शिलापै सिद्ध ॥४५॥
देखत भूपति प्रनम्यो ताहि । मुनि ने आशिष दीनी याहि ॥
बोले मुनि तब शुभ उपदेश । थिर चित होय सुनो नर एश ।४६।
भवबन भ्रमत कहीं सुख नाहिं । जन्म मरणके दुख इस मांहि ॥
ज्यों जल सागर बीची लसे । फिर फिर उपजे फिर फिर नसे ।४७।
त्यों या जगमें यह तन धार । उपजे विनशे बारम्बार ॥

दुखमें सुख माने मतिहीन। यह भव बासी भ्रम आलीन ।४८।
सुख कारण है उद्यमवंत। या भवमें यह धावें जन्त ॥
ज्यों मृगतृष्णा नाशन हेत। भटके जलको पीवे रेत ॥ ४९ ॥
बंधव बनिता संपत धाम। कोई न आवे याके काम ॥
इंद्री सपरस लुब्ध सदीव। बन गज सम दुख पावे जीव।५०।
रसना लंपट दुर्गति लहे। ज्यों बन सीते झक दुख गहे ॥
नासा बसतें जीवन टरे। जैसे भंमर कमल में मरे ॥ ५१ ॥
जे नैनन सों देखत रूप। सो नर मूढ़ पड़ें भ्रम कूप ॥
जैसे जारत अपनो अंग। दीपक देखे परत पतंग ॥ ५२ ॥
जैसे हिरन करन वश होय। गीत सुनत गल फांसी सोय॥
त्यों यह गीत सुनत फंस जाय। काल अचानक मारे आय।५३।
एकहि एक जु इन्द्री बसे। ऐसे दुख में प्राणी फंसे ॥
पांचों इंद्री बस है जौन। ताके दुखको कहिये कौन ॥ ५४ ॥
ऐसी सुनके पूछी राय। स्वामी कहिये मो समझाय ॥
मेरे सुतके पांडव साज। इनमें कौन लहेगो राज ॥ ५५ ॥
जो कुछ वस्तु जगतमें इष्ट। सो सब ह्वै हैं सहजे नष्ट ॥
पुरुष पुरान जु आगम कहे। ते सब काल बली ने गहे ।५६।
जे अब यह नर आवैं दिष्ट। काल इन्हें भी करि है नष्ट ॥
हो महाराजे नर जग मांहि। ते भी थिर तिष्ठेंगे नाहिं ॥५७॥
तातें सु वृत मुनि तुम सार। सकल वस्तुके जाननहार ॥
तुमते नाहीं कछु आगम्य। तुमको सकल अरथ कोगम्य ५८।
सकल जगत के हितको चहे। करुनाकर के तातें कहे।
पांडव पंच महाबल धनी। कैसी थिति ह्वैहै इन तनी ॥ ५९ ॥
ये मेरे सुत पृथ्वी मांहिं। छत्रपती ह्वै हैकी नाहिं।
मगध देश पुनि शोभित मही। राजगृही पुर तामें सही ॥६०॥
जरासिंधु नृप तामें महा। प्रति नारायण अन्तिम कहा।

कालिहसेना ताकी रानि । मृगनैनी शुभ गुणकी खानि ॥६१॥
अपराजित आदिक जसु भ्रात । जे किनहू नहिं कीने मात ।
तनय सुनाय बहु बिनइ तास । कालजवन आदिक गुनरास६२
ऐसो परिजन धारे जोय । जरासिंधु है चक्री सोय ।
सब अरि जीते जिन छिन माहिं । भूचर खेचर सेवैं ताहि ६३॥
ताको विपति सुहैहै केम । कै परते कै सहजे येम ।
यहभी बात कहो समझाय । आवै निश्चय संशय जाय ६४॥
ऐसी सुन मुनि बोले सही । हे राजा अब सुनिये यही ।
पांडव अरु दुर्योधन आद । इनमें हैहैं अतिही बाद ॥ ६५ ॥

दोहा

एक राजके कारने, हैहै इनहिं विरुद्ध ।
तेरे सुत कुरुक्षेत्र में, मरिहैं करिके युद्ध ॥ ६४ ॥
दुहूं ओरके सुभट सब, मरें परस्पर धाय ।
ऐसे रणमें पांडवा, जीत लेयगे राय ॥ ६७ ॥
इतिके तेरे सुतनको, लहि हैं गजपुर राज ।
पूरब पुन्य प्रताप तें, पावें सब सुख साज ॥६८॥
कृष्ण तनुज बसुदेवको, जो यदुवंश विख्यात ।
तीन खंड पतिबल सहित, हैहै अति आरात ॥६९॥
जरासिन्धु की बात यह, जो पूछी तुम और ।
सो नारायन हाथ तें, मरिहैं ताही ठौर ॥ ७० ॥
ऐसी सुन धृतराष्ट्र नृप, भयो सुचिन्तावन्त ।
प्रणमन कर मुनि चरणको आयो गजपुर सन्त ॥७१॥

सोरठा

राखो हिरदे धार, धर्म सुनो जो मुनि निकट ।
काम कलंक बिसार, धर्म बुद्धि धृतराष्ट्र नृप ॥ ७२ ॥

दोहा

तासे तू कहि दीजिये, जो तेरो भरतार ।
खेत दूसरे में गयो, तुमी ह्वां जा नार ॥ २५ ॥

पद्धड़ी

तज राज विषयजो पांडु भूप। वर धर्म धार तप गह अनूप ॥
तज देह परम पद जपत एव। उपजो सुजायसो धर्म देव ।७३।
माद्री सु रान तपसों बसाय। निज इसी तीर पहुंची सो जाय ॥
पुनि पंच भ्रात पांडु प्रवीन। गुरु द्रोणतीर धनु वेद लीन ॥७४॥
तप जोग मिले सुख सहज आय। तपते सु भव्य शिव पंथ पाय।
जैनी सु धर्म तप धार देह। जप मंत्र परम पद सर्म गेह ।७५।

सोरठा

जैनी यह जिन धर्म, तातें नित चित धारिये।
जासों है शिव शर्म, सो तों भूलि न भूलिये ॥ ७६ ॥

इति श्री मन्महा शीलाभरण भूषित जैनी नामांकितायां
लाला बुलाकीदास विरचितायां पांडु माद्री स्वर्गगमन
धृतराष्ट्र प्रश्न वर्णनम दशम् प्रभाव:

* अथ सुमति नाथ स्तुति *

मंगलाचरण। दोहा।

नमति भये सो सुरपती, सुमति सुगति दातार।
नमों चरन सुमतीस के, ज्यों पाऊं भवपार ॥ ७४ ॥

चौपाई।

एक समय नृप चिन्तावंत। चितहि विचारत ऐसी भंत ॥
अहो पुत्र मेरे शुभ चित्त। मुझ जोधा सबही के मित्त। ७५।
बुध जन जिनकी सेवा करें। धीरजवंत सुमतिको धरें ॥
राज धुरन्धर आरज बर्जे। जिनके देखत होय अचर्ज। ७६।
बीरजवंत महा गम्भीर। दुर्योधन आदिक बर बीर ॥
राजहि तजए रणमें जाय। मरन लहेंगे दुख को पाय ॥ ७७ ॥
धिक यह राजे धिक् ए पुत्र। बिनसन हार अधिक अपवित्र ॥
धिक् धिक् या मुझ जीवन माह। आतम करज करूं जो नाह ।७८।

रज सम राज विषय विष समा। चंचल चपला ते अति रमा ॥
सुंदर मंदर चिंता खान। जीवन हरनी काया जान ॥ ७९ ॥
पुत्र निबद्ध बंधन आकार। अश्व घटा मनु कारागार ॥
जन्म जराकर गज मद भरे। रथ अनर्थ के कारण धरे ॥ ८० ॥
प्यादे सुभट विपतिके दाय। संपयहारी पत्रन ठाय ॥
शत्रु समान सु गोती लोग। अरु सचियादिक कारक शोक ॥ ८१ ॥
चित्र रूप सम सज्जन मीत। अपने काज करत ये प्रीत ॥
इह विध ध्यावत राजा चित्त। भव तन भोग भयो सु विरक्त ॥ ८२ ॥
गंगा तनुज सो लयो बुलाय। तामन बात कही समझाय ॥
ज्यों शशि सदा गगनमें गमें। त्यों यह जीव जगतमें भ्रमें ८३
तातें सुतको देके राज। अबहिं करूं मैं आतम काज।
ऐसी कहके अपने पूत। पांचो पांडव कर संयूत ॥ ८४ ॥
द्रोणाचारज गुरु गंगेय। इनके आगे नृप पद देय।
माता सहित सुवनमे गयो। गुरुपद नुतकर संजम लयो ८५॥
कच लुंचे सब परिग्रह तजो। तेरह विध शुभ चारित सजो।
चेतन चितवत चितमें धरे। विहबल ध्यान अचल सम बरे ८६
आगम अर्थ पढ़ो बहुबार। सो धृताराष्ट्र मुनीश्वर सार।
साधुन कीजे संगति रहे। सोई साधु सुमतिको लहे ॥ ८७ ॥
अब यह अन्तर गंगापूत। माया रहित सुमति संजूत।
दुर्योधन आदिक सौ भ्रात। और युधिष्ठिर शोभित गात ॥ ८८ ॥
दोनों को तिन दीनों राज। सकल प्रजाके पालन काज।
नृपपद पाय युधिष्ठिर राय। पालत पृथ्वी बरतें न्याय ॥ ८९ ॥
करत सुधर्म भई सब सिष्ट। उपदेशत कारज उत्कृष्ट।
जाके राजन चोरी होय। भय नहिं व्यापत काहू कोय ॥ ९० ॥
चोर नाम ए दोय जु बर्ण। शास्त्र कहत ए सुनिये कर्ण।
जे नर तरुन कुमुर पद धरें। ते परमित बन तासू डरें ॥ ९१ ॥

लक्ष्मी हरन नहीं जिनराज । हरत सुगंध पवन परकाज ।
मारन नाम नहीं उच्चार । बरणन नरक कहत हैं पार ॥९२॥
ऐसो राज युधिष्ठिर करें । दान सुपातिहि नित अनुसरें ।
जिन पद पूजे करुनाधार । क्षमावन्त मन मुनिवर सार ॥९३॥
अब सुन द्रोणाचारज जोय । पांडव कौरव को गुरु होय ।
सो सबको नित शिक्षा देय । धनुर्वेदमें निपुण करेय ॥९४ ॥
बानन छेपन छेदन लच्छ । धनुषाकरषन करवें अच्छ ।
पार्थ समर्थ सुताके तीर । धनुर्वेद सब सीखो धीर ॥ ९५ ॥
गुरुकी भक्ति करी अति सही । तातें विद्या सबही लही ।
कामधेनु है गुरुकी सेव । मन वांछित की दाता येव ॥ ९६ ॥
पार्थ भक्ति अति जानो जबै । सब विद्या गुरु सौंपी तबै ।
पार्थ लहो सब विद्या अर्थ । सर्व धनुष तब कीने व्यर्थ ॥९७॥
जैसे मेरु कुलाचल माहिं । मेरु सुदर्शन सम है नाहिं ।
ऐसे सबही धनुर्धर सिच्छ । तिनते अर्जुन सम नहिं दच्छ ९८
पांडव कौरव सब परबीन । मति अनुसार सु विद्या लीन ।
सकल परस्पर लीला जोग । क्रीड़ा करत सुराजे भोग ॥९९॥
दुर्योधन आदिक सब साज । निरख सके नहिं तिनको राज ।
पांडव संग सुउद्धित भये । हिरदेमांहें विरोधत ठये ॥ १०० ॥
सरधा बढ़त बिरोध लहाहि । बैर बिशेष भयो तिन मांहि ।
तब गंगा सुत आदिक धीर । जे नर पुरुषानर गम्भीर ॥ १ ॥
तिनके बैर निवारन काज । आधो आध दयो कर राज ।
बैर तथापि बटो तिन बीच । कौरव नीतहि फिरादत नीच ।२।
पांडव पांच महा परचण्ड । भुजबल चण्ड प्रताप अखण्ड ।
कौरव अन्तर अतिही दुष्ट । मुखसों बचन भनत अति मिष्ट ।३।

दोहा

हतवे को पांडवन के, उद्धित सौऊं भ्रात ।
तथापि बाहिर लच्छ सहित, करत प्रीत की बात ॥४॥

चौपाई ।

एक समय ले कौरव साज । भीम गयो बन क्रीड़ा काज ।
जाको पावनि दूजो नाम । विपलोदर तीजो अभिगम ॥ ५ ॥
धूंलि तहां निज तनको लाय । बोलो पावनि ऐसे भाय ॥
जो नर मोहि उठावे सही । बलियन मांहि बली है वही ॥६॥
ऐसी सुनके कौरव सबै । ताहि उठावन लागे जबै ॥
आपुसमें अति वहसे सही । रंच हलावन समरथ नहीं ॥७॥
चूहे बहुत हलावें जेम । तिनको मंदिर हाले केम ॥
बिलख बदन है गृहमें ठये । एक समय पुनि बनमें गये ॥८॥
एक लाय तरु जा में भले । साखा पत्र कुसुम फल रले ।
फलते भूमि रहे सहकार । कोकिल करत मधुर उच्चार ॥९॥
अमली केला और खजूर । इन आदिक तरु राजें भूरि ।
भीमसेन तहँ कौरव जाय । क्रीड़ा करत सु नाना भाय ॥१०॥
इक तरु देखो तहँ अभिराम । आमिल को है ताको नाम ।
स्कंध विपुल सुराजे सही । साखा पत्र में छाई मही ॥११॥
अति उन्नतता ताकी फबै । मानों अम्बर रोको सबै ।
भार भार पुनि अतिही फले । ज्यों जिन धर्म महा सुख रले ।१२।
क्रीड़ा करन लगे ता तरे । पावनि सहित सु कौरव खरे ।
गर्भ सहितते उतरे चढ़े । अपने मनमें अतिही बढ़े ॥ १३ ॥
कोई चढ़े चतुराई धार । कोई उतरे आये हार ॥
को इन भुजते तरुको धुने । को इन कंधा लिंगन चने ॥१४॥
कोइक छाती दाबे खरे । लतको कंपित आकुल करे ।
चढ़ि न सके ता ऊपर कोय । अर्ध बिचै पुन आवत सोय ।१५।
अति दुरलंध्य लखो तरु जबै । भीम चढ़ो तिस ऊपर तबै ।
समल चित्त अति कौरव दुष्ट । देखो तरुपै पावनि सुष्ट । १६ ।
डारन को तरु उद्यत भयो । सब मिल वृक्ष उपारन ठयो ।

द्रुमको लिपट करें आराव । कौरव अंतर रोस स्वभाव ॥१७॥
इनहीं तरु जब कंपित कियो । भीम अंक पशु आसन लियो ॥
द्रुम हालत पर भीम न हले । सरित छोभ किम सागर चले ।१८।
तब पावन बोलो इह भाय । जो तुममें बल है अधिकाय ॥
तो या द्रुमहि उठावो सही । नाहीं तो बल तुममें नहीं ॥१९॥
ऐसी सुन अति छोभित होय । वृक्ष उपारन लागे सोय ॥
तो भी समरथ नाहीं रंच । ज्यों वरांक गिउ धारन संच ॥२०॥
इनके मनकी बात पिछान । आये भीम तबही निज थान ॥
एक समय संग कौरव लये । ताहि तरु तर फिरके गये ॥२१॥
भीमसेन अति हरर्ते तबै । कौरव द्रुमहि चढ़ायो सबै ॥
दोनों भुजहि हलायो दच्छ । पुनि उखारकर लीनो वृक्ष ॥२२॥
कौरव सहित वृक्षको लयो । धार छत्र सम धावत भयो ॥
वृक्ष उखारत कौरव गिरे । ऊपर मुख हैं भयसों भरे ॥ २३ ॥
कोइक परत अधो मुख होय । चोट लहत भू मस्तक सोय ॥
कोइक पगतें साखा गही । होय अधो मुख लटको सही ॥२४॥
दोऊ भुज गहि साखा पेम । कोइक लटक रहो है येम ॥
एकै कर अवलंबन धार । कोइक लटक्यो निज तन डार ।२५।
कोइक चौड़ी साखा पाय । खोय रहो अति भयको खाय ॥
कोइक उदरकी पीड़ा लहे । काहूको तन मूर्छा गहे ॥ २६ ॥
मृत्यु सखी यह मानो आय । लिपट रही यो छलको पाय ॥
भीमसेन इम आकुल करे । तास पुन्य तें मानों डरे ॥ २७ ॥
हा हा कार करत मुख सही । भीम प्रती इक बोल्यो तही ॥
हे पावन तुम पावन चित्त । अति गंभीर सहोदर मित्त । २८ ।
तुमहि जुगत यह करनी नाह । गोत विडूबन है इस माह ॥
ऐसो सुनके पावन तबै । सुस्थिर कीने कौरव सबै ॥ २९ ॥
मिष्ट वचनतें अति आस्वास । तब आये सब निज आवास ॥

एक समय सब कौरव याह । लेय गये एक सरवर माह ।३०।
छलकर मारो चाहैं नीच । डार दियो यह जल के बीच ॥
बहुत उपाय ये दुष्ट करांहि । भीम बली यह डूबें नांहि ॥ ३१ ॥
तरो सरोवर सुखसों लीन । तरन कला में अति परवीन ॥
ऐसी लख है कौरव रुष्ट । क्या करियें चितवें वे दुष्ट ॥ ३२ ॥
एक समय बिपुलोदर धीर । संग लिये सब कौरव बीर ॥
काहू छलकर सरमें तबै । डार दियें इन कौरव सबै ॥ ३३ ॥
डूबन लागे जलमें एव । करुना शब्द करें बहु भेव ॥
रत्त रच्च भाषे दुखपाय । रुदन करें अति गोते खाय ॥ ३४ ॥
भीम हस्तकर मर्दित भये । अति विहबल ते जलमें गये ॥
ज्यों त्यों करिके खेंचत येह । निकसे सग्ते पहुंचे गेह । ३५ ।
दुर्योधन तें इन सब अखी । भीम तनी जो महिमा लखी ॥
तब दुर्योधन भयको पाय । मंत्री अनुज सु निकट बुलाय ।३६।
तिनसों मंत्र करो इन ईम । दुर्जय शत्रु महा भुज भीम ॥
याके बल सम और न कोय । महाबली है एकै सोय । ३७ ।
धीर बीर बहु बलको धार । रनमें सबको जीतन हार ॥
मोचित आवत ऐसी सही । या जीवत हम जीवत नही ।३८।
यह दुरातमा भय निरमुक्त । जिस तिस छलते मारन युक्त ॥
याके होत हमारो राज । विनशेगो सब सुखको साज । ३९ ।
तातें अबही हतिये याहि । और विधी हमको सुख नांहि ॥
जौलों बैरी बाढ़े नहीं । तौलों ताको छेदे सही ॥ ४० ॥
जो बाढ़े तो सब बल हरे। जैसे व्याधि महा दुख करे ॥
दुष्ट व्याधि हर बैरी सर्प । उपजत इनको छेदे दर्प ॥ ४१ ॥
बाढ़त यह दुख दारुन देय । ज्यों विष तनमें जीवन लेय ॥
तातें छेदो छेदो याहि । और विषै हमको दुखदाय ॥ ४२ ॥
दुर्योधन दुरध्यानी दुष्ट । मंत्र करो यह है के रुष्ट ॥

एक समय तसु सोवत जान। दुर्योधन तबही छल ठान ।४३।
जकर बंध कर लीनों ताहि। डार दियो पुनि गंगा मांहि ॥
नीर लगो इस तनको जबै। भीमसेन नर जागो तबै। ४४।
कौरव की कृति मनमें वेद। बाहु पसारत बंधन छेद ॥
मानों सय्या सोवत धीर। ऐसे आयो सर के नीर ॥ ४५ ॥
ललित अंग बहु लीलावंत। आयो गृह बिपलो दर संत॥
पुनि कौरव ये छलको मीत। भीमसेन सों ठानी प्रीत । ४० ।
एक समय तिस भोजन काज। आनो गृह आमंत्रन साज ॥
भोजनमें दुर्योधन रुष्ट। हालाहल विष दीनो दुष्ट ॥ ४७ ॥

दोहा।

प्राण हरे तत्काल जो, सो विष खात प्रमान।
भयो भीम के पुन्य ते, रुचकर सुधा समान ॥ ४८ ॥
भीम पुन्य महात्म यह, देखो श्रेनिक मीत।
हालाहल विष खायके, जीवत रहो सदीव ॥ ४९ ॥
विष भी निर्विषता लहै, साकिन एक समूल।
धर्म वन्त की देह को, ऐ नहिं लागें भूल ॥ ५० ॥
रक्त नयन फुंकार कर, भीषन फन पति जोय।
धरम वन्त के पग तले, बरने कंचुक होय ॥ ५१ ॥
अगन नीर है परनवै, केहरि होत सियार।
छैला सम है मत्त गज, थल है सागर पार ॥५२॥
प्राज राज सुन्दर तिया, तरल तुरी गय मत्त।
पूर्व पुन्यतें पाईयो, रथ विशिष्ठ भय मित्त ॥५३॥
मनिमय भूषन बस्त्रवर, सुरभ फूल तम्बोल।
धर्मवन्त सहजे लहै, धवल महल सत पोल ॥५४॥
धर्म तनो फल बिपुल यह, जानों भविजन जीव।
तातें मन बच काय सों, पालो याहि सदीव ॥५५॥

भीम भ्रमत अब भूमिमें, निर्भय कौरव संग ।
एक समय ते छद्म तें, लाये स्याम भुजंग ॥५६॥
अहिसों क्रीड़ा करतही, कौरव कपटी दुष्ट ।
भीम कटायो जानके, सरल चित अति सुष्ट ॥५७॥
सर्प गरल ताही समय, अमृत समता लीन ।
पूरब पुन्य प्रतापतें, तन बेदन नहिं कीन ॥५८॥

चौपाई ।

द्रोणाचारज गंगा पूत । पांडव सब कौरव संयूत ॥
एक समय ए बनमें जाय । खेलत गेंद लिये तिह ठाय ॥५९॥
कनक तन्तुसों गूंथी भली । गोल मटोल सुभगता रली ।
स्वर्ण दण्डको कर में धरें । मारेंगे दोउ छोरे खरे ॥ ६० ॥
रमें परस्पर तासों येम । स्वर्ग लोक में सुरगन जेम ।
दंड प्रहारतें डोरे गिन्द । मानो भूपर लोटे इन्द ॥ ६१ ॥
भूपति के भय मानों छिपे । भरमत गेंद सुससि सम दिखे।
किनहूं जष्टि हनी तिस जोर । परी अंधेरे कूआ घोर ॥६२॥
जैसे कुलटा बिट सों तूस । कूपहि डूबे पति सों रूस ।
कूप अथाह सु जलसों भरा । रम्य अगम्य सु गहरा खरा ।६३।
हा हा कार करत नृप सबै । कूआके तट आये तबै ।
सीस नवावें ठाड़े होय । गेंदहि देखे ऐसे सोय ॥ ६४ ॥
कूपहि गेंद चमकती लखी । सब राजों तब ऐसी अखी ।
शक्तिवन्त है ऐसो कोय । लावे गेंद कूआ में जोय ॥ ६५ ॥
तब यों बोले नरवा चाल । हम आने जो होय पताल ।
कोइक ऐसे बोलो भूप । दोऊ भुजहि उभाऊं कूप ॥६६॥
कौन बात इस ल्यावन मांहि । हम पतालतें आने याहि ।
और भूप तहँ यों उच्चरे । फणपति के सिंघासन तरे ॥ ६७॥
परी होय तो आने बाध । पद्मावति को साथें साध ॥

बाचाली नर चंचल जाति । यहि विधि बात करे बहु भांति ।६८।
लावन समरथ कोऊ नांहि । मान करे बहु हिरदे मांहि ।
तब गुरु द्रोणाचारज सन्त । धनुर्वेद मनु मूरति वन्त ॥६६॥
पनिच चढ़ाय धनुष टंकोर । याके करत परो जग सोर ।
पनिच सहित राजे को दंड । मानों इन्द्र धनुष परचंड ॥७०॥
हस्ती तोरँ चले आलान । सुर गंधर्व तजी धुन गान ।
हिन हिनाय कर छूटें अस्व । चाप शब्दतें हालो विस्व ॥७१॥
नगर लोग सुन धुनको दंड । भाषत को अरि आयो चंड ।
मृगनैनी तिया चौंकत ठई । बसनाभूषण बिगलत भई ।७२।
तब गुरु बान पनिच गह धीर। तान निशाना मारो तीर ।
सरके सिरसर मारो और । इह बिध कीनों सरको डोर ।७३।
जिस काढ़नको कौरव सर्व । है असमर्थ करें थे गर्व ॥
सो इम गेंद निकासी द्रोण । धनुर्वेद को एके भौन ॥ ७४॥
सर विद्या लखि गुरुकी एम । सुरनर बरनी धरके प्रेम ।
गिरि कन्दर में किन्नर देव । याहीको जस जावत एव ।७५।
ऐसी बान कुशलता सही । भई न पाछे आगे कही ।
ऐसे सब नरपति उच्चारे । गुरु के गुण प्रशंसे खरे ॥ ७६ ॥
ते सब छिन इक बैठे तहीं । पुनि आये निज पुरमें सही ।
भीम पुन्यको कौरव पेख । और सकति बहु ताकी देख ।७७।
बिलखित होय चमा चित धरी । सकत बिनासु छिमाही वरी ।
काल बहुत इम तिनको राज । करते बीते छिन सम साज ।७८।
एक समय गंगा सुन तनी । द्रोण प्रती यह बिनती ठनी ॥
पान ग्रहण अब कीजे सही । सब नृप मिलकर याची यही ७६।
जब गुरु अंगीकार करेय । कीनों उत्सव अति गंगेय ।
रतसम पुत्री गौतम तनी । आनंद बेनी गुनगन सनी ॥८०॥
सो याची गुरु द्रोण नमित्त । जाके निरखत के वस चित्त ।

पान महन विधनाके संग। गाय बजाय करी निरभंग ॥ ८१ ॥
तिस अन्तर ए दम्पत भले। रमत सुरत सुख मन मथ रले ॥
तिनके पुत्र भयो अभिराम। अस्व थामा है ताको नाम ॥८२॥
धृत मतवन्त सुधर्मी धीर। धनुर्वेद विध पार गंभीर ॥
एक समय गुरु ऐसी कही। भो नृप सुतहों सुनियो सही ।८३।

दोहा।

अर्जुन आदिक शिष्य तुम, धनुर्वेद बिध माह।
मो आज्ञा नित मानिये, यह तुम भूलो नाह ॥८४॥
ऐसी सुन गुरु बचनमें, रहें सु तत्पर चित्त।
पांडव कौरव आदि सब, भये नामित बस चित्त ८५॥
निसि दिन सेवत गुरु चरन, धरकर मन बच काय।
गुरु पद अम्बुज गुन सुरभ, मधुकर अर्जुनराय ॥८६॥
तब प्रसन्न है द्रोण गुरु, वर उत्तमता दीन।
मो सम विद्या धनुषकी, तोहि फुरो परवीन ॥८७॥
गुरु दीनों बर पायके, पारथ परम पुनीत।
लही चाप चातुर्यता। धर कर अधकी प्रीत ॥ ८८॥

चौपाई।

और समय तब गुरु परवीन। पांडव कौरव साथे लीन।
धनुर्वेद सिखलावन काज। आये बनमें धनुष साज ॥ ८९ ॥
वृक्ष तहां इक उन्नत भूर। साखा पत्र सघन फल फूर।
ताके तल ए बैठे जाय। मद उद्धत सब कौरव राय ॥९०॥
तिस तरु पै इक शाखा बीच। बैठो बायस पंछी नीच।
ताको देख सुगुरुने कही। पांडव कौरव सुनिये सही ॥ ९० ॥
या पक्षीको दक्षन चक्षु। जो छेदे सो धनुधर दक्ष।
ऐसी सुनके कौरव सबै। दुर्योधन इन आदिक तबै ॥ ९१ ॥
कठिन निशाना अतिही जान। मौनलही तब सुखकी खान।

पंछी चत्तू चंचल रूप । याको छेद सके को भूप ॥ ९२ ॥
कहत परस्पर ऐसी बात । करे न कोऊ ताको घात ।
तब गुरु बोले तिनसों बैन । हमहिं छेदिहैं याको नैन ॥९३॥
ऐसी कह गुरु आपुन धीर । धनुष पनच आरोपो तीर ।
गुरुको उद्यत देखो तबै । अर्जुन धनुधर बोले तबै ॥ ९४ ॥
नमस्कार कर बिनती करी । सुनिये हो गुरु यों अनुसरी ।
तुम समरथ याकारज माहि । यामें संशय रंचक नाहिं ॥९५॥
जो तुम छेदी पंछी आंख । अचरज कौन सुयामें भाख ।
हमसे शिष्य तिहारे तीर । निंद करम किम कीजे धीर ॥९६॥
यह आज्ञा तुम मोको देहू । तुमैं लायक नहिं कारज एहू ।
ऐसी सुनकर उद्यत ठयो । धनुष पकर टंकोरत भयो ॥९७॥
चंचल पंछी चंचल ग्रीव । नैन चपल तसु हरत सदीव ।
जबही करी धनुष टंकोर । नीचे देखो तिन सुन सोर ॥ ९८ ॥
तौलों अर्जुन सर संधान । नीचे निरखत मारो बान ।
पंछी दच्छन छेदो अच्छ । बान कलामें अर्जुन दच्छ ॥ ९९ ॥
द्रोणाचारज आदिक सबै । करत प्रशंसा ताकी तबै ।
धनुर्वेद सागर गम्भीर । पार लयो तसु अर्जुन धीर ॥ १०० ॥
इह विधि कौरव सगरे तहां । करत प्रशंसा मुखसों महां ।
कौरव आय सुगृहमें रले । अर्जुन बल लख अन्तर जले ॥१॥
कर गह धनुष सुअर्जुन धीर । कबहुक बनको निकसो धीर ।
सिंह बाघ जे वनचर पमें । तिनको भय उपजावत भमें ॥२॥
पहुँचो राय गहन बन थान । देखो तहँ इक हरि सम स्वान ।
लागे तिस मुख बान प्रहार । देखत भूप करो सुविचार ॥३॥
कौन धनुर्धर यावन बीच । इस आनन किन छेदी नीच ।
याको घातक मानुष कोय । परत न दृष्टि सुमेरी कोय ॥ ४ ॥
शब्दवेध बिन और मनुष्य । या कारजमें नाहीं दक्ष ।

यह अति विसमय मोमन ठनो । कूकरमुख किन बानन हनो ५॥
अहो द्रोण गुरु मो जग सार । शब्दवेधि विधि जाननहार ।
दुरासाध्य यह विद्या सही । याको धारक दूजो नहीं ॥ ६ ॥
द्रोण सुगुरु धुनि वेधी धीर । नित्त रहूं मैं ताके तीर ।
शब्द वेधि विधि सीखन काज । गुरु पद सेयेमें मत साज ७॥
तब प्रसन्न ह्वै मोको दई । और शिष्य नहिं किनहू लई ।
शब्दबेधि विधि ज्ञायक जौन । या बनमें नर तिष्ठे कौन ॥८॥
ऐसो अचरज हिरदे साज । ढूंढे बन तिस देखन काज ।
सुंदर गिरिकंदर सिलपुंज । और सघन बन देशनिकुंज ॥९॥
ए सब ठौरनि ढूंढत तही । एक जुबनचर देखो सही ।
बामें हाथ सरासन धरे । दच्छिन कर जिस सर अनुसरे १०॥
तीरनते इक नलखा भरो । ताको बांध कमर अनुसरो ।
स्याम शरीर बदन बिकराल । लोचन डूंघे नीचो भाल ॥११॥
कौड़ी दन्त करारे बोल । काक तुंड नासा कच कौल ।
मार मार मुख भाषत फिरै । नैन अरुनता सहजे धरैं ॥१२॥
भोजपत्रको करि लंगोट । और कछू नाहिं तनपे ओट ।
ऐसो भील भयानक जोय । अर्जुन ने तहँ देखो सोय ॥१३॥

दोहा

अर्जुन बोलो भीलसों, कहो मित्र तुम कौन ।
तुम में विद्या कौन है, कहँ बासी कहँ भौन ॥ १४ ॥
ऐसी सुन बोलो सबर, अतिही बिस्मय पाय ।
हे सुकर्ण सुनिये सुहृद, मैं बनचर भय दाय ॥१५॥
बनवासी बनही भवन, धनुर्वेद विधि लीन ।
धनुषबान तें श्रवणको, करूं छिनकमें छीन ॥१६॥
शब्दबेधि विद्या निपुन, मो सम नहिं जग और ।
परम धनुर्धर लच्छहा, धन्वीजन सिरमौर ॥ १७ ॥

ऐसी सुनकर इन्द्रसुत, कही भिल्लसों बात।
स्वान बदन तुमही करो, शब्दवेधिते घात ॥१८॥
ऐसी सुनके सबर तब, बोलो सुन सुश्रोत।
काम मूर्ति तिय मन हरन, सुकृत करुना पोत ॥१९॥
चले जात मैं स्वान को, सुनो शोर जब कान।
शब्दवेधि ते तासु मुख, छेदो तिच्छन बान ॥ २० ॥
धुनि वेधिता सबरको, जानो अर्जुन ठीक।
विस्मय धर बोलो बहुरि, करोचहत तहकीक ॥२१॥
हे किरात विद्या यही, शब्द वेधनी नाम।
पाई कौन प्रसादतें, को गुरु तुम अभिराम ॥ २२ ॥
शब्दवेधि दातार गुरु, लखे न काहू ठाय।
सो तुम पाई किहि विधी, मोह कहो समझाय २३॥
ऐसे सुनके भील मन, मानो घन गरजाय।
अर्जुन प्रति ऐसो कहो, सुनिये मन बच काय ॥२४॥
मेरो गुरु शुभ द्रोणहै, दायक सकल विपच्छ।
ता प्रसादतें मैं भयो, शब्दवेधि विधि दच्छ ॥ २५ ॥

चौपाई

सबर बचन सुन अर्जुन राय। चितवत अपने चितइह भाय।
कहा द्रोण नृप सान्प प्रवीन। रंगमहलमें बसत सुखलीन २६॥
कहँ किरात यह करुना हीन। पलकाजे मृग हिंसत दीन।
कठिन मिलाप सुइनके बीच। वह उत्तममय यह अति नीच २७
दुर्धर जोग सुइनको भूर। आपस में ए अतिही दूर।
पुर्वापर जो सागर थान। सनिल सार्स योग बखान ॥२८॥
यह विचार बोलै इह भांत। भो किरात इक पूछूं बात।
गुरु गरिष्ट गुरु द्रोणा नाम। सो वह देखो तुम किहठाम २९
ऐसी सुनके बोलो तबै। करत दशो दिश बहिरी सबै।

सुकृत कृतज्ञ महा सुकिरात। अर्जुन प्रति भाषो इह भात ३०॥
या बनमें इक टीलो महा। द्रोण गुरू हम देखे तहा।
ऐसो भाषत टीलो वही। अर्जुनको दिखलायो सही ॥ ३१ ॥
यह टीलो अति पावन ठान। गुरूपद पद्म सुपरसे आन।
रस अरु पारस परसत एम। शुद्ध कनक है लोहा जेम ॥ ३२॥
तातें याहि सदा मैं नमूं। गुरु सम जान भक्ति मैं पमूं।
या टीले की रज मैं लेउ। नैन लगाऊं मस्तक देउ ॥ ३३ ॥
इसको दरशन देखूं जबै। अति आनंद लहूं मैं तबै।
टीलेको यों जान्यों सही। मानो द्रोणाचारज यही ॥ ३४ ॥
इस प्रसाद हम विद्या लई। शब्दवेधिनी नामा यही।
गुरूकी भक्ति वसे मो चित्त। गुरुहीके गुन सुमिरूं नित्त ॥३५॥
गुरुके चरन फिरे जिस थान। जे सेवत तिन गुरुसम जान।
तेई नर सुख उत्तम लहें। सब विद्या तें सहजे गहें ॥ ३६ ॥
ऐसी सुनकर अर्जुन धीर। करत प्रशंसा ताको बीर।
दूरहोय जो सजन महन्त। तोभी गुन नहिं भूलें सन्त ॥३७॥
महा मान्य तुम महिमा तुच्छ। गुरुकी भक्ति विषै अति दच्छ।
जो गुनिजन शुभ गुनते रते। पूजनीक तुम तिनकर अते ॥३८॥
थुत करके हम बनचर तनी। पुनि आयो गजपुरमें गुनी।
नुति करिछिन इक बैठो तही। तब गुरुसों इन बिनती बही ३९
हे गुरू आज महाबन जहां। क्रीड़ाहेत गयो मैं तहां।
एक किरात धनुर्धर जोर। देखो बनमें हिंसक घोर ॥ ४० ॥
बामें हाथ धनुषको गहे। सारे दिन सर साधे रहे।
ताको देख कही मैं बात। को विद्या तुमको है जात ॥ ४१ ॥
सो बोलो हम जात किरात। शब्दवेध विधि सीखोघात।
द्रोणाचारज गुरुहै गुनी। जा प्रसाद मो विद्या बनी ॥ ४२ ॥
भ्रमत रहो मैं या बन माहिं। काहूको भय मोको नाहिं।

ऐसी बात कही तिन जोय। आय कही मैं तुमसों सोय ४३॥
निठुर चित्त अति बनचर दुष्ट। हिंसाकरत सदाही रुष्ट।
निर अपराधी जे बन जीव। तिनके प्राण हरे जुसदीव ४४॥
हे गुरु तुम उपदेशहि पाय। हिंसा करत सबर अधिकाय।
ऐसी सुन गुरु चिन्तो एम। बनको भील बरजिये केम ४५॥
द्रोणाचार्य तिस वर्जन काज। चलो सुवनको फिरके साज।
पार्थ धरो तब गुरुको रूप। पार्थ रूपधर द्रोन अनूप॥ ४६॥
बनचर को तहं देखत जाय। दोऊ गुरु शिष्य बनके मांहिं।
बनचर धन्वी देखो जबै। आयो नमत सो गुरुको सबै॥४७॥
बन्यो जु अर्जुन गुरुके रूप। मान्यो द्रोण सुगुरू अनूप।
ताही के पद परसे आय। हिरदै भक्ति धरे अधिकाय॥४८॥
कपटरूप बोल्यो गुरु येम। चरन गहे तुम कारन केम।
को गुरू तो तुमको उत्पाद। ऐसी सुनकर भनत निषाद॥४९॥
मैं बनवासी बनचर कहा। सो गुरू द्रोनाचारज महा।
जा प्रसाद मैं विद्या लही। सर्व अर्थकी दाता सही॥ ५०॥
गुरुपरोक्ष छबिकर परतच्छ। भगति धार मैं पूजूं अच्छ।
ताके चरन गहे हम आय। गिद्धि सिद्धि बुध निधिकी दाय ५१
ऐसी सुन गुर सांचो द्रोण। बोलो भिल्लप्रती सुखभौन।
जो तुम देखो अबहि किरात। लच्छिन सहित स्वगुरु साक्षात ५२॥
तो गुरु सेव करो तुम केम। यह सुन बनचर बोले येम।
दासहिं दास स्वगुरुको दास। होय रहों जो देखूं तास॥५३॥
द्रोणाचारज तबयों कही। देखो है तुम गुरु वह सही॥
जे लच्छनहै तिस तन मांहि। तिनकर जानत हो तुम नांहि।५४।
ऐसे सुनकर बनचर कही। जानत हूं मैं गुरु को सही।
तबै धनुष प्रति ऐसे कहा। मैं ही हूं गुरु तेरो महा॥ ५५॥
द्रोणाचारज विद्या दच्छ। देख सबर अब मुझ परतच्छ।

पंडितजन जिस पूजें पाय। सकल सुजनको है सुखदाय ॥५६॥
ऐसी सुनत सबर गुणखान। लज्जा सहित सु गुरुको जान।
निकसो आनन हर्षित होय। अंग नमाई अनंयो सोय ॥५७॥
आठों अंग मही सों लाय। बचकर बन्दे गुरु के पास।
खिर पीछे जो गुरुको मिले। क्यों नहिं भाक्ति करें सो भले।५८।
बिनये बनचर बिनये प्यार। गुरुको बिनय कहो बहु बार।
जे बिनयो बहु गुरुकी भक्ति। ते नर विद्याने आसक्ति ॥५६॥
ताते जे नर विद्या चहें। अधिक बिनयतें गुरुको वहे।
बोलो गुरु हे कुशली धीर। बरते कुशल सु तुमको बीर ॥६०॥
भाषे भिल्ल सु गुरुको तदा। तुम प्रसाद मैं कुशली सदा।
देखी प्रीत सबरकी अतें। बोलो गुरु तब बनचर प्रते ॥ ६१ ॥
भो किरात शुभ गुनकी खान। तुम अघ घातक उत्तम जान।
मो सेवा बिध दायक तही। मो आज्ञा प्रति पालक सही।६२।
मैं नहिं देखो काहू ठौर। तो सम अन्य बासी और।
तुम तरमें कछु जांचो चहूं। जो कुछ इच्छा हिरदे लहूं ॥६३॥
जो तुम देहु सो जाचों सही। देहु नहीं तो मागू नहीं।
जाचन भंग सु दुखहै महा। मोपे जाय नहीं इह सहा।६४।
बोल्यो बनचर कंपित सोय। क्षोभित चित अति बिस्मय होय।
हे स्वामी तुम इह कहि कही। मैं तुम आज्ञा पालक सही।६५।
हीन सकत जे मोसम एव। कर नसके ते गुरुकी सेव।
कौन बस्तु है या जग मांहि। जो तुम सेको दीजे नांहि।६६।
बोलो गुरु सुन सेवग सोय। देय वही जो तुम पे होय।
जो देवे की बांच्छा तोहि। सात बचन तो दीजे मोहि ॥६७॥
कौल बचनदे बोलो भील। देहु सही नहिं लाऊं ढील ॥
बोले गुरु हे बनचर सुष्ट। दीजे दक्षिन कर अंगुष्ट ॥ ६८ ॥
ऐसी सुन नहिं कीनी ढील। छेद अंगूठा दीनों भील।

कौन सू बात अंगूठा तनी। असुभी देह भगत नर गुनी ॥६६॥
लीनों मूल सहित अंगुष्ट । गुरुको चित्त भयो सन्तुष्ट ।
बिन अंगुष्ट न धनुषै धरे । खैंचि सके नहिं ऊंचे सरे ॥७०॥
अब यासों नहिं ह्वै है पाप । नासो सब हिंसा आताप ।
शब्द बेधिनी विद्या यही । पापी नर को दीजे नहीं ॥ ७१॥

दोहा

यों विचार चित द्रोन गुरु, बिधि पूरण निधि धाम ।
अर्जुन को विद्या दई, शब्द बेधिनी नाम ॥७२॥
यार्थ द्रोन तब पुर बिषय, आय धाम अभिराम ।
बिबिध भोग साता सहित, भुगते आठों जाम ॥७३॥
पांडव कौरव मिष्ट वच, अन्तर धरें बिरोध ।
सुखहि बितावें काल को, ढांके रहत बिरोध ॥७४॥
भीमसेन नृप बिघ्न हर, अमिय भयो विष जासु ।
जलते थल जल गई अहि, भये पुन्य तें तासु ॥७५॥
पार्थ सार्थ प्रद्युमान जस, शब्द बेध बिधि लीन ।
सब अनर्थको व्यर्थ कर, धरमारथ परवीन ॥७६॥
धरम बुद्धि ते पाइयो, विद्याभल बर रिद्धि ।
जैनी जिन बानी सुनत, होत परम पद सिद्ध॥७७॥

इति श्री नरमहाशीलाभरण भूषित जैनी नामांकितायां लालाबुलाकीदास बिरचितायां भारतभाषायां भीमविघ्न बिनाशार्जुन शब्द बेधि विद्या प्राप्ति बर्णन एकादशमप्रभावः ।

अथ यादवपति कथा रम्भः

पद्म प्रभु स्तुति मंगलाचरण ॥ दोहा ॥

नमों पद्म पद पद्मके, पद्मासन सुख लीन ।
पद्माकं कृत पद्म दुति, पद्माकर परवीन ।१।

चौपाई ।

अब गनपतिसों श्रेनिक भूप । प्रश्न कियो इक अधिक अनूप ।
स्वामी कहो अब यादव कथा। किम विभूति तिन लीनी यथा।२।
ऐसी सुनके गौतम कही । सुन श्रेनक यदु चारित सही
अधिक वृष्टि जती पद लियो । समुद्र विजयको नृपपद दियो ।३।
तासु अनुज सुन्दर बसुदेव । बनकी केलि करें नित येव ॥
गज चढ़के वह निकसे जबै । पुर तिय देखन आवें तबै । ४ ।
देखत सुन्दर ताकी देह । कामिनि जन मन मोही एह ।
गृह कारज पति भोजन आदि। तज दीने तिस देखन स्वाद् ।५।
नगर पंच तब नृपसों कही । नृप सुनके आस्वादन वही ॥
तब ते कुंवर बाहिर बनें । वरजो हितकर कुलसों सने ॥ ६॥
राखो सदन ताहि बन मांहि। निकसन देय सु बाहिर नाहिं॥
दासी निपुन मती तहँ जात । तिस मुखनें तिन जानी बात ।७।
वाद्य निषेधन सुनके तबै । निकसन लागो बाहिर जबै ॥
द्वारपालने बरज्यो याहि । नृप आज्ञा निकसनकी नाहि ॥ ८॥
आपहि बंधन बांधो जान। निकसो हय चढ़ि छल तब ठान॥
भूमि मसान अकेलो जाय। तहं सुतको भूषन पहराय ॥ ९ ॥
ताहि अगनसों जारो जबै । आपुन छिपके निकसो तबै॥
भ्रमन करतसो पहुंचो तहां। नगर बिजैपुर निबसे जहां॥१० ॥
तरु अशोक तल बैठे जबै । आयो नृप इस लेने तबै ॥
नैमितकके बचन प्रमान। दई सुता तिन बिधको ठान ॥ ११ ॥
केइक दिन तहां भुगते भोग । पुनि यह निकसो बिधि संजोग॥
पुष्पक बनमें सो अनुसरो। बन बारन तहँ निरमद करो ॥ १२ ॥
ताऊपर चढ़ क्रीड़त सही । किसहू खग हरि लीनों यही॥
ताही छिन बिजयारध ठाय। कीनर गीत नगरमें जाय ॥१३ ॥
असनि बेग तहं राजा बसे। पवन सुबेगा रानी लसे॥

तास सुता शुभ स्यामा नाम। सो इन परनी गुनकी धाम ॥१४॥
कोइक दिन तहँ सुख अनुसरो। पुनि सोवत अंगारक हरो ॥
जाग उठी तिय स्यामा जबै। खड्ग ढालले दौरी तबै ॥ १५ ॥
जब लीनों खगइन ललकार। तबही खगने दीनों डार ॥
खगसों तिय लरने को ठई। परन लखी तिन पर सग दई ॥१६॥
जिनको सुमरत नभतें गिरो। चंपापुर के सर में परो ॥
सरते निकस पुरी में गयो। बीन अखाडो देखत भयो ॥१७॥
चारुदत्त तहां नृप सुख रास। गंधर्वद तहँ पुत्री तासु ॥
सोइन परनी बीन बजाय। निवसो कोइक दिन तिहठाय।१८।
सयन करत तहँ खचरी हरे। पुनि विजियाधर गिरि अनुसरे॥
सात शतक विद्याधर सुता। क्रमतें परनी तहँ गुन जुता।१६।
एक पुन्यतें सब कुछ होय। कौन वस्तु है दुर्लभ जोय ॥
पुन आयो या पृथ्वी सही। शुभ अरिष्टपुर निवसे जही॥२०॥
हिरण्य बर्मा तहँ नृप अभिराम। तास तिया पद्मावति नाम॥
रोहिनी नाम सुता है तास। शीलरूप शुभ गुनकी रास ॥२१॥
रचो स्वयम्वर ताको महा। सारे भूप बुलाये तहां ॥
कन्या सबको तज के एव। आय बरो बर शुभ बसुदेव ॥ २२ ॥
तबही सब नृप क्षोभित भये। तजके न्याय लरनको ठये ॥
समुद्र बियज इन आदिक राय। सागर सम उमड़े नर छाय।२३।
युद्ध करत बसुदेव कुमार। सन्मुख देखो भ्राता सार ॥
ता तट छोड़ो प्रीतम बान। अच्छर सहित सु गुनकी खान॥२४॥
समुद्र बिजै सर लीनों बांच। लघु भ्राता तिन जानो सांच॥
रनको बरज अनुजसों मिलो। भ्रात दसों मिल उत्सव रलो।२५।
पान ग्रहण तब कीनो भले। दंपति अतिही सुखसों रले ॥
सुपने देख गरभ तिस लसो। शुक्र स्वर्गच्युत सुर उर बसो।२६।
क्रमते बीते जब नव मास। सुत बलभद्र जनो सुख रास ॥

यादव सर्व सहित वसुदेव । आये सूरीपुर तब एव ॥ २७ ॥
तब वसुदेव करे बहु शिष्य । कंसादिक अति योधा दक्ष ॥
कबहुक कंस सहित वसुदेव । राज ग्रही पुर पहुंचो येव ।२८।
जरासिंधु तहँ आज्ञा करी । पोदनपुर हर रथ नृप अरी ॥
रणमें जीत जु बांधे वाहि । मो आगे पुन आने ताहि ।२९।
ता नृपको दूं अपनी सुता । जीवन जस शुभ गुनसों युता ॥
अरु दूं देश नगर ता संग । भुगतें सुख जहँ अति निरभंग।३०।
ऐसी सुनके नृप वसुदेव । सैन सहित यह निकसो येव ॥
कंस सहित इन लरिके तहीं।बांधि सिंहरथ आनो मही । ३१ ।
जरासिंध तब आनंद पगो । पुत्री कुंवरहि देने लगो ॥
अशुभ लक्षणी ताको जान । जरासिंध सों बोलो बान ।३२।
मैं नहिं जीतो बैरी येह । जीनो कंस महा बलदेह ॥
जरासिंध सुन ऐसी बात । पूछो तिस तुमको कुल जात ।३३।
बोलो कंस कलहको धाम । मो माता मंदोदरि नाम ॥
तबहि बुलाई ताकी माय । तिन मंजूषा दीनो आय ॥ ३४ ॥
बोली नृपसों सुनिये देव । जमनामें यह पायो येव ॥
पुत्र लहो मंजूषा मांहि । बांचत शुभ कुल जानो ताहि ।३५।
उग्रसेन पद्मावत रान । तिनको सुत यह गुण की खान ॥
ऐसो जान सुता तब दई । जनक बैरतें मथुरा लई ॥ ३६ ॥
बांध जनकको गोपुर थाप । राज करत मथुराको आप ॥
तब वसुदेव सुमथुरा आन । राखो प्रीत भगत चित ठान ।३७।
देवसेन नृप तामें बसे । धन देवी तिस रानी लसे ॥ ३८ ॥
अब शुभ देश मृगावति जहां। नगर दशार्णव निवसे तहां ॥
नाम देवकी तिनकी सुता । पिकबैनी मृग लोचन युता ॥
सो वसुदेवहिं दीनो भले । कंसराय ने हित सों रले ॥ ३९ ॥
तीन जुगल सुत छह तिन जने। सप्तम कृष्ण भये गुन सने ॥

कंस तनो डर हिरदे व्याप । जनक भात तब मथुरा थाप ।४०।
नंद यशोधा गोकुल माज । सौंप दियो तसु बाढ़न काज ॥
पुन्य योग बल बाढ़ो भूर । मारे कंस सहित चानूर ॥ ४१ ॥
स्वयं प्रभा शुभ रानी जास । सत्य सु भामा पुत्री तास ॥
मानो विधना एकै रची । जा समरूप न धारे सची ॥ ४२ ॥
रूपवती अति देखी सुता । नैमेतिक तब पूछो पिता ।
होनहार यह कामी प्रिया । ऐसी सुन तिन उत्तर दिया ।४३।
तीन खंड पति हरिपद धरे । तासु प्रिया यह है है सिरे ।
सो वसुदेव तनुजहै महां । मथुरा नगर विराजे तहां ॥४४॥
जिन दुरजय अरि मारो कंस । करो विभूषित यादव बंस ॥
ऐसी सुनके पठयो दूत । पत्र दयो बहु भेंट संजूत ॥ ४५ ॥
आय कही इन हरिसों जबै । षेट सुता इन परनी तबै ।
उग्रसेनको मथुरा दये । सब यादव सूरी पुर गये ॥ ४६ ॥
जीवंजसा अब पतिके मरे । गई जनक पै रोवत खरे ।
जरा सिंध नृप कोपो जबै । युद्ध हेत सुत भेजो तबै ॥ ४७ ॥
जबही जादव लड़ने उठे । चक्री के सुत तबही नटे ।
तब जेठो सुत बलको धाम । भेजो सुत अपराजित नाम ।४८।
तीन शतक संग जो धारले । षट चालीस अधिक तिस चले ।
जबही यादव रणको लगे । तबही ए सब डर के भगे ॥४९॥
तब चक्री अति रोषित होय । काल जवन सुत भेजो सोय ।
ताके डरते पुरको छोड़ । भागे यादव पच्छिम ओड़ ॥ ५० ॥
छलतें इक कुल देवी भली । काल पवन तिन टारो बली ।
तौलो यादव सागर तीर । जा पहुंचे सो निरभय धीर ॥५१॥
षष्टम वृत हरि कीनों जबै । नैगम सुर तब आयो तबै ।
माधव प्रतसों बोलो एव । हयकी मूरति है यह देव ॥५२॥
यापर चढ़ तुम सागर जाउ । पाओगे तुम उत्तम ठाउ ।

जबही यह चढ़ हर जल ग्रारो। तबही जल निध पलके लरो।५३।
तहँ सुरपति की आज्ञा पाय। नगर बसाई धनपत आय।
नेमी स्वरकी उत्पति काज। द्वादश जोजन आयत साज।५४।
रतनमई अति उन्नत साल। गोपुर तोरन बंदर बाल।
परिषा उपवन शोभित रिद्ध। भूप भवन है सबके मद्ध॥५५॥
कहुं बापी कहुं सरवर भले। कहुं जिन मंदिर शोभा रले।
द्वार विराजें बहु अभिराम। तातें द्वारवती तिस नाम॥५६॥

दोहा

तहँ निवसे माधव सहित, सब यादव भूपाल।
समुद्रविजय तिनमें सिरे, अंग विषे जों भाल॥५६॥
समुद्र विजय शत्रुंजयी, जिन मत्सर जयवन्त।
स्वारथ अरु परमारथी, शर्मा शायर सन्त॥५७॥
तसु बनिता शिव दायनी, नाम शिवा है तास।
रतकारतकी खान है, सुमत सुगतिकी रास॥५८॥
जासु मधुर सुर सुनतही, कोयल सकुची चित्त।
स्यामुख ह्वै बनमें बसी, अजहु न आई मित्त॥५६॥
याद पद्म जिस देखके, लज्जित भये सुपद्म।
ताही दिनते सकुचकर, जाय बसे जल सद्म॥६०॥
मदन सदन के धरनको, रम्भा सम उर थम्भ।
जिनकी दृढ़ता देखके, दरके रम्भा खम्भ॥६१॥
गहरी नाव सरोवरी, पूरण जल लावण्य।
ऐसी नगरी मनोहरी, विधना रची सरन्य॥६२॥
जाके बच्छस्थल विषय, जुग पर्वत कुलपीन।
काम भूप के हरनको, दुर्गम गढ़ सम कीन॥६३॥
जाके बिस कराहुमी, बदन रहो है सोय।
तौभी अगिन डरपिके, तिष्ठे नहिं थिर होय॥६४॥

स्वर्ण वर्ण जिस कर्ण जू, सत्य बचन के शर्ण ।
स्वर्ण सीय मनु सूर्य है, कंचन वर्णाभर्ण ॥ ६५ ॥

चौपाई

इस विधि दम्पति भोगे भोग । सुखमें मगन धरमके जोग ।
एक समय सो धर्म सुरिन्द्र । अवधहि जानो गर्भ जिनिंद्र ६६।
भेजो धनद अगाऊ गेह । वृष्टि रतन छह मासे देह ।
मणि बरषा जब लागी होन । अधिक बिराजो माता भौन ६७॥
स्वर्ण लछि मनु आवे चली । जिन जननीको देखन रली ।
कै जिन मंदिर देखन काज । आवत उडगण माला साज ६८॥
रतन मई नृप अंगन लखो । धर्म तनो फल सब जन अखो ।
एक समय सो सूती भैन । देखे सुपने पिछली रैन ॥ ६९ ॥
ऐरावन गज देखो भला । घन सम घोर गरजना रलो ।
दूजे वृषभ महाबल बंड । मानों अमल सुधाको पिंड ॥ ७० ॥
शशि सम उछलत केहरि जोय । नखसिख सुन्दर देखो सोय ।
पद्मासन पद्मा अवलोय । न्हौन करत जिस दिग्गज दोय ७१॥
कुसुम मई द्वै माला भली । परगमोद मधुर वृतरली ॥
तारापति द्युति पूरन लहे । उज्जल यश मनु सुतको यहे ॥७२॥
तम हर दिनकर दीपति देह । कुंभ कनकको मानों येह ॥
हेम मई है कुंभ अभंग । मानों ये कुच कुंभ उतङ्ग ॥ ७३ ॥
मानो अपने नैना येह । झक जुग देखे चंचल देह ॥
पदम सहित पदमाकर भनो । जाको नीर पदम रज रलो ।७४।
लोल कलोल सु आकुल नीर । गरजत जल निधि अति गंभीर ॥
मेरु शृंग मनु उन्नत यहै । सिंघासन बहु शोभा लहै ॥ ७५ ॥
शोभा विपुल बिराजे जास । देव बिमान लखो सुखरास ॥
पुत्र प्रसूत सदन सामान । भवन भुजंग महा सुखखान ।७६।
रतन राशि शुभ दीपति रले । मानो सुत गुन राजे भले ॥

धूम बिवर्जित पावक सही । पुत्र प्रताप सु मानों यही ॥७७॥
इह विध सोलह सुपने सार । ता पीछे इक गज आकार ॥
मुखमें प्रवसत देखो सोय । तबही जागी आलस खोय ॥७८॥
भोर भये घन दुंदुभी बजी । जाकी धुनि दशहूं दिशि सजी ॥
सुर तिय गावे मंगल गीत । जिनके सुनत बढ़त अति प्रीत ।७९।
हे माता तम निसको गयो । उदयाचल पै रवि अरु उयो ॥
जो तुम सुव तम अंतर हरें । त्यों रवितें तमबाहर टरें ॥ ८०॥
दिनकर किरन करत उद्योत । ज्यों जग भाषत तुम सुत होत ॥
ऐसे सुनत उठी जिन मात । जानों ठीक भयो परभात ॥८१॥
सेज तजत इम शोभा रले । जैसे हंसी सिकता भले ॥
प्रात तनी विधि साधी सबै । स्नानाभूषण अंबर फबै ॥८२॥
दरपन देखत तन शृँगार । जाय निकट पति प्रनमी नार॥
उचित ठौर नृप आज्ञा पाय।बैठी थिर है ताही थाय ॥ ८३ ॥
कर कुंडलकर नृपसों तबै । स्वपननको फल पूछो सबै ॥
जिह विधि सुपने निसमें लखे। ताही क्रमपति आगे अखे। ८४।
बोले भूपति सुनिये रान । त्रिभुवन पति सुत होसी आन॥
इन सुपननको फल है यही।यामें संशय रंचक नहीं ॥ ८५ ॥
गज दर्शनतें है है पुत्र । वृषतें जगपति धर्म पवित्र ॥
केहरितें अति बीर सु वान। धर्म तीर्थंकर मान प्रमान ॥८६॥
लछमी तें मंदिर अविशेष । शशि ते जन आनंद विशेष॥
रवितें अधिक प्रतापी अखी। ऐसो पुत्र जु है है सुखी । ८७।
सरवरते शुभ लछनवंत । सागरते लहि केवल संत ॥
सिंघ सरीखा है अविकार । सुर बिमान बन्दे अवतार ॥८८॥
फनपति ग्रहते उज्जल भास । ऐसो पुत्र जु है गुनरास ।
पावक धूम रहित फल यही। करम महावन दारक सही ।८९।

ऐसो पुत्र गरभ तुम धरा । ताको फल तुम उदरे वरा ॥
ऐसी सुन स्वपनन फल जान । दान देनकी मनसा ठान ।६०।
कातिक सुदि छट निसके अंत । उतराखाड़ नक्षत्र जसंत ॥
तब आये जिन गरभ निवास । दुखनाहि रंचक सुखकी रास ।६१।
अपने अपने चिन्है जान । आये सब सुर आनंद ठान ॥
गर्भ कल्यानक उत्सव करो । पुनि ग्रह अपनो अपनो वरो ॥६२॥
तब ते सुरपति आज्ञा दई । दिग कुमारि का सेवा ठई ॥
श्री शोभान्ही लज्जा ठनी । धृति धीरज धुति कीरति गुनी ।६३ ।
बुद्धि लक्षमी शोभा भाग । ए गुन कीने करि अनुराग ॥
और सुरगनि नाना भांति । सेव करें तिस सुखकी पांति ।६४।
किनहू मंजनि विधि अनुसरी । कोइक पान खवाती खरी ॥
कोई चीर संभारे भले । कोइक संगनकारी रले ॥ ६५ ॥
कोइक करत महान सुपाक । नानाविध के व्यंजन शाक ॥
कोइक पगसे बाहन करे । कोइक सूगंध आगे धरे ॥ ६६ ॥
सयन सिंघासन कोइक रचे । कोइक हार कुसुमको सचे ॥
नंगी असिले कोइक तहां । तन रच्छा में उद्धित महा ॥ ६७ ॥
कोइक कर जुग जोरें खरी । काहू हाथ बिराजे छरी ॥
कोई देय बुहारी घूम । कोइक चंदन छिड़के भूमि ॥ ६८ ॥
कुंडल मुकट सुमुकुता हार । अरु यह बहु विधि भूषन सार ॥
मानो कल्पवृक्ष को साख । सेवा करत विनयको राख ॥६९॥
कोइक करत विविध पकवान । मोदक खंजक अमृत सान ॥
मंडक पूआ घृतमय कीन । घेवर बावर कर पर लीन ॥१००॥
शुद्ध दुग्ध दधि मिच्छल मिष्ट । तंदुल आदिक अन्न सु हृष्ट ॥
जीरा लवण कपूर मिलाय । देंहि जननिको तक्र बनाय ॥ १ ॥
एला लोंग सुपारी फाल । नाग लता दल अति सुविशाल ॥
सुरगनिका पुनि नाचे खरी । हाव भाव बिर विभ्रमबरी ॥ २ ॥

कोइक नटी करी नररूप। चेष्टा विविध करे ते अनूप ॥
जासों सब जन हांसी लहैं। छिन छिन स्वांग सु छोड़े गहैं। ३।
इह बिधि जिन जननी की सेव। करत सुअंग सु नाना भेव ॥
नवमो मास जु आयो खरे। माता सों तब पर सन करे ॥ ४ ॥

अथ प्रहेलिका लंकार बहिलाप प्रश्न रूप। दोहा

कहा होय गूंथे कुसुम, को तन पै आछन्न।
देह दहे को यह कहो, आदि बर्न करि भिन्न ॥ ५ ॥

अथ उत्तर दोहा।

कुसुम सुगुंथत होय स्रग, गत्व गते तन आछन्न।
देह दहन रुग जानिये, यह उत्तर भिन भिन्न ॥६॥

अथ अन्तरलाप दोहा।

सुखकर्ता जगमें कहा, सुर चर है रणकेम।
कहा नाम अर्जुन तनो, कहो धनंजय प्रेम ॥ ७ ॥

पुनः अन्तरलाप अडिल्ल।

आदिवर्णके त्यागे पंछीको कहो। मध्यवर्णके त्यागे भोजन किम गहो ॥ अन्तवर्ण के त्यागे चरन बखानिये। कहो देव तब उत्तर पावक जानिये ॥ ८ ॥

अथ बहिलपिप्रश्न दोहा।

कौन शब्द निश्चय कथन, को हो लघु तिरजंच।
सिव साधक को जन्म है, को दाहक कहूं संच ॥९॥
भव दुख छेदन कौन है, कौन रमत बिन पाद।
को पोषत जगको कहो, वर्ण प्रथक दे आद ॥१० ॥

जिन, स्वर, घन उत्तर यथा दोहा।

सब दुख छेदक जिन कहो, स्वर भरमें विनपाद।
घन पोषे सब जगतको, यह उत्तर सुख स्वाद ॥११॥

चौपाई

इह बिध गूढ़ अर्थ के धार। प्रश्न किये बहु सुरतिय सार।

तिनके उत्तर दीने मात । करत विशेष गुननकी बात ॥ १२ ॥
बुद्धि सहजही धारत घनी । गर्भ प्रभावै अतिही ठनी ।
गर्भतनी नहिं पीड़ा जास । त्रवली भंग न बरत्यो तास ॥१३॥
अगन ज्वाल जिम उन्नत लसैं । मात उदरमें जिन शिशु बसैं ।
कुच चूचक नहिं कारे भये । जैसे थे ते तैसे ठये ॥ १४ ॥
पीरो वदन न आलस देह । बाढ़ो गर्भ सहजही ऐह ।
इह विधिसे बीते नव मास । जनतभई तब सुत सुखरास ॥१५॥
सावन मास शुकल शुभ पक्ष । षष्ठी तिथि और चित्रारक्ष ।
अवधि सहित जिन जन्मे येम । रवि उगवे दिस पाचीजेम १६॥
पवन चलौ अति मंद सुगंध । लागततन जिस लहत आनंद ।
कंटक रजकर वर्जित मही । दर्पन सम तिन शोभा लही १७॥
अकस्मात सुर आसन चले । इन्द्र मुकुटमणि तबही हले ।
कलप वासि घर घंटा राव । अनहद हर धुनि जो तिष्ठाव १८॥
वर भेरी ध्वन व्यंतर गेह । बाजे संख भवन गृह एह ।
इह विध चिन्ह लखत सबदेव । जानो सत्यजनम जिनऐव१९॥
इन्द्र दई शुभ आज्ञा तबै । निकसे गृहते सुरगन सबै ॥
आये पुर तट लह आनन्द। इन्द्रानी भेजी तब इन्द्र ॥ २० ॥
प्रसवागार विषै सो गई । जिन माता तिहिं देखत भई ॥
परकम तीन अदर्शित होय । मातहु देकर प्रणमी सोय ॥२१॥
जननी सन्मुख ठाड़ी सची । देखत जिनको आनंद मची ।
माया मय शिशु राखो तही । दोऊ कर जिन लीनों सही ।२२।
आय दयो तिन सुरपति हाथ। जिम पूरब दिशिदें दिन नाथ।
नैन सहस करि देखन भयो । तोऊ तिरपति इन्द्र न ठयो ।२३।
अपने अंकहि बालक रलो । ऐरापति चढ़ मंदिर चलो ॥
[illegible]जे कार करत सुरईश । जाकर पहुंचे मन्दिर सीस ॥ २४ ॥
[illegible]डुक बन सिल पांडुक नाम । तहां सिंहासन अति अभिराम।

तापर थापे जिन शशि इन्द्र। अधिक विनयतैं त्रिभुन चंद्र।२५।
कनक कलश क्षीरोदधि नीर। भरकर लीने सुरपति धीर।
एक सहस बसु अधिक प्रमान। जिनपति न्हवन करो गुन खान २६
सहजे जिनतन पावन कहो। जिस परसे जल पावन वहो।
जासों सब सुर पावन ठये। गंधोदक को बंदत भये ॥ २७ ॥
तब इन्द्रानी जिन तन चीन्ह। बसनाभूषण भूषित कीन्ह।
निरखत रूप न तिरपति भई। तातें चकृत नैनी ठई ॥ २८ ॥
भक्तिभाव अति हर्षित होय। जिन थुति सक्र करत इम सोय।
स्वेद रहित तुम तन अविकार। निरमल देह विराजे सार ॥२९॥
धवल रुधिर तुम चीर समान। धारहु आदि चतुर संस्थान ॥
बज्र वृषभ संहनन अनूप। औरन तो सम धारत रूप ॥३०॥
तुम तन सुरभ महा अनुसरे। सहस अधिक शुभ लच्छन धरे।
अति बीरज तुम उपमा तीत। हित मित बैन भनो जुग मीत ।३१।
दश अतिशय तुम तनसंजूत। नमों तोहि शिव काके पूत।
धर्म महारथ के तुम नेम। अरिष्ट नेमि तुम संज्ञा येम ॥३२॥
ऐसे थुतिकर मघवा सार। तांडव नृत्य करो अघहार ॥
पुनि अंकह आरोपो स्वाम। सुरगण सहित चले नृप धाम ॥३३॥
आये नगर करत बहु ख्याल। मात पिताको सौंपो बाल ॥
नट सम नृत्य करो बहु भेव। जिन सेवाको धारो देव ॥३४॥

दोहा।

सब सुर निज निज गृह गये, अधिकहि पुन्य कमाय।
नेमि नाथ दिनदिन बढ़े, सेवत सुर जिस पाय ॥३५॥

पद्धड़ी।

परसो न होय तन वृद्ध जास। अंगुष्ठ सुधारक रासि आस ॥
अस्वाद लेत तिस बढ़हि देह। तिन कांति कीर्ति करुना सुगेह ।३६।
आसन्न भव्यजन कुसुम चंद। आनंद कंद हर्षित नरिंद ॥

जस गावत सुर हरषित अपार । नाना सुभांति कीड़े सुसार ।३७
ऐसे जिनवर देखत रसाल । दृढ़ता सु लीने पुनि पग बिसाल ।
धारो कुमार पद क्रम सु पाय । ताको स्वरूप बरनों न जाय ॥३८॥
ताको शुभ आनन पूर्ण चंद । सु विशाल भाल नय नार बिंद ।
करनो सु कुंडल स्वर्नरत्न । बाहु सु कल्प तरु विदित जत्न ॥३९॥
भाषे सु वक्षस्थल लक्ष्म वास । गंभीर नाभि लावन्यरास ।
कांची सुदाम मनु सुमन पांति । तिरलोक भरन उर खंभ भांति ४०
जंघा सु बिन्न हरि हस्ति सुंड । कूर्म मस्तिक पृष्टि पद पद्म खंड ।
दस लच्छिन धर किन खेन छत्र । जिनको जु नमत जन है पवित्र

दोहा

है जैनी इम नेम तन, बरनत अन्त न होय ।
तातें नित चित सुमरिये, मिथ्या मति थित खोय ॥४२॥

इति श्री मन्महाशीलाभरण भूषित जैनीनामी किताया लाला
बुलाकीदास विरचितायां भारतभाषायां यादव द्वारिकायां
प्रवेश श्रीनेमीश्वरो उत्पत्ति वर्णनवाम द्वादश प्रभावः

अथ श्री पांडव लाक्षागृह प्रवेश वर्णनम्

श्री सुपार्श्वनाथ स्तुति मंगलाचरण सवैया तेईसा

जास सुपास हरें भव फांस, सु सो शिव बास बसे जु सदाई ।
हैं गुनरास सरें सब आस, सु ज्ञान प्रकाश सुरिद्धि बड़ाई ॥
सोई सुपारस सत्य सुधारस सो बहु पूरन मृत्यु नसाई ।
दास बुलाकी लाल परसपद ऐसे समय प्रभु हूजे सहाई ॥१॥

चौपाई ।

एक समय अब यादव भूप । बैठे सकल सभा जु अनूप ॥
नारद ऋषि तहँ आये जबै । कृष्णादिक सब प्रणमें सबै ॥२॥
सत्य सुभामा भवनमें गयो । तहाँ अनादर नारद लयो ॥

रोषत है पुर कुंडन जाय। राज करैं तहँ भीषम राय ॥ ३ ॥
ताको पुत्र रुकम विख्यात। पुत्री रुक्मिणि गुणकी पांत।
ताको लख ऋषि हर्षित ठयो। आय बिश्नुसों भाषत भयो।४।
सेना राख नगर के उरे। पहुंचो बलि हरि दोऊ पुरे ॥
जहँ शिशुपाल सु सेना ठई। देवी मन्दिर रुकमन गई ॥ ५ ॥
हरि सुरुकमनी माधव तबै। शंख शब्दते जानी सबै ॥
रुकमी भ्रात नृपति शिशुपाल। दौरे रनको सुन दरहाल।६।
हस्ती घोड़े लीने संग। बल हरिसों बहु मांडी जंग ॥
पहले सेन जु राखी हरी। ताही छिन सो सब अनुसरी। ७।
दोनों ओर सुभट बल बीर। गरज गरजके मारैं तीर ॥
युद्ध करें बल माधव जोर। धाराहि भुज बलको मद घोर। ७।
तब रुकमनि दिखलाई भ्रात। अपने पतिको सुखको पात ॥
बांधो सो अहि फांसी मार। रथ के नीचे लीने डार ॥ ६ ॥
तब मद्री सुत शिशु नृपपाल। सो अपराध किये दुख माल ॥
माधवने सो मारो एम। मत्तगयंद है केहरि जेम ॥ १० ॥
तब रण बाजे कीन मने। आनन्द बाजे बाजे घने ॥
सैन सहित बल माधव सबै। उर्जयन्त गिरि आये तबै ॥ ११ ॥
कृष्ण रुकमनी परनी तहीं। बहुरि द्वारका आये सही ॥
एक समय दुर्योधन बीर। दूत पठायो हरिके तीर ॥ १२ ॥
गयो सुपुरतें द्वारापुरी। नारायन सों बिनती करी ॥
प्रथम पुत्र जो तुम यह होय। मो गृह पुत्री जनमें जोय॥ १३ ॥
तो दोऊ संग होय बिवाह। कीजे ठीक अधिक उत्साह ॥
ऐसी सुनकर धारो प्रेम। बहुत भले हर भाषो एम ॥ १४ ॥
मानों दूत बिदा कर दयो। आनंद पाय सु गजपुर गयो ॥
मदन रुकमनी ता अनुसरो पूरब बैरी जनमत हरो ॥ १५ ॥

पायो खगपति पालो सही। षोड़ष वर्ष बसो तहँ सही।
षोड़ष लाभ महा सुख पाय। नारद संग मिलो यह आय॥१६॥
सत भामा सुत भानु समान। उपजो यों ज्यों प्राची भान॥
यादव नृप इम निवसे तहीं। कौरव कथन सुनों अब सही॥१७॥

कौरव-कथन दोहा।

एक समय बैठे सभा, पांडव कौरव राय।
अर्द्ध अर्द्ध नृप सम्पदा, सुख भुगते अधिकाय॥१८॥
पटु पंडित पांडव परम, अर्द्ध राज को पाल।
संतोषी सम यज्ञ शुभ, सुखहि वितावें काल॥१९॥
कौरव चाहत काकको, सह न सके पर रिद्धि।
ज्यों रिसाय रविपै अधिक, कौसिक सबे असिद्ध॥२०॥
कलह करन उद्यत भये, दुर्योधादिक दुष्ट।
प्रकट बचन करियों कही, अतिही ह्वै चित रुष्ट॥२१॥
हम भ्राता सत शंख्य हैं, ए भ्राता हैं पंच।
अर्द्ध अर्द्ध कैसे लहैं, यह अन्याय प्रपंच॥२२॥
ताते कीजे राज के, भाग एक सौ पांच।
भोगें हम सब बांटके, यही न्याय है सांच॥२३॥
इह विधि तोड़ सलाहको, दुर्योधादिक सर्व।
युद्धहेत सन्नध हुवे धाये धर धर गर्व॥२४॥
बचन कौरवन के सुनत, पांडव अति बलवंड।
नैन अरुन भृकुटी चढ़ी, बाढ़ो क्रोध प्रचंड॥२५॥
भीमादिक चारों चतुर, बोले वचन कठोर।
चरन धरत इत उत तहां, हाली अचला जोर॥२६॥
ए कौरव अति काक सम, संकित सदा बराक।
सब मिलके हम शक्तिको, करहु बराबर ताक॥२७॥
भीमसैन बोलो तबै, सुनहु युधिष्ठिर भ्रात।

इनहिं अगनि ज्यों ईंधने, छार करों छिन जात ॥२८॥
सौऊं एके बार ले, बोरूं सागर बीच ।
एक छिनक में छय करूं, छीन चित्त ए नीच ॥२९॥
महा भयानक भीमको, चंड अग्नि आकार ।
देख युधिष्ठिर थामियो, साम्य उक्त जल डार ॥३०॥
अर्जुन नृप अर्जुन छवि, जरत क्रोधकी आग ।
कौरव बच दारुण पवन, लगत उसी उर जाग ३१॥
एक बानते सबनको, डारूं छिनमें चीर ।
वृषद खेडते काक सो ज्यों नासे तज धीर ॥ ३२ ॥
जौलों हम उर क्रोध रवि, उदय होतहै नाहिं ।
तौलों ए मदमत्त तुम, व्यापिरहे भू मांहि ॥ ३३ ॥
यो कहि करके दंड गहि, चंड कांड संजौज ।
अर्जुन अरिगन हतनको, लगो समरके चोज ॥३४॥
ऐसे याहि बिलोक के, सुथिर युधिष्ठिर बुद्धि ।
बरजो बहु बहु बचन कहि, मेटत सन्त विरुद्ध ॥३५॥
बोलो क्रोधहि धारके, नकुल महाकुल कूल ।
कौरव कुल तरु मूलते, अबहिं करूं निरमूल ॥३६॥
कै मो आयुध अगन कण, कौरव सकल पतंग ।
भस्महोय ए सहजही, जतन बिना अरि जंग ॥३७॥
कहत सूर सहदेव ये, कै कौरव भू केश ।
छेदहु इनहुं कुठारने, रहे कहां है रेश ॥ ३८ ॥
खंड खंड इनको करूं पुनि भुज दंड उठाय ।
तृप्तकरूं दिग्पातिनको, दश दिशि देहुं बगाय ॥३९॥
पिशुन शून्य कौरव अखिल, कहत अनीति कुबैन ।
इनकी मृत्यु किये बिना, मोहिं कहांते चैन ॥ ४० ॥
ये दर्पी अति सर्प सम, छल फण विष खल भाव ।

वैनतेय सम में बली, छिनमें करूं अभाव ॥ ४१ ॥
यहिविधि चारों भ्रात ये, जलते अगनि समान ।
राय युधिष्ठिर मेघ सम, शीतल कीनो जान ॥४२॥
बचन युधिष्ठिरके सुनत. भये पूर्वन सोय ।
तजि अशुद्धमति शुद्धते, करिहि सुथिर थिर होय ४३।
भोग भोगवे भू विषै, भीतैं विवर्जित नित्त ।
काल बितावे सुख सहित, करें न चिंता चित्त ॥४४॥

चौपाई

अब दुर्योधन भट दुर्बुद्ध । शुद्ध विवर्जित दुष्ट अशुद्ध ।
पांचोंके तिन मारन हेत । मत धारी वृष रहित अचेत ॥४५॥
और समय तिन गजपुर बीच । कीना लाखसदन अति नीच ।
कहो न काहू छलतें रचो । मानो जमही जम गृह रचो ॥४६॥
घंटा घाटेक विकट बर कूट । मानहुं टंक उकेरा तूट ।
बने झरोखे जालीदार । मानो जाल ज्वलन आकार ॥४७॥
सूत्तम सुन्दर बने गवाक्ष । पांडव अच्छहरन कटाक्ष ।
कहूक तोरन कीने एन । मानो रण देखन के नैन ॥ ४८ ॥
राजेस्तम्भ रचे मय स्वर्ण । मानो स्तंभन विद्यावर्ण ।
चित्र विचित्र कहूं चित्राम । मानों शत्रु सचे अभिराम ॥४६॥
सुन्दर शाला प्रतोली तुंग । परिषा पूरण जलके संग ।
जन्तु निर्मित तिन कीनो गेह । मानो दुर्योधन की देह ५०॥
कौरव अधिक विनय आवास । आये सकल पितामह पास ।
सीस नवाय कही यह बात । तुम गंगासुत जग विख्यात ५१॥
हम इक सदन छदम बनाय । कीनो पांडव हेत सुभाय ।
जाके श्रृंग सुउन्नत देह । जीतन चले गगन सुर गेह ॥५२॥
जाके स्तम्भ भुजा जुगवनी । संपद हरत सुपरिग्रह तनी ।
भाल अटारी शोभित एम । रिद्धि सहित कुल कौरव जैम ५३

जाको अंग अधिक उतंग। लागो जाय सुनभ के संग।
कबहुक ताहि निरखि शशिआई। अपटारन छिन वैकतआई ५४
पट मुकताका पवने हले। थितिको सुरहि अकोरें भले।
कलश शिखा विशिखा आकार। उडगन सदनहिं छेदेंसार ५५
हम यह मंदिर कीनो साज। पांचों पांडव निवसन काज।
तातें यह तुम इनहुको देहु। सुखको कारन कारज एहु ॥५६॥
राय युधिष्ठिर थिरता पाय। निशदिन तिष्ठो यामें आय।
ए अनेक गृह गजो राज। हम अपने गृह सुखसों साज ५७॥
भिन्नरहें बहु प्रीतें सजे। ज्यों सागर मरयाद न तजे।
बोलो गंगा सुत तब तही। मो मन आई जो तुम कही॥
एक ठौरको थित के करे। बैर बढ़े बहु हित को हरे ॥५८॥
तातें बैर निवारन काज। न्यारी न्यारी थिति बर साज।५९।
जा कुटम्ब में कल कल रहे। तहां सुख थिति रंचन रहे॥
बैर बढ़े बहु गृहमें यथा। भरत बाहु बलि भ्राता यथा ॥६०॥
भिन्न भिन्न थित है सुखदाय। ज्यों लोचन अबरोधी भाय॥
यह निहचे गंगा सुत ठान। पांडव पंच बुलाए जान ॥ ६१ ॥
नृप सार्दूल सु गंगा पूत। सुर गुरु सममतिकर संजूत॥
भो पांडव तुम अति परचंड। तुमको दंड सु प्रबल अखंड। ६२।
साता हेत कहूं शुभ बात। सो तुम सुनहु सुगुनकी पांत॥
नूतन निर्मत उत्तम धाम। तामें बसहु करो आराम ॥ ६३ ॥
पावोगे सुख न्यारे रहे। बैर निवारन कारज यहे॥
तातें निर्भय है तुम रहो। राज करो सब सुख को लहो। ६४।
ऐसो सुनके मानी संच। पांडव पंच रहित परपंच॥
शुभ दिन भलो मुहूरत जान। ता मंदिरको कर प्रस्थान ॥ ६५ ॥
आनंद भेरि बजाई भले। झंझा बंस पटह धुन रले॥
नृत्य करत नट पुलकित होय। बीन मृदङ्गी ताल संजोय। ६६।

गायक गावत मंगल गीत। जाके सुनत बढ़े चित प्रीत॥
ऐसी बिधि सों मङ्गलवंत। निवसे गृह में पांडव संत॥ ६७॥
बर कुलीन नर उत्तम चेत। दान निरंतर तिनको देत॥
पूज्य पुरुष पद पूजा करी। धर्म बुद्धि बहु हिरदे धरी॥ ६८॥
भीतर हित चित थितको करे। होनहार सो रंच न डरे॥
महा दुष्ट कौरव पाखंड। जानत नांही पांडव चंड॥ ६६॥
बंस अगन जिम दुखकी रास। जानी जाय न काहू पास॥
कैसे हू कर जानी जान। चाचा बिदुर महा विद्वान॥ ७०॥
कौरव कपट बिचारो येह। जन्तू निर्मल कीनो गेह॥
राय युधिष्ठिर को जु बुलाय। बोलो बिदुर बचन इह भाय॥ ७१॥
अहो बच्छ सज्जन गुण रास। नहि कीजे दुर्जन बिश्वास॥
इंद सूक अहि सम हैं दुष्ट। परको मारत छल कर रुष्ट॥ ७२॥
अंतर कटु खल मुखसों मिष्ट। प्रीत दिखायसो करहिं अनिष्ट॥
ज्यों सेवाल लिपत पाखान। पग धारकको पातक जान। ७३।
मात तात सुत भ्राता भाम। नृप बिश्वास करें नहिं ताम॥
और अपरजन खल बिश्वास। किह बिधि करें नृपति गुण तास॥
याही ते कौरव यह दुष्ट। मत बिश्वास करो तुम सुष्ट॥
तुमको राख सदनके मध्य। मारहिंगे तुमको दुर बुद्ध। ७५।
हम नहिं जानें इनको छद्म। किह बिध कीनों जंतुको सद्म॥
ताते तुम थिति कीजो मती या गृहमें दुख हो है अती। ७६।
याते बन क्रीड़ा मिस पाय। नित प्रति निवसो हम तट आय॥
यह बिशाल उपवन सुख खेत। बसिये बिघन निवारन हेत। ७७।
शत्रु सदन में निद्रा बुरी। बुद्धिवन्त नहिं सोवें घरी॥
मूंदे नैन करन नहिं सुने। घुर घुर कंठ अचल तन ठने॥ ७८॥
नींद विषय नर मृतक समान। सावधान तुम रहियो जान॥
बनमें बैठ बिदुर इह भांति। सीख दई सुखको इन पांत॥ ७६॥

पुनि उठके गृह भीतर गये । चतुर चित्त चिन्तातुर भये ॥
को उपाय जु कीजे वहैं । जासों पांडव सुख को लहैं ॥ ८० ॥
यों चितवत चित बिदुर सुराय । पाई बिध इक सुख निधि दाय ॥
भूतक भूम तें खोद सुंग । जतु गृह भीतर देहु अभंग । ८१ ।
कष्ट बिषै ए निकसे सही । ताही ते अब कीजे यही ॥
वा सुरंगको खोदन हार । निकट बुलाय कही यह सार ॥ ८२ ॥
गूढ़ भये तुम खोदो भले । देहु सुरंग सुभगता रले ॥
ऐसी सुनत खनो पाताल । कीनी सुंग महा सुविशाल । ८३ ।
जामें सुखसों आवें जांहि । गूढ़ सुरंग रची भू मांहि ॥
निसि में कौरव लागै आग । तौ भी पांडव निकसै जाग । ८४ ।
पंप सुरंग रची यों इसो । स्याद वाद शिवपुर को जिसो ॥
सब सुरंग जब पूरन सजी । बिदुर चित्त चिंता तब भजी । ८५ ।

दोहा

बिदुर भूप पांडवन को, ऐसी सुरंग बनाय ।
दिखलाई न बताइया, राखी सहज छिपाय ॥ ८६ ॥
सुनी न देखी पांडवन, ऐसी गुप्त सुरंग ।
तौ भी सुख दायक भई, धर्म सहाई संग ॥ ८७ ॥
अब पांडव जतु सदन में, निबसत बिगत बिषाद ।
काल बितावत प्रीत जुत, पांचों अम्बाआद ॥ ८८ ॥

चौपाई

अब धृतराष्ट तनुज अति दुष्ट । दुष्ट अनिष्ट निकृष्टी रुष्ट ॥
लाख सदनके दाहन काज । चिन्ता कीनी चितसों साज । ८९ ।
जतु गृहमें ए पांडव पांच । अगनि जराये जलि हैं सांच ॥
मंत्री संग कियो तिन मंत्र । पांडव सुतनको मारन तंत्र । ९० ।
निसि के समय बुलायो हाल । दिवाकीर्त नाम कुतवाल ॥
दिवाकीर्त शुभ कीरत वन्त । करुनावन्त सुधर्मी सन्त ॥ ९१ ॥

तिह भांति भाषीकर अनुराग । पांडव गृहको दीजे आग ॥
मंदर जारे सुख है मोह । मन वांञ्छित ओहदे दूं तोहि ॥९२॥
ग्राम धाम धन चाहो जेम। देहु दहन मति विलम्बो येम ॥
दुर्योधन जब ऐसी कही । दिवा कीर्ति तब बोलो सही ॥९३॥
हे राजा तुम कही अयुक्त । बुद्ध जनन करि यह नाहि उक्त ॥
जीवन हेत गहे धन धान। सो जीवन तिन बूंद समान । ९४।
मेघ बूंद ज्यों देखत नसे । ऐसें छिन छय भव सुख लसे ॥
इष्ट पुरी स्वय तिय धन हेत। हतितें अघ अघ दुर्गति देत ।९५।
तिस असार धनसों क्या काम। जासों मर लहिये दुख धाम ॥
तातें नाथ प्रशंसित होय । औरहि कहिये कारज कोय ॥९६॥
ऐसी सुन दुर्योधन क्रुध । पाप करममें उञ्छित बुद्ध ॥
बोलो रे मूरख दासेर। कौन बात तें भाषी हेर ॥ ९७ ॥
सेवक सोई सेवा करे । बुरी भली को भेदन धरे ॥
ऐसी उक्ति सफल तुम करो । जो कुछ कहिये सो अनुसरो ।९८।

दोहा

भृत्य टहल दुख बांधवा, मित्र आपदा मध्य ॥
विभव गये तो भारया, ए लख लीजे शुद्ध ॥ ९९ ॥
ताते मो वच मानिये, ज्यों है संपय भूर ।
और भांति दुख पाइये, दोऊ बात हजूर ॥ २०० ॥

चौपाई

ऐसी सुन तलरच्छ सुपच्छ । शुभ लच्छण तन करुना दच्छ ॥
निज जीवनकी आशा त्याग। बोलो मृत्यु विषै कर राग ॥ १ ॥
दीजो बाहर लीजो राज । क्रोध करो वा परसन काज ॥
देहु लच्छ वा लीजे सबै । मानहु वा सिर हनिये अबै ॥ २ ॥
जो भावे सो कीजे सही । पांडव गृह में दाहूं नहीं ॥
ऐसी कहिके धारी मौन । सौतल रच्छ दया को भौन ॥ ३ ॥

तब दुर्योधन क्रोधित होय । बहुत डाटके बांधो सोय ॥
नख शिख पकड़ जकड़ जंजीर । कारागारहि डारो वीर ॥ ४ ॥
तबहि बुलायो द्विजलो मिष्ट । राज पिरोहित अति पापिष्ट ॥
बसन स्वर्ण भूषन दे सही । बहुत मानकर नृप ने कही ॥५॥
तुम भूदेव पुरोहित राज । तुमते सधे सकल भू काज ॥
इष्ट काज इक मोइह ठाई । करो सु तुमही ताहि छिपाई । ६ ।
जतु करि निर्मित पांडव गेह । अगन लगाय जरा बहु एह ॥
सुख साधन मो कारज येह । करके तुम मन वांछित लेह । ७ ।
यों कहिके धन संचय दियो । द्विजको अति संतोषित कियो ॥
जुत गृह दाहनके आदेश । दीनो द्विज को तहां नरेश ॥८॥
लोभ योग द्विज मानत भयो । गृह दाहनको उद्यत ठयो ॥
पाप महा इक लोभी जान । दुख दायक अपयशकी खान । ९ ।
विषम काजको लोभी ठने । ऊंच नीचको कछु अन गिने ॥
मित्र पुत्र गुरु भ्राता तात । भूपति भृत्य सुनर विख्यात ॥१०॥
इक छिनमें धन लोभी जोय । इनको मारे निर्दय होय ॥
पुर नासी नृप पुंगव गुनीं । जिन हो यह विध कानो सुनी ॥११॥
गृह धन हय गय तिनही तजे । दीक्षा लेने वनको भजे ॥
लोभी द्विज अतिही पापिष्ट । पांडव धाम निकट है धृष्ट ॥१२॥
आग दई तिन चारों कोन । बाड़व जारो पांडव भोन ॥
दुरजन दुरित करत नहिं डरें । प्रान तजें पुनि दुर्गति परें ॥१३॥

दोहा

दुष्ट चित्त दुर्जन दहन, क्या न अनर्थ कराय ।
क्या न भखे वायस अधम, वैरी क्या न कराय ॥ १४ ॥
दुष्ट चित्त अति क्लिष्ट द्विज, अगन सदन को लाय ।
ठाढ़ो रहो न एक छिन, तबही गयो पलाय ॥ १५ ॥

चौपाई

लागी जलन सदनके भाल । ज्वाला जाल महा बिकराल ॥
गगन गई इक छिनमें सोय। दाहकको नहिं करुना होय । १६ ।
लाखा मंदिर अति बिस्तार । दीपत भयो दहन आकार ॥
पांचो पांडव सोवत तहीं । निद्रावन्त अचल तन सही । १७।
शत्रु शत्रु को मारें जेम । आग लाख को जारे एम ॥
अगनि झाल जब लागी आय। क्यों हू क्यों हू जागे राय ।।१८॥
भीते जलती देखी जबै । निद्रा रहित उठे नृप सबै ॥
मानों अल्प सुता है एह । ऐसी अगन जरावत देह ॥ १८ ॥
इधर उधर अवलोकित राहु । ब्याप रहो दस दिसहू दाहु ॥
एकहु पैंड़ धरन असमर्थ । भयो अगनि तें सब बल व्यर्थ ।२०।
तड़ तड़ायकर भीतें जलें । उछरि उछरि कर ईंटे परें ॥
जलती लाख लगे तन आय । मानो अगनि करे रनभाय। २१।
लहो सु पांडव अधिक अचंभ। दुर्योधनको जानों दंभ ॥
धरम पुत्र धरमातम राज। सुमरे जिन चित निकसन काज ।२२।
पंच पुरुष परमेष्ठी इष्ट । धारे उरहि युधिष्ठिर सिष्ट ॥
थकित चित्त थिर बैठो तही । कर्म तनो फल चितवत सही ।२३।
कर्म उदय नहिं टारो जाय । देय शुभाशुभ फलको आय ॥
सज्जनकर भी दुर्जन एह । तिनको भी यह सुख दुख देय ।२४।
ऐसे कर्म करें क्यों जन्तु । जासों सुख दुख भुगते अन्तु ।
कर्मकाल तज जगमें साधु । तिनकोभी बहु लागत व्याध २५।

दोहा

कर्म जोग सुत सगरके, भसमत भये समस्त ।
कर्म शुभाशुभ सूर शशी, होत उदय नित अस्त २६॥
अर्क कीर्ति विख्यात छवि, सो बांध्यो जय भूप ।
नृप अनेक याकर्म कर, परे असाता कूप ॥ २७ ॥

त्योंही हम या अगनि में, जरत कर्म बस होय।
यातें सरन जिनेश की, सुमिरो त्रिविध संजोय २७॥
इह विधि चिन्तत चित्त थिर, ज्येष्ठ युधिष्ठिर धीर।
विकलप करे न कष्टमें, जो नर समकर गीर ॥२८॥

चौपाई

तौलों कुन्ता बोधित ठई। सदन जरत लखि रोवत भई।
दुर्गम दुखको देखत नित्त। कर्म तनों फल चिंते चित्त ॥३०॥
दुष्ट करम जो पूरव किये, तिन प्रभावतें ए फल लिये।
पाप जोग नर दुखको सहे। ताहीको यह फिरफिर गहे ॥३१॥
मूरख जनको धिक है ज्ञान। बन मरीच कामृग सामान।
कहा करूं मैं अब कित जाऊं। लागे अगनि कहाँहै ठाऊं ३२॥
रोवत कुन्ती लुंचित केश। बर्जी निर्भय भीम नरेश।
निज आसन ते उठके भीम। इत उत भरमत गुनकी सीम ३३॥
अग्नि देख भय हिरदे धरे। भृष्ट भानु मनु गृहमें फिरे।
पृथ्वी में जो छिपी सुरंग। पुन्यजोग सों लही अभंग ॥३४॥
मान्यो विदुर बताई आप। देखत सुरंग मिटो आताप।
ताही मारग निकसे तबै। माता साथहि भ्राता सबै ॥ ३५ ॥
हिरदे सुमिरत जिनवर नाम। निकस गये ते तजके धाम।
भवतज भव्य मुकति जिम जाय। ऐसे निकसे पांडव राय ३६

सोरठा

पांडव पुन्य उतंग, देखो सज्जन पुन्य फल।
जो अज्ञात सुरंग, पुन्य बताई तत छिना ॥ ३७ ॥
अगिनकुंड है बारि, होय जलधि थल पुन्यतें।
शत्रु मित्रता धारि, नाग लता इम आचरे ॥ ३८ ॥

चौपाई

पांडव पंच परम परवीन। जाय मसान विषै थिति कीन।

कुन्ती सहित सुविहवल सवै । भीम उपाय करो इक तवै ३९॥
पंच मृतक लीने सुफुलिंग । एक मृतक नारीको संग ।
छःहों मृतकले तवही राय । लाखा गृहमें डारे जाय ॥ ४० ॥
तवही फिरके आयो भीम । है अलछि शुभ लच्छिन सीम ।
पांचो पांडव जननी साथ । इकठे होय चले नर नाथ ॥४१॥
प्रात समय सब कौरव भये, पांडु सुतन को देखन गये ।
मुखसों दुखकी बातें कहें । अतिही आनंद हिरदे लहें ॥४२॥
नगर लोग सुन ताही बार । दुःखित होय करें न अहार ।
सज्जन रहित नगर अब भयो । किन पापीने दुःख यह ठयो ४३॥
पांडव पंडित पटु परचण्ड । परम प्राक्रम भुवन अखण्ड ।
इहविधि ऐसे नर क्यों मरे । कौन करम के बस ये परे ॥४४॥
याविधिकी विधिको धिक्कार । ऐसे नर रच कीने छार ।
को इक चिन्ते ऐसे चित्त । मो हिरदे इक संशय मित्त ॥४५॥
पंडित रचे विधाता जौन । इनको जार सकै नर कौन ।
दग्ध भये के अथवा नाहिं । यह संशय है मोमन माहिं ४६॥
नर महन्त ऐसे क्यों मरें । जीव न अल्प न योनी धरें ।
यद्यपि जीवन थोरो गहें । तदपि मृत्यु न ऐसे लहें ॥ ४७ ॥
आज नगर यह उदवस लसे । हम कैसे या पुरमें बसे ।
नृप मेघेश्वर आजे मरो । शान्ति चक्रधर आजे टरो ॥ ४८ ॥
नरपति शांतन आजे गयो । आजे व्यास मरनको ठयो ।
पांडुराय मृतु आजे लही । इह विधि रोवें पुरजन सही ॥४९॥
पांडव मृतु सुनी जब एव । मूर्छा खाय गिरो गंगेव ।
मूर्छाते मन मोहित एह । मृत्यु सखी मनु लिपटी देह ॥५०॥
तब शीतल विधि तनु अनुसरी । सहज सहजकरि मुर्छा टरी ।
शोक तपत उर रुदन कराहि । अंसुवन धारा चितत ताहि ५१॥
दग्ध भये क्यों सुत तुम धीर । सकल वस्तुको ज्ञाता बीर ।

तुमसे नरको पावक जरे। यह अयुक्त विधना किम करे ५२॥
जो तुम मृत्यु अवेथी सत्य। होती रतहि जुगति अरिहत्य।
धरम जोग वा दीक्षा पाय। कै मरिये गुरु शिक्षा भाय ५३॥
कै निदान तज सज सन्यास। मृत्यु जगत है सुखकी रास।
जुगति नहीं यासों विपरीत। मरकर होत कुगतिको मीत ५४
ऐ बैरी तुम कौरव निष्ट। इनहो जारे है लौं मिष्ट।
पाप रूप ये पापी दुष्ट। कुमतिहीन प्रति सुमतिसों रुष्ट ५५॥
पांडव मृत्यु सुनत गुरु द्रोण। मूर्छा खाई गिरो मनु भौन।
है उन मूर्छित रोवन लगो। मुख तरवंते दिगन्य पगो ॥५६॥
रे कौरव तुम निंदित आज। अघकारी यह कीनो काज।
सिष्ट अतिग फुनि अतिहि अनिष्ट। कुलकी हत्या दुर्गति इष्ट ५७॥
इह विधि कौरव डाटे जबै। भये अधो मुख निर्दय तबै॥
द्रोण प्रते तब बोले एम। वचन अयुक्त कहो तुम केम ॥५८॥
ऐसो कारज हम क्यों करें। खल मानसनें यों उच्चारें॥
आये जन नव जहँ जतु गेह। अगन बुझाई जलसों एह ॥५९॥
कोइक बोले भयसों ग्रस्त। देखहु मृतक भयो जे अस्त॥
निरख मृतक अति धारो शोक। कोइक बोले ऐसे लोक ॥६०॥
यह थिर बुद्धि युधिष्ठिर देह। भीम महाबल तनहै एह ॥
यह अर्जुन उज्जल जल रास। नकुल सुकुल यह निर्मल आस।६१।
जाकी देव करें थे सेव। सो सहदेव मृतक है एव ॥
यह जननी कुन्तीहै सती। दग्ध देह करि पावक हती ॥६२॥
अर्द्ध दग्ध फल पिंडो पमा। देखे मृतक भये तिन समा॥
फिर फिर उलट उलटके लखें। निश्चय पांडव जारे अखें। ६३।
नगर लोक सब तादिन माहि। अन्न पान कछु कीनों नांहि।
एहके कर्म गली बाजार। त्यागे सकल बनिज व्यापार॥६४॥
हाहाकार करें मुख तिया। शोक महा पुरजन इम किया॥

गंधारी सन्तोषित होय। सकल राजके पाये सोय ॥६५॥
पुत्र वधावा छल तिन करो। तादिन उत्सव गृह अनुसरो॥
बात यही विस्तीरति अती। गई जलधपुर द्वारावती ॥६६॥
समुद्र विजै नृप राजे तहीं। सकल गुणनको सागर सही॥
पांडव मारे कौरव छले। ऐसी सुनके क्रोधे रले ॥६७॥
उठह अगनि जब बाडव तनी। छुभित जलधि है वीची घनी।
तैसे समुद्र विजै नृप चण्ड। छोभित भयो महाबल बण्ड ।६८।
और हलायुध भट पर सिद्ध। विवधा युध की धारे रिद्ध॥
चलो युद्धको सज्जित हली। करे बिलम्ब न रणको बली॥६९॥
दामोदर जिनि दारे अरी। डारो कर सन्नास है हरी।
शोकानल सोतपत शरीर। लोचन वरसत असुवन नीर॥७०॥
रण सूचक दुन्दुभि बजवाय। सकल चढ़े यादव पतिराय।
दुन्दुभि नारद सुनत मंत्रीश। आये सकल जहाज बुईश॥७१॥
समुद्र विजय आदिक दस भ्रात। और हरीहर गुनकी पांत।
नमस्कारकर ऐसी कही। इक बिनती सुनिये प्रभु सही ॥७२॥
इस आरम्भ किस कारण करा। उद्यम जोग करत बुध नरा।
जे अयोग्य उद्यम को करें। ते गर्वी नृप छय अनुसरें॥७३॥
ऐसी सुनकर हरि उच्चरें। वृष समता सम उपमा धरें।
गहि आनो कौरव इह ठाय। बड़वा नल में डारो आय॥७४॥
को इनको सत खंड करेउ। दिग पालनको बलकर देउ।
पांडु सुतनको कौरव जार। कहां रहेंगे करिहों छार ॥७५॥
मैं मृगारि कौरव गज महां। मेरे छोभ बसेंगे कहां।
दुर्योधन आदिक जे रंक। तौलों गरजें है निरसंक ॥७६॥
जैलों मोहि लखत ए नांहि। तौलोंही मद इनके मांहि।
जैसे दादुर अति टरांत। देखतही अहि को मर जात ॥७७॥
यों सुनके बुध सत्तम कहे। जगत रीति सब हिरदे वहे॥

है राजा अरिको छल पाय। हतिये कष्ट बिनाही ठाय ॥७८॥
छिद्र पाय ज्यों जलको हरे। सहजे रीती घटको भरे।
छिद्र बिना अरि सिद्ध न होय। कैसीही मति धारो कोय ॥७९॥
छिद्र बिना ज्यों मोती राय। हार विषै नांहैं पोयो जाय।
आज सबल हैं कौरव राज। सुत सेना हय गयके साज ॥८०॥
अपर राय बल बर्जित जोय। तिनको गनइन मानी सोय।
जरासिंधको आश्रय पाय। मद धारें अति कौरव राय ॥८१॥
जरासिंध के आश्रय जोग। मानो इनहि महा नृप लोग।
मान नीक कब ज्यों सिर लगे। ये कौरव महा मदसों पगे ॥८२॥
यातें इनपे चढ़िये नहीं। काल बितीत करो कछु सही।
जरासिंध सों जब तुम जाय। युद्ध करोगो बल को पाय ॥८३॥
ताही रणमें इनको मार। लीजो बैर महा मति धार।
इनसों युद्ध करो अब जोय। जरासिंध सुन क्रोधित होय ॥८४॥
सोवत सिंह जगावे कौन। तातें बसिये अपने भौन।
काल पाय तुम इनको हतो। अब थिर होय सुखनमें रतो ॥८५॥

दोहा।

इह बिधि बरजे पंडितन, यादव राय प्रवीन।
बैरी बल उर जान के, बैठि रहे सुख लीन ॥८६॥

चौपाई।

अब ये पांडव अति परचंड। मनु गज सुंड धरें भुजदंड।
जस दिस चक्र पराक्रम भ्रमें। चक्रवर्ति सम विक्रम पमें ॥८७॥
इन्द्र दिशाको पांचो चले। भेष पलटकर शोभा रले।
जो पावक है भस्माछन्न। पांडव निकसे त्यों परछन्न। ८८।
मंद मंद गति कुन्ती चले। त्योंही गमन सु पांचो रले ॥
कुन्ती खेदहि धारे जबै। खेद सहे ए सगरे तबै। ८९।
जबही कुन्ती ठाड़ी होय। खड़े रहें ये पांचों सोय ॥

जबही कुन्ती बैठे तही। पांचो पांडव बैठें सही। ९०।
हलुवे हलुवे ऐसी भांति। जननी संग चले सुख पांति।
चलते पहुंचे गंगा तीर। बहे प्रभाव गहर गम्भीर ॥ ९१ ॥
जाके तट तरु उन्नत खरे। फल फूलों करि शोभा भरे॥
भोर नाभ जल बीची बाहु। थूल उपलव छोजा आहु ॥९२॥
है कुल मानो दोऊ कूल। लसे निसंचि निकट गिरि थूल॥
नम्र चाल बच्छस्थल मध्य। नैन सरोज सदा जड़ बुद्धि॥ ९३ ॥
हाव भाव विभ्रम जलमीन। हंस गमन पंछी धुनि लीन॥
ऐसो विधि मनु सुंदर तीय। राजे भासुर देवन दीय॥ ९४ ॥
तरिवे को अति विषमा जान। है असमर्थ ठये सुख खान॥
तबहि मलाह बुलायो सही। पांडव तासों ऐसे कही। ९४।
हे धींवर इक तरनी सार। लाओ जासों पहुंचे पार॥
ऐसी सुनके धीमर तरी। छिद्र रहित तहँ आनी खरी ॥९६॥
तापर चढ़ ये जलमें चले। कुंती कर गहि सुखसों रले॥
नाव चली तहँ गंगा मांहि। अटकी द्रहमें निकसे नांहि।९७।
विधि अनेक तहँ धीमर करी। तौ भी चली न नौका अरी॥
जल तरवे को अक्षम भई। मानों विधना कीलत ठई॥ ९८ ॥
बल्लीयों कर खेवे ताहि। तौ भी निश्चल सरकत नांहि॥
ज्यों कुलटा तिय शिक्षा दिये। मानें एक न हटको लिये। ९९।
तब धींवर सों बोलो राव। क्यों नहिं चलत चलाये नाव॥
ज्यों शुभ शास्त्र विषै दुर्बुद्ध। त्यों यह नाव भई अवरुद्ध।१००।
नाव थकी यह कारण केम। तासों पांडव पूछो एम॥
ऐसी सुनके धींवर कही। हे स्वामी या जलमें वही ॥ १ ॥
जल निवासिनी देवी वसे। नाम तुंडका परगट लसे॥
याही द्रहमें याको गेह। सो तुम पे बलि मांगत एह ॥ २ ॥
तातें दोष हमारो नहीं। नौका तुंडन थामी सही॥

जो जिह ठौरन जोगी होय । पायन जोगे जावत सोय ॥३॥
अपनो बलिले छोड़ तही । इह विधि न्याय कहो है सही ॥
याही ते बलि दीजे सार । बिलम्बन कीजे चलिये पार ॥ ४ ॥
ऐसी सुनके बोले राय । नहिं पकवान कछू इह ठाय ॥
तातें सरित उपरके पार । देंगे वर बहु रचिके सार ॥ ५ ॥
पय मिश्री करि मिश्रित जोय । अमृत मय बहु घीय समोय ॥
मिष्ट वस्तु देके अधिकाय । मानहिंगे हम सरि तट जाय । ६ ।
भो धींवर या जलके मांहि । वस्तु कछू हम पावत नांहि ॥
जो पाएतो दीजे सही । न्याय प्रगट है जगमें यही ॥ ७ ॥
ऐसी सुनकर धींवर कही । हे राजा अब सुनिये सही ।
पय पूरीने ये अति दुरी । तिरपति हो इन तुंडी सुरी ॥ ८ ॥
बलि प्रचंड दीजे नर मास । तब तिरपति पावे सुख रास ।
तातें देके इक नर सार । एक छिनकमें उतरे पार ॥ ९ ॥
और भांति कारज नहिं सधे । होय अनर्थ विपति ही बधे ।
धींवरके बच ऐसे सुने । पांडव क्षोभित अति ही ठने ॥१०॥
आयो मरन निकटही देख । मनहिं विचारें ऐसे पेख ।
अशुभ करम तब आयो ग्रसे । किह विधि दुख तब ताको नसे ॥११॥
विधितें जग ए तवन्न न और । देही संग फिरें सब ठौर ।
प्रथमहि हम तहँ कौरव संग । युद्ध विषय अरि कीने भंग ॥१२॥
जीत पाय पुनि जतु गृह जरे । कर्म जोग निकसे दुख भरे ।
आयो मरन निकटही अबै । तुण्डी ते अब मरिहैं सबै ॥१३॥
महा कष्टते निकस फले । मृत्यु लही लघु दुख के रले ।
जैसे सागर नीर उलंघ । भल जल त्रिलही दूर जंघ ॥ १४॥
कर्म उदय जब पहुंचे आय । कौन बली जो बचके जाय ।
धींवर करत छूटी मीन । निगलो ताहि महा पाठीन ॥१५॥
यह सु विचार युधिष्ठिर तही । भीम बदन अवलोक्यो सही ।

धरम पुत्र धरमातम सन्त । बोलो भ्रात प्रती बलवन्त ॥१६॥
हे विपुलोदर तुम बल बीर । बात कछू अब कहिये धीर ।
जासों भय यह नासे अबै । सुखसों पार पहुंचे सबै ॥ १७॥

दोहा ।

कारज चितयो और विध, देव कहो कछु और ।
राज सुता के लालचे, बाघ हतो द्विज ठौर ॥१८॥

उक्तञ्च श्लोक ।

अन्यथा चिंततं कार्यं देवेनकृत मन्यथा ।
राज कन्या प्रमादेन विप्रो व्याघ्रे न भक्षितः ॥ १९ ॥

दोहा ।

तातें विघ्न विनाश कर, कीजो कोई उपाय ।
हम मति कछु अब फुरति नहिं, चिन्ता मति हिहराय ।२०।

चौपाई ।

भीमसैन बोल्यो इह भाई । निर्भय भृकुटि कुटिल मुख बाय ।
हे राजा ये अवसर मध्य । काज करें तेई बर बुद्धि ॥२१॥
एक उपाय महा निर्दोष । मो हिरदे उपजो सुख पोष ।
जिस उपायसों हो इन नास । मत कीरति सम्पत शुभ रास ॥२२॥
जाके करत न अपयश लगे । हानि न पुनि अपमान न पगे ।
ऐसो कारज करनो जोग । यासों जो बिपरीत अजोग ॥ २३॥
यह धींवर अति बुड्डो छीन । दारिद्री बिट रूप मलीन ।
दुःख दग्ध दुरभागी दीन । अपकर्मी अरु करना हीन ॥२४॥
बल दीजे अब याको मार । तुरडी तिरपत कीजे सार ।
नाव चलावेंगे हम गंग । तिरके पार लहें निरभंग ॥ २५ ।
बचन भीमके सुनके तहां । धीवर कम्पो मनमें महां ।
छीन भई छबि मुखकी तास । प्रानगये मनु मिरगत आस ।२६॥
धाबर बोलो राजा प्रते । सिद्ध नहीं कछु मेरे हते ।
अरु मो मारे होय बिगार । तुमको कौन उतारे पार ॥ २७॥

अरु अपकीरत्ति जगमें होय। नृपने मारो धींवर जोय।
तातें जोकुछ तुमको रुचे। सोई कारज कीजे सुचे॥ २८॥
जो तुम हतहो मोको अबै। तो हम कुलजे उपजे सबै।
तुमको पार न कोई करे। नीतवन्त किमि निज पद धरे॥२९॥
को इक धींवर कबहूं भूल। नाव न बाहै सरिता कूल।
सबहीके मन डर यह रहे। यह सब राय अनीनै गहे॥ ३०॥
ऐसी सुनके करुनावन्त। बोलो राय युधिष्ठिर सन्त।
हाहा वच्छ महा गुन सीम। ऐसी बात न कहिये भीम ३१॥
मो मन कम्पत है सुन येम। तुम पंडित हो भाषो केम।
जो निर्दय जीवन को हतें। सो धन श्री तज दुर्गति रतें॥३२॥

सवैया तेईसा

जो नर हिंसत जीवनको सुविध्वंस बहै जिन वंस महाई।
बेल बुए अघ जेल अधोगति जाय परै सुखबेल हराई॥
पूतहमार मरी धनश्री तिन नीत सुप्रीतकी रीत नसाई॥
राय युधिष्ठिर येम भने तजिये अदया सुजिये सुदयाई॥३३॥

चौपाई

यह धींवर अति भूखो दीन। याहि हने क्यों करुना लीन।
यहतो है उपकारी सार। हमहिं उतारे सरिता पार॥ ३४॥
जो नर करे भलो उपकार। सो क्यों हतिहैं भ्राता सार।
तातें मारन लायक नहीं। यह धींवर उपकारी सही॥ ३५॥
तातें कहिये और उपाय। होहिं सुखी हम अब जिहि भाय।
ऐसो सुनके बोलो भीम। हरषित हित विहसो गुनसीम॥३६॥
सुनहु नाथ तुम और उपाय। आलस त्याग करो चित ठाय।
तुंडी तिरपत कीजे एव। दीजे नकुलहि कै सहदेव॥ ३७॥
युद्ध विषै नहिं नकुल प्रवीन। बलिकी लायक सुभग कुलीन।
कुल खोवा सहदेव अनीत। बात न पूछे करुना तीत॥३८॥

इन दोनों में एकाहे मार। बलि देके हम पहुंचे पार।
यह उपाय है उत्तम महा। पुन्यजोग हम सहजी लहा ॥३६॥
ऐसी सुनके बोले राय। महापुरुष जिस पूजे पाय।
तात तात हा भ्राता भीम। बचन भयानक भाषो कीम ॥४०॥
सुत समान ए छोटे भ्रात। मोको प्यारे हैं बहु तात।
क्यों हतिये ए सोदर सुखी। इनके मारे हैं हम दुखी ॥ ४१ ॥
इनको हतको जो हम जाहिं। तो अपकीरतिहै जग माहिं।
अनुज दिये ह्वै देवी काज। उतरे सरित युधिष्ठिर राज ॥४२॥
निंदा करें यों सब जग ठया। तातें धिक जीवन बिन दया।
अहो भीम हौ निर्दय चित्त। ऐसो काज न कहिये मित्र ४३॥
अन्य उपाय कहो परवीन। सुखदायक अरु करुना लीन।
ऐसी सुनके बोलो भीम। जो नहिं रुचे तुमकोई यीम ॥४४॥
तो अर्जुनको दीजे भले। जासों तुंडी तिरपति रले।
ऐसी सुनत युधिष्ठिर राय। कहे भीमसों शीश नवाय ॥ ४५ ॥
हे भ्राता तुम पावन भीम। विपुलोदर सुन्दर गुण लीन।
ऐसे बचन सुभाषो केम। होय अयश दुख बाढ़े जेम ॥ ४६॥
यह प्रसिद्ध पारथ परचराड। धनुर्वेद ज्ञायक बलबंड।
याके सन्मुख रनमें परे। कोइ न बैरी धीरज धरे ॥ ४७ ॥
याके जीवत हम निज राज। पावहिंगे निश्चय सुखसाज।
शब्दवेधि धानुष धर्मीक। याहि न हतिये कबहूं ठीक ॥ ४८ ॥
जो ऐसे तो कुन्ती माय। दीजे बलि अति कोमल काय।
बचहि भ्रात सब याके दिये। करु उपाय यह सुखके लिये ४६
भले युधिष्ठिर गुनकी सीम। ऐसे बचन न बोलो भीम।
यह जननी सुजनमकी दाय। पूजनीक नित याके पाय ॥५०॥
जिन राखे निज उदर नवमास। जनम देइ परछाले आस।
थन पियाय पाले कर प्रीत। जगत मान्य यह माता मीत ५१॥

ताहि हतें क्यों हित जो चहे । माता तीरथ सब जग कहे ।
भीमकहे तब राजा प्रतें । दयावन्त तुम धर्मी अतें ॥ ५२ ॥
धर्माधर्म विवेकी सही । तुम सम विनई दूजो नहीं ।
महामती नीती लोकज्ञ । अद्वितीय तुम जग में तज्ञ ॥ ५३ ॥
जोग काज तुम जानों जोय । निरविलंबह्न कीजे सोय ।
तबही चिन्त युधिष्ठिर राय । करत विचार सुऐसो भाय ॥५४॥
भीम दिखाये भ्रात सुभक्त । मारनको अरु जननी उक्त ।
जो अयोग भूतलमें काज सो । क्यों करें दुखको साज ॥ ५५॥
यों विचार नृप उद्यम भये। गंगा माहिं परनको ठये ।
बांधव सकल निकट बैठाय । शिक्षा देत जुगति सों गाय ॥५६॥
भो भ्राता शुभ गतिसों सनी । सेवा कीजो माता तनी ।
मात भक्तिते लहिये सबै । अर्थ सम्पदा सहजे फबै ॥५७॥
त्योंही करके परउपकार । तिरपति कीजो परिजन सार ।
परउपकार सु जे नर धरें । तिनही को यश जग विस्तरें ॥५८॥
मत कीजो कौरव विश्वास । अति घातक हैं अघकी रास ।
ऐसो विषको कर विश्वास । लहे कहांते सुखकी बास ॥५६॥
ए सब कौरव अवसर पाय । हतिके तुम लीजो पुर ठाय ।
इह विधि शिक्षा तिनको देय । अपने चित निर्मलता लेय ॥६० ॥
जैसे जल साबुन संयोग । निर्मल पट है कटि मल रोग ।
तथा युधिष्ठिर मलको नाश । धर्म ध्यान धारो गुण रास ॥६२ ॥
पंच महा पद धरके भाव । रागादिक तज दीने राव ।
शत्रु मित्रमें समरस धरो । निज स्वरूपको अनुभव करो ॥६२॥
वपु ममत्व तजि नृप गुनरास । द्वै परकार धरो सन्यास ।
कष्ट विषै जो अब मैं बचो । तो अहार सूतन को सचो ॥६३॥
नाहि बचो तो यह निर्धार । मन बच काय तजो आहार ।
अन्तर बाहिर जु धरत बिशुद्ध । बिधि सन्यास यही अविरुद्ध ।६४।

भयो सुभवते अति भय भीत। जानी छिन भंगुर जग रीत।
भाइन संग क्षमा करवाय। जननी को नुत करके राय ॥६५॥
बलि देवैको अपनी देह। उद्यत भयो युधिष्ठिर येह।
तौलों सबही रोवन लगे। भीमादिक सब भयसों पगे ॥६६॥
अति अचिन्त्य अति दुर आराध। विधुराकुल दुःसह दुख साध।
अहो देव यह दुर्धर काज। क्यों आनो तुम हिरदे आज ॥६७॥
हम जानेथे ऐसी भाय। किंचितै काल दिशान्तर जाय।
थिर करके पुनि निश्चय आय। कौरवगन को हतिहौं ठाय ॥६८॥
ए जु मनोरथ हम चित भये। करम जोग सब निरफल गये।
और अवस्था पहुंचो आय। सब पौरुष इक कर्म हराय ॥६९॥
पुनि कुन्ती सुविलाप करेय। अपने कर्महि दुक्कन देय।
हाहा पुत्र दयाके निधी। हाय पुत्र क्या कीनों विधी ॥७०॥
राज जोगै तुम पुत्र नरेश। तुम बिनको पालेगो देश।
तुम विन को नाशे अरि साज। को धारे कुरुजंगल राज ॥७१॥
छाती पीटत दोऊ करे। ताड़ित प्रभा सम रोवत खरे।
मूर्च्छा खाय गिरी सु अचेत। मोह बली सब सुधि हरि लेत ॥७२॥
जौलों कुन्ती मूर्च्छा तजे। तौलों राय युधिष्ठिर सजे॥
दोऊ भुजते छाती गहे। सरित विषै परिवै को चहे ॥७३॥

दोहा

ताही अवसर भीम इम, बोलो है दृढ़ वन्त।
हे स्वामी तुम थिर रहो, पालहु पृथिवी सन्त ॥ ७४ ॥
तुम कुरु वंश अकाश बिच, पूरन चंद सु जोत।
अरिगन को तुम नाशि के, कीजो राज उदोत ॥ ७५ ॥
गंगा के बिच परन को, मोको आज्ञा देय।
तुम लायक इह काज नहिं, तुम जा राज करेय ॥ ७६ ॥
तुंडी को बलिदान तें, तृप्ति करूं मैं जाय।

वृथा देहु मति आपको, यम के मुख में राय ॥ ७७ ॥
देखूं पौरुष तास को, कर के बर संग्राम ।
घात करूं घन घात तें, महा सुरी को धाम ॥ ७८ ॥
ऐसी कह के भीम तब, कूदो सरिता मांहि ।
लेह लेह कहतो धंसो, रंचक भय चित नांहि ॥ ७९ ॥
परो देख के भीम को, रुदन करत सब भ्रात ।
कुंती मुख हा हा करत, भीम भीम कहँ जात ॥ ८० ॥
महा भाग आजानुभुज, महा पराक्रम धीर ।
पर उपकारी शत्रु हा, हा सुपूत हा बीर ॥ ८१ ॥
तो बिन हम चित सून्य हैं, तो बिन सिद्ध न होय ।
दुख सागर यह तो बिना, किह बिधि तरिहों रोय ॥ ८२ ॥

चौपाई ।

ताही छिन वह दौरी नाव । पार गई छिनमें तट ठाव ॥
शोकित पांडव सरिता तीर । उतरे नौका ते बलबीर ॥ ८३ ॥
भ्राताके दुख दुःखित अते । देखत हैं बिपुलोदर प्रते ॥
महा असाता अगनहि जरे । सुगुन भीमके सुमरें खरे ॥ ८४ ॥
नैन सबनके अंसुवन रले । दुःखित होय सो मगको चले ॥
या अंतर अब तुंडी खरे । मगर मच्छकी मूरति धरे ॥ ८५ ॥
देखे भीमको धाई अते । चलो भीम भी तुंडी प्रते ॥
क्रोधावंत दोऊ सन्नद्ध । लगे युद्ध को कम्मर बन्ध ॥ ८६ ॥
मल्ल दोय मनु जलमें लरें । खान परस्पर करते करें ॥
भीम प्रचंड महा जु अखंड । तुंडी को कीनो सत खंड । ८७ ।
खंड हंडिका समकर तुंड । हती ठोकरों भीम प्रचंड ॥
कोप करो तब तुंडी महा । मकराकृति पुनि धारी तहां । ८८ ।
पांडु पुत्र को निगलो तबै । मायो भीम जठरमें सबै ॥
भीम सबै तब क्रोधो घोर । फारो पेट भुजाके जोर ॥ ८९ ॥

पृष्ट अस्थि दृढ़ तुंडी तना । भीम उखार सु पगते हना ॥
बिहवल करिके छोड़ी सोई । गई पलाय सु कायर होई । ९० ।
गंगा की तब तजके ठौर । तुंड़ी जाय बसी कहुं और ॥
भीम भुजातें तरिके गंग । आयो तरिके तट निरभंग ॥ ९१ ॥
कुंती विकसित मनमें ठई । बेटों सहित सु बैठत भई ॥
माता और युधिष्ठिर राय । इनके चरन नमों सो आय ॥९२॥
जननी भ्राता कंठ लगाय । मिले भीम सों आनंद पाय ॥
कहँ गंगा दुस्तर गम्भीर । किह विधि तरी भुजनसों बीर।९३।
तुम कर कोमल अतिही बच्छ। क्योंकर तुंडी जीती दत्त ॥
ऐसी सुनके मारुत बली। बोलो बानी विनय सों रली ॥ ९४ ॥
हती तुंडी जल तरो अगाध । आयो मैं तुम धर्म प्रसाद ॥
इह विधि आपुसमें सब भ्रात। मुदित भये सब गुनकी पात।९५।

पद्धड़ी

बर पांडु पुत्र बलवंत धीर । तर सरिता जलको लहेतीर ॥
देवी सुतुंड कीनी सुखंड । पाई सु जीत तिस देय दंड ॥९६॥
शुभ धर्म जोग क्या क्या न होय। मन बांछित वस्तु लहेई सोय।
बर धर्म बसय जस चित्त मित्त। बरते सु तास सब निकट नित्त ९७
इक धर्म होय रच्छक सु जास। बहु अमर राय राखे सु तास॥
जिन धर्म समान न धर्म और। शिवआदिक सुखकी एक ठौर।९८।

दोहा

तातें ऐसी जान के, जैनी जैन सु धर्म ।
सुनके हिरदे धारिये, ज्यों लहिये शिव शर्म ॥ ३९ ॥

इति श्री मन्महाशीला भरण भूषित जैनी नामांकितायां लाला बुलाकीदास विरचितायां भारत भाषायां पांडव लाक्षागृह प्रवेश ज्वलन प्रच्छन्न निर्गमन गंगा समुत्तरण सुतुंडी नाम जल देवता वशीकरण वर्णनम् त्रयोदश प्रभावः

अथ युधिष्ठिर प्रदेश गमन और ग्यारह

कन्या संग विवाह वर्णनम् चतुर्दश प्रभावः

चंद्र प्रभु स्तुति। मंगलाचरण सवैया तेईसा

है निकलंकित नित्य उदै दुत राहुकी छाहन लोपित वाकों॥
मोहको छोह नसे जिस देखत और असेष हरे जड़ताकों॥
ऐसो जो है दुज चंद्र प्रभू जिन सेवे मुनिन्द्र जु जाकों।
नंदन ताहि नमें नंदलालको हे भव छिंदन कीजे कृपाकों।१।

चौपाई

अब यह पांचों पांडु प्रचंड। दुजको भेष धरें बल बंड॥
चलत मंदगति कुन्ती जेम। पांडव भी पग धारें तेम॥ २॥
चलत चलत सब पहुंचे तहां। कौशिकपुर अति शोभित जहां॥
मानो सुरग विमाने आय। राजे सदन सघन अधिकाय। ३।
उन्नत सालसु छलतें रलो। मनु सुरपुर को जीतन चलो॥
बरननतें नहिं बरनो जाय। वर्णी नाम है ताको राय॥ ४॥
नाम प्रभाकर रानी सार। जाको मुख शशि पुर तम हार॥
कमला नाम सुतिनकी सुता। मनु कमला सु गुनों दधि थिता।५।
एक समैं सु परम उद्यान। क्रीड़ा करन गई सुख खान॥
चंप चमेली जाही जुही। जामें राजति फूलो गुही॥ ६॥
क्रीड़ा मंडित क्रीड़ा पमें। संग सखी बहु ताके रमें॥
बैठ हिंडोला कौतिक करें। गाय मधुर धुनि झूलें खरें॥ ७॥
सो कन्या अति निर्मल देह। लखो दूरतें जिनवर गेह॥
जिन बंदनकी इच्छा भई। चलिबे को सो उद्यत ठई॥ ८॥
तौलों पांडव आये तहीं। जिन ग्रह देख अनन्दे सही॥
चंद प्रभूकी प्रतिमा देख। प्रासुक जलसों न्हाय विशेष॥ ९॥
निरसहि निरसहि पदहि बढ़ंत। जिनग्रह मांहि गये ते संत॥
जिनपद बन्दि सु पूजे भले। थुति करिबे को उद्धित रले।१०।

स्तोत्र मंत्र जे अतिहि विचित्र। परम उदयके दाय पवित्र॥
तिनको पढ़ि पढ़ि थुति ए करें। गाइ मधुर धुन जय उच्चरें॥११॥
जै जिनेन्द्र जीवन जय दाय। तीनलोक तुम पूजें पाय॥
जनम जरा अरि जीते जई। तातें तुम जिन संज्ञा लई।१२।
राहु डरें यह हिमकर आय। शशि लच्छन तुम सेवत पाय॥
राहु तनो जो नहिं है त्रास। तो क्यों रहतो चरनन पास॥१३।
तुम तन छबितें शशि छबि छीन। चंद्रप्रभू अति छबि दुति लीन।
केवल ज्ञानधरो तुम अच्छ। तीन जगत देखो परतच्छ।१४।
तुम समर्थ जग उधरन काज। हम रच्छा प्रभु कीजे आज॥
यों थुति करके ये सब राय। जौलों बैठे आनन्द पाय॥१५॥
तौलों कमला सखियां साथ। आई बंदन जिनवर नाथ॥
फूल कमल नैना बिस्तार। तार हार नूपुर गुंजार॥१६॥
कंठ कोकिला निर्जित करे। भरि नितंब लट पट गति धरे॥
कटि ऊपर कटि मेखल दाम। हालें पग धरते अभिराम।१७।
गतिकर जीतत करनी चाल। सीखत गति जिस आय मराल।
आइ भवनमें जिनवर बंद। बिधिसों पूज करत सुख कंद।१८।
छीरोदधि जल सम जलधार। जिनपद निकट दई तिस धार॥
चंदन सरस मधूव्रत लीन। जिनपद अर्चा तासों कीन।१९।
केतकि कुंद कमल मंदार। इनते जिन पद पूजे सार।
तंदुल धवल अखंडित घने। तिनके पुंज अनूपम ठने॥२०॥
रस पायस साजत नैवेद। पूजत मिटे छुधादिक खेद।
निमसत हारी दीप विशेष। जजत हरत जड़ भाव विशेष॥२१॥
अनिल अगनिमें खेवत धूप। शिखा बिराजत स्याम अनूप।
श्रीफल आदि विपुल फल भरे। जिन पद पंकज आगे करे २२
बहु विधि पूजा कर इहि भांति। बाहिर निकरी गुनकी पांति।
देखे पांडव पावन भूप। तिनमें अकथ युधिष्ठिर रूप॥२३॥

देखतही कन्या बश ठई । ऐसे मनहिं विचारत भई ।
कै यह सुर है कै शशि सूर । कि धौं किन्नरीको पति भूर ॥२४॥
नेत्र पलक चल याको होय । तातें नर है उत्तम कोय ।
याबिध प्रान धरूं मैं केम । धृत वर्जित सो तन है येम ॥२५॥
ऐसी विधि चितरति पति तीर । लागी हिरदे व्यापी पीर ।
चल न सके सो बिहवल खरे । उखट उखट पदपंकज धरे २६॥
ग्रह चलिबेको अच्छम अती । सून्य चित्त मनु काहू हती ।
सखियों मिलकर गहके ताहि । ले पहुँची हटसों ग्रह माहिं २७॥
आलस सों तन व्यापत तास । खाय न बोले काहू वास ।
खिन रोवै खिन सोवै सोय । खिन देखे खिन बिकसित होय २८॥
आपु नहीं उठ ठाढ़ी लसे । आपहि बैठ सिंहासन हँसे ।
ऐसी पुत्री लखके मात । पूछ सखी सब जानी बात २८ ॥
भूपति सों तिन भाषी सबै । भूपति मंत्री भेजे तबै ।
मंत्री मिलके पांडव राय । आने ग्रहकरि आदर पाय ॥ ३० ॥
बहुत प्रीतिसों राजा मिले । मानो असन बसन दे रले ।
धरम पुत्र सो जाचन ठान । सुता दई तब नृप विधि जान ३१
अर्थ सहित कमला को पाय । भुगते भोग युधिष्ठिर राय ।
कछुइक दिनहिं युधिष्ठिर तही । जननि अनुज संगनिवसो सही ३२
धर्म पुत्रको बर्न सुराय । पूछे सुन प्रभु ऐसे भाय ।
को तुमको ये नर है साथ । कौन ठौरते आये नाथ ॥ ३३ ॥
ऐसी सुनत युधिष्ठिर कही । सुनौ बरुन तुम कौतुक यही ।
कौरव मिलके जारे जोय । पांडु पुत्र हम निकसे सोय ॥३४॥
माम हमारो द्वारावती । राजे समुदविजै भूपती ।
ताको तनुज तीर्थंकर नेम । तासुतमैं सुरपति धरि प्रेम ॥३५॥
विष्णि विल्लू तहँ भ्राता रहें । तिनको हम देखन अब चहें ।
तही जात हैं हम सब राय । यह सम्बन्ध कहो समझाय ३६॥

कमलाको तहँ तजिके चले । पांचों भ्राता जननी रले ।
देशदेश में जहँ जहँ जाहिं । नमें महानर तहँ तहँ आहिं ॥३७॥
असन बसन सयनासन जान । इनहिं मिलेते वृषते आन ।
विक्रम व्यापत दश दिशि जास। ऐसे पांडव गुणकी रास ॥३८॥
जहँ जहँ देखे जिनवर गेह । तहँ तहँ पूज करें शुभ एह ।
चलत चलत ए क्रमतें भूप। पहुंचे जाय इक बनहिं अनूप ३९
ता बनमें चैत्या ले सुभ्र । मानो धवल शरदके अभ्र ।
शान्त तुंगमय सरल उतंग। लागे जाय गगनके संग॥ ४० ॥
जय जय शब्द सुदुंदुभि बजें । अमल चित्त भविजन बहु सजें।
बन शोभा बिस्तीरण महा। देखत पांडव आये तहां ॥ ४१ ॥
देखनहीं जिनवर आगार। भीतर गये सुआनंद धार ।
स्वर्णरूप मय पावन भली । देखी प्रतिमा शोभा रली ॥ ४२ ॥

दोहा

जिनको देखत भविक जन, होंहिं सकल बस चित्त ।
तिनको पांडव बन्दते, लही प्रीत बहु मित्त ॥ ४३ ॥
नीरादिक बसु द्रव्यतें, पूजे जिन पद भाल ।
नुत थुतकर पुनि पांडवा, निकसे बाहिर ठाय ॥ ४४ ॥
धर्मामृतके लालसी, तहं बन्दे गुरु धीर ।
जिन पूजा फल पूछियो, पांडव नृप गम्भीर ॥ ४५ ॥
मुनि बोलो भविजन सुनो, जिन पूजा फल येह ।
भाव सहित सो नित करे, सो पावे शिव गेह ॥ ४६॥
जल धारा जिन पद दिये, होय मुकति रज धोय ।
है सुगन्ध तन तासको, चंदन चरचे सोय ॥ ४७ ॥
अक्षत अक्षत के दिये, अक्षय लक्ष करेह ।
पुष्प अजन की अरचना, चरम शरीर अजेह ॥४८॥
जिनपद आगे चरु दये, आमय होय बिनास ।

देव पगे दीपक जगे, केवल ज्ञान प्रकाश ॥४९॥
धूप दहे सब करमको, फल शिव फलको देह।
पद अनर्घ्य है अर्घतें, जिन पूजा फल येह ॥ ५० ॥

चौपाई

सुनिके पांडव श्रावक महा। तज अमरख चित हर्षित गहा।
तहां अर्जिका देखी एक। मानो दया धरम की टेक॥ ५१ ॥
ताके निकट सुकुन्ती गई। बंदन करिके आगे ठई।
एक सुकन्या देखी तहीं। सिही बसन तन पहिरे सही ॥५२॥
चंचल अच्छ शुभ लच्छना। ब्रत करके अति दुर्बलतना।
सेवक बहु तिर रच्छा करें। अच्चर सीखें लिख लिख खरे॥५३॥
इह बिधि कन्या देखी जबै। कुन्ति अर्जिका पूछी तबै।
नमस्कार कर बिनती करी। अहो अर्जिका कहिये खरी ॥५४॥
धर्म कर्मकी मानों धरा। सुता कौन की है यह बरा।
कौन हेत यह तपको पगे। हेतु बिनाशे नाशन जगे ॥५५॥
काम कलित तन जोबनवन्त। रक्त चीर पहिरे बहु भन्त।
बन निवसेको कारन गिना। तुम तनु तिष्ठे दीचा बिना ॥५६॥
बहू करनको तासु लुभाय। कुन्ती दिष्टि रतन अधिकाय।
कन्याकी भी लागी दृष्टि। देखत रूप युधिष्ठिर इष्टि ॥५७॥
कन्या बदन कमलकी भाय। लोभित भये युधिष्ठिर राय।
आपसमें ते मनसों मिले। जोरि रहे दृग हितसों रले ॥५८॥
बचसो बोलि सके नहिं कोय। बपुसो नहीं आलिङ्गन होय।
तौलौं ननी कुन्ती प्रतें। बोली बात सु हितसों अतें ॥५९॥
अहो सुधर्मनि सुनिये यही। याको चरित सुभाषो सही।
याही ठौर कुसम्बी पुरी। बिंध्यसैन नृप प्रभुता बरी ॥६०॥
बिद्युत सेना नारी आस। बसन्त सेना पुत्री तास।
नृपने मंत्र कियो घर मांहि। युधिष्ठिर संग बिवाहूं याहि ॥६१॥

पांडव दाहें कौरव दुष्ट । सुनके दुखित भयो नृप सुष्ट ।
कन्या भी यह सुनके बात। चिंता वन्त भई बहु भांत ॥६२॥
महा बिरूपक मोपे भयो । भर्त्त दग्धको दुख में लयो ।
पूरब पाप तनो फल यही। दुख भुगते नित प्रानी सही ॥६२॥
तब इन चितमें धारी एम । और पुरुष की मेरे नेम ।
छूट युधिष्ठिर नर जे और । पुत्र पिता भ्राता की ठौर ॥६४॥
सो तो दग्ध भयो जतु गेह । तातें परम तपस्या लेह ।
जातें फिरके भव भव मांहि। निंद करम ये पाऊं नांहि ॥६५॥
दीक्षा उद्यत देखी पिता । यों समझाई सुन ए सुता ।
पल्लव पाणि कमलको मले । हे शशि वर्ण पद्म पद रले ॥६६॥
कहा तेरी यह कोमल काय। कहां वह दुर्धर तप अधिकाय।
लोह चनक अरु मैन सुदन्त। कठिन चावने हैं इहि भन्त ॥६७॥
दीक्षा कीजो इच्छा लहो । तो कछु काल सुथिर हो रहो।
सुनो शास्त्र तुम गणनी पास। सीखो अक्षर नित वृष रास ॥६८॥
जो कदाचि तुम धर्म संयोग । आवे भर्ता देह अरोग ।
तो सुख सबही सहज उदोय। श्रेष्ठ पुरुष अल्पायुन होय ॥६९॥
जीवत तासु अमंगल येम। क्यों कीजे दुख लहिये जेम ।
होय अन्यथा जो यह जोग। तो तुम दीक्षा लीजे योग ॥७०॥
करी प्रार्थना जब इह भांत। तब थिरतिष्ठी यह सुख पांति।
मेरे निकट रहे नित येह। व्रत संयम कर सोखे देह ॥७१॥
लीनो चाहत दीक्षा चित्त। कायोत्सर्ग धरे यह नित्त ।
शीलवती अरु चारित वन्त। मन बच काय सुनत सिद्धन्त ॥७२॥
तौलों कन्या चितयो यही । क्या यह कुन्ती आई सही ।
क्या यह पांडव राजत देह। कुन्ती प्रति तब बोली एह ॥७३॥
हे सुन्दरि तुम गुणकी खान। बिकसत केश सुमतिकी दाम।
को हो तुम कहिये निरभंग। पंच पुरुष ए को हैं संग ॥७४॥

तब कुन्ती बोली इह भांत। सुनों कन्यका मेरी बात।
हम ये सब हैं द्विजकी जात। शास्त्र विशारद गुनकी पांत॥७५॥
मैं देव ज्ञातातें युक्त। निश्चय कर जानो मो उक्ति।
तासों कुन्ती हँसके कहे। ताको जीवन हिरदे चहे॥७६॥
तुम पवित्र हो पुत्री अते। पालहु शील सु जीवन जते।
दीक्षाकी तुम आशा त्याग। गृह ब्रत में धारो अनुराग॥७७॥
तेरे पुन्य संयोगे पाय। तो भरतार मिलेगो आय।
महा पुरुष वह जग मांहि। सुर भी मार सके नहिं ताहि॥७८॥
ऐसी सुनके कन्या दीन। खेदित होय भई छबि छीन।
तौलों पांडव पांचों चंड। कुन्ती सहित चले बलवण्ड॥७९॥
लोगन को देखत अभिराम। पुत्र संग पहुंचे गुण धाम।
चंड बाहन नृप तहं परचंड। बल मंडित शोभित भुज दंड॥८०॥
पतित भये अरि जाके डरे। बिमला रानी जाके घरे।
तिनके पुत्री दश विख्यात। शीलरूप शुभ गुणकी पांत॥८१॥
गुन परभा आदिक गुण खान। और सुपरभा दूजो जान।
श्री न्हींरत पुनि पदमा परा। गनें सातवीं इन्द्री बरा॥८२॥
बिस्वा बास गुणोंकी धरा। चर्या नाम सु अचरज करा।
और अशोका दशमी भले। सोक रहित शुभ गुन सों रले॥८३॥
जोबनवन्ती देखी जबै। भूप निमित्तिक पूछी तबै।
इनको पतिको भवता सही। सांच बचन तुम भाषो यही॥८४॥
बोलो सो जु निमित्त बिचार। ह्वै है सुबर युधिष्ठिर सार।
ताही पतिको कन्या तबै। निश्चय करके तिष्ठी सबै॥८५॥
बात अन्यथा सुनके तास। दुखित भई सब सुखकी नास।
ताही पुर इक श्रेष्ठी संत। प्रिय मित्र सुनामा धनवन्त॥८६॥
प्रिया सोमनी ताकी भली। श्रेष्ठ गुनो कर अतिही रली।
नयन सुन्दरी ताके सुता। मृगनैनी पावन गुन जुता॥८७॥

वह भी सेठ निमित्ती बैन। सुनके राखी ताही बैन।
सो भी सुनकर ताको दाह। खिन्न भई अति हिरदे माह ॥८८॥
धर्म ध्यान रत तब सब भई। व्रत संयम में तत्पर ठई॥
सेठ सेठानी राजा रानि। दुखित भई सो दोनों जानि ॥८९॥
सुता परस्पर प्रीती धरे। पर्वी व्रत तप दुर्धर धरे।
एक समयते कन्या सर्व। प्रोषध धारो चौदश पर्व ॥९०॥
गई सुवन में जिन ग्रह जहां। धर्म हेत थित कीनों तहां।
कायोत्सर्ग धरे विधि शुद्ध। धर्म सुध्यान लहें अविरुद्ध ॥९१॥
जिन चक्री जे नर बिख्यात। तिनको कथन कहत दिन रात।
निशिके आदिक कन्या सबै। सामायक कर निवरी जबै ॥९२॥
गुन परवारा जाकी सुता। बोली सबसों शुभ गुण युता।
शुद्ध पारना याही ठाय। आज प्रभात करें अधिकाय ॥९३॥
भाग जोग जो मुनिवर मिले। सफल पारना तो अति रले।
निकोदान प्रथम जो होय। जनम सफल हमतो अति होय॥९४॥
कर मुनिको दान सु तबै। हम लेहें शुभ दीक्षा सबै।
ताही मुनिके तट अनुसरे। भावन भाय सुसंयम धरे ॥९५॥
अति बिचित्र देखहु संसार। बुद्धिवन्त जे नर सु बिचार।
तौ भी यामें ममता करे। मोह जोग सबही दुख भरे ॥९६॥
महा निंद्य तहां तिया परजाय। अशुभ करमके जोग लहाय।
जनमतही दुख दाई यहे। मात पिता चित चिन्ता लहे ॥९७॥
बर चिन्ताहै स्यानी भये। पति चिन्ता है परणी दये।
जो कदाचि बर पावे दुष्ट। अव्रती व्यसनी परबत भ्रष्ट ॥९८॥
रोगी क्रोधी बिनया तीत। दुर्मति धर्म जु रहित अनीत।
तो ताको दुख जानो कौन। भुगते अशुभ करमको जौन॥९९॥

जो कदाचि बर उत्तम मिले। शोक तनो दुख तो बहु रले।
शोक समान दुःख इह ठौर। भयो न भाविता तियको और ॥२००॥
कै अथवा पति माने नहीं। होय दुहागिन दुख है तही।
कै अथवा जो बंझा होय। तो है कुलकी नाशन सोय ॥ १ ॥
जो प्रसूत है तो दुख सहे। गर्भ भारते सुख नहिं लहे।
जो कदाचि भरनाही मरे। तो बिधवा पदको दुख भरे ॥ २ ॥
तातें तिया जनम दुख सवी। बरन सके को जगमें कवी।
हम बिवाह बिधि बिनही फवें। बिधवा को पद धारो सवें ॥ ३ ॥
तातें धिक या तिय पद मांहि। भव सुख भुगते रंचक नाहि।
पति प्रसादतें तिय जो चहें। सकल मनोरथ पूरन लहें ॥ ४ ॥
धर्म अर्थ अरु सुख जे काम। भरतातें सब साधें भाम।
पति बिन जन्म वृथा तिय धरे। ताते संयम धरि के खरे ॥ ५॥
होय सुखी अरु समकित संग। पालें शील सदा निर भंग।
संयम सों तिय लिंगहि छेद। मुक्ति लहें धरके नर बेद ॥ ६ ॥
ताके बच सुन दूजी भने। दीक्षा की परशंसा ठने।
जो तुम कही सु सांची बात। सुनो सखी तुम ऐसी भांत ॥ ७ ॥
पति सनेह सुख आशा अर्थ। घर बसिवो है ता बिन व्यर्थ।
नारि सभामें बिधवा नारि। कबहु न सोहे दुखकी धारि॥ ८ ॥
जैसे नर अविवेकी अती। सोहे नहिं लोभाकुल जती।
बिधवा तिय जो बीरा खाय। लगे बुरी अरु निंदा पाय ॥ ९ ॥
स्वेत बसन बिन सब सिंगार। बिधवा तन नहिं सोहे सार।
तातें भर्त गये वा मरे। युवती संयम धारे खरे ॥ १० ॥
इन्द्री देह दहे तप जोग। रंचक सुमरे भवके भोग।
ऐसे कहत जिनालय ठाय। मुनि दमतारी पहुंचे आय ॥ ११ ॥
ज्ञान भान संयमको खान। तिनको देखत हरषी जान।
तीन परीक्रम बिधिसों रले। पद पंकज को प्रणमी भले ॥१२॥

मुनि प्रति कन्या बोली एह । करुना करिके दीक्षा देह ।
बाल मुनि भो कन्या सुनो । बाल पने किम दिक्षा ठनो ॥१३॥
तब कन्या भाषो बिरतन्त । जो कछु बीतो पांडव अन्त ।
हे स्वामी भरता के जले । हमको दीक्षा लेनी भले ॥१४॥
शीलवती जो कुलकी नार । तिनको पति है एके सार ।
ऐसी सुनके बोले मुनी । अवधि ज्ञान के धारक गुनी ॥१५॥
आवहिंगे सुमुहूरत मांहि । पांचो पांडव मिथ्या नांहि ।
तातें देखहु तुम थिर होय । अबही तुमको मिलिहैं सोय ॥१६॥
ऐसी सुनके सज्जन सबै । बिस्मयवन्त रहे हूं तबै ।
पांडव पंच हूतासन जरे । सो कैसे करि आवें खरे ॥१७॥
जैलों चिनवत ऐसी भाय । तौलों पांडव पहुंचे आय ।
कहत निस्सही आये भले । स्वेत बंसन तन शोभा रले ॥१८॥
नमस्कार कर अरचें जिना । पुनि मुनिवरको बंदन ठना ।
तब समस्त जन थुति यों करें । परम ज्ञान ये मुनिवर धरें ॥१६॥
पुनि कन्या देखें तिह ठाईं । इन्द्र समान युधिष्ठिर राई ।
सबही को चित हर्षित भयो । मुनि बचननमें निहचे लयो ॥२०॥
पांडव आये सुनके राय । चंडवाह अति उत्सुक भाय ।
मिलन काज तब सन्मुख चलो । सेन चतुर बिधि साथें रलो ॥२१॥
घन गरजत शशि गज सजि चले । घोटक घंटा सुभटगन रले ।
स्यंदन स्वर्ग सदन सम गंग । छत्र नृपति सिर अति निरभंग ।२२।
तहँ जिन दर्शन कीनों सार । पुनि बन्दे मुनिवर दमतार ॥
ता पीछे उठके नर राय । भेट पांचों नृप गल लाय ॥ २३ ॥
नुत मस्तक ह्वै राजा ठये । कुशल परस्पर पूछत भये ॥
पुत्री सहित नगरमें आय । अपने ग्रह भोजन करवाय ॥२४॥
तबही भूप युधिष्ठिर बरे । पाणिग्रहण को जांचे खरे ॥ २५ ॥
मंडप ऊपर सोहें भले । कंचन कलश सुमंगल रलें ॥

मुक्ता फल करि मानों हंसे। माला कुसुम तनी बहु लसे ॥२६॥
ऐसो मंडप सोहे जहां। ग्यारह कन्या परनी तहां ॥
कन्या नृप तट राजे एम। कल्प लता सुर तरु संग जेम ॥ २७ ॥

दोहा

अहो धर्म यह जीव को, सुख दाई सब ठौर।
तातें धर्म सु कीजिये, ताजि अघ कारज और ॥ २८ ॥

पद्धड़ी छन्द

इम पुन्य विपाकहि धर्म पूत। बहु व्याहि बधू वर विधि संजूत ॥ भुगते सु भोग जिमि देवराज। पुर देश बनहिं पूजो सु साज ॥ २९ ॥

कहँ हस्ति सु पुर सुरपुर सु आम। कहा कौशिक पत्तन तिय सुनाम। कहँ विंध्य सुताको सम्नि देश। कह पुर त्रिभंग पत्तन सुभेश ॥ ३० ॥

दश कामिनि आपत कहँ सु होय। यह पुन्य तनो फल जान सोय ॥ इह भांति जान जैनी सुचित्त। जिन धर्म अनूपम धरहि नित्त ॥ ३१ ॥

इति श्री मन्महाशोलाभरण भूषित जैनी नामांकितायां लाला बुलाकीदास विरचितायां भारत भाषायां पांडव परम मगन युधिष्ठिर कन्या लाभ वर्णनो नाम चतुर्दशम् प्रभावः

अथ भीम पांडव कन्या द्वतीय प्राप्ति

घटुक सुतोत्पत्ति गज वसीकर्ण गदा लाभ वर्णन पंचदश प्रभावः

सुमतिनाथ स्तुति मंगलाचरण ॥ सवैया तेईसा

है बिधिरूप रची बिधि नेम सुता सों सची रिधि सिद्धि बिधाता
सो करता शिवको हरता भव औ अनुभौ रस मांहि जुराता ॥
सो सुबिधी प्रभु है सुगुनाकर थावर जंगम जीव को त्राता।
जैनिको अंग जुताको नमें क्रम पंकजको नित इच्छित दाता ॥१॥

चौपाई

छोड़ चले तब पुर तिर श्रंग। पांचो पांडव माता संग ॥
निकसे अर्द्ध निशाके मांहि। पूरब थितको निरखत जांहि ।२।
पंकत सदन बिराजे सही। दंपत बहु सुख भुगतें तही ॥
साजत सैन बसनकी सेज। दीपक दीप्त सु दुति की रेज ॥३॥
तिनमें केई सु याकी नार। सोवत पति भुज बंदन धार ॥
केई एक खेद सुरतको पाय। बिगल्लत कछु कुच कंचुक भाय। ४।
को इक पतिसों रोसत बके। शोक सनेह मसह के सके ॥
परकी या तिय परमौं रची। सो चित तन संकोचत पची ॥५॥
नार प्रगल्ला को इक घेरे। पति सन्मुख दे उत्तर खेरे ॥
केइ एक तोटा सकुचत अंग। दृष्टि न जोरत भरता संग ॥ ६ ॥
प्रोटा करत सुरतकी केल। पति संग सींचन प्रीत सुबेल ॥
विप्र सु लुब्धा प्रीतम हेत। रोसी सुनो सेई संकेत ॥ ७ ॥
इस विध चरित अशुभ शुभ घने। या जगमें नर नारी सने॥
तिनहु सुनत अरु देखत राय। मंद मंद गति चलते जाय ॥८॥
करको दंड धरें परचंड। मनुषा मानिक सूखल बंड ॥
मंच मेरु मनु नरपद वेरें। पांडव भूप भुवन में फिरें ॥ ९ ॥
बीथी शोभा देखत जांहि। क्रमते पहुंचे इक बन माहि ॥
भूप युधिष्ठिर प्यासे भये। मगके श्रमते खेदित ठये ॥ १० ॥
रवि आताप तपत तन सोय। भीम प्रते इम बोलो कोय॥
पग धरिवेको मैं असमर्थ। महा तृषातुर जलके अर्थ ॥ ११ ॥
तातें सब तुम बैठो इहां। यों कहि के नृप बैठो तहां ॥
तौलों निशिको आगम भयो। कज्जल सम तम दस दिशि छयो ।१२
तृषावंत तब बोलो राय। अरे भीम जल तुरतहि लाय ॥
तृषा निवारो मेरी येम। तृषावन्त को जीवन केम ॥ १३ ॥
तृषावंत तज देय शरीर। तृषावंत नहिं धारे धीर ॥

धम्म पुत्रको ऐसो देख। भीम भयो अति विहवल भेख ।१४।
सो दरको तहां आछे थाप। जल ल्यावनको दौरो आप॥
जल भाजन एक करमें रखे। और सुबनमें पहुंचे भखे ।१५।
तहां कमलाकर जलसों भरो। देखो हंस सुःख अनुसरो॥
भीम भयो भय बर्जित सही। जल लेके पुनि आयो तही। १६।
तौलों वट तर पृथ्वी थाय। सोयो त्रिपित युधिष्ठिर राय॥
सोवत लखिके नृपको भीम। हृदय विषाद लहो तहँ ईम ।१७।
विषम विचित्र अहो संसार। देखतही सब वो हितकार॥
भरमरूप यह थिर गह धाम। जैसो भीत लिखो चित्राम ।१८।
भव नाटक नट पेटक कर्म। नर नट नटें विषयके भर्म॥
महा पुरुष जे पावन महा। ते भी विधि बस भटके जहा। १९।
जो कुरुवंश शिरोमणि रूप। पांडवराय युधिष्ठिर भूप।
सो यह सोवैं विन परजंक। पृथ्वीमाहिं पड़े ज्यों रंक॥ २०॥
जौलों पावन चितवत यही। तौलों खग इक आयो तही।
ताके तट अति कन्या भली। देखी भीम सुउपमा रली २१॥
बिम्बा अधर धरे मुख शशी। कुचक पिच्छ मृगनैनी अशी।
कै यह लक्ष्मी गुणकी धाम। कै अथ मंदोदरि शुभ भाम॥२२॥
कैसी ताके पद्मासची। कै रोहिणि यह विधना रची।
जौलों चितवत ऐसे भीम। तौलों खगपति बोलो ईम॥२३॥
अहो देव शुभ कन्या एहु। पाणि ग्रहण कर तुम अबलेहु।
भीम भने खगपति सों येम। को तुम कहते आय केम॥२४॥
सुता कौनकी कन्या येह। किम कारन तुम मोको देह।
खग बोलो सुन मारुत सन्त। या कन्याको जो बिरतंत॥२५॥
संध्या कार नगर शुभ लसे। सिंह घोस नृप तामें बसे।
हिंड बंशते उपजो वहे। हरिनी नामा रानी लहे॥ २६॥
नाम हिंडवा ताकी सुता। रतितें सुभग अधिकता जुता।

तरुनी है सो काहू समै । गेंद लहे सखियों सो रमै ॥ २७ ॥
सिंह घोष ने खेलत लखी । चितमें चिंता ऐसी रखी ।
कौरव याको शुभ भरतार । रूप सकति कर या सम सार २८॥
यों विचार चित तबही राय । नैमित्तिक पूछो इह भाय ।
याको बर को ह्वै है सही । ऐसी सुन नैमित्तिक कही ॥ २९ ॥
जो पिशाच बट नीचे धीर । जागत तिष्ठ नरवर बीर ।
याको भरता है है सही । यामें मिथ्या रंचक नहीं ॥ ३० ॥
पुनि पिशाच जो बटमें रहै । तासों जीत लहेगो वहै ।
तादिनते निन थापो मोहि । निन्द्रा रहित सुदेखो तोहि ३१॥
तातें याहि विवाहो अबै । जासों भव सुख भुगतो सबै ।
कन्यासी तन तजिके लाज । बोली भीम प्रते इम साज ॥३२॥
अहो नाथ मुझ बेगहि वरो । चितहिविचार कछूमत करो ।
ह्यां विचार कछु बरते और । सो सब सुनिये चितदे ठौर ॥३३॥
यावट बिटप विषमके बीच । बसत पिसाच सदा अतिनीच ।
अरको इकखग गगनहिं जात । विद्या रहित भयो दुखपात ३४॥
सो विद्याके साधन काज । बैठो या बटके उर माज ।
मोको भी कछु नाहींगने । ऐसो बल बहु खगपति ठने ॥३५॥
अरु पिशाच सुन तेरी बात । कोमल हेगो चित बहु भांत ।
तातें अब तुम चुप ह्वै रहो । बोलोमत कछु जो सुखलहो ३६॥
ऐसी सुन उक्ति हिंडवातनी । बट तरुवासी राक्षस सुनी ।
घन गरजे ज्यों गरजत सोय । निकसो अतिही क्रोधितहोय ३७॥
फूटे करण सुनत जित घोर । करत पिशाच सुऐसे शोर ।
जम सम भीम भने तब यहै । राक्षसको ललकारत कहै ॥३८॥
आउ आउरे राक्षस आउ । अपनो भुजबल मोहिं दिखाउ ।
जा बलते जन त्रासित करे । कायर नर जे भयसों भरे ॥३९॥
ऐसी सुनत निशाचर गर्ज । धायो भीम प्रते अति तर्ज ।

काल बदन मनु आयो काल । किल किलात करतो विकराल४०
ऐसो राक्षस देखो जबै । भीम भयो उठ सन्मुख तबै ।
दोऊ युद्ध करनको अरे । धुनि ते परछत फोरे खरे ॥ ४१ ॥
धस के धरा जहां पग धरे । खात परस्पर पगको करे ।
बज्र मुष्टि सम मुष्टी हने । मानो गिलको चूरण हणे ॥ ४२ ॥
चरन घातकर मारे लात । इह विधि युद्धकरे बहु भांत ।
तौलों खेट हिंडवा संग । लग्न उठ्यो है क्रोधित अंग ॥४३॥
बोलो घोष हिंडवा प्रते । को परनेगो तो मो तनें ।
जोलों भुजा हिंडवा तनी । पकरो चाहे खेचर रनी ॥ ४४ ॥
तौलों भीम बली सुवशिष्ट । दक्षिन भुजकी मारी मुष्ट ।
पुन पिशाचको क्रोधित धार । पीठ विषै मारो पग भार ॥४५॥
उठो सुगिरके राक्षस सज्ज । पापी परम महा निरलज्ज ।
तबहि पिशाच किनारे करो । खचर भीम के सन्मुख अरो ४६॥
तौलों निश्चर निर्बल कियो । भीमसेन ने पगतल दियो ।
खेचर भी छिन अधिक सुठयो । पुनि चूर्नित ह्वै दुःखित भयो४७
भय कंपित ह्वै प्रणमो पाय । भीम प्रते सो क्षमा कराय ।
भीम सुगुणखण ग्रहतो भयो । सिद्धि वृद्धि ह्वै ग्रहको गयो ४८॥
तौलों उठे युधिष्ठिर राय । ब्याह अडंबर रचि अधिकाय ।
भीमहि साथ हिंडवा वही । पाणि ग्रहण कर ब्याही सही ॥४९॥
भीमसेन तहँ ताके संग । भुगते भोग बिपुल निरभंग ।
बहुत दिनोंते तिष्ठे तही । धारो गर्भ हिंडवा सही ॥ ५० ॥
जबही बीते पूरन मास । जनमो सुत तब गुनकी रास ।
नाम घटुक शुभ ताको धरो । सो तो प्रकट जगत अनुसरो॥५१॥
पांचौ पांडो निकसे तबै । भीम विपुल में पहुँचे सबै ।
सिंह व्याघ्र करि आकुल लसे । तहं राक्षस भीमासुर बसे॥५२॥
दुर्धर दुष्ट बिपातिको दाय । अरु धारे भुज बल अधिकाय ।

पांडव आवत देखे जबै । कलकलाट कर धायो तबै ॥ ५३ ॥
इनसों बोलो राक्षस नीच । तुम किम आये सो बन बीच ।
बन अपवित्र कियो मो चयो । या बनमें क्यों आवत भयो ।५४।
नहिं समर्थ नर जगमें कोय । मेरे वनमें आवे सोय ॥
तुम क्यों रे नर पग रज लाय । मलिन कियो मो वन अब आय ५५
भीमासुर जब देखो ईम । तबहि विचक्षण बोलो भीम ॥
रे राक्षस क्यों गरजे वृथा । अति खलही वर्षा भू जथा ॥ ५६ ॥
नर परजाय धरें हम सार । तातें पावन शुभ आचार ॥
जो पवित्र जिन चक्री हरी । त्यों पवित्रता हमभी बरी ॥ ५७ ॥
जो है शक्ति कछू तो बीच । कर के प्रगट अबै तू नीच ॥
असुर पने को जो फल फबै । सो दिखलाऊं तोको अबै । ५८ ।
ऐसी कहिके दोऊ भुजा । सज्जित कर के संगर सजा ॥
भीमसैन भीमासुर लरें । मानो मल्ल परस्पर भिरें ॥ ५६ ॥
चरण धरत अति कम्पे धरा । युद्ध करें इम दारुन खरा ॥
आपस में ते गरजे खरें । जाको सुन सिंहादिक डरें ॥ ६० ॥
मुष्टहि मुष्ट सुमारत जात । मुंडहि मुंड सुलातहि लात ॥
बहु बिध लरत करत हुंकार । धिरत मनोगिर नर आकार ।६१।
मुष्टि घातते चूरो खरो । असुर भीम ने निरमद करो ॥
गय भय मानें हरितें जेम । डरो भीमते राक्षस तेम ॥ ६२ ॥
भीमसेन के बंदे पाय । असुर बसो गृह अपने जाय ॥
ए भी बनतें निकसे तबै । क्रमते श्रुतपुर पहुंचे सबै ॥ ६३ ॥
तहँ चैत्यालय भीतर जाय । जिन प्रतिमा पूजी बसु भाय ॥
छिन इक तहँ नृप बैठत भये । रात्रि बसनको पुरमें गये । ६४ ।
पहुंचे जाय बनिकके गेह । सयन करनको चाहे एह ॥
बनिक कुटी थिति सब हों ठनी । कह कथा चैत्यालय तनी ।६५।
इतने में तहँ संध्या पगी । वैश्य त्रिया अति रोवन लगी ॥

शोकित दुखित बिलखत दीन। अंसुवन नैन झरें छवि छीन।६६।
करुनाकर कुंती तिय पास। गई सु पूछी अति आस्वास ॥
किस कारनसे रोवति एम। शोकाकुल अति कहिये केम। ६७।
बनिक भार्या बोली तबै। यह कारण अब सुनिये सबै ॥
याहीपुरमें नृप बकु नाम। पल भक्षक निर्दय अघ धाम।६८।
सूपकार नित ताके काज। पशुको मार समारे साज ॥
इक दिन पशु पल पायो नाहिं। गयो सु तब वह बनके मांहि।६९।
बर्त बिषै ते बालक मरो। इन उखारके गृह अनुसरो ॥
ताको आमिष संवारो गंध। नृपको वही परोसो सांध ॥ ७० ॥
नृप भी अति ही लौलपि होय। अधिक स्वाद सों खायो सोय ॥
अति हर्षित ह्वै कर के प्रेम। सूपकार सों बोलो एम ॥७१॥
स्वादु पक श[illegible]तकी रास। कौन ठौरते आनों मांस।
ऐसो मांस न देखो सही। सांच कहो तुम मोसों यही ॥७२॥
भूप भयभीत रसोईदार। अभय दान ले बोलो सार।
हे भूपति यह नरको मांस। रांध दयो तुमको रस रास ॥७३॥
हर्षित ह्वै नृप बोलो तदा। मांस याहि अब कीजे सदा।
ता दिनसे सो रसोईदार। गलियों मांहि फिरे अधिकार ॥७४॥
मोदक खुरमें खजले खरे। लए भूमन सो झोली भरे।
जे बालक खेले तिहि ठाय। फुसिलावे वह तिनको जाय ॥७५॥
भाग चले शिशु सारे जबै। पिछले शिशुको पकरे तबै।
एक एक शिशु नित प्रति लेह। मार मार के भूपति देह ॥७६॥
नगर लोग सब चौकस भये। देखनको तिस छिपके ठये।
देखो जबही पूछो ताहि। बोलो सो यह भूप कराहि ॥७७॥
मेरो दूछन नाहीं रंच। नरको भक्षक वहु नृप संच।
करके मंत्र नगर जन सबै। राजा बकहि निकारो तबै ॥७८॥
जे नर निकसें पुरसों बार। तिनहिं भषे वह बन में मार।

जन अनेक तन खाये जबै। यह विचार तब कीनों सबै ॥७६॥
एक पुरुष नित दीजे याहि। यह कर सबके सिरपुर माहि।
यह निबन्ध जब बांधो खेरे। देन लगे तब नित घर घरे ॥८०॥
द्वादश वर्ष गये यों साज। मो सुत बासर आयो आज।
यह विरतन्त कहो सब तोहि। सुत वियोग दुख व्यापो मोहि।८१।
तातैं सदन करत हों अती। अति दुःखित हूं मैं हूं सती।
आजुहि गाड़ी भर पकवान। ताके बीचहि मो सुत जान ॥८२॥
एक महिष पुनि ताके साथ। देवेंगे सब मिलि तिहि हाथ।
मेरे एक तनुज है तहां। ता बिन अबहूं करिहौं कहां ॥८३॥
हों नहिं जानति कारन केम। फटत नहीं मो छाती जेम।
करो सहाई जो कुछ अबै। तो यश तुमरो जगमें फबै ॥८४॥

दोहा

ऐसी सुन कुन्ती भने, रंचक डरिहों नाह
बनिक वधू शांतिन करी, ताके सुखको चाह ॥८५॥
दिवस भये तो पुत्रको, निश्चय करि हैं उपाय
मैं अपनो सुत देऊंगी। बकुबलि अर्थ पठाय ।८६।
या मंदिर तू बैठना, नित नित करहु अनंद।
यों कहि के कुन्ती गई, जहां भीम गुण वृन्द ॥८७॥
आवत देखी जननि जब, उठिके करो प्रणाम।
अपनो आसन छोड़के, बैठो अन्यहि ठाम ॥८८॥
सो भी छिन इक बैठ के, बोली गद गद बान।
बकु वृत्तान्त सारो कहो, सुत सों करुना ठान ॥८९॥
हे पावन सुन शान्त है, इस सुत है इस जोग।
सो राक्षस के बलि निमित, देवत हैं सब लोग ॥९०॥
पुत्र वित्त बिन दुःखिनी, किम जीवेगी एहु।
तातैं पर उपकार तुम, अभय दान इस देहु ॥ ९१॥

याके गृहमें आज निशि, बसे पाहुने होय।
इन माने तुम अधिकही, आसन बसन संजोय ॥९२॥
तातें ऐसी कीजिये, याको जीवित पूत।
सदनमांहिं आनंद सों, तिष्ठे सुख संजूत ॥९३॥
यह मनुष्य राक्षस बनो, लोगनको नित खाय।
तातें अब तुमसो करो, जिह विधि यहू नसाय ॥९४॥
कुन्तीके ये बचन सुन, बोलो पावन बैन।
मैं तेरो सेवक जननि, बात कही या केम ॥ ९५ ॥

चौपाई।

अपनो सेवक मुझको जान। आज्ञा पालन करहूं महान।
बचन तुम्हारे पालन हेत। अबहीं जाऊं जहां वह प्रेत ।९६॥
राक्षस बलिहों है हो जाय। इह विधि बात कहे सुत माय।
तौलों भट भेजे यम दंड। ताहि बुलावन लागे चंड ॥ ९७ ॥
आउ आउरे वा निज बेग। गाड़ी चढ़कर बलिके नेग।
अति बिलम्ब करिचालिभी दिये। तेरो हित नहिं ह्वैहै जिये ॥९८॥
तातें छिन इक जीवन काज। क्यों किलसतहो बिरथा आज।
आपुनको तुम तुरतहि करो। बलि कारन बकतट अनुसरो ९९॥
तल रक्षन की ऐसी उक्ति। सुनके बोली पावन जुक्ति।
जाहु जाहु हों आवत तुरा। ताको बलि बहु देहूं खरा ॥ १०० ॥
ऐसे बच सुन सब तल रक्ष। गये तुरत ह्वै हर्षित अक्ष।
तौलों पूरब दिशि पै आय। उदय भयो रवि छवि अधिकाय ॥१॥
बक चरित्र के देखन काज। आयो मानो करुना साज।
तबहि सकट तिन सज्जित करो। भर कड़ाह पकवान सुधरो ॥२॥
भीमसेन रथ चढ़के चलो। निर्भय ह्वै बहु धीरज धरो।
देख भीमको दानव सोय। सन्मुख आयो जम सम होय ॥३॥
कलकलायकर दिगचय रुद्ध। राक्षस आवत देखो क्रुद्ध।

भीम कहो तब ऐसी भाय । आउ आउरे राक्षस आय ॥ ४ ॥
तो भुजदंडनको बल देख । आज महाबल देहूं पेख ।
नर बराक तैं अबलों ग्रसे । ज्यों त्रन दंत लगतही नसे ॥५॥
ऐसे कह दोऊ कर दंड । ठोंक लगे लड़ने को चंड ।
दौरत दोऊ भू आकाश । फोटन करत भुजन :र पास ॥ ६ ॥
शीशहि शीश भिरावैं मत्त । खावा खवे सोलतहि लत्त ।
आपसमें मनु जमके पूत । युद्धकरें इम क्रोधित भूप ॥ ७ ॥
भीम जुताको त्रिन सम जान । भुज दंडन सों सीसहि भान ।
बहुत कोपते ताकी पीठ । पगदे दाबो जैसे कीट ॥ ८ ॥
पृथ्वी मांहिं पछारो खरे । दुष्ट कृतघ्नी निरदय परे ।
दोऊ चरन पकर केताश । लगो फिरावन पुन आकाश ॥९॥
ज्यों लों भूप रपटको चहे । तौलों दीन बचन बक कहे ।
मैं तुम सेवक सेवा भजूं । चरन लाग यह कारज तजूं ॥ १० ॥
सब लोगन के देखत तहीं । सेवक करके छोड़ो सही ।
ताको संगर सुनके सबै । तुरतहि पुरजन आये तबै ॥ ११ ॥
देखो युद्ध जुइनमें ठयो । पुनि निरखो बक निरमल भयो ।
बिमुख चित्त नर हिंसा प्रते । लख बकको सब हरषे अते ॥१२॥
जय जय रवपुर जन उच्चरें । भक्ति सहित परशंसा करें ।
अर्पनो जीवन मानो चित्त । निर्भय है इम भाषो कित्त ॥१३॥
महा मान्य तुम नरहो कोय । धवलकरो जग तुम यश लोय ।
आजहिंते सब जीवत बचें । तुम प्रसाद हम सुखमें रचें ॥१४॥
जिम घन जलत्रन पतपै सही । त्यों जन पालक सज्जन तुही ।
यों थुति करके जे नर दच्छ । तिनहूं भेंटपरी बहु अच्छ ॥१५॥
कोटिक धन अरु उत्तम अन्न । भेंट करो तिसके परसन्न ।
भक्त होय सो क्या नहिं करे । जो कछु होय सो आगे धरे १६॥
सकल दरब सों ल्यावत तही । जिन मंदिर करवाये सही ।

इतने में तहँ बर्षाकाल। आयो बरषत जल कणमाल ॥१७॥
आयो जलधर जलसों भरा। गगन उमंडकर छाई धरा।
उष्णा ताप निवारन काज। भयो जलागम घनसों साज॥१८॥
अपने अरिके नाशन हेत। क्यों न महानर उदयो लेत।
बरषा ऋतु लहि पांडव तहीं। धरम ध्यान लहि तिष्टे सही १९॥
आपु नहीं रचवाये भले। जो जिन मंदिर शोभा रले।
तिनहीमें जे बैठे रहें। चतुरमास लख बहु अघदहें ॥ २० ॥
पूरन करके प्राविटकाल। चलेसु पांडव पुन्य विशाल।
जहां जहां चैत्यालय लखें। पूजा करहि बिनय को रखें॥२१॥
कुन्ती सहित सु गति अनुसरी। क्रमते पहुंचे चम्पापुरी।
कर्ण नाम शुभ राजा तहीं। राज सिंहासन राजे मही॥२२॥
तहां कुलाल गृह शोभित महा। कुम्भ चक्र बहु राजे तहां।
बैठे पाडव तामें जाय। भीम बिनोदी खेले भाय॥२३॥
चाक फिरावे बिनही लाट। हंसि हंसि फोर करुवे माट।
फोड़े ढकने घड़िया घड़े। अरु फोड़े बहु बासन बड़े ॥२४॥
ज्यों ज्यों फोरत खरको होय। त्यों त्यों हर्षि अनन्दे सोय।
कुन्ती सुनिके कोपित ठई। भीम तनुजको डांटन भई ॥२५॥
रे रे भीम महा तू लोद। करत कहा ए बासन रोद।
जहां जहां तू बैठे जाय। करत अनर्थहि ताही ठाय ॥२६॥
कर जुग तेरे चंचल खरे। रहत न निचले दुच्छन भरे।
करत न कबहूं शिष्टाचार। जित तित भावत ढार बिगार॥२७॥
योंहि उलाहनों दीनों माय। पावन मौन लई सुन भाय।
बिनय उलंघन अघतेडरो। भीम निकस तब पुरमें बरो॥२८॥
भूख लगी कछु खायो चहे। हाट बजारहि आयो बहे।
हलवाई जहँ बैठे घने। ढेर लगे बहु पूवा तने ॥२९॥
को बिधि भीम भने तहँ एम। लेहु कंदोई सुंदरी हेम।

देहु अन्न मुझ याही ठौर। भ्राताचार बु भूखित और ॥३०॥
तिनको भेजूं भोजन फबै। दीजे ढील न कीजे अबै।
देख कंदोई तोषित भयो। अन्न देनको उद्यत ठयो ॥३१॥
स्वर्ण दिये ते पृथ्वी मांहि। को है नर जो तूसै नांहि।
आसन ताहि कंदोई दयो। तापर भीम बिभूषित भयो ॥३२॥
भक्तकार बहु भक्ती धार। भोजन भाजन दोनों सार।
भीम विभुक्षित अतिही तबै। मोदक आदिक खाये सबै ॥३३॥
अन्न भख्यो बहु गलसों सचो। हाट विषै तहँ रंचन बचो।
वाणिक तब निरधारो येह। भ्रातन को अब भोजन देह ॥३४॥
बचो न रंचक दीजे कहा। डरो बनिक यों चितवत महा।
छिन आधक में देहूं अबै। जो कुछ भोजन चहिये सबै ॥३५॥
भीमसेनके चरनन नमो। तोषित करके थिरता पमो।
तबही उलंघित अंकुश महां। मस्त गयन्द करनको तहां ॥३६॥
तोरि अनाल छुटे बलवन्त। टाहत हाटक जारहि अन्त।
रम्य सदन तरु आगे जोयें। फोर उपारत बिनही सोय ॥३७॥
नगर लोग बहु व्याकुल भरे। भीमसैन के तट अनुसरे।
रक्ष रक्ष मुख भाषत एह। आये शरन सु कम्पित देह ॥३८॥
विप्र बली तुम परजा रक्ष। अब हम रक्षा कीजे दक्ष॥
उठो भीम भी तबही बली। गज जीतन की मनसा रली ॥३९॥
बज्र घात सम मुष्टी घात। घात्यो हस्ती मस्तक हात॥
पगसों कीने गज पग खंड। भुज दंडन सों सुंडा दंड ॥ ४० ॥
दंत उखार सु निरमद करो। जीत सु पावन जय अनुसरो॥
तौ लौं कोइक नृप तट जाय। ऐसी भांत कहो समुझाय ॥४१॥
बहुरि अरी मिल रणके माह। जीत सके जिस गजको नाह॥
एक विप्रने सो गज बली। निर्मद कीनों छिनमें छली ॥४०॥
ताहि हतो तुम छलसों देव। विग्रह बिनही कीने एव॥

सुनके कर्या निवारो याहि । ऐसी बात जु कहिये ताहि । ४३ ।
चित नहिं आनी किंचित जान । करगा नृपाति बहु मतकी खान ॥
जीत पाय तहँ किंचित काल । निवसे पांडव बुद्धि विशाल ।४४।
निकस चले पुनि पहुंचे तहां । देवै सिकपुर राजे जहां ॥
भूप वृष ध्वज तामें बसे । तास दिशाचल रानी लसे ॥ ४५ ॥
दिशनंदा शुभ ताकी सुता । सघन जघन तन जोबन युता ॥
पांडव तहां बिभूषित होय । बैठे बनमें खेदित सोय ॥ ४६ ॥
चारों भ्राता बन में साज । भीम गये पुर भिच्छा काज ॥
द्विजको भेष धरो धीमान । गयो नृपति गृह गुनकी खान ॥४७॥
राज सुता सु झरोखे ठई । तबही पावन देखत भई ॥
क्या यह मन्मत धर नर रूप । आयो भिच्छा छलहि अनूप ।४८।
ऐसी चितवत चकत रक्त । जानी नृप तब ते आसक्त ॥
देवे को तिस उद्यत राय । पूछो भीम सु पास बुलाय ॥ ४९ ॥
आये भो तुम विप्र किमर्थ । जो आये तुम भिच्छा अर्थ ॥
तो मो गृहते भिच्छा सुता । हे दुज लेहु अबै गुण जुता ॥५०॥
ऐसी कहके पुत्री राय । आगे आन करी सुखदाय ॥
भीम भने नहिं जानों बात । जाने मेरो जेठो भ्रात ॥ ५१ ॥
भूप भने वह तिष्ठे कहां । भीम भनों है पुर तट जहां ॥
निकट जानके नरपति चलो । भीम सहित बहु आनंद रलो ।५२।
धरम तनुज तट भूपति जाय । नुतकर पूछी कुशल बहु भाय ॥
आपसमें बहु प्रीति जु ठान । भोजन भक्ति करी ग्रह आन ।५३।
धरम पुत्रसों विनिये तबै । कन्या भीमहि ब्याहो अबै ॥
धरम पुत्र ने मांनो जबै । पाणिग्रहण आरम्भो तबै ॥ ५४ ॥
उत्तम दिवस लगन शुभ मांहि । कन्या दीनी भीमहि व्याहि ॥
पुन्ह जोग भिक्षा को गये । कन्या पाई सुभके उदै ॥ ५५ ॥
कछुक दिना तहँ रहके चले । सोमा सरिता पारहि रले ॥

बिंध्याचल तट पहुंचे सही । देखे जिन ग्रह गिरपै सही ॥ ५६ ॥
स्वर्ण मई जो गिरि कैलाश । जिनग्रह राजत शुभकी रास ॥
जिन मंदिर लख शोभा रले । खेदित थे पै तौ भी चले ॥ ५७ ॥
बहु उतंग तहँ गिरिको शृंग । चढ़े सु पांडव हर्षित अंग ॥
देखो जिन गृह बहु बिस्तार । दृढ़ आगलकर मूंदो द्वार ॥ ५८ ॥
बन तरु राजत शोभा खान । उन्नत साल कनकसो पान ॥
मूंदो देख उदासी भये । परवेशन असमर्थहि ठये ॥ ५९ ॥
छिन इक बैठे खेदित होय । तौलों भीम उठे अवलोय ॥
द्वार विषैकर दाबो सन्त । उदघाटे जुग पाट तुरन्त ॥ ६० ॥
गृहमें प्रवसे पांडव तबै । जय जयकार करत धुनि सबै ॥
स्वर्ण रूप मय वंदे बिम्ब । फल फूलन अरचे तजदम्ब ॥ ६१ ॥
तोषित ह्वै बहु थुतिको करें । जिनको गुन गावें अघ हरें ॥
आजे जनम सुफल हम भयो । आजहि मारगको फल लयो ॥ ६२ ॥
आजहि नैन सफल हम एव । तुम दरशन ते जिनवर देव ॥
आजहि सफल भये हम हाथ । भाव सफल हम आजे नाथ ॥ ६३ ॥
आजे शिव पद पायो एव । तुम दर्शन ते जिनवर देव ॥
तुम चिनवन चित अंतर आज । सफल भये सब चिंता त्याज ॥ ६४ ॥
आजहि सफल भये पग एव । तुम यात्राते जिनवर देव ॥
आजहि धन्य भये हम आप । आजहि सकल बिनाशे पाप ॥ ६५ ॥
आजहि मान्य मनोहर एव । तुम दर्शन ते जिनवर देव ॥
आजहि हम पायो पदराज । आजहि हमरे सुधरे काज ॥ ६६ ॥
आज सफल हम रसना एव । तुम गुन गावत जिनवर देव ॥
सुरपतिके सुख आजहि लहे । चक्रवर्ति हम आजहि भये । ६७ ।
आजहि मस्तक पावन एव । तुम यात्राते जिनवर देव ॥
आजहि सकल तनो फल पाय । आजहि त्रिभुवन पति पदपाय ६८
आजहि आनन पावन एव । तुम यश जपते जिनवर देव ॥

इम थुति बहुकर प्रणामित भये। बाह्य निकस तहँ छिन इक ठये।६९।
तौलों तहँ इक आयो जक्ष । मान भद्र नामा बहु रच्छ ॥
नुत करसो बोल्यो इह भेव । तुम हो धन्य नरोतम एव ॥७०॥
महा विवेकी गुण आगार। सदा श्रेष्ट अरु शिष्टाचार ॥
जिन गृहद्वार उघारे अभी । तातें हम तुम जाने सुभी ॥७१॥
अरु मुनिंदके बचने तथा । पुन्नी नर तुम जाने जथा ॥
ऐसी कहिके उत्तम गदा । पावन के कर दीनी तदा ॥ ७२ ॥
जाके नाम सुनत ही क्रूर । युद्ध विषै अरि भाजत दूर ॥
जा नरके करमें यह होय। ताकर भीत न व्यापे कोय ॥७३ ॥
जों गज वृंद सु भेषज हरे। त्यों भय सकल गदा तें टरे ॥
अरिमद नाशन विद्या गदा । पांडव पाय ठये तहां तदा ॥७४॥

दोहा

जित विपक्ष अस दक्षवर, सकल सुभन की सीम।
शुद्ध पक्ष संगर विषै, नृप बंदित जय भीम ॥ ७५ ॥

पद्धडी

जो जीत निशाचर खिचर संग। तहँ व्याही हिडंबा सुखहि संग॥
पुनि कीनों गजमद छेदि छीन। वृषकेतु सुता अरु परन लीन ।७६।
जिन गेह द्वार उदघाट पाट। लहि भीम गदा युत गुन विराट ॥
जिन धर्म तनों फल एह जान। सुन मित्त चित्त जैनी सु आन ।७७।

इति श्री मन्महाशीला भरण भूषित जैनी नामांकितायां लाला बुलाकीदास विरचितायां भारत भाषायां पांडव कन्या द्वितीय प्राप्ति और घटुक सुतोत्पत्ती गजवसी करण गदा लाभ वर्णनोनाम पंच दशमो प्रभावः

अथ अर्जुन द्रोपदी विवाह और पांडव

श्री हस्तनागपुर समागम

मंगलाचरण शीतलनाथ स्तुति ॥ दोहा

ललित अंग शीतल अमल, शीतल शील सु दक्ष।
बिमल कमल पद नमहु तिस, शुभ लक्षण श्री वृक्ष ॥ १॥

चौपाई

जच्चहि भने युधिष्ठिर तदा । किस कारन दी भीमहि गदा॥
बोलो जच्च सुनो नृप अबै । गदा देनको कारन सबै ॥ २ ॥
याही भरत बिषै जु उतंग । गिरि विजियारध धवलित अंग॥
पूर्वा पर जिम जल निधि लगो। मान दंड मनुभूपर पगो ॥ ३ ॥
उन्नत ता योजन पच्चीस । अस विस्तार अठाई बीस ॥
षट् योजन है ताको मूल । श्रेनी दोय धरें अनुकूल ॥ ४ ॥
दच्छिण उत्तर तिनको नाम । तहँ दच्छन रथनूपुर ग्राम ॥
मेघ बाह नृप तामें बसे । प्रीत मती तसु रानी लसे ॥ ५ ॥
ताको सुत घन वाहन येव । घन बाहन जिम धारे सेव॥
विद्या साधन उन्नत महा । अगिनत जीत अधिक यश लहा।६।
वंछित राज तनो विस्तार । सब अरि छेदक उद्यम धार ॥
आयो साधन विद्या गदा । याही विंधयाचल पै तदा ॥ ७ ॥
साधत बहु चिर बीते तास । सिद्धि भई सुगदा गुन रास॥
तोलों गगन चतुर्विध देव । जात लखे तब पूछो येव ॥ ८ ॥
कहां जात ए सुरगन अबै । कोइक खगसों बोलो जबै॥
याही विंधयाचल पै मुनी । नाम क्षमाधर अतिही गुनी॥ ६॥
तिनको उपजो केवल ज्ञान । लोकालोक प्रकाशक जान ।
तिनको बन्दन अब हम जाहिं । ज्ञान कल्यानक पूजा माहिं १०
धर्मामृत फल पीयो चहें । जासों शिवपद परभव लहें ।
ऐसी सुन तब खगही जाय। धर्म सुनो अरु बन्दे पाय ॥ ११॥
मुनिवर धर्म सुनो शिव दाय। तेरह विध चारितके पाय ।
जास धरत भवसागर पार । पावत जनम जरा दुख भार ॥१२॥
भवसो माहि धरो बैराग । संयम माहि करो अनुराग ।
मुनि तट दीक्षा जांचे तबै। विद्या आप कहो यों तबै ॥ १३॥
अहो बिचच्छण सुन खग एश। तुम कीनों मम साधन क्लेश।

तब मैं सिद्ध भई तुम तीर। मो फल भोगो अब तुम धीर ॥१४॥
जो चाहें ये मोको तजो। तो तुम क्लेश वृथा क्यों भजो।
प्रौढ़ दृढामें विद्या गदा। युद्ध विषै जय दायक सदा ॥ १५॥
लक्ष्मी कीरति नाना भोग। मोते होय सहज संयोग।
होय भृत्य सुरजा परभाव। अरु मनुषनको कौन कहाय ॥१६॥
क्योंहूं क्योंहूं करिके सिद्ध। तोहि भई मैं अद्भुत रिद्ध।
तातैं खगपति ह्वै गम्भीर। भोग सर्वथा मो फल धीर ॥ १७॥
यातैं अब मत होय विरक्त। ऐसी सुन खग बोले युक्त।
हे विद्या हम तोते महा। फल पायो मुनि संगत लहा॥ १८॥
जो न साधनों मैं अब तोय। तो मुनि कैसे मिलते मोहि।
यातैं तो फल पायो यहां। पाये मुनि मैं सत्तम सही॥ १९॥
खगको निहचल अतिही जान। विद्या बोली ऐसे बान।
मोको साध तजो मतराय। अब मैं भृष्ट भई इह ठाय ॥२०॥
अपनो गृह तजि तुम नट पगो। मोको छांड अनुत्तम जगो।
जैसे केइक तजके राज। दिक्षा धारन संजम साज ॥२१॥
तासों भी पुनि गिरके परे। तैसे भृष्ट भई मैं खरे।
ऐसे दीन बचन सुन तास। प्रश्न किया मैं मुनिके पास॥ २२॥
याको पतिको ह्वै है सही। ऐसी सुनके मुनि यों कही।
मान भद्र सुन याको ईश। ह्वै है भीम महा भट शीश ॥२३॥
पुनि मैं पूछी मुनि सों येम। कौन भीम वह लखिये केम।
ऐसे सुनके बोले मुनी। भरत यही गजपुर अति गुनी ॥२४॥
पांडु भूप तहँ उपजन हार। तसु सुत भीम महा बलधार।
भीमसेन सो भ्रातन संग। आवहिगो इह ठौर अभंग ॥२५॥
त्रिभुवन सुन्दर जिन गृह यहे। बंदनको ह्वै उद्यत वहे।
आगल लागे द्वार कपाट। भीतर धसिहैं तिस उद्‌घाट ॥२६॥
वहै गदापति ह्वै है ठीक। यामें रंचक नांहि अलीक।

खेचर अरु मैं सुन यह बात। विद्या कोसिख इह बहु भांत॥२७॥
खेचर मुनि तट दीचित भयो। मन बच क्रमसों संयम लयो।
तबतें मैं ता विद्या तनी। रच्छा करत इहां थिति ठनी॥२८॥
मोचित अति तुम देखन काज। तातें अबलों बैठो राज।
तुमको देख भयो सन्तुष्ट। याहि गदादी विद्या सुष्ट॥२९॥

दोहा॥

ऐसे कहिके जच्छपति, मान भद्र सुख रास।
इन गुनको सुमिरत हृदे, निवसो निज आवास।३०
ता पीछे पांडव सकल, दच्छिण देश फिरांहि।
फिरके गजपुरको चले, भुंजत पुन्य फलांहि॥३१॥

चौपाई

क्रमतें चलन्ते पहुंचे तहां। पुर माकन्दी निवसे जहां।
सुर सम सज्जन जामें बसें। मानों सुरपुर भू पर लसें॥३२॥
चहूं ओर जिस साल बिशाल। उन्नत मानों भूतल भाल।
चारों वर्ण बसें जिस मांहि। अकुली नीच बिजाती नांहि॥३३॥
बिबिध बरन मय सदनहिं सनी। मनुतन भूषित भामिनी बनी।
बिप्र भेष धरि पांडव तहीं। गृहे कुलाल सु निवसे सही॥३४॥
पुर शोभा ये देखत फिरें। तोषित होत छिपे अनुसरें।
तहँ भूपतिवर द्रुपद नाम। वीर्य धैर्यधर बहु गुन धाम॥३५॥
भोगवती तस रानी सती। भोगवती निज रतितें अती।
धृष्ट द्युम्न आदिक तसु पूत। अधिक प्रतापी बल संयूत॥३६॥
रूपवन्त अति द्रुपदी सुता। गुनकर अधिक सचीते जुता।
ताको रूप बरन को सके। बरनत कबिको रसना थके॥३७॥

सवैया इकतीसा

गतिसों मराल जित जातहै नच्छत्र नख, पाद पद्म रम्भा थम्भ
जंघा जुग जानिये। जोती ते रतन खान सिलहू नितम्भ

नाभ, सरसी सुमेरु तट उरहू ते हानिये ॥ कुचते कनक कुम्भ बचते सुलच्छ धाम, बाहुते कमल साख इन्द्र सुख मानिये । घोष पिक ऐनी नैन नासिका रेंनी अहि, जातीहै स जैनी जग द्रौपदी बखानिये ॥ ३८ ॥

चौपाई ।

इह विधि पुत्री जोबन धरे । द्रुपद पिताने देखी खरे ।
मंत्री तबहि बुलाये सही । तिनसें भूपति ऐसे कही ॥३६॥
कन्याको बर कहिये कोय । यासम शुभ गुण धारे जोय ।
तबहि सचिव सब बोले बान । अपनी अपनी मति परमान ।४०।
राज पुत्र जे उत्तम महा । तिनको नाम सु नृपसों कहा ।
इनमें उत्तम जानों जाहि । अपनी कन्या दीजे ताहि ॥४१॥
राजा द्रुपद बिचारो एम । बुरो मनाऊं काको केम ।
जाचन भंग सुभय ते राय । कहो स्वयम्बर कीजे भाय ॥४२॥
बेगहि दूत बुलाये सबै । देदे लेख पठाये तबै ।
कर्ण दुर्योधन आदिक राज । दौरे तिनहिं बुलावन काज ४३॥
खेचर एक खगाचल बसे । नाम सुरिंद्र सुबर्धन लसै ।
तिन्है निमित्तक पूछो सौन । मो कन्या बर ह्वैहे कौन ॥४४॥
ऐसी सुन नैमित्तिक कही । हे राजा यह सुनिये सही ।
पुरमाकन्दी नर बलवन्त । धनु गांडीव चढ़ावे सन्त ॥ ४५ ॥
तो पुत्री अरु द्रोपदि भली । इनको बर सो ह्वैहे बली ।
ऐसी सुनके खग निरभंग । कन्या धनुष सुलीने संग ॥ ४६ ॥
माकन्दी पुर द्रुपदी तीर । सब बिरतन्त कहो खगधीर ।
धनु गांडीव द्रुपदको दयो । बहुत हेतकर पुरतट ठयो ॥ ४७ ॥
तब नृप द्रुपद सुमंडप रचो । तोरण कुम्भ कनक मयखचो ।
तने चंदोवे मोतिन संग । बहुत पताका उन्नत अंग ॥ ४८ ॥
हेम भीतिका बेष्टित रिद्ध । उन्नत बेदी ताके मद्ध ।

हाटक घटित बिराजे थंभ । जिनको देखत होहि अचम्भ ४९॥
तौलों नृप सब आये तहीं । कर्ण दुर्योधन आदिक सही।
जालन्धर अरु यादव ईश । कोशल पति पुनि मगधाधीश ५०॥
रूपवन्त बहु शोभित भूप । बैठे मंडपमांहिं अनूप ।
पांडव पांचो द्विजके भेख। आपहुंचे सो शोभा देख ॥ ५१ ॥
तौलों द्रुपद सुगुनको गेह । दई घोषना पुरमें येह ।
धनु गांडीव पनिच आरोप ।करहि जुराधा वेध अगोप ५२॥
सोई नर खग कन्या बरे । यही प्रतिज्ञा द्रुपद धरे ।
सब नर सुनत प्रतिज्ञा यही। निकट धनुषके आये सही ५३॥
द्रोण कर्ण आदिक सब रले । देख न सकै धनुषको भले।
स्पर्शन कर्ष कहांते करें । देखतही जे भयको धरें ॥ ५४ ॥
तौलों द्रोपदि गुनकी पांत । बर दुकूलकर ढांकत गात ।
नासापुट परिमुक्ता स्वर्ण । अधिक बिराजत बेसर वर्ण ॥५५॥
राजनको तहँ देखन काज । सो आई उपमंडप साज ।
तौलों नृप सिंहासन ठये। कन्या को सब देखत भये ॥ ५६ ॥
सात सखी जन लीने सिष्ट । धाय हस्त मणिमाला इष्ट ।
नैन बिक्षेप करतही सबै । कीने बिहवल नरपति तबै ॥ ५७॥

सवैया इकतीसा

गुननी की दाम किधौं जामनी के जाम मध्य भामिनी के भाय किधौं दामिनी दुमकहै। भूषनीकी भूषनीक दुःखनीकी हाईसी भूम की भूमक और भांकत भूमकहै ॥ छबिसों छबीली रस रीत की रसीली बेल बीरह बिदारबेको कामकी कुकुम है । चंदनकी जोत जैनी जैन मत पोषबेको मिथ्या रात धातबेको घामकी घुमकहै

दोहा

हाव भाव विभ्रम सकल, बरनो जाय न जास ।
निरखतही मोहे नृपति, धारे बिविध बिलास ॥ ५८ ॥

चौपाई

ते सब ताको देखत भये। मदन बान कर आहत ठये।
सब मंडप जन भाषें यही। ऐसी तिय कहुं देखी नहीं ॥६०॥
महा स्वरूपा सुभगाकार। बहु लावन्य धरे गुनसार।
को इक मीतहि बात कराय। नैनन सों तिस देखत जाय ॥६१॥
नागबेलि दल छेदित कोय। मुसकत दसन दिखावत सोय।
को इक पद अंगुष्ट हिलाय। लखत भयो सिंहासन ठाय ६२॥
कोइ इक दच्छिण पग अनुसरे। बांये पगके ऊपर धरे।
को इक लेंइ जंभाही खरे। अंग दबावें सिर भुज धरे ॥६३॥
कोई करते मूछ संवार। मुद्रक दुति दरसावत सार।
इह विधि चेष्टा नाना रूप। करत सकल तहं बैठे भूप ॥६४॥
बीना मुरज बजे बहु तहां। पटह दुंदुभी घन धुनि महा।
तब सुलोचना धात्री खरे। स्वर्ण ज सिष्टा करमें धरे ॥ ६५ ॥
जे सिंहासन बैठे राय। द्रुपदीको दिखलावन जाय।
हे पुत्री तुम देखो याहि। यह नृप बसत अयुध्या माहिं ॥६६॥
सूरजबंश शिरोमणि सही। सूरसेन मनु सुरपति यही।
यह राजा बानारस पती। जिन बिपत्तकी प्रभुता हती॥ ६७ ॥
स्वर्ण वर्ण यह राजा कर्ण। चम्पापुर पति अमरण सर्ण।
यह दुर्योधन गजपुर पात। यह दुःसासन ताको भ्रात॥६८॥
राजा द्रवए मागध ठीक। जालन्धर पति ए बालीक।
इन राजन में जान न जाय। राधा बेध करे को राय ॥ ६९ ॥
ज्वाला जाल जटित धनुजले। सुर अहिफण फुंकारहि रले।
पनिच बढ़ावन कारज भाय। आवे निकट धनुर्धर राय ॥७०॥
तिनको जारत ज्वाला रूप। नयन मींचकर भागे भूप।
बिषम उरग तिस देखत और। बैठ रहे भयकम्पित ठौर ॥७१

कोइक नरपति ज्वाला हतें। परें धरामें मूर्च्छा रतें।
कोई नृप बोले इम तबै। दूर होय यह कन्या अबै ॥७२॥
हम जैहैं अपने गृह थान। दीनन को बहु दे हैं दान।
अपनी तिय संग रमिये सदा। कोइक बोले ऐसे तदा ॥७३॥
दूर रहो यह सुन्दर नार। जामों प्राण नसें दुख कार।
कोइक भूपति बोले एम। काम भोगकी हमको नेम ॥७४॥
अब हम ब्रह्मचर्य व्रतधार। काल बितावहिंगे शुभ सार।
हते न रनको कन्या यही। रूप महा विष धरके सही ॥७५॥
तब दुर्योधन बोले एव। हिरदेमान धरत बहु भेव।
मोतें और समर्थ न कोय। राधा बेध विधायक जोय ॥७६॥
राधा तामहि मेंनी छेद। धनुषर साध करूं बिन खेद।
यों कहि उठो अरुन करि नैन। मदधर चलो धनुषको लैन ॥७७॥
धनु गांडीव तनी बहु ज्वाल। लागी देह भयो बेहाल।
ठाढ़ो रहि न सको असमर्थ। गिरकर भागो जीवन अर्थ ॥७८॥
इह विधि कर्णादिक सब भूप। ज्वाला नहि न सके दुख कूप।
छोड़ छोड़के नर अभिमान। अपने अपने बैठे थान ॥७९॥
राय युधिष्ठिर बोले तदा। अपने अनुज प्रते यों मुदा।
धनुष चढ़ावनको इन मांहि। कोई मानुष समरथ नांहि ॥८०॥
तातें उठ अब धनु सन्धान। कर अर्जुन तुम गुणकी खान।
यह गांडीव धनुध परचंड। तुम बिनको साधे बलवंड ॥८१॥
यों सुनके पारथ परवीन। सिद्धनको सुमिरन मन कीन।
पुनि अग्रजको प्रनमों भूप। उठो धनंजय द्विजको रूप ॥८२॥
मन मथते अति सुन्दर देह। देखत द्रुपदि धारहि एह।
काम सरन करि बेधत भई। अर्जुन की छबि देखत ठई ॥८३॥
जाय उलंघ नृपनको सबै। पहुंचो धनु तट अर्जुन तबै।
शांत भयो तिस आवत तटी। सकल विषमता ज्वाला मिटी ॥८४॥

दोहा।

पुन्यवन्त के निकटही, नसें आपदा सर्व।
होंहि सकल सब सुर असुर, सेवहि तजके गर्व ।८५।
करमें कर गांडिव धनुष, और पनिच आरोप।
पुन टंकोरो खेंच के, कीनों शब्द अगोप ॥ ८६ ॥
बधिर भये सुत नृपन के, सुनत धनुष टंकोर।
अरु छूटी घोटक घटा। इत उत चलत मरोर ।८७।
गज अरु दिग्गज गरजेत, भाजे सुंड उठाय।
सकल भवन शोभित भयो, सुनत धनुष धुनिराय ।८८।
तब अस्फालन शब्द सुन, रोय पड़ो गुरु द्रोन।
मरिके उपजो पार्थ के, यहँ धुन कीनों कौन ॥८९॥

चौपाई।

तब पारथ सर धनुसों रतो। राधा नासिक मोती हतो।
मोती सहित सु सायक गिरो। देखे सब जन भूपति परो ॥९०॥
गुण ग्राही नृप हर्षित भये। धन्य धन्य धुनि भाषत भये।
यादव मागध भूपति खरें। या द्विजको प्रशंसा करें ॥९१॥
पुत्रो सहित द्रुपद मन मांहि। उत कंठन आचार्य करांहि।
तौलों द्रोपदि उद्यत भई। माल सुलोचन करमें लई ॥९२॥
बहु आदरते पारथ गले। माल मनोहर डाली भले।
बिधि बश पवन चली बहु भंक। बिथर परी पांचनके अंक ॥९३॥
कर्म जोग जे दुर्जन खरे। वे बोले इन पांचो वरे।
अर्जुनके तट द्रोपदि ठई। लक्ष्मी सम सो राजत भई ॥९४॥
इन्द्रानी मनु सुरपति पास। ऐसी सोहे गुनकी रास।
तौलों राय दुर्योधन ठने। स्याम बदन है सबसों भने ॥९५॥
यह तो राज सभा हम सार। या द्विजको को है अधिकार।
मंत्र सु करिके कौरव धीर। भेजो दूत द्रुपद के तीर ॥९६॥

चंद्र नाम शुभ लच्छन दूत। भने द्रुपद सों मति संजूत।
अति उद्धत है राजा सबै। मो मुखते इम भाषत अबै ॥९७॥
द्रोण दुर्योधन मागध कर्ण। यादव आदिक नृप शुभ वर्न।
इनके बैठे द्विजको बरो। यह दुर न्याय सु कन्या करो ॥९८॥
यह परदेशी बामन जात। बाडव सम अति लोभी पात।
राजनके सो बैठे भाय। कन्या बर कर कैसे जाय ॥९९॥
रतन कनक बहु देके मुदा। या ब्राह्मन को कीजे बिदा।
राज जोग शुभ कन्या एह। हे नृप काहू नृप को देह ॥१००॥
कै तुम अब सब राजा संग। युद्ध करनको साजो अंग।
द्रुपद कोपकर बोले सही। यह अजुक्त बिधि कहनी नहीं॥ १ ॥
जे नृप ल्याय स्वयम्बर बिदा। ते या बिधिको मानो सदा।
या कन्याको बरहै यहीं। जो द्विज बरो स्वयम्बर सही ॥ २ ॥
आप स्वयम्बर रचके खरे। और भांत हम कैसे करे।
रणमें ए नृप तुल्य समान। इनको को अधिकार प्रमान॥ ३ ॥
ऊंच होय के अथवा नीच। तिसपति वहीं स्वयम्बर बीच।
तातें युद्ध विषे युध रीत। जुगति कही है मांहि सुनीत ॥ ४ ॥
संगर जुगति नहीं इह ठाय। अपने चित्त बिचारो न्याय।
युद्ध विषै जो इनकी बुद्ध। बहुत बसत है करत बिरुद्ध ॥ ५॥
तो इनको फल संगर तना। दे हैं युद्ध बिषै हम घना॥
जे नृप है कर नीतहिं तजें। ते रन मांहि पराभव सजें ॥ ६ ॥

दोहा

ऐसी सुनके दूत तब, फिर आयो इन पास।
बात कही जो द्रुपद ने, सो सब भाषी रास ॥ ७ ॥
दुर्योधन आदिक नृपति, क्रुद्ध भये रन काज।
रण दुंदुभी बजवायके, करो लरन को साज ॥ ८ ॥
दुंदुभी धुनि सुन भूप सब, निकसे सेना संग।

दंती घोटक रथ चढ़े, आयुध बांधे अंग ॥ ९ ॥
कोई कर को दंड गहि, को इक खड्गहि ढाल ।
को इक कुंथ फिरावते, दौरे सुभट बिशाल ॥ १० ॥
को इक बोले क्रुद्ध है, या दुज को निरघाट ।
कन्या लीजे लीजिये, हतिये द्रुपदहि छाट ॥ ११ ॥
यह धुनि अरिगन की सुनत, कम्पत द्रुपदी एव ।
शरन लई भरतार की, चलत शरीर पसेव ॥ १२ ॥
डरपाति देखी द्रोपदी, भने भीम द्विज भेष ।
स्वस्थि होहु मत भय करो, मोभुज बल अब देख ॥१३॥
एक छिनक में भुजन सों, दूर करूं अरि कूल ।
ज्यों प्रचंड छूटे पवन, उडे अरख के तूल ॥ १४ ॥

अडिल्ल

दुहूं ओर बहु शोर भये बहु जोर हीं । कल कलाट करि दौरे भट घन घोरही ॥ मार मारकर धाये भलुमर साधते । अरि गनको ललकारें कटिको बांधते ॥ १५ ॥

शत्रु सेन बहु आवत इह बिध देखके । द्रुपद आदि सन्नध भये नृप पेखके ॥ धरम पुत्र तब बिनती कीनी द्रुपद सों । देहु पंच रथ आयुध पूरण सरणा सों ॥ १६ ॥

धृष्ट द्युम्नयों सुनके चिंतवत चित्तही । ए महान नर हैं रथ जाचत चित्तही ॥ धृष्ट द्युम्न अपने रथ थापी द्रौपदी । धरम पुत्र रथ मांहि दिये मनु सुरपती ॥ १७ ॥

स्वेत बाजिरथ बैठो अर्जुन धनु लिये । द्रुपद पुत्र यह राजत रण उद्दित भये ॥ स्वर्ण वर्ण हय ऊपर द्रुपद बिराजही । शत्रुनको हतिवे को मुकुट सु साजही ॥ १७ ॥

भीम देख अरि सेन सु आवत दूरते । परो धाय ले वृत्त

उखारें मूरते ॥ हत भूप हय गरजतजे आगे ठने। जम समान हैं क्रोधित रथ चूरे घने ॥ १६ ॥

करीसेन बहु घायल रन सन्मुख तहीं। हनों भीमने नाहिं सुनर कोई नहीं ॥ भीम आपुही गरजे बहु गजराज सों। तर्जित और को आय अभै जमराज ज्यों ॥ २० ॥

ज्यों घासिहारो घासहि छेदे बन विषै। भीमसेन त्यों भेदे अरिगन रन विषै ॥ द्रुपद सेनके नृप तब भीमहि देखके। धन्य धन्य मुख भाषें जय जय पेखके ॥ २१ ॥

नमत भीमते लख सेना दुर्योधना। उठो तर्ज निज नादहि अरिगन त्रासना ॥ कर्ण भूपभी अपने भट गन साथ ले। ढुको पार्थ सों रनको धनुसर हाथ ले ॥ २२ ॥

खिपत बान संघात सो भारत अरिनको। पुन्य जोग जिम जगमें टारत विघन को ॥ बाण वृष्टि करि छायो कर्ण सुगगन हीं। करहिं युद्ध अर्जुन सों दोनों तरुणहीं ॥ २३ ॥

पावित्र कानलों खेंच सु अर्जुन सरमुचे। बाण कर्ण के छेदे पावन जु बन रुचे ॥ अर्जुन की धनु विद्या दुर्धर लखत ही भयो कर्ण बहु बिस्मय बोलो यों सही ॥ २४ ॥

धनुषधार नहिं देखो ऐसो जग मया। भो द्विजेश धनु विद्या दिखलाई त्वया ॥ पुनि बिहँसकर बोलो यों चंपापती। कौन तीर तुम सीखो धनु विद्या अती ॥ २५ ॥

नाग लोक तें क्या दुज आयो अब मनों। तो समान धनुवेदी कोई नहिं सुनो ॥ कही सुक्र है अक दिनकर तू देवहै। बीत होत्रके अर्जुन जीवत एव है ॥ २६ ॥

दोहा

ऐसी सुन अर्जुन कही, मैं हूं द्विज भू देव।
पारथ को हूं सारथी, भयो धनुर्धर एव ॥ २७ ॥

कर्ण भने हे विप्र तुम, प्रथमहि छोड़ो वान।
पीछे मोसर अवसहो, तीक्षण वज्र समान ॥ २८ ॥

अडिल्ल

लगे युद्ध को दोऊ ऐसे भाषके। धनुष कर्ण लों कर के सरको राखके ॥ सिंह सांप जुग मानो हृदय विदारते। लरह जोर घन घोर सु आयुध मारते ॥ २९ ॥

धुजा कर्ण की छेदी पारथ ने यथा। छत्र छेदि रथ छेदि कवच धनु भी तथा ॥ उठो युद्ध को द्रुपद सु अरि दुख देन को तीक्षण सरते छेदित कौरव सेन को ॥ ३० ॥

धृष्टद्युम्न इन आदिक भ्राता सब चढ़े। सकल शत्रु अपने हतिवेको चित बढ़े। लरत भीम रथ बैठि दुर्योधन सन्मुखे ॥ कवज छत्रको छेदो छिनमें छय रुखे ॥ ३१ ॥

पांडुवीय सरजाके तन लागे नहीं। तारण में नांहं ऐसो कोऊ भट सही ॥ रथ मतंग भट घोटक घायल सब फिरे। भज्यमान बल निज लख गंगासुत खरे ॥ ३२ ॥

चलो पार्थके सन्मुख गंगा सुत जबै। महा वान कर रोको अर्जुन ने तबै ॥ मय गयन्द गंगेयहि पारथ हरि लगो। करत व्यर्थ सर ताके पारथ रथ पगो ॥ ३३ ॥

तबहि द्रोण गुरु बोलो दुर्योधन प्रते। देख रेणका छिन्न तुरंगम खुरहुते ॥ यह महान नरकोयक रन कीला करे। जानि पार्थ इस अन्य न धनुविधि इम धरे ॥ ॥ ३४ ॥

मृषा जान तू पांडव जारे जत ग्रहे। पारन मेरे आये जीवत सत लहे। तब अकंप दुर्योधन ऐसी सुनतही ॥ भनत सीश धुन हंसि कर तिनसों सहितही ॥ ३५ ॥

अहो द्रोण तुमभी बच ऐसे क्या कहे। पांडु पुत्र कहँ आये

मैं जतु ग्रहदहे ॥ तैसेही ता गृहमें अर्जुन भी जरो । कौन भांत सों मरके पारण अनुसरो ॥ ३५ ॥

तदपि नाम तुम अर्जुनको नहिं तजत हो । महा मोह मई हो तुम लखियत जगतहो । जातें अब तुम सुमरें पांडव जेजरे। धरमपुत्र अरु अर्जुन चित नहिं बीसरे ॥ ३७ ॥

दोहा

ऐसी सुनके द्रोण गुरु, धनुष लयो सर लाय ।
पुनि अर्जुन सों इम कहो, सजो युद्धको आय ॥३८॥
रण सन्मुख लखि द्रोणको, अर्जुन चितवो चित्त ।
करजुग है गुन अग्रनी, पूजनीक पर नित्त ॥ ३९ ॥
या प्रसाद पाई सकल, धनुर्वेद बिधि सर्व ।
ता प्रसाद रनके विषै, पावतहूं जप दर्व ॥ ४० ॥
तासों कैसे युद्ध अब, कीजे आदर त्याग ।
गुरुको आदर जे तजें, ते पापी निर्भाग ॥ ४१ ॥
जे भूलें गुरु गुननको, ते पापी कहँ जाहिं ।
हो नहिंजानों कौन गति, मरें सुदुखके माहिं ॥४२॥

चौपाई

यह बिचार चित अर्जुन लियो । सातपैंड़ चल प्रणमन कियो ।
पुनि लिखके सर पठयो धीर । सो पहुंचो गुरु अंकहि तीर ४३ ॥
लेख सहित जब देखो बान । बाचो लेकर गुरु गुन खान ।
कुन्तीको सुत अर्जुन पर्मे । सीस नवाय सुगुरुको नमें ॥४४॥
शिष्य तुम्हारो उत्तम जोय । करत बीनती सुनिये सोय ।
महा दुष्ट सब कौरव येह । बिन कारन मम दाहे गेह ॥४५॥
क्यों हूं क्योंहूं करिके स्वाम। निकसे गृह ते जारत धाम ।
देश देश बहु भरमत फिरे। पुनि मार्कंदी पुर अनुसरे ॥ ४६ ॥
पुन्य जोग तुम पद इह ठाय । हम पाये बहु हर्षे भाय ।

तातें छिन इक सरको अबै। ठाड़े ह्वै कर देखो सबै ॥ ४७ ॥
मैं हूं तेरो सेवक शिष्य। धनुर्वेद तुम दीनों दक्ष।
यातें भुजबल मेरो देख। होहिं सुफल मैं जाते पेख ॥ ४८ ॥
दुर्योधन आदिक नृप सबै। इनमें युद्ध करूं में अबै।
पांडव जालनको फल जोय। इनहिं दिखाऊं अबहीं सोय ४६॥
ऐसे वांचत गुरुके नैन। आंसू झरत सुबोलो बैन।
कर्ण दुर्योधन आदिक सही। लेख बात सब तिनसों कही ॥५०॥
कर्ण कहे इन पारथ विना। यह सामर्थ धरे को जना।
इह विधि समरथ रनमें कौन। हने सरोंकर अरिगन जौन ।५१॥
एक भीम सब रनको हरे। अरीदल दलन महा बल धरे।
और युधिष्ठिर आदिक सबै। सकल बस्तुमें समरथ फबै ५२॥
यों सुनके दुर्योधन दुष्ट। बिलख भयो मुख सूरख रुष्ट।
तौलों द्रोण सुपांडव पास। गयो मुहिनकर गुनकी रास ॥५३॥
पांडव सब तिस देखत मिले। बन्द गुरु पद पंकज भले।
कहत भये ते सब बिरतंत। हर्षित भयो सुनत गुरु सन्त ५४॥
युद्धि निवारक कहे पुनि येम। पांडव सुनहु कहूं मैं जेम।
आतम बेदी हो तुम मित्त। कौरव दोष न गहियो चित्त ५५॥
ज्ञानवन्त को नहिं करतव्य। रोष विशेषहि है हरतव्य।
पुन्य महातम तुमरो जोय। को बरने या जगमें सोय ॥५६॥
अगन जरत गृह निकसे तहां। देखोतुम यह अद्भुत महा।
देशहि देश गये तुम जहां। कन्यादिक कर पूजे तहां ॥५७॥
जौलों बात कहत इह भेय। तौलों आपतहीं गंगेय।
आये कर्ण सुकौरव यथा। मिले परस्पर प्रणमें तथा ॥५८॥
कौरव ठये अगर्वी होय। मदसों रहित अधोमुख सोय।
गंगासुत अरु गुरुने तबै। कौरव पांडु मिलाये सबै ॥ ५६ ॥
आपसमें करवाई क्षमा। सन्त मिलें जहँ शुभही पमा।

कोप दुर्योधन भने दुरलीक । सुनहु सकल नृप भाषे ठीक ॥६०॥
गृह को अगन दई हम नाहि । जिनकी साख कहो तुम माहि ॥
पांडव गृह जिन दीनी आग । सो नर नरक पड़ो दुर्भाग । ६१ ।
भली भई तुम आवन भयो । सब अपवाद हमारो गयो ॥
पूरब भवहि करम जो लगे । तिनको टार सके नहिं सगे ।६२।
यश अपयश तिनहीते होय । यामे संशय नाहीं कोय ॥
पुन्य सहाय भयो हम भले । अजस मिटो अरु भ्राता मिले ।६३।
दुष्ट भाव आछादें छले । मुख सों मिष्ट बचनयों रले ॥
ऐसे सब राजा चित ठाय । तोषित कीने कौरव राय ॥६४॥
तब कुलाल गृह सब नृप गये । कुंती को बहु प्रनमत भये ॥
कौरव भी पुनि ताको नये । कर संतोप सु आगे ठये ॥६५॥
चपल नेत्र तब कुंती महा । दुर्योधन प्रति ऐसे कहा ॥
महा बंश धृतराष्ट्रहि माहि । तैं किम कालम लाई ताहि ।६६।
रे दुर्योधन यह क्या ठयो । अपनो बंस हुतासन दहो ॥
बंश नाशज सुखको चहें । वेही बंस मते ही दहें ॥ ६७ ॥
नीत करत नर पावे राज । नीत बिना दुखही को साज ॥
राज बिनस्वर निन जल भ्रात । ताके हेत हते निज भ्रात ।६८।
धिक् है जीवन तिनको सदा । ऐसी सुनके कौरव तदा ॥
स्थामित होय अधोमुख ठये । तिनके गुनहि प्रशंसित भये ।६९।
तौलों तुरत द्रोपदी आय । पाणिग्रहणको उद्यम भाय ॥
सुंदर मंदिर अधिक अनूप । पांडवादि तहँ राखे भूप । ७० ।
तब पारथको रथहि चढ़ाय । आन्यो मंडप तूर बजाय ॥
शुभ मुहूर्त शुभ लगन बिचार । बेदी मंडप मांहि सुधार ॥७१॥
द्रुपदी खेचर सुता संग लई । पाणिग्रहणकर दोऊ दई ॥
दुंदुभी पटह प्रगट आकास । नरतक नृत्त करत नित हास ।७२।
और द्रुपदने सब नृप मान । वस्त्राभूषण दीने दान ॥

लख बिवाह कर्णादिक येह। गये सु अपने अपने गेह।७३।
पांडव सेन सहित चतुरंग। पहुंचे गजपुर कौरव संग॥
इंद्र सदन सम मंदिर यहा। पांडु तनुज सुख निवसे तहा।७४।

पद्धड़ीछन्द

शुभ शीलवती द्रुपदी सु एम। सो पंच पुरुष आसक्त केम॥
जो पंच पुरुष आरक्त ठीक। तौ ताहि सती पद है अलीक।७५।
नर मूढ़ कहें इसलोक माहि। तिन सेवत पांचों भ्रात ताहि॥
शुभ शीलवंत ते पांडु राज। किहि भांति करे जे अधम काज।७६।
जे जन दरिद्र घर जगत जोय। तिय भिन्न भिन्न सब परिन होय।
इहि भांति जानचित्त चतुर चित्त। जैनी पुरान जिन सुनहु मित्त७६

दोहा

सब सुखदायक शील शुभ, सुगति सुधारन पूर।
जे जैनी याके रसिक, तिन हि न शिवपद दूर॥७७॥

इति श्री सम्महाशीलाभरण भूषित जैनीनामा किनायां लाला बुलाकीदास बिरचितायां पांडव द्रौपदी बिवाह पांडव हस्तिनापुर समागम वर्णनो नाम षोडष प्रभावः १६

अथ पांडव द्यूत क्रीड़ा करन बनबास गमन

मंगलाचरण॥ श्री श्रेयांसनाथ स्तुति दोहा॥

सदा श्रेय श्रेयांस जिन, आश्रय त्रासक श्रेय।
जे आश्रित प्रश्रय सहित, तिनके हरत अश्रेय॥१॥

सवया तेईसा

नाम श्रेयंसजु श्रेय बिधायक लोक विषै सुखके अधिकारी।
पापके घायक धर्म बिनायक जन्म जरा दुखके अतिहारी॥
याहिके सेवत दोष तजे सुख मोक्ष भजे गुन अष्टक धारी।
धर्मके काज नमों जिनराज दया करके मति दीजे उजारी॥२

चौपाई

पांडव कौरव गजपुर मांहि । आधो आधो राज कराहि ।
बसुधा हय गय बांटे सार । रथ योग्य लक्ष्मी भंडार ॥ ३ ॥
आपसमें बहु धरके प्रीत । राज करें बिस्तारें नीत ।
इन्द्र प्रस्थपुर जमना तीर । बस्यो बसाय युधिष्ठिर धीर ॥ ४ ॥
भीम बसायो तिल पथ भले। राज करें तहँ सुख सूं रले ।
स्वर्ण प्रस्थपुर पारथ कीन । बसो सुथिर है भोगा लीन ॥ ५ ॥
जलपति ठयो नकुल कुल धारि । पुनि सहदेव वणिक पति सार।
इह बिधि अपने अपने पुरे । पांडु पंच परम सुख करे ॥ ६ ॥
धरम पुत्र अरु भीमहि जोय । पूरब पुरहि जु पानी सोय ।
राज सुता सब आनी तदा। मन वांछित सुख भुगते सदा ॥ ७ ॥
विद्यासेन कोसम्बी उता । बरी युधिष्ठिर ताकी सुता ।
धर्मपुत्रको सेवा भजें । भीमादिक सब सेवा सजें ॥ ८ ॥
एनहि बनकें धनकी रिद्धि । चाहत हैं नित साधन वृद्धि ।
दन्ती तुरंग लहत बहु तदा । गुरु गंगेयहि सेवें सदा ॥ ९ ॥
बहुत एकता इनमें लखी तब दुर्योधन ऐसी अखी ।
अहो पिता हम दुरजय । यह आरम्भी क्या तुम मित्त ॥ १० ॥
पांडव कौरव राज समान । भुंजत भोग सु गुनकी खान ।
पांडव पक्ष करतहो केम । क्यों अनीति तुम धारी येम ॥ ११ ॥
क्रोधसहित बच सुन यह भेय। कौरव प्रति बोलो गंगेय ।
हे कौरव सुन कारन यहे । ये पांडव धर्मामृत चहे ॥ १२ ॥
सन्त सूर शुभगुणके धार । निश्चय न्याय विचारक सार।
गई बस्तु ये सोचत नाहिं । आगम चिन्ता नहिं मन मांहिं ॥ १३ ॥
वर्तमान कौरव तारतें । मो बल्लभ पे तातें अतें ।
एक समय नृप अर्जुन गये । ऊर्जयन्त गिरि देखत भये ॥ १४ ॥
तहां कृष्ण भी आये सही । कंठ लाग पुन बैठे सही ।

दोऊ मिल यों क्रीड़ा पर्मे । मानों इन्द्र पतीन्द्रहि रमें ॥१५॥
कबहूं वनमें खेलें भले । कबहूं जलमें मंजन रले ।
कबहूं चंदन कुंकुम नीर । छोड़ें भरि पिचकारी धीर ॥ १६ ॥
कबहूं गिरि पर उतरें चढ़ें । कबहूं गीन निरत सुख बढ़ें ।
कबहूं क्रीड़त गेंद उछार । यों चित रमें सुप्रीतहि धार ॥१७॥
बिश्नु सहित पुनि द्वारावती । गयो पुरन्दर सुत सुभमती ।
कृष्ण संग तहं अर्जुन रहे । घोटक दनि बढ़ें सुखलहें ॥१८॥
एक समय पारथ परवीन । लखी सुभद्रा शोभा लीन ।
चलीजात सो देखी जबै । अर्जुन चितहि बिचारै तबै ॥१९॥
को स्वरूप यह शोभा खची । मानों राजत सांची सची ।
भूपर उतरी है सुर तिया । अरुन्ध बिचक्षेय तथोरति पिया २०॥
कै यह रति कै पद्मा देव । कै पद्मावति रोहिनी एव ।
कै सुरतिय कै सीता खरी । किन्नर प्यारी कै यह नरी॥ २१ ॥
किह विधि लहिये याको अबै । या बिन निरफल जीवनसबै ।
यातें कौन उपाय बिचार । याहि करूं मैं अपनी नार ॥ २२ ॥
यों चित है कर पारथ तदा । दामोदर को पूछो मुदा ।
सुता कौनकी है यह बली । मनु लक्ष्मी शुभ लच्छन रली ॥२३॥
हरि हँसिके तब बोलो सही । ए अर्जुन क्या जानत नहीं ।
मो भगिनी सुसुभद्रा भाम । रूप शीलनी बहु अभिराम ॥२४॥
तब पारथ हंसि ऐसे कही । यह मो मातुल पुत्री सही ।
मोहिं ब्याहनी जुगती ठने । ऐसी सुनके हर यों भनो ॥२५॥
हे अर्जुन यह तोकूं दई । लेकर जाहु अबै तुम सही ।
ऐसी सुनके पारथ सोय । छिन इक बैठो तिस अवलोय ॥२६॥
हरि अर्जुनके मनकी जान । निज स्यंदन दीनों तिस आन ।
तब आसक्त सुभद्रा करी । बांह पकड़ रथ ऊपर धरी ॥२७॥
बाहु बेग हय हांके तदा । चलो धनंजय अतिही मुदा ।

हरन सुभद्रा सुनके तबै। क्रुद्ध भये नृप यादव सबै ॥२८॥
धाये धार समर उत्साह। साधे सर बांधे सन्नाह।
कोई कुन्त खडग कर किये। पहिरे कवच पनचको लिये ॥२६॥
कोई रथ चढ़ कोई गजें। कोई तरल तुरंगहि सजें।
कोइक सूर सुभाषे एम। गज बाजी सों कारज केम ॥३०॥
अति काम खड़गही भले। यों कहिके पगही सों चले।
सुता सुहरिके यादव तनी। अर्जुन जैहै काके कनी ॥३१॥
समुद्र विजै सु चढ़ौ अति धीर। समुद्र समान महा गम्भीर।
बीची उठहि चमू चतुरंग। बंध जहाज लखे बहु रंग ॥३२॥
अरु बलभद्र महाबल पूर। युद्ध करनको निकसो सूर।
हरिकी ज्यों हरि उठके चलो। धनुष धरे पुनि सिंहहि रलो ॥३३॥
मंद मंद हरि इत उत जाय। सेन सहित पुनि पुरमें आय।
सब राजनसों बोले एम। बहुत बात अब भाषो केम ॥३४॥
हरण दोषते कन्या याहि। पारथही को दीजे व्याहि।
भगनी तनुज तुम्हारो आहि। जुगति कही पुनि दीनी व्याहि ।३५।
तातें अब तुम अपने हाथ। सुता विवाहो याके साथ।
कलह बृथा नहिं करनो फबै। यों सुन मानी सज्जन सबै ॥३६॥
तब मंत्री तिस ल्यावन काज। भेजे हरिने मंत्रहि साज।
विनय सहितते अर्जुन तीर। वचन देयके आनो धीर ॥ ३७॥
करत उछाह खरच धन भूप। नट नटनी नट नाना रूप।
सु मुहूरत शुभ मंडप मांहि। पारथ लैंहि सुभद्रा व्याहि ॥३८॥
परम प्रीतकर ताके संग। भुगते भोग सदा निरभंग।
लक्ष्मी मेती अरु शाखावती। भीम विवाही दोऊ सती ॥३६॥
परनी नकुल सु विजिया नाम। पुनि सहदेव सुरति अभिराम।
यों ए भ्राता व्याहे तबै। निज निज नगर गये नृप सबै ॥४०॥
हरि पारथ ए क्रीड़ा काज। रमन गये उपवनमें साज।

तहँ सरमें ही कीड़त ऐह। नीर परस्पर डारें देह ॥४१॥
तौलों द्विज इक आयो तही। अर्जुन तिनिते ऐसे कही।
भो पारथ मो भोजन देहु। मन वांछित दे तृप्ति करेहु ॥४२॥
हम हैं द्विज दावानल देव। तुम चत्री कुरु वंदन देव।
खंडवाम वन मघवा तनी। ताहि देहु तुम अवही भनी ॥४३॥
ऐसी सुनके पारथ कही। मो पै रथ धनु सरहै नहीं।
ऐसी सुन पारथ को द्विजा। कपिलध्वनकी दीनी धुजा ॥४४॥
वज्र मई रथ अर्प्यो याहि। और दीव्य सर दीने याहि।
वन्हि बार दीनी अहि पास। गरुड़ मेघ सर मारुत रास ॥४५॥
पुनि हरिको इक दीनी गदा। और तार्क्ष्य ध्वज रथमों तदा।
अन्य रतन बहु नाना भांत। दीने कारज कारी जात ॥ ४६ ॥
इन बाननको पारथ पाय। दावानल सर छोड़ो धाय।
तब दावानल लागी जोर। जरन लगो बन व्यापो शोर ॥ ४७॥
मृग मृगेन्द्र अर पंछी फनी। जरें जलनंत त्रिण तरु बनी।
क्रुद्ध विभूषित मनु जम आय। भये भुवन को यों अधिकाय ४८
बन जारत नखरत्तक देव। नाग कुमार सुकोपो एव।
तुरत बुलायो सुरगन और। अर्जुनको ललकारो घोर ॥ ४६ ॥
तिष्ठ तिष्ठ रेमानुष महा। अब तू जैहै नसके कहां।
यों कहि गगन घनाकुल करो। गर्जत कज्जल सम अनुसरो ५०॥
हरिसे बोलो तब कपिकेतु। घन बरषत दिखलावत हेतु।
देख देख हरि मो बल अबै। सरते छेदूं सुरगन सबै ॥ ५१ ॥
धनु गांडीव सुकर गहि लयो। पनिच खेंच टंकोरत भयो।
सुनो शोर मनु यम हुंकार। क्रोध भये अति सुर गन सार ॥५२॥
मूसलधार जल बरषत बहै। अर्जुन ताहि सुछेदो चहै।
तब बानर ध्वज बानहि छाय। रचो सुमंडप अम्बर ठाय ॥५३॥
वृष्टि कणा नहिं आवन देह। बनमें अगनि चले अधिकेय।

द्विगुनो त्रिगुनी चतुर्गुन देव। बरषो मेघ अगनिपै एव ॥५४॥
तब केशव अति क्रोधित होय। पवन बानतें त्रासो सोय।
अर्जुन सर्गहि सुरासुर नसे। तार्क्ष पच्छते ज्यों अहि खसे ॥५५॥
सुरपतिपै तब सुर सब जाय। अपनी हार कही समझाय।
हे मघवा पारथने अबै। तुम क्रीड़ा बन दाहो सबै ॥ ५६ ॥
हमको डाटकरा तिन दूर। तब आये तुमपै भयपूर।
सुनके मघवा क्रोधहि रलो। अयरापति चढ़ रणको चलो ५७॥
रण भेरी सुन सुरगण सबै। संग चले सुरपतिके तबै।
बज्र बानकर बज्रहि कियो। आवत गगनहि सेना लियो ॥५८॥
मारग माहिं मिलो असुरेश। बोलो तासों हे सुरेश।
कहां जातहो सुरगहि छोड़। संग लिये बहु सुरगण जोड़ ५९॥
चढ़े युद्धको जिनपै अती। महा बलीहै त्रिभुवन पती।
दे न सके दुख तिनको कोय। प्रकट भुवनमें मानुष सोय ६०॥
जनम लहो जिनबंशहि महां। नेमिनाथ नारायण तहां।
नर महान अरु पांडव धीर। पूज्य पुरुष हैं पांडव बीर॥ ६१ ॥
तातें तू जड़ताको त्याग। थिरहै निजपद काजहिलाग।
ऐसी सुनके सुरपति गयो। स्वर्ग विषै सुखभोगत भयो ॥६२॥
अर्जुन भी बन बिघनाहि टार। आयो गजपुर प्रेमहि धार॥
द्वारावती मुड़के सब गये। हर्ष सहित सुख भुंजित भये॥ ६३ ॥
अर्जुन संग सुभद्रा रमें। सुत अभिमन्यु लहो गुन पर्में॥
एक समय दुर्योधन राय। कपट धारिके लख इम भाय ॥६४॥
कुंती पुत्र बुलाये पास। बहुत प्रीतकर बोलो तास॥
अहो युधिष्ठिर सुनिये भले। जुवा खेलहू हमसों रले ॥ ६५ ॥
धरम पुत्र अरु कौरव सबै। खेलन लागे जूवा तबै॥
धरम पुत्रसों छलको धार। कौरव खेलें पांसे डार ॥ ६६ ॥
दोऊ अंवसुत सौछत सार। दासी सुत मनु आज्ञाकार॥

सौऊ भ्राता डारत दच्छ । चपल अच्छ मनु कुलटा अच्छ ।६७।
भीम करत हुंकारहि नाद। इत उत जात परे वे बाद ॥
थिर नहिं रहें उलटिके परें । मानो भीम मदनतें डरें ॥ ६८ ॥
छल करके तब ग्रहन भीम । काढ़ो कौरव गुनकी सीम॥
पुनि आरम्भो कौरव द्यूत । धरम पुत्रसों छल संजूत॥ ६९ ॥
छलकर जीते कौरव कंस । धरम तनुज हारो सरवंस ॥
हारो हार रतन के पूर । कंकन सीस श्रुट द्युति पूर ॥ ७० ॥
दरव देश हारे बहु भन्त । हारे हय गय रथ सामन्त ॥
अन्न कनक भाजन भंडार । हारत जोग्वे भ्राता मार ॥ ७१॥
तौलों पावनि पहुंचो आय । मुख हुंकार करत अधिकाय॥
भ्राता हारत देखो जबै । भीम भयंकर बोलो तबै ॥ ७२ ॥
अहो युधिष्ठिर राजा महा । द्यूत आरम्भो तुम यह कहा ॥
द्यूत महा अपयशकी खान। करै अनर्थ अर्थ की हान ॥ ७३॥
सात व्यसनमें आदिहि द्यूत । दुर्धर कहो कुगति को पूत ॥
मद पीवन सम ज्वारी होय। जूवासम अघ और न कोय । ७४ ।

दोहा

बचन भीम के सुनत इम, डरो युधिष्ठिर साज ।
द्यूत तजो द्वादश बरस, हार मही को राज ॥ ७५ ॥
भीमादिक भ्राता सहित, आप युधिष्ठिर राय ।
आये अपने गृह विषै, सो चल हैं अधिकाय । ७६ ।
दुर्योधन ने दूत तब, पठयो पांडव तीर।
प्रणमन कर सो बीनयो, सुनहु युधिष्ठिर धीर ॥ ७७ ॥
मो मुख दुर्योधन नृपति, कही बात इह भांत ।
तुम अब तेरह बरस लों, रहो गुपत है गात ॥ ७८ ॥
जो चाहो अपनो भलो, तो मत बिलमो एम ।
जाय बसो घन बन विषै, कोइन जानो जेम ।

आज रात भी मत बसो, अपने मंदिर मांहि।
बहु अनर्थ है अन्यथा, यामें शंसय नांहि ॥८०॥
गयो दूत यों भाषि जब, तब दूःसासन दुष्ट।
द्रौपदि के गृह में गयो, है कर अतिही रुष्ट ॥८१॥
कच बेणी गहि द्रौपदी, कीनी गृहतें बार।
मानो पद्मा पद्मते, दीनी दुष्ट बिडार ॥ ८२ ॥
गंगा सुत इम देख के, बोलो बच इह भाय।
रे रे तुमको युक्त नहिं, यह कारज दुखदाय ॥८३॥
तुम अपकीरति लोक में, प्रगटेगी सब ठौर।
भावजको अविनय करे, होय अधोगति ओर ॥८४॥

चौपाई

तौलों द्रुपदी खेदित ठई। रोवत पांडव तीरहि गई।
बोली गद गद बानी रोय। पांचो पांडव आगे सोय ॥८५॥
भयो पराभव तुमको जिसो। तातें अधिक लहों में इसो।
यो बेनी आकर्षण करो। तुम भय रंचन मन में धरो ॥८६॥
इस आगे मो सिरकी वेन। बची न प्रकटी यशकी देन।
और वस्तु है नीकी कौन। तिनके आगे बाचिहै जौन ॥८७॥
हासु खंड हा पारथ नाथ। हाहा भूप युधिष्टिर तात।
कष्ट पराभव यह तुम बिना। कौन निवारे यो शुभ जना ॥८८॥
विपुलोदर यों सुनके कान। बोलो क्रोधहि घुट घुट बान।
ए स्वामी ए अरिगन सबै। नाश करूं मैं छिनमें अबै ॥८९॥
पुन पारथ उठ गरजो महा। द्रुपदीको दुख देखत यहा।
तब युधिष्टिर बोलो सही। उत्तम आज्ञा लंघे नहीं ॥९०॥
पवन प्रचंड चलेते कहा। जल निधि सींव उलंघे महा।
ऐसी सुन तब पांडव सर्व। उठके चले सु तजके सर्व ॥९१॥
कुन्ती रुदित विदुरके गेह। छोड़ चले सब मिलके येह।

पराभूत चित द्रुपदी अती। तातें संग लई शुभ सती ॥६२॥
मान रहित जिन सुमिरत चित्त। चलत मंद गति मारग नित्त।
कबहू बन उपवनमें लसे। कबहू सिल गिरि अंगहि बसे ॥६३॥

दोहा।

पीवत जल सरिता सरस, खात वृक्ष फल शुद्ध।
धारे तन बक्कल बसन, हरि सम निरभय बुद्ध ॥६४॥
अती कलेशते पांडवा, बहु भूधर सु उलंघ।
कालिंजर बनमें गयो, कायर को दुर्लंघ ॥६५॥
बहु पल्लव शाखा सघन, तहँ देखो बट वृक्ष।
ताकी छाया ए ठये, खेद तृषा तप अच्छ ॥६६॥

पद्धड़ी छन्द

बहु कष्ट दाय दुर्गति निवास इक। द्यूत जान सब व्यसन रास।
बच भूठ भने नर द्यूत कार। यों मांस खाय अरु मंदिर धार ६७
पर दरब हरन आखेट खेल। गणिका सुरमत पर तिय समेत।
इक द्यूतकार पांडव सुराय। गृह छोड़ बसे बन गहन जाय ६८
बहु व्याघ्र व्याल भय जालपूर। तहँ कष्ट सहें पांचो सु सूर॥
धिक द्यूत व्यसनको एम जान। कबहू नरमें जैनी प्रमान ।६९।

इति श्री मन्महाशीलाभरण भूषित जैनीनामांकितायां पांडव द्यूत क्रीड़ा करन लालाबुलाकीदास बिचिरतायां बनबासगमन वर्णनो नाम सप्तदश प्रभावः १७।

पांडव बिराट देश गमन और द्रौपदी शील रक्षन तथा कीचक बध बर्णन।

मंगलाचरण। श्री बास पूज्य स्तुति दोहा।

बास पूज्य बसु पूज्य सुत, बासव सेवित पाय।
जो पूजत बसु देव कर, ताहि नमूं चित लाय ॥१॥

सवैया इकतीसा।

पूजनीक पर धर रागादिक दोष हर समरथ बास पूज्य मुकति करन को। मोह निश महातम नासिवे को सूर सम कीनी जिन सब बास पंच जू करन को॥ जाके मुख निकसत अदभुत जैन बैन सुनत लगत सुख अतिही करन को। ताके पद परसत सुगति के सुख होत नमत अरुन सिख जौर के करन को॥ २॥

चौपाई

ताही बन आये मुनि संग। ईर्जा शुद्ध दिगम्बर अंग।
तिनको देखत पांडव नये। हर्षित चित ह्वै आगे ठये॥ ३॥
धरम पुत्र पुनि चित चिन्तयो। कहा करूं मैं बनमें ठयो।
दिवस बिताऊं बनफल खाय। दान करूं बसु बिन किहि भाय ४
धिकया जीवन को बसु बिना। मृतक दरिद्री इक सम गिना।
दान बिना मरनोही भलो। जो जीवन निरफलही रलो॥ ५॥
यों चितवत नृपको मुनि जान। दुख नहिं कीजे बोले बान।
तुम विनई थिति बैंदीं महा। बात सत्य गुन हिरदे गहा॥ ६॥
हम तुम जोग भयो यह जोय। याही में वृष जानो सोय।
तुम कूं कष्ट महा इह ठौर। निश्चय करके ह्वै है और॥ ७॥
तुम बिषाद तब कीजो मती। अशुभ कर्म फल जानो अती॥
ऐसी कहि मुनि गण उठ गये। पांडव पति याही बन ठये॥ ८॥
सार दूल हर हस्ती जहां। रहो युधिष्ठिर बहु चिर तहां॥
एक समय नर बानर केतु। निकसो बनमें क्रीड़ा हेतु॥ ९॥
धनु गांडीव सु करमें लयो। जात चलो सो निर्भय भयो॥
तहां मनोहर नामा रम्य। देखो पर्वत अति दुर्गम्य॥ १०॥
ताऊपर चढ़ पारथ बली। अतिही गरज कर बानी रली॥
कोई भी या पर्वत बसे। नर सुर अथवा खेचर लसे॥ ११॥

जो है सो बोलो मुझ संग। सकल सिद्धि तिस ह्वै निरभंग॥
बानी गगन भई तब एम। सुन पारथ बच भाषे जेम ॥ १२ ॥
गिरि बिजियारध सेनी दोय। जाहु तहां तुम जय बहु होय॥
सो शिष ह्वैहै तेरे सही। पंच बरस तुम बसिये तहीं ॥ १३ ॥
पुनि भ्राता तुम मिलि है सबै। यों सुन अर्जुन हरषो तबै॥
बोलो कोइक बनचर तहां। आयो स्याम बरन तन महां ॥१४॥
रुखे अधर बदनये डौल। बचन कठोर दंत कछु कोल॥
बायें कर धारे को दंड। दच्छन हाथही सर पर चंड ॥ १५ ॥
नैन अरुन अरु बांकी भौंह। जम आयो मनु बाये मोंह॥
अर्जुन प्रति सो बोलो एहु। अहो धनुर्धर धनु मुझ देहु ॥१६॥
भार वृथा तुम धारत केम। यह आयुध हम लाइक एम॥
अथवा जो तुम लागे खरो। सफल करो तो हम संग रलो। १७।
यों सुन अर्जुन क्रोधित ठयो। आपनो धनु टंकोरत भयो॥
बनचर भी सर साधो धीर। दोऊ युद्ध करत बरबीर ॥ १८ ॥
घात परस्पर सरतें करें। खैंच पनिच श्रवणालों खरें॥
भिल्ल धनंजय धनुधर महा। रचो गगनमें सर गृह तहां ॥ १६॥
जे जे बान धनंजय दये। ते ते बनचर निर्फल किये॥
दुर्जय बनचर जानों जबै। झार धनुष धर धायो तबै ॥ २० ॥
मल्ल युद्ध करने को ठयो। बनचर भी भुज ठोकत भयो॥
आउ आउकर दोनो घुले। मनों परस्पर प्रीतहि मिलें ॥ २१ ॥
अति अजय बनचरको जान। पारथ व्यर्थ भयो चित हान॥
तब दोऊ पग बनचर तने। इकठ्ठ करके ऊंचे ठने ॥ २२ ॥
पारथने सु फिरायो तदा। पटकन लागो भूपर जदा॥
तौलों बनचर परगट भयो। दिव्य रूपकर भूषित ठयो ॥ २३ ॥
तबहि नमों नरको नुत सीस। पुनयों बोलो सुन अवनीस॥
मैं प्रसन्न हूं तोपर एहु। जो कछु चाहो सोई लेहु ॥ २४ ॥

यों सुन बोलो पारथ सोय। मो रथ वाहो सारथि होय ॥
खेचरने यह मानी सही। बहुत भले यों मुख सों कही। २५।
तब अर्जुन बहु धारो प्रेम। खेचर प्रति पुनि पूछी एम ॥
को तुम कहँ ते आये भ्रात। क्यों अरु लरे कहो यह बात।२६।
बोलो खेचर सुन कपिकेतु। युद्ध करनको भाषूं हेत ॥
भरथ यही विजयारध लसे। दच्छिण दिशि रथनूपुर बसे ॥२७॥
नमिवंशी तहँ नृप गुण धाम। विद्युत प्रभु खग ताको नाम ॥
इंद्र नाम सुत ताको ठयो। विद्युत माली दूजो भयो ॥ २८ ॥
विद्युत प्रभु जब दीक्षा लई। तब सुतको नृप पदवी दई ॥
छोटे सुतको दे जुगराज। आप गये बन आतम काज ॥ २९॥
ता पीछे सु अनुज जुगराज। पुरजनकी तिय छीनें साज ॥
परजा के धन भूषण हरे। बहु पुर मांहि उपद्रव करे ॥ ३० ॥
ताको एक समय एकन्त। भ्राता सीख दई बहु भन्त ॥
ता दुरमति को शिक्षा वही। वैर भाव है परनी सही ॥ ३१ ॥
पुरको छोड़ सु बाहर ठयो। नगर ग्राम पुर लूटत भयो ॥
पर दूषण नृप वंशी लसे। तिनसों मिल सुनि पुरमें बसे।३२।
तिनते बहु सन्तापित इंद्र। राहु विरोधो जैसे चन्द्र ॥
अहि निशि रंचन सुखको लहे। चितमें नित चिंतातुर रहे ॥३३॥
चिंतातुर तसु जानों जदा। मैं नैमित्तक पूछो तदा ॥
याके अरि एनासि हैं कबै। यह उत्तर मुझ दीजे अबै। ३४।
तब नैमित्तक एमे कही। सुन खेचर यह भाषो सही ॥
गिरि जु मनोहर ऊपर महां। पारथ नृप तुझ मिलि है तहां।३५।
तिस आनहुगे तुम इह ठाय। सो याके रिपु हनिये आहि ॥
ता दिनते यह सुनके कन्न। या गिरि पै बैठो परछन्न। ३६।
पुन्य जोगसों अब तुम स्वाम। आय मिले बहु गुणके धाम।
तातें चलियो ताही ठौर। रंच विचार न कीजे और। ३७।

यों कहि के बहु हितसों रले । व्योम यान चढ़ दोऊ चले ॥
जब बिजियारध पहुंचे जाय। इंद्र मिलो तब सन्मुख आय। ३८।
तौलों ताके वैरी सबै । तिम आगम सुन आये तबै ॥
पारथ इंद्र बिमाने ठये । अरिके सन्मुख धावत भये ॥ ३९ ॥
रण बाजित्र बजावत जोर। करन लगो रण पारथ घोर ॥
दुर्जन अरि जब जाने राय। सीधे शस्त्रन छेदे जाय ॥ ४० ॥
अर्जुन ने तब विद्या मई। सरतें अरि हति जय अर ठई ॥
के इक बांधे अहि की फांश। केई अगनि ते कीने नाश । ४१ ।
अरध चंद्र सर छेदे कोय। हति कोइक कीने हति दोय॥
रहित शत्रु जब इंद्रहि करो। तब रथ ऊपर अर्जुन बरो ॥ ४२ ॥
घर घर में तिय गावें गीत । अरिहत लीनो अर्जुन जीत।
पांडव बंश महा यश जोय। गावत मागध हर्षित होय ॥४३॥
न्यायवन्त खग पारथ चर्ण । अरचत हैं नित गहिके शर्ण ।
सब खग आगे करके साज । दोऊ श्रेणि सुदेखन काज ४४॥
गयो सु अर्जुन देखी भले । फिर आयो रथनूपुर रले ।
ऐसे पांच बरस तिह ठाय । खग आये ग्रह रहके राय ॥ ४५ ॥
मित्रों सहित चले कपिकेतु । निज भ्रातनके मिलने हेतु ।
चित्रांगद आदिक खग मुख्य । संग चले सब सोऊ शिष्य ॥४६॥

दोहा

तहँ बिमान ते उतरके, आप पार्थ बर शक्ति ।
यथा योग्य भ्रातान सों, मिले नमे हिय भक्ति ॥४७॥
आरत गई बियोगकी, भयो सुखी अति चित्त ।
कौन लहे सुख जगतमें, पाये प्रीतम मित्त ॥ ४८ ॥
पुनि द्रौपदी पायके, पारथ परम प्रताप ।
सन्तोषित कीनी अधिक, मेट बिरह आताप ॥४९॥
चित्रांगद आदिक सकल, धनुर्वेद विधि रत्त ।

पारथको सेवें सदा, बहुत बिनयते शिच्च ॥ ५० ॥
और युधेष्ठिर नृपतिकी, आज्ञा मानत सार ।
अरु सेवें अर्जुन सुहृद, खग गंधर्व सुतार ॥ ५१ ॥

चौपाई

एक समय दुर्योधन राय । जाने पांडव बन इहि भाय ।
कहो एक बनमाहीं राज । करन सहाय खगनको साज ॥५२॥
महा अनीती ए दुर्लीक । इनको नाश करूं अब ठीक ।
ऐसी भाषि भयो बहु क्रोध । सेना संग चढ़ो दुर्योध ॥ ५३ ॥
या अन्तरमें नारद ऋषी । चित्रांगद सों ऐसे अखी ।
रेचित्रांगद तू किस काज । पावन माहिं बसत है साज ५४॥
मो गंधर्व सुऔर सुतार । तुम क्यों पांडव सेवत सार ।
बैरी बर्ग भयो बन एह । क्यों तिष्ठो तुम इनके गेह ॥ ५५ ॥
चित्रांगद तब बोलो बान । सुन नारद ऋषि गुणकी खान ।
गुण गरिष्ट हम गुरुकपिकेतु । तिन सेवें रस साता हेत ॥५६॥
राज विषै जिन थापो इन्द्र । कीनों नाश सकल अरिवृन्द ।
सो अब पारथ स्वामी बली । ताकी सेव करें बहु रली ॥५७॥
ऐसे बच सुन नारद कही । दुर्योधन नृप आयो सही ।
जो अब याको नासे रले । तो तुम सिख पद जानो भले ॥५८॥
गुण गरिष्ट गंगासुत कही । तिनके बच ये मानत नहीं ।
द्रोण विदुर धर्मातम महा । तिनकोभी नहिं मानत कहा ॥५६॥
कलह मूल ए कौरव रुष्ट । संगरको अब आये दुष्ट ।
तुम गुरु भक्ति सुतातें अबै । सज्जित होहिं लरनको सबै ॥ ६० ॥
चित्रांगद सुन क्रोधित भयो । रण करनेको उद्यत ठयो ।
तौलों तहँ दुर्योधन राय । सेनाले बहु पहुंचो आय ॥ ६१ ॥
और सहोदर लीने संग । रण करनेको उद्धित अंग ।
क्रोध अगनिते जलते तबै । खेट उठे लरनेको सबै ॥ ६२ ॥

दोहा

चित्रांगद गंधर्व सहि, दोग बलको धार ।
सेन जलधि सोख्यो सकल, ज्यों अगस्त ऋषिसार ६३॥
उठो शल्य विशल्य तब, और सकल चित दुष्ट ।
अरु दुःशासन आदिदे, रण करने को रुष्ट ॥ ६४ ॥

अडिल्ल

चित्रांगद तब ए सब छेदे सरनते । करें परस्पर घात जुउठि के धरनि तें ॥ महा बान कर मारे सुभट परस्परे । गदा हाथले को इक अरिको मद हरे ॥ ६५ ॥

कुन्त कोटि कटि मेंदे भट भटवी सही । खड्ग खड्ग सो झार रीसा रीसही ॥ मारें मान तज के इक मारें मूसले । किनहूं के उर चीर तीछनहू हले ॥ ६६ ॥

जूझ जूझके परद सुभट पृथिवी भटा । मनो सीस धरि बरसे अम्बर सों घटा ॥ महा बान करि छेदो कौरव बहु बली करी सेन सब खगकी बिहवल भयरली ॥ ६७ ॥

तब सुतार गंधर्व सुमोहन बानते । कौरवकी सब सेना मोही मानते । अजस खान दुर्योधन ठाड़ो एकही ॥ मान मुक्त अति बिहवल हटको टेकही ॥ ६८ ॥

चित्रांगद ने लीनो सो ललकारके । मंढो युद्ध इन मांहि सुईखुर मारके । चित्रांगद अरु कौरव लरहिं परस्परे ॥ देखें देव गण गगनहि पर शंमन खरे ॥ ६९ ॥

युद्धि मांहि थिर देखे पारथ शिष्यको । सकल शिष्य परशंसि जुभेजे पत्रको । बान साध गंधर्व सुअवसर पायके ॥ कौरव की धुज छेदी रणमें धायके ॥ ७० ॥

मार अश्व रथके पुनि रथभी भंजके । पार्थ और गंधर्व सु बोले संजके ॥ अरे दुष्ट दुर्योधन अब कहँ जाय है । दुर्जनता को फल तू निश्चय पाय है ॥ ७१ ॥

बचन भाषिके ऐसे खग गंधर्वही । नागफांसते बांधो कौरव गर्व ही ॥ धन्य धन्य जस भाषें सब गंधर्वको । मिलत नीतिते जीत सुरण में सर्वको ॥ ७२ ॥

परे और सब कौरव शोकसमुद्रही । मोह बानते मोहत भटगन छुद्रही ॥ भानमती तिय ताकी सुनके पिय बंधो । उरहि अश्रुजल सींचत रोवन गल रुंधो ॥ ७३ ॥

तबहि आय तहँ बोली सारे नृपनसों । आपस में क्या देखो बदनहि बदनसों । कौन ठौर सुख तुमको मो भरता फंसे । तातें तुरत छुड़ावो ज्यों तुम यश लसे ॥ ७४ ॥

ताहि रोवती लखके गंगा सुत कही । किम पुकार इन आगे ठानत है सही ॥ चहत मुक्ति जो पियकी तो मो बच करो । धरम पुत्रकी जाहु शरण तुम अनुसरो ॥ ७५ ॥

ताहि मुक्ति निम है है पापीकी सही । धरम पुत्रहैं कष्ट दिये भी सरलही ॥ निज स्वभाव नहि त्यागें समरथ तुरतही । धीर बीर धरनी धर पद धोर वही ॥ ७६ ॥

दोहा ।

गंगा सुत के बचन सुन, भानुमती तहँ जाय ।
धरमपुत्रसों बीनती, कीनी बिविध बनाय ॥७७॥
देहु देहु करुनानिधी, पति भिक्षा अब मोहि ।
जौं लग जीवों जगतमें, तौं लग सिमरूं तोहि ॥७८॥

चौपाई ।

तौलों खग गंर्धव सुकोप । कौरवको निज रथ आरोप ।
ताको ले निज पुरको चलो । यह सुन भीम अधिक सुख रलो ७९
आपुहि बोलो आनंद रत्यो । भली भई यह कौरव हत्यो ।
हम तुमकर जो हतनो जोग । सहज मरो सो परके नोग ॥८०॥
यामें सोच सु करनो कहां । भीम कहो यों हंसिके तहां ।

धरम तनुज सुन बरजो भीम। यों नहिं कहिये गुनकी सीम।८१।
जे महान नर उत्तम मही। ते बिकारता धारें नहीं।
दुर्योधन उपजावें खेद। तो भी चित्त न रखत बेद ॥८२॥
यद्यपि राहु अछादन जेम। शशि न तजे उज्जलता केम।
धरम पुत्र पारथ सों कहे। ताहि छुड़ावन अवसर यहे ॥८३॥
है न अकीरति पांडव तनी। तौलों याहि छुड़ावो गुनी।
जौलों मरे न आनो रले। याके मरे न हम को भले ॥८४॥
यों सुन पारथ रथपै रल्यो। छोड़ छोड़ इम भारत चल्यो।
यों सुनके बोले गंधर्व। औसर पाय धरा बहु गर्व ॥८५॥
हे अर्जुन जो है तुम शक्ति। अबही याहि छुड़ावो व्यक्ति।
धनुर्वेद विधि विद्या अबै। प्रगट करो मुझ आगे सबै ॥८६॥

दोहा

यों गुरु अर्जुन सन्मुखे, खग गंधर्व सुशिक्ष।
उद्यत भयो सु युद्धको, धनुषबाण गहि दक्ष ॥८७॥

अडिल्ल

खग सुतार भी तौलों रथ चढ़के चलो। अर्जुन के तज पटसुअरि पाछे रलो ॥लगो युद्धको नर तब देऊ शिष्य प्रते। बाननको घन वर्षन नभ छायो अते ॥ ८८ ॥

नभचर भी बहु छोड़त सुर संघा तही। लयो छाय गुरु अर्जुनको घन भातही ॥ हंस हंसके इम भाषत ते धनुवेदही। देखहिंगे अब तुमको देवहु खेदही ॥ ८९ ॥

चित्रांगद भी तबही रथ ऊपर चढ़ो। धनुषबान ले पारथ के सन्मुख बढ़ो ॥ महती चगान सर जो जो चित्रांगद तजे। पार्थबान कर सो सो व्यर्थ तही सजे ॥ ९० ॥

यह प्रचंड जिम पोन घनाघनको खने। त्यों खगोश के

बातनको अर्जुन हने। बहुरि खेट आरम्भो ह्वैकर क्रुद्धही। दिव्य शस्त्र मय माया दारुण युद्धही ॥ ९१ ॥

अगनि बान चित्रांगद छोड़ो तीक्ष्णा। अर्जुनने जलसर से नाशो सज्जना। पवन बान चित्रांगद छोड़े ता समै। बार बान बिनिवारत कीनों बासमै ॥ ९२ ॥

बान बाड़वानलही छोड़ो अरजुना। बार बानते व्यर्थही कीनो ता छिना ॥ चित्रांगद तब छोड़ो अहिको पासही। गरुड़बान ते अर्जुन कीनी नाशही ॥ ९३ ॥

जे जे सर चित्रांगद विद्या मय तजे। ते ते पारथ धीर अकारथ ही सजे। पूरब पुन्य है जाको जोर सु जोर है। जगत मांहि नहिं ताकी सरवर और है ॥ ९४ ॥

लही जीत इम अर्जुनने अरिसों यदा। धन्य धन्य धुनि उपजी सन्मुखमों तदा। सकल शिष्य गुरु भक्त करी कर जोरके। पारथके पद प्रणामें मान मरोर के ॥ ९५ ॥

पारथने बहु कहके वचन सु मुष्टही। करो तृप्त दुर्योधन अनिसों दुष्टही। अर्जुनने पुन रचके सरसो पानही। परवत ते सु उतारो कौरव जानही ॥ ९६ ॥

सोरठा

धरम पुत्र के तीर, बँधन खोल दुर्योध के।
आनो अर्जुन धीर, इह विधि बहु संग्रामकर ॥ ९७ ॥

दोहा

प्रणामनकर दुर्योध नृप, बैठो कर जुग जोर।
भूप युधिष्ठिरने तबै, पूछी सकल करोर ॥ ९८ ॥

चौपाई

कौरव भनत नवायो माथ। मो बच सुनिये मोजन नाथ।
बंधनको दुख मो नहिं भयो। जैसोदुख इस मोचत लयो ९९॥

मानभंग बहु दुखकी खान। या सम कष्ट न जगमें आन।
ऐसी सुनत युधिष्ठिर राय। भेजदियो सो गजपुर ठाय ॥१००॥
दुःखित ह्वै अति निज गृहगयो। अपने चित्त विचारत भयो।
मेरो मनुष जनम शुभदेह। गयो सुनिरफल हाहा एह ॥१॥
कहा उन्नति में कौरव पती। नर छुटाय मैं प्रभुता हती।
पार्थ छुटायो रणमें बंधो। या दुखते मो हिरदो रुंधो ॥ २ ॥

दोहा

जो मारे पांडवन को, सो नाशे मो कष्ट।
अर्ध राजदूं तासको, है कोई इम सुष्ट ॥ ३ ॥
यों सुनके नृप कनकभुज, बोलो सुनिये राय।
दिवस सातमें आजते, हनूं पांडवन ठाय ॥ ४ ॥
जो नहिं मारूं तो मरूं, जरूं अगनके कुंड।
यों कहि निकसो दुर्मती, गयो सो ऋषि वनखंड ॥५॥

चौपाई

कृत्याको साधन तब लगो। मंत्र होम की विधिसों पगो।
तौलों सुनके नारद धीर। गयो सुवनमें पांडव तीर ॥ ६ ॥
कहो कि सात दिवस के बीच। कृत्याबलते हतिहैं नीच।
ऐसे सुनत युधिष्ठिर महा। धरम विषै गति आतिही रहा ॥७॥
धर्म करत भो भ्राता सबै। सुखकी सिद्धि सहजही फबै।
दोयलोक सुख वृषतें गहे। विघ्ननसे नित मंगल लहे ॥ ८ ॥
व्रतते दुखभी सुख ह्वै रले। ग्रीषम रवितें ज्यों तरु फले।
वृषसुत वृष इम सुमरो जदा। धर्म सुरासन कम्पो तदा ॥ ९ ॥
पांडव कष्ट अवधमें जान। रूप भिल्लको आयो ठान।
पांडव प्रतिसों बोलो एम। हम थानक तुम बैठे केम ॥ १० ॥
हमबल तुम नाहिं जानत अते। हम कोपत जन छिपहैं छिते।
यों कहिके सुर द्रुपदी हरी। दौरे पांडव ताही घरी ॥ ११ ॥

आदिहि भद्री सुतजुग जाहि। दौरे क्रोधित मारण ताहि।
कहां जातरे याको हरे। तोहिं हतेंगे अब हम खरे ॥ १२ ॥
ऐसे बच ए सुरको कहे। धावहि बेगहि पकरो चहे।
द्रोपदी ले सुर जहँ जहं जात। तहँ तहँ धावत दोऊ भ्रात १३॥
तृषा सुपीड़ित ह्वैके धीर। निर्जल बनमें ढूंढ़त नीर।
तौलों इक कमलाकर महा। देखो जल करपूरण तहां ॥१४॥
पीवत नीर नकुल सहदेव मूर्छा खाय गिरे तहं येव।
तब पारथ यों बोलो तहां। गये अनुज जुग मेरे कहां ॥१५॥
किहकारण बहु बीतो काल। सुधि लाऊं मैं अब दरहाल।
राजाको नुत करके चलो। तिनहिं विलोकत बनमें रलो १६॥
गत जीवित देखे सर तीर। खेद खिन्न ह्वै रोयो धीर।
अहो भूमिपै रवि शशि परे। कै धर्मज्ञ कै द्वै भुज गिरे ॥१७॥
भ्राताहि उत्तर देहौं कहा। योंरोवत तिन धीरज गहा।
पुनि अर्जुन कांडीवहि तर्जे। क्रोधित ह्वै यों बोलो लर्जे ॥१८॥
किम मारे मो भ्राता सन्त। तिस भेजूं यम मंदिर अन्त।
धर्म देव तब पारथ प्रते। ह्वै परछन्न सुबोलो अते ॥ १९ ॥
तो भ्राता मैं मारे सही। जो तो सकति करो मो कही।
क्रोध त्याग जल पीवो सरे। तो बल जानो तेरो खरे ॥ २० ॥
ऐसी सुनके क्रोधित होय। पीयो जल सर मूर्छो सोय।
मानो विषजल पीवन गिरो। ऐसे पारथ पृथ्वी परो ॥ २१ ॥
जौलों पारथ आयो नहीं। भीमप्रते नृप ऐसे कही।
क्यों नहिं आयो पारथ वीर। तुम आनो सुध ताको धीर २२॥
ऐसी सुनके पावन रलो। पगते भू कम्पावत चलो।
जा पहुंचो सर तटके ठाय। पतित लखे तहँ तीनों भाय २३॥
हाहाकार करत मुख छीन। बिलख बदन ह्वै बिलखत दीन।
तीन भुवन भी आजें परे। तीनों बांधव मेरे मरे ॥ २४ ॥

ऐसे बिलखत मूर्छा घिरो । भिन्न वृक्ष सम भूपर गिरो ।
सरकी पयकन सीतल ठाय। तातें मूर्च्छा तजि उठराय ॥२५॥
दस दिशि देख सुपेस कही । किन मो भ्राता मारे मही ।
ताको अपने करतें मार । देहुं दसों दिशि पलको भार ॥२६॥
तब नभते बृप बानी रली । पीवे सर जल सोई बली ।
ऐसी सुनके पावनि तीर । सरमें न्हायो पीयो नीर ॥ २७ ॥
जबही बाहिर निकस्यो सोय । पड़ो सुविपमें मूर्छित होय ।
तौलों राय युधिष्ठिर तहां । भये सुखेदित चितमें महां ।२८ ॥
मो भ्राता नहिं आये चंड । ढूंढत चालो नृप बन खंड ।
मूर्छित भ्राता देखे जबै । परो सुमूर्छित ह्वैके तबै ॥ २९ ॥
क्योंहू क्योंहू कारिके जगो । करत विलाप सुदुखमों पगो ।
भो भ्राता क्या पीवत नीर । मूर्च्छा खाय परे तुम धीर ॥३०॥
वज्र थंभ धनु लागो महा । तुम से भट यो मरना लहा ।
अब कौरव को पूरन राज।भयो महजही सुखमों साज ॥ ३१ ॥
पांडव वंश नसो बिन काज। आनंद्यो दुर्योधन दुष्ट ॥
बांधो कौरव खगराज माहि । मैं नाहि मारन दीनो ताहि ॥३२॥
तौ भी विधि मो भ्राता हते। दुष्ट करम दुख ऐसे रते ॥
धरमदेव तब ऐसे कही । तो भ्राता हम मारे सही ॥ ३३ ॥
जो तो में कुछ बल है राय । तो जल पीवो सरमें जाय ॥
अपनों बल तुम प्रकटो यथा। मेंडक सम किम गरजो वृथा ।३४।
यों सुन धरम तनुज सरधसो। पय पीवत ही मूर्छित लसो ॥
मनु हालाहल विषको खाय । परो मृतक सम भूपर राय ।३५।

दोहा

कनक ध्वज को मंत्र ते, भई सु किरिया सिद्ध ।
सप्तम दिन आदेश को, जांचत आई ऋद्ध ॥ ३६ ॥
कनक केतु बोलो तदा, जो तों में वर शक्ति ।

तो पांडव पांचो हतो, फुरे हमारी भक्ति ॥ ३७ ॥
कृत्या ले आदेश को, गई सरोवर पास ।
तौलों नृप सुर सब रहे, ठगे पांडवों पास ॥ ३८ ॥
मुख भाषत हाहा मरे, पांडव परम प्रवीन ।
उलट पलट लख देह नित, कर कर आनन दीन ॥ ३९ ॥
कृत्या बोली सबरसों, यों पठई सुन केतु ।
पांडव पंच प्रचंड ये, इनके मारण हेत ॥ ४० ॥
ये मे देखे मृतक ही, अब क्या कीजे काज ।
यों सुनके बोलो सबर, वाही को हन आज ॥ ४१ ॥
यों सुनके निकसी सुरी, परी कनक के सीस ।
जैसे गिर पै बीजली, हत्यो दुष्ट यों पीस ॥ ४२ ॥

चौपाई

कृत्या करके अपनो काम । जाय बसी सो अपने धाम ॥
धर्म देव सो धर्मी सन्त । जानों सकल सुरी विरतन्त ॥ ४३ ॥
अमृतते नृप सींचे तबै । करि जाग्रत उठाये सबै ॥
तव जु धर्म बोलो इह भांत । कहु किरात तुम अपनी बात ॥४४॥
क्यों साधर्मी को शुभ मीत । हम उपकार करो तुम नीत ॥
ऐसे सुनके बोलो भील । जो तुम सुमरो वृष शुभ सील । ४५ ।
ताही जिन वृषके परभाव । मैं तुम विघन निवारूं राव ॥
कनक केतु हम डारो मार । तुमको सींचो अमृत धार ॥ ४६ ॥
इह बिधि भाषो सब बिरतंत । अर्जुन को दी द्रौपदी संत ॥
इनके पद पंकजको नयो । धर्म देव गृह अपने गयो । ४७ ।
कुंती के सुत क्रमते चले । घन दल नामापुर में रले ॥
सिंह राय तहँ प्रभुता धरे । त्रिया कांचना गृह अनुसरे । ४८ ।
कनक मेषला तिनके सुता । रूप सची सम जोवन जुता ॥
भीम गयो तहँ भोजन काज । देन लगो नृप कन्या साज ।४९।

भीम कहो मो अग्रज भ्रात। या विधि कौवे जाने बात॥
भूपतियों तिस आज्ञा लई। पाणि ग्रहणकर कन्या दई। ५०।
कोइक दिन तहां रहिके चले। क्रमते कौशल देशहि रले॥
ताको भी लख निकंप तदा। पहुंचे राम गिरी पै सदा। ५१।
भूतल मांहि भ्रमत बहु ठाय। विषय बिराटपुर पहुंचे जाय॥
तहँ बिराटपुर उत्तम बसे। इंद्र नगर सम शोभा लसे॥ ५२॥
मंत्र कियो तहँ पांडव कर्ष। हमको बीते द्वादश वर्ष॥
बनमें निवसे इतने दिनो। धर्म शर्म विन बनचर मनो।५३।
एक बर्ष अब है परछन्न। बसें नगरमें नृप आसन्न॥
चतुराई अपनी दिखलाय। मोहे पुरजनको अधिकाय॥५४॥
राय युधिष्ठिर ऐसे कही। धर्म पुरोहित हूं हैं सही॥
भीम कहो मैं बनिहों सार। बल्लभ नाम रसोईदार॥ ५५॥
पारथ कहो नट नायक बनो। नर्तक निर्त सिखाऊं घनो॥
उर निचोल तन साफो लहो। नाम वृहंदल धरि के रहो॥ ५६॥
नकुल कहो हय राखूं सार। थिर चित तिष्ठो कस असबार॥
लघु भ्राता बोलो सहदेव। गोधनको हम राखें एव॥ ५७॥
सती द्रौपदी बोली सचों। मैं मालन है माला रचों॥
चितमें रचना रचके पेख। तैसो ही सब धारे भेख॥ ५८॥
कपट रूप अति नाना रंग। भये सु कपटी शोभित अंग॥
नृप बिराट शुभ मंदिर ठाय। निज निज विद्या प्रकटी जाय।५९।
नृपने ये बहु मानें अबै। यथा योग विधि सौंपी सबै॥
सबही काज सम्हारे भला। नृपहि दिखावे अपनी कला।६०।
तहां सुदर्शन नृपकी तिया। बहु थुति द्रौपदि ताकी किया॥
गूंथे बिबिध कुसुमके हार। रानी को पहिरावे सार॥ ६१॥
और चूलिका नामापुरी। चूलिक नृप तहँ प्रभुता बरी॥
ताकी रानि बिकाजा नाम। बिकसत कंज नयन अभिराम।६२।

कीचक आदि तनुजसौ तास । बहु बलवंत सुगुनकी रास ॥
एक समै सो कीचक धीर । नृप बिराटके आयो तीर ॥६३॥
सो बिराटको सालो लगे । रहे सदन में सुखसों पगे ॥
कीचकने तहँ द्रौपदी सही। देखी मनु इन्द्रानी यही ॥ ६४॥
तादिनते सयनासन मांहि । भयो सु बिरकत देखत ताहि ।
जहीं जहीं पद द्रौपदि धरे । तहीं तहीं यह कीचक फिरे ॥६५॥
स्मर पीड़ित चित सुखसों मिष्ट । बारम्बार कहे बच इष्ट ॥
पार्थ तियासों झिरको जोर । कटुक बचन कहि मुखसों घोर ।६६।
रे कीचकरे लम्पट दुष्ट । पंच पुरुष ए बलसों पुष्ट ।
जानेंगे जो तुझको एह । तो भेजेंगे जम के गेह ॥६७॥
यों सुनके तिन आनंद लहो । सुनहु भालिनी ऐसे कहो ।
तोहि भोगहों सांची मान । बहु दन्ती बल मो यह जान ॥६८॥
तातें सुंदर ह्वै परसन्न । मरित जिवावहु मो जिय जन्न ।
तब कीचक झिरकारो खरे । गई द्रौपदी अपने घरे ॥६९॥
कीचक अतिहि मृतक सम भयो। काम बाणकर पीड़ित ठयो।
एक समय पुनि सूनो गेह । द्रौपदि देखी कीचक एह ॥ ७०॥
बांह पकरिके बोले तदा । मोको बरए सुन्दर मुदा ।
क्योंहूं क्योंहूं करके तास । गई उलंघ सु गुणकी रास ॥७१॥
रुदन करन्ती द्रोपदी महां । पहुंची भूप युधिष्ठिर जहां ।
कीचककी कृति भाषी एह। शील रहो तुम घर में देव ॥७२॥
धर्म तनुज तब क्रोधित होय । भौंह चढ़ाय सो बोलो सोय।
दुराचार तहँ राजा करे । क्यों न प्रजा तो औघट परे ॥७३॥

श्लोक

राज्ञःधर्मिणिधर्मिष्ठा पापे पापा समेस्समा ।
राज्ञा नु मनु वर्तन्ते यथा राजा तथा प्रजा ॥७४॥

दोहा

राजा धर्महि धर्मही, राजा पापहि पाप ।
सम भावे सम भाव सब, है राजा सु प्रजाप ॥७५॥

चौपाई

रोवत द्रौपदि बरजी तदा । मिष्ट बचन मुख भाषत मुदा ।
शीलवती है तिष्ठो सती । कष्ट न राखो हिरदे रती ॥ ७६॥
सुरकर पूजत सीता जथा । अरु मन्दोदरि रानी तथा ।
शीलहिते अति सोहे नार । शील समान जगतमें सार ॥७७॥
उठो इन्द्र सुत हरि सम क्रुद्ध । बरजो राय युधिष्ठिर बुद्ध ।
दस दिन पारथ रण मत करो । पुनि जो चाहो सो अनुसरो ॥७८॥
तब द्रौपदि विपुलोदर पास । गई सुनैननि पूरित आस ।
बोली ढकके आनन चंद । गद गद बच सुन अच्छर मंद ७९॥
तुम जीवतही कीचक एह । मोको बहु दुख नित प्रति देह ।
यों सुन भीम भने परचंड । जाकी भुज मनु दिग्गज सुंड ८०॥
कहु भावज दुख क्या तुम दीन । जासों ताहि करूं अस छीन ।
अग्रजभी जो बरजे मोहि । तौभी या नहिं छोडूं छोह ॥८१॥
कहे द्रोपदी सुन भीमेस । तुम पंचानन सम बल एस ।
तुम जीवत नर जगमें कौन । देयसके दुख मोको जौन ॥८२॥
इन कीचकने जोरावरी । बांह गही कर भयसों भरी ।
बचन अगोचर मो दुख एह । व्यापो अजंहू कम्पत देह ॥८३॥
ऐसे बच सुन पावन भने । दावानल सम क्रोधित ठने ।
भय वर्जित चित नित आलीन । हतबेको तिम उद्यम कीन ८४
हे सुन्दरि तुम जावे जाय । निस संकेत करो बन ठाय ।
प्रात भये पुनि द्रौपदि गई । कपट धार यों भाषत भई ॥८५॥
हे कीचक जहं राचे तोहि । तहँ संकेत बतावो मोहिं ।
सो बोलो नटशाला पमें । आवो सुन्दरि संध्या समै ॥ ८६ ॥

इष्ट मिष्ट जो तोको महा। पूरन करिहौं तितने तहां।
यों सुनके सो भीमहि जाय। ताकी बात कही समझाय॥८७॥
सुनके हर्ष लयो भीमेश। धारो सांझ समय तिय भेष।
सुभग सुहागन कामिनि बनी। अंगअंग छबिनखसिख सनी८८
पग नूपुर कटि नीवी सार। कर कंकन वक्षस्थल हार।
कुंडल कान तिलक शुभ भाल। नैनन अंजन रंजत साल ८९
चूड़ामणि छवि राजे सीश। मानो पूरब दिश [illegible] ईश।
कै यह रति कै लक्ष्मी सची। आई भूपर विभ्रम मची॥९०॥
ऐसी बनके कीचक पास। गृह संकेत गई गुण रास।
छिन तिष्ठी जौलौं तहँ जाय। तौलौं आयो कीचकराय॥९१॥

दोहा

निसतमते अरु रागते, खबर परी नहिं याहि।
ताको कर करते गहो, जान द्रोपदी ताहि॥९२॥
करके कर करकस लगो, जानों तब मन माहि।
आयो धूरत कोइ अरु, यहतो द्रोपदि नाहिं॥ ९३॥
सुमिरे नैमित्तिक बचन, विपुलोदरते मृत्यु।
कीचक चित यों चीतयो, सो अब लखियो सत्य ९४॥
यों ध्यावत तिस हस्तको, हठहि छुड़ायो हस्त।
दोऊ लागे युद्धको, मनु गयंद मद मस्त॥ ९५॥
हस्त हस्त पग पग भिरे, सीश सीश सों मार।
अधर चबै लोचन अरुन, स्वेद दिपत तन सार॥९६॥
कीचक की छाती विषै, वज्र मुष्टि परहार।
भीम करो हुंकार कर, भू पर दियो पछार॥ ९७॥
पग जुग देके भीम तब, छाती पै चढ़ बैठ।
अस्थि संधि तड़ तड़ करत, बोलो कंठहि ऐंठ॥ ९८॥
रे कीचक पर तियहि तू, रे अनिष्ट संकुष्ट।

पर रामाको फल बिपुल, खेट प्रकट यह दुष्ट ॥ ३९ ॥
रे पर रामारत कहां, जैहे अब तू नीच ।
यों कहि पग ते पीसियो, मार करो घन कीच ॥१०० ॥

चौपाई

द्रुपदी ने नट दीनो लाय । तिनहीं मारो कीचक राय ॥
नृप विराट सुन ऐसी बात । ह्वै भयवंत ठयो छिन सात ॥१॥
कीचकके भट सुनके तबै, । धाये धूलिहि धूसर सबै ॥
गये सुनत गृह ताही छिना । देखो कीचक प्राणों बिना ॥२॥
खंडित देह रुधिर सों रत्यो । मानों बिधि ने हटते हत्यो ॥
मरो निरख भट लज्जावंत । चितहि बिचारो ऐसी मंत ॥ ३ ॥
नट अरु द्रौपदि दोऊ ठान । याके संग जलावो आन ॥
यह कारज अब कीजे एम । और न जाने कोऊ जेम ॥ ४ ॥
प्रात भये सब जानों जना । कहि हैं कीचक नटने हना ॥
है है हांसी सबकी सही । तातें कारज कीजे यही ॥ ५ ॥
तुरत अंधेरी निकसे मांहि । नटकर माथहि जारो याहि ॥
गये सु ऐसे कहिके तहां । सती द्रौपदी बैठी जहां ॥ ६ ॥
करसों पकड़ निकासी सोय । रोवत अतिही दुःखित होय ॥
हा नट नायक मोको राख । हा हा धिक् सो मुखसों भाष । ७ ।
द्रौपदि के बच सुनके भीम । दौरा तबही साहस सीम ॥
सिरके बाल फिकारे जोर । तरु उखार अरु किलको घोर । ८ ।
सब सुभटों तब अचरज लहा । क्या यह राक्षस आयो महा ।
देखतही तिस नृप भट सबै । द्रौपदिको तज भागे तबै । ९ ।
कल कलाटकर पीछे परो । मनो भयानक जम अनुसरो ।
कोई भट नहिं ठाड़ो रहो । भागहु भागहु सबही कहो । १० ।
डर जग मांहि मरणको बड़ो । रहन न पाते कोऊ खड़ो ।
पुन पावन अस द्रौपदि तदा । न्हाय धोय गृह आये मुदा ।११।

प्रातहि पुरजन द्रौपदि को जु। लख के चितमें चितवे यो जु॥
प्रलय श्री अरू श्री है येह। आनंद दायक सुन्दर देह॥ १२॥
कीचक के सौ भ्राता सही। ते देखें तो कीचक नहीं॥
सब ठौरन जब पूछो खरो। तब द्रुपदी ते जानों मरो॥ १३॥
द्रुपदी को तब पकरन गये। बध करिते को उद्यत भये॥
सुनके पावन पहुंचो तबै। डार चितामें जारे सबै॥ १४॥
कीचक अरु सौ भ्राता तथा। भसम करे सब कंटक जथा॥
है सकलंक सुभट सब ओर। गये सुप्रातहि निजग्रह ठौर।१५।
धरमपुत्र तब पावनि प्रते। बोलो बचन सु नीते अते॥
भो भ्राता दिन तेरह रले। है परछन्नहि रहनो भले॥ १६॥
इह बिधि बरजे भ्राता सर्व। बैठ रहे तब तजके गर्व॥
ता अवसर दुर्योधन दुष्ट। ढूंढनको भट भेजे पुष्ट॥ १७॥
दौड़े भृत्य सु आज्ञा साज। पांडु सुतन को देखन काज॥
ढूंढे पर्वत ढूंढी मही। बन जल दुर्ग न देखे कही॥ १८॥
ढूंढ ढांढ फिर आये सबै। कौरवपति को प्रनमें तबै॥
कहो कि स्वामी कुंती पुत्र। भूमि बिषै नहिं देखे कुत्र। १९।
तातें वे अब जीवित नांहि। मरे सु काहू अटवी माहि॥
यों सुन कौरव हर्षित चित्त। सुभटन को बहु दीनो वित्त। २०।

दोहा

बोलो गुरु गंगेय तब, सुनों कौरवा सत्य।
पांडु पुत्र परचंड ये, मरें न अल्पहि मृत्य। २१।
पंच मेरु सम अचल ते, धारत चर्म शरीर।
जीवित हैं वे भूं बिषै, महापराक्रमि धीर। २२।
मुनि भाषित सुभ धर्म सुत, धरि हैं नृप पद रिद्ध।
पुनि सत्रुंजय गिरतही, लहि हैं शिव पद सिद्ध। २३।

पद्धड़ी छन्द

जग मांहि सु पांडव गुख गरिष्ट। मव ठोर लहे जस उदय सिष्ट।
नित कष्ट रहित सुख है सुगेह। ते भवि जनको शिवथान देह ।२४।
शुभ शील सलिलकी सरित जान। है परम सु पावन तन सुवान।
द्रुपदी सु वापि लावन्य वारि। गाम्भीर्य धैर्य धारक सुनारि । २५ ।
करके सुपाप कीचक कुशील। दुख हास्य पाय विनसो कुशील ॥
तातें सुशील निरदोष रत्न। जैनी सु पाल नित धार जत्न॥ २६ ॥

इति श्री सम्महाशीलाभरण भूषित जैनी नामांकितायां भारत भाषायां लाला बुलाकीदास विरचितायां पांडव कुलोत्पन्न विनाशन विराट नगर द्रौपदी शील रक्षण कीचक बध वर्णनो नामाष्टदश प्रभाव:

बिराटनगरमध्येकौरवमानभंगगौकुल

बिमोचन और अभिमन्यु बिवाह द्वारा पुरी प्रवेश वर्णनम्

मंगलाचरण ॥ श्री बिमलनाथ स्तुति दोहा ॥

बिमलनाथ कलमल रहित, बोलत बिमला लाप।
सेवत अमल सु कमल पद, मिटत सकल आताप ।१।

चौपाई

गंगासुत पुनि बोल्यो बान। द्रोण प्रते परपंचहि ठाय ॥
चार पांच दिनमें इह ठांह । आवहिंगे बर पांडव राय॥ २ ॥
प्रकट होयके दुर्घट काज। साधहिंगे वे बलको साज ॥
जानत हैं हम निश्चय सही। पांडव गजपुर लेंहे मही ॥ ३ ॥
तब जालन्धर जालम भने । पुर बैराटहि पांडव ठने ॥
कीचक प्रकट महा भटसूर । सो नट नायक कीनो चूर ॥ ४ ॥
धारत हो सो कौरव पक्ष । अरि हतिवे को अतिही दक्ष ॥
अब बिराट भी है असहाय। गो कुल प्रगट सु तिस अधिकाय ५
तातें अब मैं ताकी गाय। जाय हरूं तुम आज्ञा पाय ॥
पांडव धेनु छुटावन काज । आवहिंगे तहँ रणको साज ॥ ६ ॥

गुप्त देहते निर्बल तहीं। मैं मारहुंगो तिनको सही ॥
यों सुनके दुर्योधन राय। बहु प्रशंस करि भाषो जाय ॥ ७ ॥
गाय हरनको भेजो जबै। चलत भयो जालन्धर तबै ॥
केतु समूह सु रथ संघात। तरल तुरंगम गजके दांत ॥ ८ ॥
संग लयो तिस पुर अनुसरो। नृप बिराट कहि गोकुल हरो।
गोधनके रखवारे तबै। जाय पुकारे नृप पै सबै ॥९॥
जालन्धर नृप आयो देव। सैन सहित मनु सागर एव।
गो कुल सो हर लीने जाय। जो भावे सो कीजे राय ॥ १०॥
यों सुनके नृप क्रोधित ठयो। रण दुंदुभी बजावत भयो ॥
सुनके सूर पहर सन्नाह। सबहि उठे कर रण उत्साह ॥ ११॥
किंकिन पंकज पहरे सिष्ट। स्वर्ण जीनकर भूषित पृष्ट।
चले तुरंगम ऐसे जांहि। मनु तरंग रण सागर मांहि ॥ १२॥
शोभित झूल चले गजराज। घन सम गरजत मदसों साज।
रथ्या पंथ रुंधो रथ संग। यों बिराट बलले चतुरंग ॥१३ ॥
पुर रक्षा कर चढ़ रथ चले। सुभट धनुष धर बहु संग रले।
चंचल चित अति पांडव तबै। चले छिपेही रथ चढ़ अबै ॥१४॥
धाये पांडव रणको देख। धाराधर ज्यों ग्रीषम पेख।
मारू बाजे बाजन लगे। रोम रोम सूरनके जगे ॥ १५ ॥
उठी घोर रण दुंदुभि जोर। तामें निश्चित धनु टंकोर।
ताको सुनके कायर डरे। सूर सुभट लरनेको अरे ॥ १६ ॥

दोहा

धेनु लुटावन कारने, मंडो रण बैराट।
जीते राज सुराज ए, जूझे जस उदघाट ॥१७॥
दोय काज क्षत्री धरें, करें न कोई और।
राज त्याग दीक्षा वरें, मरें युद्ध को ठौर ॥ १८ ॥
जो कायर रण धर्ममें, ते क्षत्री हैं नाहिं।

दोहू ओर ते भृष्ट हैं, ते जग अरु शिव माहिं ॥१९॥
प्राण तजैं कै बन विषै, मांड परम सन्यास ।
कै जूझैं रण सन्मुखे, ते क्षत्री गुणरास ॥ २० ॥
लहत स्वर्ग अपवर्ग पद, तेई सूर महान ।
तिनहीको यश जग विषै, बर्णत हैं मतिमान ॥२१॥
जे कायर रणके विषै, तिनको यश जग नाहिं ।
तेई तपतें भृष्ट हैं, परें ते दुर्गति मांहिं ॥ २२ ॥

अडिल्ल

लगे युद्धको योधा रणमें धायके । धनुष साध सर छोड़ो अधर चढ़ायके ॥ हृदय शत्रुके मारन तक तक सरनको । वार पार ह्वै जाय सुजीवन हरनको ॥ २३ ॥

खडग घाततें को इक खंडित ह्वै गिरे ।मनो बज्रको पातहि पर्वतही परे ॥ रात माहिं शशि उमगत इह विधि रन रलो । धनुषधार जालन्धर सर छोड़त चलो ॥ २४ ॥

वृक्ष साख सम छेदनकरि पद अरिनके । नृप विराट को निकट बुलायो चरनके ॥ हतो सारथी नृपको सरके जालही । परो कूद पुनि छलते रथको भालही ॥ २५ ॥

नृप विराट को बांधो बंधन जकरही । लयो डार निज रथ जो अहिको गरुड़ही ॥ नर विराटको बांधो रणमें जानके । कहो धर्मसुत भीमहि क्रोधहि ठानके ॥ २६ ॥

अहो भ्रात विपुलोदर निज रथ बाहिये । अबहि बेग रण माहिं विराट छुड़ाइये ॥ सकल धेनु कुल मोचहु यह नृप नीत ही । तौ बल देखूं अब मैं या रण जीतही ॥ २७ ॥

नृप विराट को संकट बिकट छुड़ायके । मो मनोर्थ तुम पूरो शत्रु हटायके ॥ भ्रात वाक्य सुन नुतकर पावन दौरके । महा वृक्ष उन मूल धरो रण घोरके ॥२८॥

कल कलाटकर मानों जम छोभित रलो। लहे हाथ गांडी वहि पारथ भी चलो ॥ नकुल और सहदेव चले अति घुमंडिके। मनो छोड़ मरजाद पयोनिधि उमंडिके ॥ २६ ॥

भीमसेन भीमाक्रम तौलों भुजनसों। करे चूर्ण रथ ग्यारह शतक सु हयनसों ॥ हते घात घन साढ़े नौसौ बर तुरी। और सूर सुभटन की गिनती किन करी ॥ ३० ॥

नकुल सूर तहँ अरिकुल नासत है तही। प्रबल शत्रुसों युद्ध करो सहदेवही ॥ धनुष धार जालन्धर आयो तासमैं। भीमसेन को छायो सरही घन पमें ॥ ३१ ॥

भीमसेन भी सरने तिस सारथ हतो। बहुरि कूदकर ताके रथ ऊपर रतो ॥ तहां बांध जालन्धर नृपको बहु दृढ़े। पुनि विराट छुटवाय दयो रथही चढ़े ॥ ३२ ॥

भयो भंग बल अरिको तौलों पावनी। गो छुड़ाय के आनी पुरहि सुहावनी ॥ यह वृतान्त दुर्योधन सुनके क्रोधही। चलो धामने रण कू अति दुरबोधही ॥ ३३ ॥

पुनि विराट नट पहुंचो कौरव सेनसों। ठयो युद्ध को उत्तर द्वारहि चैनसों ॥ चरत चारु तहँ गो कुल दौरो कौरवा। परी सो उत्तर पुरही नवही दौरवा ॥ ३४ ॥

दोहा

तब बिराट आदिक सकल, भये सु चिन्तावन्त।
बिन सहाय क्यों कीजिये, गो कुल शत्रु हरन्त ॥३५॥
तिनसों बोली द्रौपदी, यह नट गुनकर पूर।
पारथको है सारथी, सीखो रण विधि सूर ॥३६॥
यों सुनके सु बिराट सुत, दयो महा रथ तास।
पुरसे निकसो सैनले, देखो अरि दल रास ॥३७॥
भाग चलो भयभीत है, दूर रहो रण एह।

मैं असक्त थिति करनको, प्राण हरण दुख गेह ॥३८॥
तब नट नायक यों कही, क्यों भागत नृप पुत्र।
अर्जुन सारथि पाय के, मत कुल लाजहु अत्र ॥३९॥
तातैं कायर होय मत, मो संग रणको जीत।
यों भाखत भी कुंवर को, भागनही सों प्रीत ॥४०॥
तब नट नृप सुतसों कही, मैं पारथ परसिद्ध।
तातैं निर्भय होयके, मोरथवाहो सिद्ध ॥४१॥
सब शत्रुनको मार के, उज्जल जस उपजाय।
आवहिंगे निज पुर विषै, सुगने सुख अधिकाय ॥४२॥
ऐसे बहु विधि धैर्य दे, कहो सारथी ताहि।
अरिगनको ललकार तो, धमो पार्थ रण मांहि ॥४३॥

सोरठा

तौलों अगनि कुमार, आयो पारथ के निकट।
नंदघोष घन सार, दीनो देव प्रसन्न है ॥४४॥
सुर पुनीत रथ पाय, चलो पार्थ अरिहतन को।
करो सारथी ठाय, उत्तर सुत वैराट को ॥४५॥

अडिल्ल

अर्जुनको लख इह विध अचरज गुरु लहो। महा क्रूर सब कौरव तिनसों यों कहो। करहु संधि तुम अबभी रनको छोड़के। तुमहि होय सुख निश्चय दुखको तोड़ के ॥ ४६ ॥
को समर्थ तुम मांहि जु नर सुर सहनको। अगनि मांहि किम तिष्ठे ईंधन धरनको ॥ कपट त्याग तुम तातैं गाय पठाययो। प्रीत मांड रण छोड़ सु निज ग्रह जाइयो ॥ ४७ ॥
तुमहीं गेहते आवत कुसुगन बहु भये। ताहीते फिर चलिये है भयभीत ए ॥ सुनत बात यह अरुनित है दुर्योधना। देत दृष्ट निज सूरन ऊपर यों भना ॥ ४८ ॥

अहो द्रोण तुम बचए कायर किम कहो । अरि प्रशंसना रण में औसर को लहो । भये क्रुद्ध मुझको है पारथही नसो। और कौन गुन भिक्षुक दुर्बल दीन सों ॥ ४६ ॥

विकट मार्ग नहिं जानत तू क्षत्रीन सों । करत राज पृथ्वी को मार अरीन कों ॥ कहत कर्ण रथ बैठो गंगासुत प्रते । कहूं हारतो देखो मोको रण रते ॥ ५० ॥

करो युद्ध मैं जहँ जहँ तहं तहं जय रली । युद्ध मांहि मुझ जीते ऐसो को बली ॥ अबहि पार्थको उत्तर सहितहि मारहों । रह भूमि पर फेरन ऐसे जारहों ॥ ५१ ॥

भयो रुष्ट यों सुनकर गंगासुत भट्टा । कहो कर्ण रे रण तैं देखो है कहां ॥ नहीं सक्ति तो अर्जुन सन्मुख लरनकी । भूमि स्वाय है तो को हनके मरन की ॥ ५२ ॥

दोहा ।

ऐसी कहि गंगा तनुज, धाय धसो रण मांहि ।
तब पारथ द्वै सर लिखो, भेजे सन्मुख ताहि ॥५३॥
बान देख अक्षर सहित, बांचो गुरु गंगेय ।
सुनहु पितामह बीनती, करत धनंजय एह ॥५४॥
तुम पद पंकज प्रणम कर, सेवों सज्जित चित्त ।
हमको तेरह वर्ष अब, निकसे भये वितित्त ॥ ५५ ॥
अब हति के बैरीन कूं, भुंजू भूतल राज ।
सर अच्चर दिखये तिन्हें, तबहि पितामहँ साज ॥ ५६ ॥
देखत ही कौरव डरे, क्षोभित भये अधीर ।
तौलों पारथ बाहि रथ, सन्मुख आयो बीर ॥ ५७ ॥

अडिल्ल

भने गर्ज के पारथ ललकारत तहां । महां अनीति दुर्यो-

धन अब जै है कहां ॥ यह कृतान्त को देखत तोहि पठा-इहों । टूंक टूंक कर तेरे बलाहि लुटाइहों ॥ ५८ ॥

अकस्मात रथ आयो लख दुर्योधना । प्रलय काल जनु बायक हो सम्बोधना ॥ कौरव को दल तौलों आई पहुंचियो। सुत विराटको तीरन जर्जर तन कियो ॥ ५९ ॥

उठो अग्नि सम अर्जुन क्रोधित ह्वै तबै । ज्वलनबान तें जारो कौरव दल सबै ॥ लये हाथ गांडीवहि बोलो गर्ज के । अरे दुष्ट दुर्योधन सुनियो तर्ज के ॥ ६० ॥

सुभट कोय भी तेरे है मो सन्मुखे । करे युद्ध अब मोसों है तेरे रुखे ॥ क्रुद्ध भयो तब कर्ण उठो मन आग ही । अर्जुन ही प्रति धायो रणको लागही ॥ ६१ ॥

कर्ण पार्थ तब आपस में सर छावहीं । दलन भूमि को पगते हंमत हंमावहीं ॥ महाबान कर लेवें तनहिं परस्परें । गर्जे गर्ज कर तर्जे अरु उछरें खरें ॥ ६२ ॥

लरें मत्त हय मानो उखारख करें । करन चूर्ण धरणी को मनु गजही अरें ॥ फिरें सिंह मनु दोऊ क्रिया करतही । सर असंख्य तज पूरे अंबर तुरत ही ॥ ६३ ॥

सरहि पार्थ ने पूरो घन जों गगन ही । उठो शत्रु बल यों ज्यों तूलहि पवन ही ॥ कर्ण चापकी पनच जु छेदी पार्थने। हतो सारथी रथ भी पारथ सार्थ ने ॥ ६४ ॥

ठयो भूमि में कर्ण सु रथ वर्जित रलो । पार्थ सामने तौलों शत्रुंजय चलो ॥ अनुज जान दुर्योधन को सो अति बली । मरहि छाय अरि दलमें डारी हल चली ॥ ६५ ॥

ज्यों मृगारि मृग गनको मारे नयन सों । त्यों कुमार शत्रुंजय शत्रुहि शर्ण सों ॥ निकट आवतो लख तिस बोलो पार्थ यों । जाहि जाहि रणतें शिशु मरहि अकार्थ क्यों । ६६ ।

कहा तिष्ठ है मेरे आगे बाल तू । चरन घात हस्ती को नहिं सहे शृँगाल जू ॥ ताही पच्छ नच्छेपक ही अहि सहिस के । देखत ही तिस मारग चलने सों थके ॥ ६७ ॥

अहो बाल तो ऊपर सर नहिं मूचि हों । बहे हाथ नहिं मेरो करुना सूचिहों ॥ भयो क्रुद्ध शत्रुंजय ऐसे सुनतहीं। पांच बान बहु तीच्छण मार तुरतहीं ॥ ६८ ॥

लगत पार्थ उर भग्न भये सो छिनक में । पार्थ बान दश सरतें मारे तनक में ॥ पर भूम शत्रुंजय भिरतक है जबै। अनुज कर्ण को बिरकन आयो चढ़ तबै ॥ ६९ ॥

बान पार्थ के छेदत धायो युद्ध को । करो रुद्र रण अति ही घार तिन क्रुद्ध को ॥ अर्जुन ने तिस सारथि हति के रथ हनों । लयो छाय सर जालहिं निर्बल तन ठनो ॥ ७० ॥

कालरूप ह्वै पार्थ अर्थ अरि गण मही । मींड मींड कर कीनो रणभी बत्स ही ॥ धनुष साध सर तीच्छण छोड़ो भेद के। सिर विकर्ण को करनें कंठहि छेदके ॥ ७१ ॥

गये प्राण जब मंदिर धरनी पै पड़ो । पार्थ बान ते बिकरण रणमें यों मरो ॥ गिरो देख तिस कौरव दल सब उमडि के । परो पार्थ के ऊपर घन ज्यों घुमंडि के ॥ ७२ ॥

अर्जुन ने सब रोक सर पर हारतें । उठो कर्ण तब रणको अति ललकारतें ॥ कर्ण आवतो लख के नरने सुर मुचे । करे कर्ण ने निर्फल सरतें सर लुचे ॥ ७३ ॥

तीन बानतें बेंधो कर्ण सु पार्थ को । तीन बान ते सारथ नरओ सार्थ को ॥ बहुरि तीन ते छेदी अर्जुन की ध्वजा । बहुरि तीन ते रथ भी जर्जर ही सजा ॥ ७४ ॥

क्रुद्ध होय तब अर्जुन बान चलाइयो । करो कर्ण को मू-

च्छित भूम सुलाइयो ॥ कौरव कर्णहि निज रथ करके हट गयो। तबहि आय दुःशासन रण उद्यत भयो ॥ ७५ ॥

तबहि क्रुद्ध ह्वै अर्जुन सर पच्चीस ही। तासि गारकर कीनो मृतक मही सही ॥ और सूर जे आवहिं ताके सामहीं। तिनहिं छेदकर भेजे जम के धामहीं। ७६।

युद्ध हेत गंगासुत आयो नर प्रते। तीन प्रदच्छणा दे तिस बोलो विनय ते ॥ अहो पितृमह तेरह वर्ष अरण्यते। भ्रमत आय अब तो पद पाये पुन्य ते। ७७।

तबहि मत्त गंगासुत धनु टंकोर के। हने पार्थ पर षोड़स सर घन घोर के ॥ तबहि क्रुद्ध ह्वै छोड़े सर गन पारथी। गंगपुत्र को छेदो रथ अरु सारथी ॥ ७८ ॥

पार्थ और गंगासुत दोऊ भट महा। करहिं युद्ध सरते सर छेदें अति महा ॥ महा बान उच्चाटन गंगासुत तजो। बहुरि बान मोहनभी पारथ पै सजो ॥ ७९ ॥

तैसेही सर थम्भन सैनहि थंभतो। हनो पार्थ पर घोर सुरण आरम्भतो ॥ करे व्यर्थ ये सब सर पारथ निस्तही। तब हि अग्नि सर सुमिरो अर्जुन चित्तही ॥ ८० ॥

चलो अग्नि सर तबहीं सैनहि जारतो। लगे दाव जो बन में तरु गण बारतो ॥ अग्नि बानको जान सुगंगा सुत भने। छिनक माहिं सुछेदो निज विद्या बले ॥ ८१ ॥

करें युद्ध यों दोऊ विद्या मय महा। अंतरीच्छ ह्वै गगनहि देखें सुर तहां ॥ पार्थ और गंगेय महा बल धारई। करत युद्ध तिन माहिं सुकोइन हारई ॥ ८२ ॥

दोहा

ज्यों लों धनु गंगेयको, छेदो अर्जुन धीर।
तोलों बीचहि आइयो, द्रोणाचारज बीर ॥ ८३ ॥

जो अंकुशको छोड़के, छुटे अनेक विपक्ष ।
ज्यों पारथ के सन्मुखे, आयो द्रोण सुअक्ष ॥८४॥
बोलो नर तुम गुरु महा, पूजन जोग सुबुद्ध ।
तुमसों रण किम कीजिये, ह्वै है न्याय विरुद्ध ८५॥
जाहि अहो निज थान तुम, परि रिपु मारों अज्ज ।
कहो द्रोण यों सुनतहीं, पार्थ होय अब सज्ज ॥८६॥
सर प्रहार मुझ देह तुम, रणमें दोष न रंच ।
तब पारथ निर्भय भने, प्रथम तुही सर मुंच ॥८६॥
पीछे करिहों सेव तुम, हरिहों तो बल सर्व ।
यों कहि के गुरु शिष्य रण, लरनलगे धरि गर्व ८७॥
ऊपर देखे देव गण, नीचे दोऊ सेन ।
छूटत सर गुरु शिष्यके, भई दिवसते रैन ॥८८॥

अडिल्ल

बीस बान गुरु छोड़े अम्बर छावते । करे खंड सो पारथ गग नहिं आवते । बहुरि लक्ष सर गुरु ने छोड़ो चंड ए । दोय लक्ष तेते भी नरने खंडये ॥८६॥

देख द्रोण सों नरको जीते धारतो । अस्वथाम तब आयो गुरुहि उसारतो ॥ लयो पार्थ ललकार सुसन्मुख आयके । लगे युद्धको दोऊ रोस बढ़ायके ॥ ९० ॥

सिंह साव जुग मनो बिदारत नखनते । द्रोणपुत्र अरु अर्जुन मारत सरनते ॥ अस्वथामके रथके हय हटके हते । परे होय बीभत्सहि भूपर मृतकते ॥९१॥

अस्वथाम तब तीक्षण छोड़े सर जबै । करी छिन्न गांडीव धनुष की जिह तबै । अर्जुन ओरहि गुन धनु तुरत चढ़ायके। द्रोणपुत्र को छेदो उर सर लायके ॥ ९२ ॥

अस्वथाम है मूर्छित पृथ्वी में परो । तौलों उत्तर सारथि नर

प्रति उच्चरो ॥ अबहि नाथ रथ वाही दुर्योधन प्रते । ताहीको सर साध हतो जो जय रते ॥९३॥

कहो पार्थ तब उत्तर प्रत गुन रासको । सन्मुखके अरिहत के हनहों तासको । विविध वाक्य इम भाषत सन्मुख अरनको । नभ समस्त ही छायो गन तज सरनको ॥ ९४ ॥

युद्ध मांउ बलवंत धनंजय चंडए । कांड साधको दंडहि अरि गन खंडये ॥ राजविन्दु नृप तौलों न्याय उलंघके । आय पार्थको घेरो सेनहि संघके ॥ ९५ ॥

ज्यों मृगेन्द्र पग्विन्द्र गयंदन के बड़े । त्यों सुभूप उनमत्तिन पारथको भिड़े ॥ पारथ एकहि सूर सुयुद्ध समर्थही । धनुष बानते कीने अब अरि व्यर्थही ॥ ९६ ॥

राजविन्दु की सेना छेदी छिनकमें । नसे योनते जेम घनाघन तनक में ॥ कुम्भ छेदके बानहि गज मारे घने । तोर तोर रथ डारे हय तिनके हने ॥ ९७ ॥

धुजा छेद हति सूर सुडारे धरनमें । बिना घाव नहिं छोडो कोई अरिनमें ॥ कौन कौनको मारे हिंमा है घनी । यह विचार नर छोड़ी विद्या मोहनी ॥९८॥

सबै भूप है मोहित पृथ्वी पै परे । मनो हेम फलखाय मृतक सम अनुसरे ॥ ध्वजा छत्र गज बाजि लये तिनके सबै । जीत पाय सन्तुष्ट भयो अर्जुन तबै ॥९९॥

तब विराट बादित्र बजाय सुजीतके । करें संग भट कोडो पारथ मीतके ॥ धर्मपुत्रभी तौलों निरभय है महा । गोकुलको छुटकाय सु आनंद अति लहा ॥ १०० ॥

दोहा

कष्ट कष्ट कर कौरवा, भये सचेतन सर्व ।
लज्जित है गजपुर गये, रहित प्रमाद अगर्व ॥१॥

पांडव तिनको जानके, नृप विराट कर जोर ।
बहुत विनय ते बीनयो, चरनन मस्तक मोर ॥२॥

चौपाई

मनही जाने अबलो देव । धरम पुत्र तुम छमियो एव ।
अबते तुमही स्वामी इष्ट । हम किंकर तुम पालक इष्ट ॥ ३ ॥
याही पुरमें बांधव संग । कीजे राज सदा निरभंग ।
बहुत विनयसों ऐसे भाष । गोष्ट मांहि सब गोकुल राख ॥ ४॥
पुनि पारथसों ऐसे कहा । मो घर पुत्री है सुभ महा ।
जरा सिन्धुके पुत्रो जोइ । वार अनेकहि जांची सोय ॥५ ॥
तिनको मैं नाहिं दीनी सुता । अतिही स्वरूपाशुभ गुन जुता ।
ताहि विवाहो पारथ मुदा । यों सुनके नर बोलो तदा ॥ ६॥
सो नन्दन अभिमन्यु कुमार । उपजो कूख सुभद्रा सार ।
अपनी तनुजा ताको देहु । यों सुनके तिन मानी एहु ॥ ७ ॥
नृप विराट वर मंगल रांच । दई सुता अभिमन्युहि सांच।
जान बिभूति सु तिनकी सही। तबही कुन्ती आई तही ॥८॥
पांडवकी जु विपतिकी बात । गई द्वारका है विख्यात ।
तब हलधर नारायन सार । अरु प्रद्युम्न सुभानु कुमार ॥ ६ ॥
इन आदिक नृप यादव महां । सज्जित है सब आये तहां ।
पुन धृष्टार्जुन बल संजोय । महा तेजस्वी आये सोय ॥१०॥
बरते आज्ञा आस अखंड । भूप सिखंडी अति बलबंड ।
इन आदिक जे नरपति और। सब आये बैराटहि ठौर ॥११॥
याह अनन्तर सबही आय । कोइक दिवस रहे तिह ठाय ।
नृप विराट सब माने तदा । असन बसन दे कीने बिदा ॥१२॥
तीन अछोहनी बलसों रले । पांडव सहित हरीहर चले ।
यादव पहुंचे द्वारा पुरी । प्रीत परस्पर बहु अनुसरी ॥ १३ ॥
श्रेणिक पूछो गौतम जान । कहा अछोहिनको परमान ।

गनधर बोले सुनिये राय। गन अछोहनी है इह भाय ॥१४॥
सहस इकीस शतक वसु लहै। सतर पुनगज संख्या यहै।
तेतेही रथ गनियो तही। यह संख्या अब सुनिये सही ॥१५॥
पैंसठ सहस शतक षट जान। दश ऊपर यह संख्या ठान।
एक लक्ष नौसहसै मित्त। तीन सहस पंचासहि पत्त ॥१६॥
इतनी सेना कट्ठी होय। एक अछोहनि गिनती सोय।
एक समय तहँ अर्जुनराय। हरि प्रति बोल्यो ऐसी भाय ॥१७॥
ये कौरव बहु अघकी पांत। इनको अपयश जगत विख्यात।
जा अपयशको पारग लहूं। बचन अगोचर कैसे कहूं ॥१८॥
जंतु गृहमें हम जारे छले। द्रुपदी कच गहि काढ़ी खले।
ऐसी सुनके हरिवर सिद्ध। दाबी रसना दसनो मद्ध ॥१९॥
निर प्रमाद ह्वै बोलो हरी। बहुत अनीति दुर्योधन करी।
भुगते गो फल याको अबै। हे पारथ तुम देखो सबै ॥२०॥
दुष्ट अनीति सु अकुली एहु। बन्धु विवर्जित दुखके गेहु॥
यों कहिके पांडव संजूत। रचके मंत्र पठायो दूत ॥ २१॥
क्रमतें पहुंचो गजपुर वहीं। नुति कर कौरव प्रति यों कही।
हो विधि वेदकैं दूत सुभाय। द्वारा पुरते आयो राय ॥२२॥
हे राजा या भूपर एय। पांडव रण में जान अजेय।
बंश छेद निज करिये कोय। कीजे तिनको लरके जेय ॥२३॥
पुन सहाय हर तिनको करे। और बिराट द्रुपद भी धरे।
समुद्र विजै इन आदिक दसे। भ्राता पांडव पंचह लसे ॥२४॥
प्रद्युम्नादिक विद्यावन्त। पांडव पत्ती हैं बहु सन्त।
तिनसों क्या तू रणमें सही। थित करवेको समरथ कही ॥२५॥
तातें मद तज भयको धरो। पांडव संग सलाहे करो।
पृथ्वी बांटो आधो आध। राज करो तुम दोऊ साध ॥२६॥
दूत बचन सुन कौरव राय। बोलो बिदुर प्रते इह भाय।

कहो तात क्या करिये काज। किह बिधि भेजूं मैं सब राज।२७।
विदुर कहे दुर्योधन प्रते। धरम करत सुख सबही रते।
राज निरांकुश धर्महि लसे। धर्म जोग सब अरिगन नसे।२८।
पुरुष विशुद्ध धर्मते होय। उत्तम गतिको दाता सोय।
मन वच काय कुटिलता तजो। धरम रतनको सोई सजे ॥२९॥
कोह कुलोभ गरबको त्याग। सो कहिये वृष्टको अनुराग।
ताते तुम अब इनको तजो। धर्म विषै मति अपनी सजो।३०।
जो तुम सुयश चहो जग अच्छ। तो पांडवहि बुलाओ बच्छ।
बहुत बिनयते आधो राज। देहु अबै तुम हितको साज।३१।
ऐसी सुनके कौरव पती। क्रुद्ध भयो आमर्षहि अती।
बिदुर प्रते इम बोलो तदा। मैं तुम भगत करतहूं सदा॥३२॥
तौभी तुम उनहीको राज। चाहत हो बहु महिमा साज।
मेरो राज न चाहत रंच। तो चित बसत सदा परपंच॥३३॥
इह विधि भाव कुमाति संजूत। दुष्ट बचनते डारो दूत।
दयो निकाल सभाते जबै। द्वारावति पुर पहुंचो तबै॥३४॥
कुन्ता सुत अरु यादव जहां। नमस्कारकर बोलो तहां।
भो राजा हो कौरव दुष्ट। संधि न मानो तुमपै रुष्ट॥३५॥
ऐसी सुनके धर्मज कहै। राखी नीत सु हम ने यहै॥
पठयो दूत अयश जो मिटे। होय अनीति रीती कटे॥३६॥

दोहा

ऐसी कह के पांडवा, और यादवा सर्व।
उद्यत भये सु युद्ध को, धरत परस्पर गर्व॥३७॥
तौलों और कथा सुनो, सावधान ह्वै एम।
विष्णु और प्रति विष्णु को, सुख दुख जानहु जेम।३८।

पद्धडी

बहु भूमि बलय भ्रम पुर बिराट। रण मांहि तहां अरि

गनहि घाट ॥ जै पाय पांडु सुत गो छुंटाय । प्रकटो सु सुजस इम वृष पसाय ॥ ३९ ॥

वृष तें जनुसों छिन मांहि सत्तु । वृष तें सु मिलत बहु बंध मित्तु ॥ वृष जोग सु महिला लाभ लीन । वृष तें सुपूत उपजे प्रवीन ॥ ४० ॥

संसार मांहि जे सुख अनेक । तिनको सु जिन वृषहि येक । मन बैन काय यह जान सक्त । जैनी सु जैन वृष करहु भक्ति ॥

इति श्री मन्महाशीलाभरण भूषित जैनी नामांकितायां लाला बुलाकीदास विरचितायां भारत भाषायां पांडवानां विराट नगरे कौरव भग प्रापण गोकुल विमोचन अभिमन्यु विवाह द्वारा वलि प्रवेश वर्णनोनाम एकनविंशति प्रभावः । १९

अथ गुरु गांगेय सन्यास ग्रहण

पंच तत्व प्राप्ति और पंचम स्वर्ग गमन वर्णन्

मंगलाचरण ॥ अनन्त जिन स्तुति ॥ दोहा

भव अनन्त यह जल निधा, ताको है वर सेत ।
जिन अनन्त गुण अंत नहि, वन्दों शिव सुख हेत ॥ १ ॥
एक समय विरकत विदुर, भये विषै सुख मांहि ।
छिन भंगुर संसार में, जानो थिर कछु नांहि ॥ २ ॥
विदुर चतुर चित चिन्तवत, धिक् सम्पत धिक् राज ।
धिक् प्रताप धिक् भोग ए, सब अनर्थ के साज ॥ ३ ॥
जाके कारन जनक को, हते पुत्र धर क्रोध ।
कवहुक सुत को मारिए, पिता पाय दुर बोध ॥ ४ ॥
हनत मित्र को मित्र ही, बन्धु बन्धु को मार ।
भव सुख कारन जीव ए, करत काज अविचार ॥ ५ ॥
ए कौरव अति दुर्मती, महा करम चंडाल ।
इन को मरते रण विषै, लखो न चाहूं हाल ॥ ६ ॥

यों विचार कौरवन को, कह कर वन में जाय ।
विश्नु कीर्ति को नमन कर, सुमत धर्म धर भाय । ७ ।
भये दिगम्बर संयमी, अम्बर तन ते त्याग ।
बाह्याभ्यन्तर तप चरित, परम तत्व चित लाग ॥ ८ ॥
एक सैंभ को इक महा, सार्थि बाह परवीन ।
राज ग्रही पुर ईश को, भेंट रतन बहु कीन ॥ ६ ॥
पूछो ताहि नरिन्द्र ने, कहँ ते आयो भाय ।
कहो कि द्वारा नगर ते, तुम देखन को गाय ॥ १० ॥
पुन पूछो ता नगर में, कौन नाम है भूप ।
तिन भाषो बैकुंठ बल, नेम नृपति जिन भूप ॥ ११ ॥
यादव निवसे सुन तहां, जरा सिंध है क्रुद्ध ।
जलद हतो मनु प्रलय को, चलो करन को युद्ध ॥१२॥
युद्ध चहत बिनहे तही, ऐसे नारद आय ।
जरा सिंधु को छोभ सब, हरि सों कहो बनाय ॥ १३ ॥
नेम निकट हर जाय के, आगे ठाड़ो होय ।
पूछी अरि सों जीत हो, सत्य कहो तुम सोय ॥ १४ ॥
नेमनाथ मुसकाय के, निरखो हरि की ओर ।
तब अपनी जय जान के, विश्नु चढ़ो दल जोर । १५ ।
बल हरके नृप संग चढ़ो, समुद्र बिजै बसुदेव ।
अनावृष्ट अरु धर्म सुत, भीम सु अर्जुन एव ॥ १६ ॥
धृष्ट द्युम्न प्रद्युम्न जय, सत्यक सारण सम्बु ।
भूर श्रवा सहदेव अरु, भोज स्वर्ग गर्भंबु ॥ १७ ॥
द्रुपद बज्र अछोभ बिद्यु, सिन्धु पती पौंडीक ।
नागर नकुल सुकपिल कुरु, छेम धूर्त वाल्हीक ॥ १८ ॥
महा नेम दुर्मुख निषद, बिजय पद्मरथ भान ।
चार कृष्ण उन्मुख जवन, पुन कृतवर्मा जान ॥ १६ ॥

नृप सिखंड बैराट पति, सोमदत्त इन आदि ।
जादव पच्छी नृप महा, बटे युद्ध को सादि ॥ २० ॥
जरा सिंध को दूत तब, दुरयोधन तट जाय ।
नमस्कार कर बीनयो, सुनो चक्रि बच राय ॥ २१ ॥
दुर्धर मारो कंस जिन, चक्रि मता पर सूर ।
मुष्टि घात ते चूरियो, मल्ल बली चानूर ॥ २२ ॥
करहि धरो गोवर्ध गिरि, अरि मर्दक गोपाल ।
प्रगट भयो सो भू विषै, धारन मधु सुविशाल ॥ २३ ॥
को यादव रण ते डरे, जरे अगन में धाय ।
ते अब सुनिये जीवते, बसे जलद में जाय ॥ २४ ॥
रतन भेट करि वै सम, कह्यो चक्रि सों येम ।
राज महा यादव करे, द्वारिक पुर में हेम ॥ २५ ॥
यादव पांडव द्वारिका, बसत सुने चक्रीश ।
महा क्रुद्ध ह्वै नृप नये, पठये दूत अधीश ॥ २६ ॥
नृप प्रधान ये पुरुष बर, सकल बुलाये पास ।
एक बरष में भूप सब, मिले तहां गुन रास ॥ २७ ॥
तातें है कौरव पती, तो तट पठयो मोहि ।
चक्रवर्ति अति प्रीत ते, अबहि बुलावत तोहि ॥ २८ ॥
विविधि बाहनी आपनी, सारी साज सु कच्छ ।
तुम प्रति चक्री यों कही, आवहु मो तट बच्छ ॥ २९ ॥

सोरठा

सुनत भयो रोमांच, मागध को आदेश यह ।
पूजो दूत सु सांच, बसनाभूषण दर्ब ते ॥ ३० ॥
जो मो मन थी इष्ट, सोई चक्री अब ठनी ।
ह्वै हैं सबै वशिष्ट, निज चिंतयो चिर चिन्तयो ॥ ३१ ॥

सवैया तेईसा

सूरनमें नर सूर दुर्योधन ताहि समैं रन भेरि दिवाई ।
जाकी महा धुनि व्यापति भू नभ छोभ भयो चहों सागर ताई ॥
धीरनके चित रोम जगाइ सु जूझन को चित चोक लगाई ।
कायर कम्पत काय महा भय खाय सु भौनके कौन धसाई ॥३२॥
साज चली चतुरंग चमूचय मत्त मतंग महा निकसेई ।
सागर से नहि मच्छ धसे रथ सारथ सों मह भौनिकसेई ॥
चंचल चाल चले चल चामर आरु तुरी सुन जीन कसेई ।
शत्रुनके असवे को सु दौरहि सुर पयादल कीनक सेई ॥ ३३ ॥

दोहा

कौरव दल बल मल दलन, छाई रैन अकाश ।
दुख कहिवे को भूमि मनु, चली इन्द्र के पास ॥ ३४ ॥
क्रमतें कौरव वाहिनी, मिली चक्र दल संग ।
सब ते अधिक समुद्र को, आय मिली मनु गंग। ३५ ।
दुर्योधन को मान बहु राखो मागध राय ।
कर्ण मिलो यों कौरवहि, ज्यों रवि किरण रलाय। ३६ ।
तब पठयो चक्रीश ने, दूत यादवन पास ।
तुरत जाय सो वीनयो, सब सों वचन प्रकाश ॥ ३७ ॥
भो यादव तुमपै करत, आज्ञा यह चक्रेश ।
जाय बसे किम जलध तुम, तजके अपनो देश ॥३८॥
समुद्र विजै वसुदेव ए, हम प्रीतम है आद ।
बंच आपको किह लिये, गये सु छिपके बाद ॥ ३९ ॥
चरन जुगल चक्रीश के, सेवो अब तजि गर्व ।
जा प्रसादते तुम लहो, राज पाठ सुख सर्व ॥ ४० ॥
ऐसी सुनके बलबली, बोलो क्रोधित होय ।
हरि को तजके भू विषै, चक्री औरन कोय ॥ ४१ ॥

ऐसी सुन फरकत अधर, दूत भने इह भाय।
जाते तुम सागर विषै, जाय छिपे भय खाय ॥ ४२ ॥
तिस पद पंकज सेवते, कहिये कौन सु दोष।
आवत है तुम पै चढ़ो, मगधराय धर रोष ॥ ४३ ॥
ग्यारह चौहनि दल सहित, मुकट बन्ध नृप संग।
आवतही तुम गर्वको, करे छिनक में भंग ॥ ४४ ॥
बच कठोर सुन दूतके, बोले पांडव ताहि।
मन बांछित मुख बकत है, मार निकासो याहि ॥४५॥
यों सुन निकसो दूत तब, आयो चक्री तीर।
उन्नतता यादवन की, बरनी अधिक अधीर ॥ ४६ ॥
अहो देवते यादवा, महा गर्व गृह ग्रस्त।
तुमको रंचन मानई, ज्यों मदिरा मद मस्त ॥ ४७ ॥
ऐसे बच सुन चक्रधर, रण दुंदुभी बजवाय।
चलवेको उद्यत भयो, संग लिये सब राय ॥ ४८ ॥
दीपतवन्त बिमान बहु, बिविध चले खग भूप।
रवि पंकति मनु गगन में, धाये उमंडि अनूप ॥ ४९ ॥
बहु नरिन्द्र भूचर महा, भूमि चले मुनि चंद।
उड़गन सम दुतिवन्त अति, संग सजे भट वृन्द ॥५०॥
द्रोण भीष्म जयरथ रुकम, अस्व थाम पुन कर्ण।
सल्य चित्र वृष सेन नृप, कृष्ण वर्म सुन वर्ण ॥ ५१ ॥
इन्द्रसेन अरु रुधर भी, दुर्योधन दुःसास।
दुर्मुख दुर्दुख इन प्रभृति, चली नृपनको रास ॥ ५२ ॥
पगते भू कम्पित करत, आये सब कुरुखेत।
तजके ममता जीवकी, करो मरणसों हेत ॥ ५३ ॥
के इक नृप सुन बात यह, जजत भये जिनदेव।
के इक गुरु तट जायके, लये अनुव्रत एव ॥ ५४ ॥

के इक नरपति यों कहे, तजिये सुत गृह दार।
करमें ले तीक्ष्ण असी, कीजे अरि संघार ॥ ५५ ॥
के इक निज निज भृत्य प्रति, कहत भये नर नाथ।
चापहु पनिच चढ़ाइये, सजहु गजनको भाथ ॥ ५६ ॥
जीन सजो बाजीन पै, भुंजो भोजन मिष्ट।
अस्त्र रथनसों जूझिये, दीजे चित्त विशिष्ट ॥ ५७ ॥
इह विधि सारी सेन में, कहत गर्ज के राय।
निज निज आयुध कर लये, चमकावत अधिकाय ॥५८॥
केई फिरावत कुन्त कूं, गदा उछारें ऊंच।
कोई तीर चलावहीं, रांचि निशाना सूंच ॥ ५९ ॥
के इक सूर सभा विषै, लरन मरन की बात।
अपने ही मुख मान सों, भाषत हैं बहु भांत ॥ ६० ॥
तौलों हरि को दूत तहँ, गयो करण के तीर।
नुतकर भगतिहि बोलियो, बिनती सुनियो धीर ॥६१॥
जुगत होय सो कीजिये, सुनो सत्त अवनीश।
जिन भाषित नहिं अन्यथा, ह्वै है हरि चक्रीश ॥ ६२ ॥
कुर जांगल शुभ देश को, सकल राज तुम लेहु।
पांडु पुत्र कुन्ता जनित, मानो मो बच एहु ॥ ६३ ॥
भ्रात पांच पांडव जहां, तहां आव तुम बीर।
बचन दूत के सुनत इम, बोलो कर्ण सु धीर ॥ ६४ ॥
अब हम आवन जुगत नहिं, न्याय उलंघह केम।
राजा रनके सन्मुखे, नीति न त्यागत जेम ॥ ६५ ॥
सेवत नृप को रन विषै, मृत्यु न मुंचे कोय।
जे मुंचे तो अघ लहे, अपयश जग में होय ॥ ६६ ॥
निश्चय ते संगर पछे, पांडव राज छिनाय।
देहौं नृप पद कौरवनि, यही कहो तुम जाय ॥ ६७ ॥

यों कहि निकसो दूत तब, गयो तहां सुविचार ।
जहँ चक्री कौरव सहित, बैठे सभा मभ्कार ॥ ६८ ॥
नुत करके यों बीनयो, सुनो चक्रि तुम बात ।
संधि करो यादवनसों, और भांति नहिं शांत ॥ ६९ ॥
सांच सहित सो जिन उकति, केशवतें तुम मृत्य ।
गंगा सुतको नाश है, नृप सिखंड ते सत्य ॥ ७० ॥
धृष्टार्जुन के हाथ तें, मरण द्रोण को जान ।
धरम पुत्रते मृत्यु है, सल्य तनी परवान ॥ ७१ ॥
दुर्योधन की पंचता, भीमसेन ते गन्य ।
जय रथ पारथ हाथ तें, कारन सुत अभिमन्य ॥ ७२॥
कुर पुत्रन को मृत्यु कहि, जानहु माग ग राय ।
निहचे ते यह जिन कथित, हम जानत यह भाय ॥७३॥
यों कह निकसो दूत सो, द्वारापुरि में आय ।
नमस्कार कर हर प्रते, कहो के सुनियो राय ॥ ७४ ॥
आयु तीनकी वाहनी, कुरुखेत हरि देव ।
युद्ध विषै संकट भये, कर्ण न आवन एव ॥ ७५ ॥
तुमकूं प्रभु गंतव्य है, तुरतहि अब कुरुखेत ।
शत्रुन सन्मुख धाय है, युद्ध विषै जय हेत ॥ ७६ ॥

सोरठा

ऐसी सुन हर सूर, रण को उद्यत चित भयो ।
पांच जन्य को पूर, भू अम्बर धुनते धुनो ॥ ७७ ॥
सुनत संख की गाज, सैना सज सब की चली ।
खेत लरन के काज, राजत इन्द्र चमू मनो ॥७८॥

अथ चतुरंग सैना वर्णन सवैया तेईसा ।

माधवकी चतुरंग चमूंचलते चल चाल लई अचलाई ।
मानहु मेट दई पगते दरि रैनभई सु आकाशहि छाई ॥

कै अकुलाइक भार परे भय भीरु भये सुरलोकहि धाई ।
कै उमही अरि जारनको परताप दवानल धूम महाई ॥७९॥
मत्त गयंद झरें मद नीरही स्याम मनो घन काल घटाई ।
सेत सुके तुलसे तिनपै बग पंकतकी परसी उपमाई ॥
कंचनकी चमकें चहुं ओर बनी चउरासी किधों चपलाई ।
घोर चले हरि रूप धरे मनु मेटनको अरि ग्रीषमताई ॥८०॥
सागर छार अपार चमू अरि तारनको रथ पोत सहाई ।
वज्र मई अरि चक्र धरें अथ अस्व चले मनु पौन बहाई ।
ऊनतके तुरथी पटु खेवत तटई सजी तावन गति पाई ।
आयुध पंच पदारथ पूरण सूरन को रन में सुखदाई ॥८१॥
चंचल चाल चले चल चामर चारु तुरंगम अंग सुहाई ।
किंकन हार गरे अप पाखर तापर कंचन जीन कसाई ।
मारु बजें तज नींद नचें पर चेर नहीं जमके भनुवाये ।
पौनके पूत किधौं वड़वा सुत शत्रु समुद्रहि सोखन धाये ॥८२॥
स्याम सु कौच कड़ी दिढ लाइ किधौं तन पे घनकी छबि छाये ।
सूर पयादल ढाल बिशाल महा करवाल लये कर धाये ।
कधें कमान कटारि छुरी सुर कोस सु खैंच कसे कटिकाये ।
दुर्जनके दल दारनको मनु दौर चले जम पुत्र महाये ॥८३॥

दोहा ।

ऐसी बिधि चतुरंग दल, लीने यादव राय ।
आय ठये कुरुखेत तट, महा उदय को पाय ॥ ८४ ॥
दुर निमित तब बहु भये, जरा सिंधु की सैन ।
दुखके सूचक प्रकट ही, महा अयश के दैन ॥ ८५ ॥
भयो राहुते रबि गहन, गगन मांहि भय दाय ।
बरसो बादर बिन समय, दीनी सेन बहाय ॥ ८६ ॥
प्रातहिकाल धुजानपै, रबि सनमुख राटन्त ।

ग्रद्ध क्रुद्ध छत्रादिये, बैठे नखति खनन्त ॥ ८७ ॥
भूकम्पत अनहद रुदन, मार मार धुन वाह ।
बार बार उलका पतन, रुधिर वृष्टि दिग दाह ॥ ८८ ॥
कुसुगन लख कौरव पती, मंत्री प्रत यों भाख ।
दुर्निमित्त हे मंत्रि पति, लाखियत हैं बहु आख ॥ ८९ ॥
सो बोलो भो प्रभु कहा, नांहि सुनी तुम बात ।
गिल हैं सबहि तिमिंग ज्यों, यह कुरुखेत बिख्यात ॥ ९० ॥
सरिता रुधिर प्रवाह की, वह है याभव मांहि ।
तामें स्नान करे बिना, रहें हैं कोऊ नाहिं ॥ ९१ ॥
राक्षस भूत पिशाचगन, चाहत बल नर मास ।
तिन के तिरपत कारने, मर हैं बहु भट रास ॥ ९२ ॥
मूंड फिकारत राक्षसी, निरत करत आकाश ।
राजन की बनिता घनी, ह्वै हैं विध आवाश ॥ ९३ ॥
गिद्ध स्याल मंडलात अति, अति पत्र के भाल ।
होय धरनि लोंथन मई, अरुन बरन बिकराल ॥ ९४ ॥
जरि हैं आयुध अगनते, कौरव बंश बिशाल ।
यों भाषत दिग् दाह यह, राज चाल भूं चाल ॥ ९५ ॥
कुत्सित रनको खेत है, यह कुरुखेत कुखेत ।
रुदन करत अनहद असद, कौरव नाशन हेत ॥ ९६ ॥
पुन दुरयोधन यों कहो, कहा मंत्र मो इष्ट ।
कितनी है अरि वाहिनी, कितने भट हम सिष्ट ॥ ९७ ॥
सो बोलो सुनिये नृपति, जे भूपति बल जोर ।
दक्षन बासी ते सबै, भये विष्णु की ओर ॥ ९८ ॥

सवैया तेईसा

है बहु तो कर सिद्ध कहा प्रभु कायर स्यारन सूरन मारे ।
एक धनंजयते सब भूपति ए रणमें न बराबर सारे ॥

कोई समर्थ निवारणको नहिं जा हरिसों असुरादिक हारे।
और हलीहल मूसल धारत जासों नसे अरि है भय भारे ।९९।
विद्यु सु प्रज्ञपती प्रमुषा जिस सिद्ध भई अरि नाशक सारी ।
मार कुमार सु ताह निवारणको रण में नहिं सैन हमारी।
पावनि पावन पातहि भूपर भूरि अरी भुजको बलधारी।
मोहि न दीखत कोइ बली तुम तास महा बलको अपहारी।१००।

दोहा

सात अछोह निबल सहित, भूपत बलि परशस्त ।
तिनको याहि सहाय हर, सब अरि करे निरस्त ॥ १ ॥
एकादसहि अछोहिनी, दल दुख लह हम साथ ।
कहा होत बहुते भये, जो न बली है नाथ ॥ २ ॥
ऐसी सुन दुर्योधना, कहो चक्र प्रति सर्व ।
शत्रुनको तिन सम गिनत, धारत चित अति गर्व ॥३॥

सवैया तेईसा

मागध यों मद अंध भने अहि जोर कहा बनिता सुत आगे।
कौलो रहे तम भार धरा पर भोर भये रविकी कर लागे॥
ज्यों बिचरे मृग होय सुकुन्दनके सर शोभित केसर जागे॥
त्यों मुझको रण मांहि अरी सब देखतही दसहूं दिशि भागे।४।
यों कहके त्रय खंड पती गजराज चढ़े रणको बढ़ आयो।
ताहि समय दिशि नाथनको दसहूं दिशि साथहि कंप दिवायो।
संग लये गन राजन के बर छत्रनते नभ अंगन छायो।
रेणु उठाय चमूं चय ते धन रूप भये तिन सूर्य छिपायो॥ ५॥

दोहा

जरासिंधु निज सैन में, चक्रा ब्यूह सु रचाय ।
गरुड़ ब्यूह श्री कृष्ण ने, ठानो बहू भयदाय ॥ ६ ॥

सवैया तेईसा

दोऊ महा दल दारुनतें इम घोरभयो नभ भूरज छायो।
जाय छिपे जुग कोकिन के निज आलनि में रवि अस्त डरायो॥
काग पुकार उठे भय पाय सो दिवसहि में निवसे भर मायो।
युद्ध जजो अकि कोय जजो जमके परलौं प्रकटी रण छायो।७।

दोहा

माधव मागध सों अरे, एक राज के हेत।
जीवन ममता तज सुभट, लरन मंडे कुरु खेत॥ ८॥

सोरठा

उमंग चले रन खेत, दूहू उर के सुर यों।
स्वामि काज के हेत, निज निज आयुध हाथ ते॥ ९॥
करत घोर संग्राम, तज सनेह निज देह को।
निसर भाम सुख धाम, सुमिर सूर पन सूर ही। १०।

अडिल्ल

असि निकार ललकार चले निज कोस तें। देहि शत्रु सिर मांहि भटा गण रोस तें॥ घन कुगलनें जैसे बल्ली भेदिये। कुन्त अग्रतें तैसे मस्तक छेदिये॥ ११॥

घन समान भट के इक अति ही गर्ज के। गर्ज घात ते मारत अरि गन तर्ज के॥ रक्त धार निकसी गज कुंभ विदारते। भई लाल दश दिशि मनु कुंकुम बारते॥ १२॥

हनत अश्व असवार सुहय असवार ही। धाय धाय रथ सारथ रथहि हकार ही॥ मत्त मत्त गज गजके सन्मुख आवही। कुंभ कुंभते दन्तहि दन्त भिरावही। १३।

बान बान ते छेदें धनुर्धर सूर ही। खेंच खेंच आकर्णहि अम्बर पूरही॥ परस पर्स ते दंड दंड तें खंडही। करत युद्ध परचंड महा बलवंड ही॥ १४॥

चक्रसैन तें हरि दल भागो ता समै। जल प्रवाह ज्यों दावानल ज्वाला दमैं ॥ कुंवर सम्बु तब निज जन धीरज धारो। उठो युद्धको उद्यत अरि गन मारतो। १५।

छेम बिद्धि सन्नद्धि महा खग आय के। लरो सम्बु सों अति ही बल प्रकटाय के॥ करो सम्बु नेरथ बिन भूत गिराइयो। युद्ध छोड़ सो खेचर तबहि पलाइयो ॥ १६ ॥

उठो और खग तौलों रण को मद धरें। विद्या मांहि सु विशारद आयुध अनुसरें॥ करो सम्बु ने सो भी निर्बल क्रुद्ध तें। कहो भाग मत खगेरे अब तू युद्ध तें॥ १७॥

बार बार ललकारो ऐसे भाष के। गयो भाग खग तौ भी जीवहि राख के॥ काल सबर सों तबही आयो खगपती। हनत शत्रुको पहिरे कंकन दृढ़ अती॥ १८॥

कुंवर सम्बुके सन्मुख दौरो युद्ध को। धनु चढ़ाय सरलाई बढ़ाय विरुद्ध को॥ तबहि सम्बुको बर्जि सु आयो मारही। मेघ औघ ज्यों बरसत सरकी धारही॥ १९ ॥

भने मार खग प्रति तू जनक समान है। युद्ध युक्त नाहि तो संग न्याय प्रमान है॥ फिर सु जाहु तुम तातें हम सों मत लरो। तबहि मार सो खगपति ऐसे उच्चरो। २०।

स्वामि काज के कारज हम सेवक सही। युद्ध मांहि बच ऐसे कहने हैं नहीं॥ कर निशंक तू तातें धनु संधान ही। युद्ध मांहि नहि दोष अरे अरि हान ही। २१।

तबहि मार अरि काल सु संम्बर गाज के। करत युद्ध युग योधा आयुध साजके॥ लगी बार बहु रतिपति को लरते जबै। तजो बान प्रग्यपती विद्या मय तबै॥ २२॥

सकल शस्त्र कर व्यर्थ भयो तब खगपती। पुन्य वन्त सों चले न बल अरि को रती॥ काल सबरही बांध करो निज रथ बिखे। सल्य खेट तब आयो रण के सन्मुखे। २३।

तबही मारने छोड़े सर बहु तीछना । छेद सल्यको स्यंदन कीनो जीरना ॥ सल्य और रथ चढ़ के रण अति ही करो । शिशूपाल को अनुज सु तौलों अनुसरो । २४ ।

हतो मारको सरते मूच्छित कर दियो । बहुरि बान गन तजके रथ चूर्णित कियो ॥ गिरो स्वामि अरु देखो रथ टूटो जबै । भयो सारथी अतिही भय पीड़त तबै ॥ २५ ॥

ह्वै सचेत उठ बैठो तौलो काम ही । सुथिर चित्त ह्वै बोलो गुरु गुण धामही ॥ अहो सारथी हिरदे भय नहिं धारिये । भये भीत रण मांहि अरी सों हारिये । २६ ।

दोहा

रण सन्मुख कायर भए, सुर नर सभा मंझार ।
खेचर में पाडवन में, लजिए पावत हार । २७ ।
पुन्य दशहि बल कृष्ण में, आवे हम को लाज ।
तातें यातन असुचते, ह्वै है कौन सु काज ॥ २८ ॥
कीजे पुष्ट शरीर को, कर के सर संहार ।
को गुण तासों युद्ध में, जो भागे भय धार ॥ २९ ॥
यों कह मन्मथ अन्यरथ, चढ़ सारथ थिर कीन ।
शिशूपाल के अनुज सों, बहुरि भयो रण लीन ॥३०॥

अडिल्ल

लगे युद्धको दोऊ रणको बिद महां । दोऊ मध्य ही तिनके आयो हरि तहां । तबहि सल्य खग धारो भट प्रत विष्णुको। कहत एम सिर छेदूं अब मैं कृष्ण को ॥ ३१ ॥

नभ खगेश ने छायो बानन ते तबै । परत दृष्टि नहि केशव रथ सारथ सबै ॥ मनो मध्य सर पंजर घेरहि आनके । लखे सूर सब जीवत संशय जानके ॥ ३२ ॥

कम्प मान रुधिरा रण नर इक और ही । आय कृष्ण सों बोलो रणके ठौरही ॥ भो मुरारि किम करत वृथा तुम युद्धही। हते पांडवा पांचो रण में क्रुद्धही ॥ ३३ ॥

पुनि दशाहि वलभद्र सु योधा और जे। जरासिंधु ने मारे रणमें ठौर जे ॥ नगर द्वारिका सिन्धु विजय नृप जो रहे । युद्ध मांहि सो भेजो अरिने जम गहे ॥ ३४ ॥

लई शत्रुन निश्चय द्वारावत पुरी । अबहि नाथ क्यों मरत वृथा तुमही हरी ॥ भाग जाहु तुम रणते जो वंछो सुखो । माया मइ बच सुन इम हरि बोलो रुखो ॥३५॥

अरे दुष्ट मो जीवत यादव नृपन को । को समर्थ नर जगमें इनके हतनको ॥ बचन कृष्णके सुन सो भागो दुष्टही। चलो विष्णु अरि ऊपर धनु गहि रुष्टही ॥ ३६ ॥

द्वै पिशाच खग तौलों को इक आयके । कहो कृष्ण प्रति ऐसे झूठ बनाय के ॥ भो गुपाल तुम देखहु नभकी ओरही। हत्यो भूप बसु देवहि अरिने ठौरही ॥ ३७ ॥

चलो त्याग रन खग गनता बिनभय रतो । यही बातकर वृक्ष शिखा हरिपै हत्यो ॥ शिखी बानते हरिने छेदो छिन विषै । तवहि कृष्णपै डारो पर्वत द्वै रुखै ॥ ३८ ॥

असनि बानते गिरि भी हरिने नासियो । गयो भाग तब खेचर हरिते त्रासियो ॥ तवहि विष्णु को नर सुर परशंस्यो घनो। बहुरि आय तिन खगने नुतकर यों भनो ॥ ३९ ॥

भो नरेन्द्र जबलों खग दूजो आयके । केत छत्र रथ तोड़े क्रोध बढ़ाये के ॥ जाहु युद्धते तौलों मो बच मानिये । और भांति रण मांहि अरीसों हानिये ॥ ४० ॥

अहो कृष्ण बिन कारन रनको करत हो । सिद्ध नाहिं कछु यामें अघ अनुसरत हो ॥ सुनहु चक्रते मस्तक मागध को महा । जन बिराक विरथाही मारे द्वै कहा ॥४१॥

सुनत बात हो क्रोधित माधव यों भने । हनो नाथ किम जाय बराको बिन हने ॥ यही बात कहि हरने असि नंदन करे । करो खेट द्वे टूक परो सो भूपरे ॥४२॥

जीतवन्त हरिको लखि सुरगन गगनते । पुष्प वृष्टि बहु कीनी बिघन सु हरण ते ॥ करो कृष्ण तव बल प्रतको बिधि ठानिये । चक्रव्यूह अति दुर्धर जासों हानिये ॥४३॥

दोहा ॥

जाय विष्णु रण में तबै, तीन सूर ले संग ।
चक्रव्यूह गिरि असनि ज्यों, करूं छिनकमें भंग ।४४।
जरासिन्धु तब क्रुद्ध ह्वै, अरि गण मारन काज ।
दुर्योधादिक तीन भट, पठये आयुध साज ॥ ४५ ॥
दुर्योधन के सन्मुखे, भयो पार्थ परवीन ।
रूप समानहिं नेम रथ, धर्मज्ञ सेना चीन ॥ ४६ ॥

अडिल्ल ।

तबहि परस्पर सुर लगे हुंक्कार के । करे चूर्ण हय रथ सब आयुध मारके ॥ सूरवीर सन्नद्ध भये रण सामही । चले भाग मुख मोर सु कायर धावहीं ॥ ४७ ॥

सूरन के तन आयुध ज्यों ज्यों वर्षहीं । लरें सूरसों सूर जो छोड़े सर सही ॥ भने पार्थ प्रतियों दुर्योधन कारि के । करूं भस्म मैं तोहि हुतासन जार के ॥ ४८ ॥

रे निर्लज्ज तू गर्व वृथाही क्या करे । तोहि लाज नहिं आवत मो सन्मुख खरे ॥ यही बात सुन अर्जुन धनु टंकोरियो । प्रलयकालके मेघ समान सो घोरियो ॥ ४९ ॥

छोड़वान संघात सु कौरव छाईयो । दुहू मध्य जालन्धर तौलों आइयो ॥ धनुष पार्थ को छेदो रणमें आव तो । करो युद्ध पुनि दुर्धर सरगन छाव तो ॥ ५० ॥

तबहि पार्थसों बोलो रुप कुमारयों। वृथा पक्ष अन्याय करत अविचार क्यों ॥ वासुदेव पर कन्या हारक है सही। ताकी पाछि आपरचें अभिलाषी वही ॥ ५१ ॥

यही बात सुन अर्जुन बोलो रे वृथा। गर्ज गर्ज किम भाषत तू दादुर जथा ॥ न्याय और अन्याय अवैदिख लाइहों। सीस छेद तुम जमके गेह पठाइहों ॥ ५२ ॥

यही बात कह सरगन छोड़े अर्जुना। कहो रुपको छिन में हतके चूरना ॥ हनत विष्णु को जैसे श्रेयासि छिनक में। रुप खेटयों मारो नरने तनक में ॥ ५३ ॥

युद्ध मांहि थिरराय युधिष्ठिर रण प्रते। स्वेत अश्व करि जो जित रथ राजे अते ॥ रथारुढ़ रथ नाम विराजे जय करे। चक्र व्यूहको छेद सु तीनों यश धरे ॥ ५४ ॥

सकल सूर नृप सज्जन यादव बल तने। भये सबै आदित्य सो पुलकित है घने ॥ रुधिर नाम नृपको सुत सुभट सु प्रगटहीं। हिरराय नाम सेनानी मागधको वही ।५५।

लयो मारसो रणमें धर्मज ने यदा। भयो खिन्न तिस बध लख रवि आंथ्यो तदा ॥ मानो पछिमाहि सागर स्नान सु करणको। गयो शान्तता धार सुमग श्रम हरनको ॥५६।

दोहा।

मानो बध लख भटन को, आई करुणा सूर।
भेजो तम गृह जायके, युद्ध करो तिन दूर ॥ ५७ ॥
सकल भूप निशि के भये, आये निज निज थान।
सेनापति बिन चक्र प्रति, बोलो मंत्रहि बान ॥ ५८ ॥
सेनापति के पद विषै, थमिये और अनूप।
यों सुनके तब मंत्रियो, थापो मेचक भूप ॥ ५९ ॥
तौलों कौरव राय ने, पठयो दूत प्रवीन।

पांडव तट सो जायके, नुतकर बिनती कीन ॥ ६० ॥
तुमसों कौरव यों कही, सुनिये नाथ बिचार ।
अब मैं जितने दुख तुमहि, दिये महा भयकार ॥ ६१ ॥
तिनको रन में सुमरके, क्यों नहिं आवत दौर ।
जीवन मुंचू तुमहि नहिं, छिनमें मारो ठौर ॥ ६२ ॥
यह सुन बोले पांडु सुत, उत्तर देन समर्थ ।
तेरो प्रभु उद्यत भयो, यमपुर जाने अर्थ ॥ ६३ ॥
जरासिन्धु के साथही, पठवेंगे जम गेह ।
सुन के दूत सुकौरवहि, जाय कही सब येह ॥ ६४ ॥
तौलों रवि मनु उदय गिरि आयो देखन हेत ।
भोर भये तहँ सुभट नट, नट न लगे कुरुखेत ॥ ६५ ॥
मार मार करते उठे, धनुसर असि कर लेत ।
सोवत जाग परे मनो, श्रेष्ट हतन को प्रेत ॥ ६६ ॥

सोरठा ।

सूरन को सिर मौर, रथ बैठे पारथ नृपति ।
महा समर की ठौर, प्रश्न करत सारथ प्रते ॥ ६७ ॥
कहो सुनो तुम दच्च, केतु अस्व लच्छन सहित ।
जे नृप नाम बिपच्च, तिनको बर्णन कीजिये । ६८ ।

दोहा

ऐसी सुनके सारथी, निरखत अरि की सैन ।
भिन्न भिन्न लच्छन सहित, भापत नरपति बैन ॥ ६९ ॥
रथ शोभित जिस स्याम हय, धुजा विराजत भाल ।
सुर सरिता सुर अरिन को, यह आयो मनु काल ।७०।
सौन सप्ति साजत सुरथ, कलस केतु यह द्रोन ।
नरमें सुभटन की ध्वजा, धनुर्वेद को भौन ॥७१॥
सो धन्वी दुर्योधना, नील अश्व अहि केत ।

अरि के सोनित पान को, अति उद्यत मनु प्रेत । ७२ ।
पीत अंग तुरंग रथ, यह दुःसासन राय ।
लच्छन जाकी केतु में, राजत है अन्याय ॥ ७३ ॥
अस्व थाम यह द्रोण सुत, हरि ध्वज याकी याह ।
मनु दुर्जन वन दहन को, महा दवानल दाह ॥ ७४ ॥
अल्प शत्रु को शल्य यह, सीता केतु विराज ।
अस्व वर्ण बन्धूक के, यह आयो रण काज ॥ ७५ ॥
जाको रथ दुर्वार अति, महा जयद्रथ बीर ।
लागे लोहित वर्ण यह, कोल केतु यह धीर ॥ ७६ ॥
अन्य नृपनि को जानियो, अर्जुन नृप कपि केत ।
अरि के सन्मुख धनुष गहि, उठो युद्ध के हेत । ७७ ।

अडिल्ल

तबहि युद्ध को लागी गण सों गण घटा । सूरन के कर चमकत असि चपला छटा ॥ घोर गर्जना होत धनुष टंकोर की । बान वृष्टि जल धारा बरसत जोर ही ॥ ७८ ॥

खेट खेट सों युद्ध करें आकाश ही । भूमि भूमि चर आपस में बहु त्रास ही ॥ खड्ग पान के सन्मुख खड्ग सु पानही । धनुर्धार कूं धनुधर मारे बान ही ॥ ७९ ॥

कुंत कुंत ते छेदें गर्ज सु गर्ज ही । चक्र चक्र ते मार गदा गद तर्ज ही ॥ गजारूढ़ सों गज आरूढ़ सु मारही । रथारूढ़ के सन्मुख रथ असवार ही ॥ ८० ॥

हया रूढ़ की हय आरूढ़ बुलावही । रथारूढ़ के सन्मुख शस्त्र चलावही ॥ निसित बान के छलतें धसि कर गात ही । मनोदन्त जमके नर मासहि खात ही । ८१ ।

छेद शीस भूँ डारहि हत कर बालकी । गिले श्रेष्ठ को

मानों रसना कालकी ॥ परे गुर्ज की मार मनो यम मुष्टिही। हते कुंत तें को इक मनु जम जष्ट ही ॥ ८२ ॥

मनु कनाकी लात गदा के रूपही । मार मार घमसान करे बहु भूप ही ॥ खड्ग खड्ग तै लाग झराझर ह्वै परे। अरुन अग्नि के जोर पुलिन्दे अनुसरे ॥ ८३ ॥

कुंत अग्र ते गज के कुम्भ विदार ही । अरुण वर्ण तहँ निकसत श्रोणित धार ही ॥ अंत रंग मनुको यानल ज्वाला जगे । शत्रु दारु अति दारुन जारनको लगे ॥ ८४ ॥

ताल पत्र सम गज के कर्ण सु हाल ही । शस्त्र अग्र को मानों धोंक प्रजाल ही ॥ हस्ति हस्ति के सन्मुख धावत अति भिरें । प्रलय पौन ते पर्वत मनु लुड़ते फिरें ॥ ८५ ॥

युद्ध मांहि बहु दौर तुरंग अनूप ही । मनो चित्त असवारन के हय रूप ही ॥ अगनि लागते हाले रथ पंकज धुजा। मनों शत्रु के रथहि बुलावन को भुजा ॥ ८६ ॥

ऊर्ध्व केश को पारुण चक्षुक पत्त ही । मनो काल के किंकर गरजत मत्त ही ॥ घोर बीर संग्राम करत यों सूर ही । स्वामि कार्य पारायन भरि तन भर ही ॥ ८७ ॥

दोहा

गंगा सुत तारण विषै, पनिच चापसों तान ।
सन्मुख ही अभि मन्युके, धाये धर अभिमान । ८८ ।

अडिल्ल

तब कुमार ने प्रथमहि बान चलायके । ध्वजा भीष्म की छेदी क्रोध बढ़ाय के ॥ मनो महत्वता उन्नत कौरव नृपनकी। करी नाश रण मांहि सु शोभा धरन की । ८९ ।

धुजा और आरोप सु निजरथ के विषै । गंग पुत्र ने दस सर मारे ह्वै रुखे ॥ धुज कुमार की छेदी जब गंगेय ही । तब कुमार ने मारे सर बहु भेय ही ॥ ९० ।

रथिवाहु धुज छेदे गंगा तनुज के। नसत बज्र ते जेम कंगूरे बुरज के॥ सकल सुर सुरबानी तब ऐसी भनी। बली धन्य अभिमन्यु धनुर्धर है गुनी॥ ६१॥

मनो पार्थ यह दूजो है साक्षात ही। भयो भूम में सुस्थिर बर विख्यात ही॥ बानन ते इन नाशे शत्रु अनेक ही। हनत नाग निर अंकुश जिम हय भेक ही॥ ६२॥

पार्थ सारथी उत्तर नामा रण विषै। तिन बुलायके कीनो भीषम सन्मुखे॥ परो आय अरि तौलों सल्य सु नाम ही। महा घोर रण मारो उत्तर सामही। ६३।

कुन्त खड्‌ग धनु धारे शल्य सु क्रुद्ध ही। हतो सारथी उत्तर युद्ध बिरुद्ध ही॥ मनु प्रचंड भुज दंड सु पारथको गिरो। सुत बिराट को उत्तर प्रथवी में परो॥ ६४॥

स्वेत नाम तसु भ्राता धायो तासमें। लयो शल्य ललकार अनुज के नाश में॥ तिष्ट तिष्ट रे शल्य यहै रण ठाय है। अनुज बाल मो मार कहा अब जाय है। ६५।

केतु छत्र सब शस्त्र सु ताके तोड़ के। करो शल्य को बिहबल कवचहि कोर के॥ घोर मार बहु दीनी स्वेत कुमार ही। मरो शल्य नहिं तौ भी करत संघार ही। ६६।

भयो क्रुद्ध गंगा सुत याही अन्तरे। परो आय दुहु मध्य सरासन को धरे॥ करत युद्ध तिन रोको रण में स्वेत ही। लयो भीष्म भी छाई सरन ते सेत ही॥ ६७॥

है अदृश्य रवि नभते आये मेहजों। बान स्वेत के छाये भीषम देह त्यों। देख भीष्म को बिहवल कौरव धाइयो। मार मार ए याह कहत यों आइयो॥ ६८॥

स्वेत सामने आवत लख दुर्योध को। पार्थ ताहि ललकार

लयोधर क्रोधको। कहत पार्थ रे कौरव तुम कहां जात हो। मो भुजान ते तो मद अबहिं बिलात हो॥ ९९॥

बच प्रचंड यों भाष दुर्योधन रोकियो। धनुष खैंच गांडीव सुनर टंकोरियो। हतो आद दश सरते कौरवईशही। बहुरि बीस पुनि मारे इखु चालीसही॥ १००॥

मार मार कर तीर सु ऐसे छाइयो। तबहि क्रोध बहु कौरव पति ने खाइयो। लगे पार्थ दुर्योधन दोऊ युद्धको। धरत क्रुद्ध मई उद्ध बढ़ाय विरुद्धको॥१॥

खड्ग खड्ग ते झारें कुन्त सु कुन्तहीं। बान बानते छेदें धनुष धनुंतहीं। दंड दंड सों खंडत अति बलबंड ही। घोर बीर संग्राम मंडो परचंडही॥ २॥

नृप बिराटको नंदन तौलों रण विखै। करत युद्ध धरि क्रुद्ध पितामह सन्मुखे। चाप छत्र धुज छेदें भीषम के तहां। हतो घान पुनि तासु उरस्थल में महां॥ ३॥

शिथिल होय के गिरन लगो तन भार ही। कौरव सैन भयो तब हा हा कार ही॥ भई दिव्य धुनि तब ही सुरनकी गगन में। अहो भीष्म मत होय सु कायर लरन में॥ ४॥

अहो वीर रन मांही सज के धीरता। तोहि मारने बैरी तजके भीरुता॥ यही बात सुन पुनि थिर आयुध होय के। सावधान है रथ पै धनु संजोय के॥ ५॥

साध लच्छ सर मारो तजके स्वेत ही। खाय घाव दृढ़ सो जु परो रन खेत ही॥ सुमर पंच पद इष्ट गयो सुरलोक कों। लहत सर्व सुख सुमिरत जिन तज शोक सों॥ ६॥

दोहा।

तौलों भई सु निशि तनी, मरत लखे योधार।
मानो रणको बर्जती, आई करुणा सार॥ ७॥

सूर छिपे हरि आदि सब, आये निज निज थान।
सुतको बध बैराठ सुन, रुदन भयो दुख खान ॥८॥
हा सुत संगर के विषै, किनहु न राखो तोहि।
हा धरमातम धरम सुत, क्यों न रखूं तुम सोहि ॥९॥
भीम भूर्त हा भीम भट, हाहा अर्जुन राय।
तुम देखत क्यों शत्रुने, मारो मो सुत ठाय ॥ १० ॥
तबहि युधिष्ठिर राय ने, करी प्रतिज्ञा घोर।
सत्रह में दिन आजतें, हनहों सल्य सु ठौर ॥ ११ ॥
जो नहिं मारूं तो तबै, झंपा पातहि मंड।
सब के निरखत मान तज, जरूं अगनि के कुंड ॥१२॥
खेटक शत्रु शिखंड सों, बोलो वचन प्रचंड।
नवमें बासर आज तें, करूं भीष्म को खंड ॥ १३ ॥
यह परतिज्ञा हम करी, पूरन ह्वै जो नांहि।
अपने तनको होम तो, करूं हुतासन मांहि ॥ १४ ॥
धृष्ट द्युम्न पुन यों कही, मो निश्चय यों टीक।
सेनानी को मारहों, यामें नांह अलीक ॥ १५ ॥

सोरठा।

उदय भयो दिन राज, तौलों दिनकर हरत तम।
मनु देखन के काज, कारज भारत भटन को ॥ १६ ॥
लखे ग्रहत हथियार, मार मार करते सुने।
भयो सूर भय भार, तातें कम्पत ऊदयो ॥ ७१ ॥

अडिल्ल।

भये भोर तब योधा दोऊ ओर के। महा युद्ध आरम्भित धाये घोर के ॥ तीक्षण शस्त्रसों देह परस्पर खंडही। हस्ति हस्तिसों रथ रथ हय हय चंडही ॥ १८ ॥

पत्ति पत्ति के सन्मुख धावत युद्धको। मार मार मुख

भाष बढ़ावत क्रुद्ध को ॥ लक्षणते पहिचान भटनके सन्मुखे। चले धाय रण मांहि धनंजय ह्वै रुखे ॥ १६ ॥

मनो केसरी मद गयंदन को हते। भूपनको त्यों हतके अर्जुन जय रते ॥ घोर बीर रण मांहि पितामह आइयो। असंख्यात सरतें नरको तिन छाइयो ॥ २० ॥

इन्द्र पुत्र सरिधारा भीषम कूलही। और राय ठहराय न ज्यों तृन पूलही ॥ बाननतें सुर सरिता सुतने नभ छयो। मनो मेघ जल वर्षन को उद्यत भयो ॥ २१ ॥

अंधकार भू मांहि करो सर छायके। करो रात मनु दिन ते भीषम आयके ॥ छुटत पार्थके बान महा परचंडही। करत खंड बलबंड गजनको सुंडही ॥ २२ ॥

चरन हीन हय कीने उन्नत छेदके। करे चूर्ण रथ चक्रा शनते भेदके ॥ करे पार्थ नेते सब निर्फल छिन विषे। करे युद्ध बहु धीरज धार के सन्मुखे ॥ २३ ॥

करे चूर सूरन के कवच सु फोरके। नर्म थान अति नर्म धंसे सो जोर के ॥ सकल पार्थने छेदे धनु गांडीव तें। मरे भूर भट रनमें छुट के जीवते ॥२४॥

सवैया इकतीसा

बसे हैं निखंड बास बेसके सरासन पै, शारीरहीके रूप ह्वै आकाश में उड़त हैं ॥ तच्छिण हैं भाल चंच सूरको कठोर कंठ, पीछे परलाय के पनिचसों छुटत हैं ॥ परत हैं छोभित होय सूरन के तननपै, आमिषके खानहार हिंसाही करत हैं। ऐसे बान अर्जुनके जमके सिचान किधों, जिन्हें जाय दाबे ते उसासन भरत हैं ॥ २५ ॥

दोहा।

इह बिध सर अर्जुन तने, छूटते लख दुर्योध।
भीषम प्रति निन्दित बचन, बोलो धरके क्रोध ॥२६॥

तात तात तुम रण विषै, यह आरम्भो केम ।
हार होत निज सैन की, जीत न दुर्जन जेम ॥२७॥
रह न सके रणमें यथा, यह पारथ दुखदाई ।
अहो पिता हमसों करो, जिह बिध शत्रु नसाई ॥२८॥
अरि आये रण सन्मुखे, को भट ह्वै निहचन्त ।
तातें बान प्रचंड तब, हतो शत्रु को सन्त ॥ २६ ॥

अडिल्ल ॥

यही बात सुन गंगा सुत पारथ प्रते । भयो युद्धको उद्यत ह्वै क्षोभित अते ॥ तबहि इन्द्र सुत बोलो सुन भीषम पिता। होय देश यह शुन्य सबै तुम सो रिता ॥ ३० ॥

जमागार को तोहि तथापि पठाई हो । अबहि मार जम की पहुँरानि कराईहो ॥ वच कठोर कहि ऐसे लागे युद्धको। होत निर्दयी भिरत चढ़ाइ विरुद्धको ॥ ३१ ॥

तबहि द्रोण रण मांही धनुष चढ़ाय के । धृष्ट द्युम्न के सन्मुख आयो धाय के ॥ छुरक बानते गुरुने रथ धुज छेदयो। बहुरि धृष्टने छत्र धुजा तिस भेदयो ॥ ३२ ॥

शक्तिवान तब छोड़ो गुरुने तुरतही । धृष्ट द्युम्नने छिनमें छेदो परतही ॥ तीच्छण बहु धृष्टार्जुन गुरु पै धाय के । लोह दंडकी मारी जोर बगाय के ॥ ३३ ॥

तीव्रबान ते गुरु ने तबही छेदके । खंड खंड कर डारी छिनमें भेद के ॥ तबहि द्रोण गुरु ढाल लई कर बाहने । पकरि खड्ग को धायो हाथ सु दाहने ॥ ३४ ॥

धृष्ट द्युम्नको मारन सन्मुखही चलो । मनो क्रुद्ध ह्वै काल बिदारन को चलो ॥ इसी अन्तरे भीम गदाले हस्तही । सुत कलिंगको मारो करके पस्तही ॥ ३५ ॥

न्यायवन्त बहु उनमत्त पुत्र कलिंगको। परो शीश मनु कौरव दल चतुरंग को ॥ करे भीम संत्रासित कौरव नृपति को। धरत रोस रण मांहि सु अरिगन दलन को ॥ ३६ ॥

गदा घात ते सात शतक रथ चूरए। मत्तुसेन संघार धरनि में पूरए ॥ इक हजार हनि हाथी कीने क्षय सही। घोर बीर रण उद्यत पावन जय लही ॥ ३७ ॥

इसी अन्तरे गुरुने नरुहि कुठार जो। खड्ग धृष्टिको छेदो तीक्षण धार सों ॥ युद्ध सोऊ अभिमन्यु सु तौलों आयके। टूंक टूंक रथ कीना गुरुको धायके ॥ ३८ ॥

तबही आयके पहुंचो सुत दुर्योध को। लक्षणाक्षमें मानें पुंज करौधको ॥ आवतही तिन धनुष सुभद्रा सुतको। खंड खंड कर डारो मानो ऊन को ॥ ३९ ॥

और चाप अभिमन्यु सुले तब धाइयो। छिनक मांहि अरि को दल सकल भगाइयो ॥ सबहि शत्रु तब इकठे ह्वै अतिही रुखे। पार्थ पुत्रको वेढ़ लियो रणके विखे ॥ ४० ॥

पार्थ पुत्र पंचानन सम यों हेरियो। मनो सिंहको मत्त गजो मिलि घेरियो ॥ तबहि आयके अर्जुन धनु गांडीवते। सकल पुत्रके बैरी नाशे जीवते ॥ ४१ ॥

नसत मेघके संचय जैसे पवनते। उड़त शत्रुगन तैसे नर के सरनते ॥ युद्ध मांहि जिह ठौर धंसे पारथ बली। तिसी ठौर पर जाय अरनको हलचली ॥ ४२ ॥

दोहा ॥

इह विध योधा युद्ध में, नित प्रति करते युद्ध।
जब आयो दिन नवम तब, भयो सिखंडी क्रुद्ध ॥४३॥
लीनों गुरु गंगेय को, निज सन्मुख ललकार।
तब सिखंड प्रति पार्थ यों, बोले बचन बिचार ॥४४॥

हे सिखंड अरिहतन को, सर प्रचंड यह लेहु ।
जा सर सों मैं पूरवे, जारो खंड बनेहु ॥ ४५ ॥
तब सिखंड बल चंड ने, लीनों वह ही बान ।
अरि मृग खंडनको महा, धायो सिंह समान ॥ ४६ ॥

अडिल्ल

करत खंड अरि सैन सिखंडी भूप ही। उठो युद्ध को क्रुद्धत जम के रूप ही ॥ द्रुपदी पुत्र गंगा सुत लरहिं परस्परे । दूहूं मध्य नहिं एकहि जयको अनुसरे ॥ ४७ ॥

युगम सिंह मनु युद्ध करैं बन के विषै । धन्य धन्य धुनि गगन सुगनु गण अखे ॥ धृष्ट द्युम्न ते आय सिखंडी भाखियो । भो सिखंड हन देखो जोरन तुम कियो ॥ ४८ ॥

युद्ध मांहि गंगा सुत अब लों है रुखे । घन समान अति गर्जत है तो सन्मुखे ॥ पुनि सुतास को रथ भी दृढ़ खहरात है । अरु उतंग अति ताल धुजा फहराइत है । ४६ ।

और पार्थ भी पूरत है तो प्रष्ट को । पुनि सहाय बैराट करैं तुम इष्ट को ॥ यही बात सुन राय सिखंडी घोरिये । पनच खेंच आकर नहि धनु टंकोरियो ॥ ५० ॥

द्रुपद पुत्र ने गंगा सुत के तन विषै । सहस एक सर साध हते अति है रुखे ॥ मेघ औघ ज्यों छावें मंडल गंगन ही । लियो छाय गंगा सुत तैसे सरन ही ॥ ५१ ॥

कौरव को बल तीनों कर संधान ही । द्रुपद पुत्र पे छोड़न लागो बान ही ॥ शत्रुन ने सर ताके नाहीं लगत ही । मनु सिखंडि ते नाशे है भयवन्त ही ॥ ५२ ॥

धृष्ट द्युम्नके करते छूटत बान जे । लगत शत्रु के उरमें बज्र समान ते ॥ गंग पुत्र के सर जे छूटत तीच्छणा । ते प्रसन्न है जाहि सिखंडी के तना ॥ ५३ ॥

होंहि दुःख सुख रूप सु पूरव पुन्य ते। सुःख दुख है परनवे सकल अपुन्य ते॥ गंग पुत्र धनु जो जो धारत कर विषे। धृष्ट द्युम्न तिस छेदत सरते है रुखे॥ ५४॥

छीन पुन्य नर हारे सब की साख ही। पुत्र मित्र अरु भ्राता कोइन राख ही॥ गंग पुत्र को कवच सिखंडी ने तहां। तीछन बान कर हठते भेदो दृढ़ महां॥ ५५॥

मेघ धारतें जैसे तरु वर्षा समै। परें टूट है छीन सुथिरता नहिं पमै॥ बान वृष्टि ते तैसे कवच सु फूट के। परो भीष्म कोरन में तब सों छूट के॥ ५६॥

पुनि सिखंड ने तीक्षण सर गन छोड़ये। हते अस्व युग सारथ रथ धुज तोड़ये॥ अति अकम्य रथ रहित सु गंगा सुत लहो। कर कृपान कर अरिके हतवें को चलो॥ ५७॥

द्रुपद पुत्र ने तबही तीक्षण सरनते। खड्ग छीन कर डारो अरि के करनते॥ छुरक वान ते हृदय बिदारो लीन है। परो भूम पर तबहि पितामह छीन है॥ ५८॥

दोहा

कंठ प्रान तब जानके, लीनो शुभ सन्यास।
धर्म ध्यान हिरदे धरो, धरो धैर्य गुन रास॥ ५९॥
अनु प्रेक्षा चित राख के, सुमर पंच पद इष्ट।
तन भोजन ममता तजो, गहि सलेषना सिष्ट॥ ६०॥
तबही रण तज सकल नृप, आय ठए तिह तीर।
पंडव तिस पद नमन कर, रुदन करत इम बीर। ६१।
ब्रह्मचर्य आजन्म तुम, अति उत्तम वृत पाल।
अहो पितामह पूज्य मह, सकल गुनन की माल। ६२।
धर्म तनुज तब यों कहत, भो उत्तम वृत धार।
हमको क्यों नहिं मृत्यु अब, आइ दुख दातार। ६३।

सुर जर्जर भीषम कहत, कौरव पांडव सोजु ।
अभय दान अब देहु तुम, सबही जीवन को जु ॥ ६४ ॥
करो परस्पर मित्रता, तजो शत्रुता चित्त ।
अब लो क्यों ऐसे भये, तुम निश्चय नहिं कित्त ।६५।
जे कोई रनमें मरे, गये निन्द गति सोय ।
तातें कीजे धर्म अब, दश लक्षण अब लोय । ६६ ।
या अन्तर चारन जुगल, आये नभ ते सन्त ।
शुद्ध चित्त उत्तम तथा, महा मुनिन्द गुण वन्त ॥६७॥
निकट जाय के भीषम के, बोले बचन गंभीर ।
तो समान पृथ्वी विषै, और नहीं मह धीर ॥ ६८ ॥
काम मल्ल को जो सुभट, करत चित्त सों चूर ।
ता सम जगमें और नाहिं, सूरन में मह सूर ॥ ६९ ॥

सवैया इकतीसा

भृकुटी कमान तान तीक्षण मदन बान, कामी नर उर थान मारे जान छिन में । जो खित बिरुद्ध युद्ध नैंननि सों ठाने इम, तामें ठहराय सूर सोई सुर गन में ॥ बांध बांध आयुध को धारे उर धीरता सु, साध साध सायक जे डारे अरि तन में ॥ नंदलाल सुत भने ए तो सूर सूर नाही, धाय धाय लरें जोर जोपे घोर रन में ॥ ७० ॥

दोहा

ऐसीसुन गंगेयसुत, युग मुनिके पद बन्द ।
नुत करके बोलो गिरा, गुन ज्ञायक गुणवृन्द ॥ ७१ ॥
भो भगवन भवबन भ्रमत, मैं न लहों वृष पर्म ।
कहा करो या ठौर अब, किहि बिधि है शिव शर्म ॥७२॥
बानन सों छिन है परो, शरण लई तुम आय ।
तुम प्रसाद या भव विषै, लहियो फल सुखदाय ॥७३॥

यों सुनके बोले मुनी, सुनहु भव्य गंगेय ।
सिद्धन को चित सुमरके, नमन करो बहु भेय ॥ ७४ ॥

पद्धड़ी छन्द ।

शुभ चारि अराधन चित अगाध । धर्मधीर्य वीर्य मन बच समाध ।
बरतत्व अर्थ श्रद्धान रूप । पद दर्श अराधन लहत भूप ॥७५॥
जयजय पदार्थको पान होय । नय नय प्रमान जिन उक्ति होय ॥
तह ज्ञान अराधन होइ सच्छ । फिर निहचे आतम ज्ञान तच्छ ७६
चरिये सुचरण जहँ विधि विचार । तेरह प्रकार अघहार सार ॥
पुनि वृत चिद्रूप शुभ है सुमद्धि । चारित अराधना एहु बिद्धि ७७
तपिहे जु देह तप जोय भांति । संयम स्वरूप गुणमूल पांति ।
तप नाम अराधन जान सोय । विवहार सु निश्चय रूप होय ७८
इहविधि अराधना इम प्रकाश । मुनिचारण कीनी गतिअकाश ।
गुणवन्त सन्त गंगेयमार । चहुं विधि अराधना हृदय धार ७९॥
तज विधि ममत्व आहार देह । त्तम भाव मयनमो धार येह ।
परपंच इष्टचित जपत धीर । शुभध्यानमांहि त्यागो शरीर ॥ ८० ॥
उपजो सुजाय तिहि देव रिद्ध । जय विष्णु नाम सुरलोक मध्य ॥
मनबंछित सुख सुगतें सुभोग । सुख होहिं सहज जिनधर्म जोग ८१
तहँ कौरव पांडव रुदन ठान । बहु शोचकरत जग शून्य मान ॥
दुख मांहि एम बीती सुरात । रवि आय बहुरि कीनो प्रभात ॥८२॥
इह भांत जीव संसार मांहि । नितकाल भ्रमत थिरहोय नांहि ।
लक्ष्मी सुचपल चपला समान । संध्या प्रभात सम आन जान ८३
सुत बन्धु सुखादिक छिनक भंग । इम जान रहो तुम धर्म संग ।
शुभ बुद्धि गंगसुत ब्रह्मचार । बर रिद्धि धार सुरसदन सार ॥ ८४ ॥
पुनि धर्मतनुज जयवन्त सन्त । जगमांहि प्रकट जस नीतिवन्त ।
जिन धर्म समान न और रत्न । जैनी सदीव सुन धरहि जत्न ८५॥

इति श्रीमन्महाशोलाभरण भूषित जैनी नामांकितायां भारतभाषायां बुलाकीदासविरचितायां गांगेय सन्यास ग्रहण पंचतत्त्वप्राप्ति पंचम स्वर्ग गमनं वर्णनोनाम विंशतः प्रभावः ॥२०॥

अथ जरासिंधु बध वर्णन्

मङ्गलाचरण । धर्म नाथस्तुति । सवैया तेईसा

धर्म धुरन्धर धर्म जिनेश्वर भर्म खयंकर कर्म कुहारी ।
सो शिव रूप अनूपम भूप अपार समुद्र भए भव पारी ॥
शर्म को आकर है सुगुनाकर और कृपाकर दुर्गति टारी ।
जैनी को अंग जुनाहि जजें निज सर्म के हेत असर्म बिदारी ।१।

दोहा

मार मार करते उठे, शस्त्र गहत कर धीर ।
अरुन नैन भृकुटी कुटिल, उठे सुभट रण गीर ॥ २ ॥
चढ़े सु दोऊ दल प्रवल, हलत चलत भू भीर ।
प्रलयानल छोभित मनो, उमड़ो सागर नीर ॥ ३ ॥
सूरन के पग भारते, धंसे भूमि अहि मोर ।
छोभ करत दिग पतिन को, आये रन के ठौर ॥ ४ ॥

अडिल्ल

भये युद्ध में उद्यत भट सों भट महां । पार्थ बान संधान करत धायो तहां ॥ करत खंड बल बंड सु सुंडहि गज घटा । चरन हीन हय कीन हते हरि के भटा ॥ ५ ॥

इसी अन्तरे आयो रण सन्मुख तहीं । महा सूर अभिमन्यु धनुष साधे सही ॥ विश्वसेनके सन्मुख धायो युद्धको । हतो शत्रुको सारथ धर के क्रुद्ध को । ६ ।

पनिच खेंच आकर नहिं छोड़त सरन को । करत सीस बिन छिनमें अरि को गगन को ॥ सल्य पुत्र तब आयो सन्मुख धायके । मनो शल्य अरिगनको क्रोध चढ़ायके ॥ ७ ॥

लगो युद्धको चाहत निज रथ रथ चढ़ो । पार्थ पुत्र के सन्मुख दृढ़ कंकट मढ़ो ॥ आपुसमें को दंड करत संधानते । गगन छाय तन छेदे तीच्चण बान ते ॥ ८ ॥

पार्थ पुत्र के बान लगे परचंड ही। सल्य पुत्र है हस्त मरो बलबंड ही॥ तबहि पुत्र दुर्योधन को धर क्रुद्ध को। पार्थ पुत्र के सन्मुख आयो युद्ध को॥ ९॥

नाम तास को लछमन जग विख्यातही। पार्थ पुत्र तिन छायो सर संघात ही॥ तबहि बान अभिमन्यु हते बहु तिच्छना। करो मारके लछमनको जम पाहुना। १०।

इसी भांत नृप पुत्र चतुर्दश महस ही। पार्थ पुत्र ने कीने हत के तहस ही॥ शीघ्र चाल विकराल सु तीच्छन भालही। प्रान हान अभिमन्यु तने सर जाल ही॥ ११॥

लगें जाय के जिनके तिनहि विदार ही। अस्थि चर्म को बेध रुधिर बिस्तार ही॥ तरुन सिंध अभिमन्यु करत रण के लही। गज समान महि विद्विप मारन हेल हीं॥ १२॥

होय क्रुद्ध दुर्योधन तब निज भटनसों। भौंह चढ़ा कर बोलो मीठे बचन सों॥ मार मार कर दौरे तबही भूप ए। चपल अस्व रथ चढ़ चढ़ जमके रूप ए॥ १३॥

चलो द्रोण भय दायक अरि गनको महा। नृप कलिंग पुनि धारो सर छोड़त तहां॥ कर्ण भूप भी धायो कर सर धनु धरे। नृप अनेक इह भांत घिरे तिहि ऊपरे॥ १४॥

नृप कलिंगको मारो तौलों आद ही। बहुरि कर्णको छेदे सब उनमाद ही॥ करो द्रोण को आयुध गनते जो जरा। शिथिल देह है हट क्यों मनु व्यापी जरा॥ १५॥

महा शूर अभिमन्यु सु जहँ जहँ रण करे। करत छार अरि गनको तहँ तहँ जय वरे॥ रहो शूर नहिं कोई ऐसो रण विषे। पार्थ पुत्रसों युद्ध करे है सन्मुखे॥ १६॥

कहूं मत्त मातंगन है हर सामही। जनम अंध सहि सक-

इन ज्यों रबि घामहीं ॥ महातीव सर छोड़े कूंवर ने तबै ।
करे छिन्न गज बाजी रथ प्यादे सबै ॥ १७ ॥

बिना घाव नहिं कोई ता रण में रहो । महा दाव अभिमन्यु सबै अरिदल दहो ॥ तब कुमार इक अछय नाम सु आइयो।
लये बान धनु निज बल राखत धाइयो ॥ १८ ॥

पार्थ पुत्र के दस सुर मारे आय के । परो मूर्छे है भूम पछार सु खायके ॥ है सचेत पुनि धारो पारथ नन्दना। अस्त्र
थाम धनु धारे आयो ता छिना ॥ १९ ॥

धनुष खेंच अभिमन्यु बली आकरनते । छिनक मांहि सो विमुख करो हति मरणाते ॥ तबहि कर्ण नृप रण में बोलो
गुरु प्रते । सुनहु द्रोण गुरु मो बच ऐसे विनय ते ॥ २० ॥

दोहा

या रण में अभिमन्यु ने, लछमन प्रमुख कुमार ।
सहसा कीने आज ही, मार मार कर छार ॥ २१ ॥
हतवे को अभिमन्यु के, को इक नहीं समर्थ ।
कबहुक पारथ भी मरे, पै न मरे यह शत्रु ॥ २२ ॥
ऐसी सुनके कर्ण प्रति, बोलो यों गुरु द्रोण ।
बहुत नृपन को जोहते, मार सके तिस कौन ॥ २३ ॥
तातें इकठे कर अबै, जे नृप सेना मांहि ।
किल किलाय रण छेदिये, हतिये हतिये याहि ॥ २४ ॥
इह विधि बच गुरु द्रोण के, सुनके सबही राय ।
कोलाहल कर न्याय तज, लगे युद्ध को धाय ॥ २५ ॥

अहिल्ल ।

लगे युद्धको अरजुन सुत सब एकही । छिनक मांहिते
जीते भूप अनेकही ॥ उड़ी सैन सब कौरव पत्र पलास ज्यों।
छयो सूर अभिमन्यु सुपन परकाशयो ॥ २६ ॥

जिन्हें धायके मारे सरकी चोटही। पाय पीर तज धीर सु पृथ्वी लोटही॥ भये भूप सब विह्वल अर्जुन पुत्र तें। होहि भीत इन गन ज्यों हरिसे शत्रुतें॥ २७॥

बहुरि सर्व नृप रणको उद्यम ठानके। है कुमारके सन्मुख आये जानके॥ करो छिन्न रथ कुंवरको धुज साथही। करें युद्ध ताजि नीत सबै नर नाथ ही॥ २८॥

वज्रदण्ड तब लीनों कुंवरहि हाथमें। करे चूर्ण सब तिन के दे दे माथमें॥ इक कुमार परचंड हते सबको तहां। मनो इन्द्र सुत मारत असुरन को महा॥ २९॥

तबहि कर्मके जोग सु जयरथ आयके। महा बान कर कूंवर मारो धाय के॥ पार्थ पुत्र अति दुःखित है कर गिर परो। तबहि शोर सुर नृपगन हा हा अनुसरो॥ ३०॥

यह अन्याय सब भूपति कीनों रण विषे। सकल लोक मिल भाषो ऐसो है रुषे॥ ठयो भूम पर कूंवर थिरता धार के। शान्त चित्त है अतिही रोष बिडार के॥ ३१॥

भने कर्ण तब कूंवर शीतल पय पियो। सुथिर चित्त अभिमन्यु सु बच यों बोलियो॥ नीर पान नहिं करिहों अन्न सन लागिहों। सुमर पंच पद हिरदे तनको त्यागिहों॥ ३२॥

बचन शांत इम कूंवरने भाषे जबै। द्रोण आदि मिल निर्जन बन आनो तबै॥ सो कुमार भी चेतत चितवत चित्तए। तज कषाय अरु काय सु जान अनीतए॥ ३३॥

सर्ब जन्तु प्रति धार छिमा जिन सुमिरते। तन मलीन तज उपजो सुर गहि सुर अते॥ अवधि विक्रिया सहित सु मन बंछित सुखे। पुन्य जोग अभिमन्यु लही तह निधि अखे॥ ३४॥

दोहा॥

मरो जान अभिमन्यु को, दुर्योधादिक राय।
हर्षित है आनन्द के, बहु बादित्र बजाय॥ ३५॥

आई तबही निशि तनी, रण वर्जन के हेत।
उत्सव कर कौरव चले, व्यापे अंध असेत ॥ ३६ ॥
तबही हर सेना विषै, रुदन करत सब राय।
मुखरित ह्वै विलपत अती, नैनन असुभर राय॥ ३७ ॥
मृत्यु सुनत तिस धर्म सुत, गिरो मूर्छ ह्वै भूमि।
मनु उन्नत कुल गिर परो, प्रलय पवन ते घूम ॥ ३८ ॥
क्योंहू क्योंहू चेतना, पाय धर्म सुत सोय।
जाको सुन उपजे दया, यों धुन भाषत रोय ॥ ३९ ॥
हा पारथ सुत रण विषै, तो सम योधा कौन।
एक अनेकहि सहस को, मारन समरथ जौन ॥ ४० ॥
जालन्धर राजान के, द्वादश सहसहि मार।
जय प्रापत तू तोहि पुन, किन मारो अघ धार ॥ ४१॥
तौलों पारथ आइयो, धरम पुत्र के तीर।
लखो शोक संतप्त तिन, नैन झरत असु नीर ॥ ४२ ॥
नर बोलो भो भ्रात सुन, आये सकल कुमार।
क्यों नहिं आयो तनुज मो, शुभ सुन्दर गुण धार।४३।
क्या मो सुत अरिने हतो, कै चक्रव्यूह के मध्य।
मरो अचानक शत्रुसों, करते सन्मुख युद्ध ॥ ४४ ॥

सवैया तेईसा।

यों सुनके तब राय युधिष्ठिर एम भने सुन अर्जुन भाई।
क्षत्रि अनीति सु मारगके तजि भूरि नृपों मिल कीनी लड़ाई।
घेर सब चहुं ओरहि बालक मार लियो तुम नंदन ठाई।
पूतकी मीच सुनी जब पारथ मूर्छित ह्वै पृथ्वी परसाई ॥४५॥
पूतको पात प्रलयको भयो धरतें मनु वृष्टि भई दुखदाई।
स्वेद कि बूंदहि रुंद लियो तन सांस परो उर ऊघटराई।
घोर भये हहकार करे दृढ़ बज्र परो तिस शोक महाई।
ताहि कि चोट गिरो गिरि पारथ लोटतही धरनी धरकाई ॥४६॥

दोहा

पुनि उन्मूर्च्छित होय के, अर्जुन लागो रोन ।
अहो पुत्र तुम बिन धरनि, धारन समरथ कौन ।४७॥
कुल रक्षक पक्षिक सुनत, राज लक्ष्म भरतार ।
तो बिन इन बैरीनको, कौन सके अब मार ॥ ४८ ॥
तौलों ताके तीरही, आये राय मुकन्द ।
नर को धीरज देतही, यों बोलो गुण बृन्द ॥ ४९ ॥
भो पारथ केवल तनुज, मरो न तेरो राज ।
मो सेना भीता बिना, भई सु विधवा आज ॥ ५० ॥
मो बल्लभ दुर्लभ अते, गयो आज अधिकाय ।
भो नारिंद्र यह शोक तज, अरिगणको सुखदाय ॥५१॥
अवसर नाहिं यह शोक को, धारहु धीरज धीर ।
सुत ही अब ताको हतूं, फल दीखलावहु बीर ॥ ५२ ॥
तौलों मृत्यु अभिमन्यु की, सुनी सुभद्रा रानि ।
डिग मगाय पगथर हरी, परी भूम भय आनि ॥ ५३ ॥

सवैया तेईसा

अंगजु भंग भयो भगनी हरि शोक दवानलतें अति दाही ।
कंजकली छवि छीन लगे दव दीनव्है मीन जो नीर विनाही ।
मूर्च्छित काय गिरी अरराय सुखाय पछार परी भू मांहीं ॥
पुत्र की मृत्यु सुतीक्षण आयुध तेंमनु छिनमई है लहै ताही ।
चेतनता पुन पाय उठी मुख सो इम रोवत ही अति दीनी ।
हाहा सुपूत सहाय विना तुम युद्ध विषै गति मृत्यु किलीनी ॥
हा सुत सोवत को तुम सेज कठोर कहासर सांथरे कीनी ।
तो विनहों नहिं सोहति हों छिन जोंनलसे निशचंद विहीनी ॥
हा नृप भीम महाबलवन्तहि मोसुत सों तुम क्यों न उबारो ।
हाविभु अर्जुन भो मन रंजन धर्मज हो तुमभी न निहारो ॥

हा मुरु मर्दन शत्रु निखंदन तैं भीमो सुत क्यों न संवारो।
किनहू न रखो बलवन्त सु बालक कर्म संयोग सबैही विसारो।
माधव सों मुभ्रात विख्यात सुजेठ युधिष्ठर जोजग जानो।
दूजो भयंकर भीमबली बलवन्तन में कवि आदि बखानो॥
पारथ सों पति सारथ साधक औ परमारथ उद्यत मानो।
तद्यपि मो सुत शत्रु हनो दुख मोहिरदे विध आय उठावो॥

॥ दोहा ॥

रुदन करत इह भांत अति, लखी सुभद्रा रानि।
तब दीरघ उस्वास ले, बोलो अर्जुन बानि॥ ५८॥
मो वच सुनिये भो प्रिये, पथ्य तथ्य मत दाय।
सिर यथार्थ को छेदिहों, भोर भये रन धाय॥ ५९॥
जो नहिं छेदूं तो तबहि, जरूं अगनि की डीक।
पीर सहूं दुर्मति तनी, यहै प्रतिज्ञा ठीक॥ ६०॥
तातें रुदन निवारिये, जलतें आनन धोय।
होनहार के मेटने, समरथ नाहीं कोय॥ ६१॥
तब भगनी सों हरि भने, तुरत तजो यह शोग।
तुम क्षत्रानी यदु सुता, धीरज धरनो जोग॥ ६२॥
दान सूर रन सूर सुत, जनें न कोई और।
तो सम भूप सुता जने, सकल गुणान की ठौर॥ ६३॥

सवैया तेईसा।

पुत्र धुरन्धर धेनु जने पुन धावन जोग तुरंग तियाही।
वैश वधू सुत जने जग सेवक पुत्रहि शूद्र तियाही॥
द्विजतीय जने सुत याचकको यहबात विख्यात सुनी तब ताही।
दान समर्थ महारण शूरहि तोसि जने इक राज सुताही ६४॥

दोहा।

पुनि असार संसार यह जानहु भगन विचार।
उपजें बिनसें थिति लिये, यहे जगत व्यापार॥ ६५॥

सवैया तेईसा ।

पूरब कर्म संयोग भये जिहिको मरनौ जिहिबार बतायो ।
सो जगजन्तु मरे तबही यह जान चिते निहचे ठहरायो ॥
त्यागहु शोक मुये प्रिय मानुष धर्म सनेह गुरू समझायो ।
दूर गये चल साय अहोतसु लीकहि पीटन मूढ़ उठायो ॥६६॥
चंचल चित्त बिचित्र चलाचल सारिद बारिद के रग भाई ।
चूर्णित है सुख दुःख भये जहँ जीव भयो जिमि चाक भमाई ।
जे नर पूर्व गये असमर्थहि तेउ भये निज राखन ताई ।
ज्यों हरि हद घड़ी अध ऊरध त्यों भव मांहि कहा थिरताई ६७॥

॥ दोहा ॥

इह विधि सन्तोषित करो, निज भगनी हरिराय ।
तौलों किनहु यों कहो, नृप जयार्द्ध सो जाय ॥ ६८ ॥
रे जयार्द्ध नृप पार्थने, करी प्रतिज्ञा एह ।
जो तुझ को मारूं नहीं, तो जारूं निज देह ॥ ६९ ॥
ताते अबहीं जायके, सरन गहो तुम तास ।
नाहीं आज प्रभातही, ह्वै है निश्चर नाश ॥ ७० ॥
कहाठयो निहचन्तत, आये शत्रु निज तीर ।
यों सुन चित चिन्तत भयो, ह्वै जयार्द्ध मति धीर ।७१।
ह्वै अवश्य परभातही, वैवस्वत सम रुद्ध ।
पारथ मो सिर छेदह्वै, करके कौरव क्रुद्ध ॥ ७२ ॥
दुर्योधन पै जायकें भनेजयद्रथ राय ।
अब बन में भयभीत ह्वै, लेहों तपको जाय ॥ ७३ ॥
जहँ अर्जुन का नाम भी, सुनूं न अपने कान ।
मृग समान ह्वै मृगन में, बसूं सदा तिह थान ॥ ७४॥
जब अर्जुन रन सन्मुखे , धनुष धरत बरबीर ।
तबै कदाचित सन्मुखे, धरत न कोऊ धीर ॥ ७५ ॥

पारथ धनु टंकार सुन, नसत सुरा सुर रास ।
कौन बात नर नृपन को, तिष्टे सन्मुख तास ॥ ७६ ॥
जाको बल तिहु लोक में, गावत सुर गंधर्व ।
ता सन्मुख रण के विषै, को धावे धरि गर्व ॥ ७७ ॥
ऐसी सुन दुर्योध नृप, बोलो बचन गंभीर ।
भो जयार्द्ध भय मन करो, धारो धीरज धीर ॥ ७८ ॥
को इन नर या जगतमें, अजर अमर पद धार ।
ज्यों उपजो सो बिन सही, रहे जसा जससार ॥ ७९ ॥
तातें या पृथ्वी विषै, रण के सन्मुख आय ।
युद्ध धर्म क्षत्रीन को, नहिं अपयश हो सदाय ॥ ८० ॥
मो कर जाके शीस पै, ताको भय नहिं कोय ।
है निचन्त ताते लरो, अरिके सन्मुख होय ॥ ८१ ॥
मर है पारथ भोरही, रविकी अथ बन बार ।
को समर्थ या भू विषै, तो को मारन हार ॥ ८२ ॥
ऐसी सुनके थिर भये, जयरथ निज जय जान ।
निस बीतत सब चाड़ले, कहो पार्थ सों आन ॥ ८३ ॥
विजयारध को रण विषै, किह बिध लख है राय ।
नृपगन मिल चक्र व्यूह रच, गोप कियो बहु भाय ॥ ८४ ॥
विषम ठौर जहँ कोइ भी, मार सके नहिं कोय ।
ऐसी बिधि बहु यतन सों, राखो जयरथ सोय ॥ ८५ ॥
ऐसे बच सुन चाड़ के, धारत बहु अहमेव ।
पारथ नृप परमारथी, कहो गर्जके एव ॥ ८६ ॥
जो जयार्द्ध को सुर सकल, राखें रण में आय ।
तौ भी निहचे मारहों, अरि को सन्मुख धाय ॥ ८७ ॥
यों कहि थिंडल मैं ठयो, दर्भासन रच पार्थ ।
सुमरी सीस न देवता, जिन पद सेवत सार्थ ॥ ८८ ॥

तबही जिन सासन सुरी, बोली सुखकी खान।
नर नारायन नेम की, मुझ को दासी जान ॥ ८९ ॥
तातें तुम आदेश मुझ, देहु मनो गति जोय।
हरि अर्जुन तब यों कहो, अरिवध किह विधि होय।९०।
ऐसे सुन बोली सुरी, आवो तुम मो संग।
सूझेंगे सब काज तुम, ह्वै हैं अरिगन भंग ॥ ९१ ॥
अमरी संग अर्जुन तबै, गयो तुरत ही धीर।
जहां कुंवर स्नान की, रम्य बापिका तीर ॥ ९२ ॥
कनक कमल जामें सजे, सारस हंस सु बोल।
रतन मई सो पान तसु, निर्मल जल कालोल ॥ ९३ ॥
सुन पारथ देवी कहत, इसी बापिका मांहि।
जय दायक फुंकार फण, जुगम नाग निवसांहि ॥९४॥
निर्भय ह्वै यामें धंसो, गहो नाग जुग सत्त।
ताही ते तुम शत्रु को, ह्वै हैं निश्चय मृत्त ॥ ९५ ॥
यों सुन के पारथ निपुण, धंसो बापिका मद्ध।
भुजग द्वंद करते गहे, जिनसों ह्वै सब सिद्ध ॥ ९६ ॥
पुनि बोली नरपति सुरी, सुनो पार्थ सु विचार।
एक होहु अहि धनुप तुम, द्वितिय होहु सर सार ॥९७॥
सिर जयार्द्ध को छेदके, बन में ताको तात।
ध्यान धरत विद्या नमित, तिस अंजल लख भ्रात ॥९८॥
सीस तनुजको देखके, मर है वह भी राय।
अरिको अन्य उपाय तुम, करो बृथा मत भाय ॥९९॥
यों सुन के नृप तुष्ट ह्वै, लये धनुष सर हाथ।
आयो निज सेना विषै, सुख दायक हरिपाथ ॥ १०० ॥

सोरठा।

तौलों दिन पति आय, उदय भयो उदया चलहि।
भट जनको मनु भाय, देखत आयो युद्ध को ॥ १ ॥

दोऊ दलके सूर, कस आयुध कटि सों तबै।
निज निज स्वामि हजूर, उठे क्रुद्ध ह्वै युद्ध को ॥ २ ॥
धैर्य देत वच मिष्ट, बोलो द्रोण जयार्द्ध सों।
बच्छ सुथिर ह्वै तिष्ट, करहों रच्छा तुम तनी ॥ ३ ॥
चौदह सहस मतंग, अन्तर थापे द्रोण ने।
राखे लाख तुरंग, साठ सहस रथ बेढ़ के ॥ ४ ॥
पती बीस लख देइ, राखो मध्य जयार्ध को।
द्रोण धीर धनु लेइ, बोलो सब सुभटन प्रते ॥ ५ ॥
अहो महा नर राय, तुम रच्छा जयकी करो।
हो रण के मुख जाय, हनहो सब वैरीन को ॥ ६ ॥
द्रोण सूर इह भात, कोपित ह्वै पांडवन पै।
लए बान संघात, धायो भारथ करण को ॥ ७ ॥

दोहा।

तब बोले यों धर्म सुन, हर प्रति वच परवीन।
कहा काज अब करेंहगे, नष्ट बुद्ध थिति लीन ॥ ८ ॥
तुम बैठे अटवी विषै, लागो चिर बिन काज।
ह्वै है विरथा पार्थ की, सही प्रतिज्ञा आज ॥ ९ ॥
बोल उठे बाचाल नर, जो कुछ मन में चाह।
मुख बोले को जग विषै, दुर्लभ है निर्वाह ॥ १० ॥
यों सुनके केशव कहत, सोच करो मत भूप।
सब कारज तुम सीझ हैं, मंगल सहित अनूप ॥ ११ ॥
एक छत्र तुम भोग हो, कुरु जांगल को राज।
साधि होयगी पार्थ की, सही प्रतिज्ञा आज ॥ १२ ॥

सोरठा

तौलों प्रणमित भेष, बोले पारथ भूप प्रति।
अबहि देहु आदेश, देखहु मो बल भुजन को ॥ १३ ॥

राय युधिष्ठिर शिष्ट, बोलो तबहि अशीष दे ।
जैन धर्म जग इष्ट होऊ सहाई तुम सदा ॥ १४ ॥

अडिल्ल

रथारूढ़ है धायो रण को पारथी । भयो विष्णु बलवंत सहाई सारथी ॥ बजे तुर्ज भय कारि मारू राग सों । लहो युद्ध को संगम सुभटों भाग सों ॥ १५ ॥

चले सजिगज गर्जित मानों घन घटा । हिन हिनात हय उपर चढ़ धाये भटा ॥ चलत चक्र चिंकार करत जहँ रथनके। मानों जंत्र ए युद्ध समुद्रहि मथन के ॥ १६ ॥

चले धीर तहँ छेदत मस्तक अरिन के । रुधिर धारने अरुन करत सो धरनि को ॥ तोर तोर रथ गेको पथ पागय बनी। छिन्न सुंड गज गर्जि गिरें वसुधा हनी ॥ १७ ॥

कटत मुंड धर नाचत सुभटन के तहां । मनहु वीर रस प्रकटहि यम के नट महा ॥ गिरत सीस भू रजित सोणित सों भरी । किधों रक्त सर मद्ध पदम पंकति परी ॥ १८ ॥

मरत सूर बहु लोचन के गिरहीं परे । चलो रक्त परवाह सुभट तरने लगे ॥ मनु समुद्र है क्रुद्ध अकनना धाग्ई । परे सूर तिहि मांहि न थिरता पारही । १९ ।

किधों रक्त मय सरिता बैतरनी बहै । नार कीक सम योधा पर के दुख सहै ॥ बज्र दंड सम बान धनंजय के छुटैं । खंड खंड है कौरव दल बादल उड़ें ॥ २० ॥

भज्य मान निज बलको लख ताही छिने । धैर्य देत गुरु सब सों बच ऐसे भने ॥ भीत होय मत भागो सोभट रण विषै। लगत लाज निज बलको भागत जग विषै । २१ ।

भीत कौनकी तुमको मैं ठाड़ो जहां । सुथिर होहु तुम ताते

रण सनमुख महा ॥ वचन द्रोण के सुन सब भट गन थिर भये। वहुत शस्त्र अरि मारनको कर में लये। २२।

पार्थ विष्णु तब नुतकर गुरु सों यों कही। अहो तात गुरु मो वच अब करिये सही ॥ जाहु जाहु तुम रण अंगन तजके अबै। अपर सेन छिन मांहि हतों अरि की अबै। २३।

युद्ध मांहि हम गुरुहि उलंघहि किहि बिधे। जो उलंघकहि जाय तु विनय नहिं मधे ॥ भनो द्रोण यों सुनके रण ते नहिं फिरूं। अबहि बान गन छोड़ तुम्हारो मद हरूं ॥ २४ ॥

जो मनुष्य में गखूं अमरहि सों भयो। हतो जाहि मैं निश्चय मरनो तिन लयो ॥ सुनत एम ह्वै क्रुद्ध धनंजय रथ चढ़े। चलो धाय के सन्मुख धनु साधत खड़े। २५।

तबहि नाद घन घोर भयो बादित्र को। सुनत जास ह्वै त्रास नसे बल शत्रु को ॥ हतो द्रोण नव सरतें पारथने तहीं। तबहि द्रोण न दून सर छोड़े सहीं ॥ २६ ॥

करें रुद्ध ते बान तबै निज बान ते। दून दून सर छांहि धनु संधानते ॥ एक लक्ष सर छोड़े पारथ ने जबै। दोय लक्ष सर छोड़ सु छेदे गुरु तबै। २७।

कहो पार्थ सों तबही केशव दक्ष यों। करत केल तू रणमें गुरु सों शिष्य जों ॥ केल जोग नहिं अरिसों रण में भटन को। हत तीक्षन सर ताते अरि मद हतन को। २८।

दोहा

यों सुन अर्जुन खड्ग ले, गुरु सन्मुख तब ध्याय।
तिष्ठ तिष्ठ कहँ जायहै, ललकारत इह भाय। २९।
लोहि जष्ट ले गुरु तबै, आयो सन्मुख तास।
तब हंस के पारथ भने, सुनिये गुरु गुन रास। ३०।

हम सों रण तुम मत करो, हम को सुत सम जान ।
अस्व थाम अरु हम विषै, रंचक भेद न मान । ३१ ।
पिता पुत्र को युद्ध किम, सोहत है दुख ठाउ ।
अरि ते रण करनो जुगत, तातें तुम फिर जाउ । ३२ ।
लज्जित ह्वै गुरु फिर गयो, तब पारथ परचंड ।
हतन लगो अरि गजन को, ज्यों केहरि बल चंड ॥ ३३ ॥

अडिल्ल

प्रलय कालको सागर मानो गरज तो । करत नाद गांडीव धनुष को तरजनो ॥ कौरव की सब सेना बेधी पारथी । देत त्रास अरिगन को हरषे सारथी ॥ ३४ ॥

तब हि भूप यों बोले कोइक मानके । पार्थ द्रोण ने भेजो आजहि जानके ॥ बहुत अनर्थ यह करहै अबही रण विषै । बली कौन ठहराय जु याके सन्मुखै ॥ ३५ ॥

सुनत एम ह्वै क्रुद्ध सुता युध धायके । लये लोक हरि अर्जुन सन्मुख जायके । तबही सक्र सुतछोड़ी पंकत सरनकी । कर छिन्न रथ बाजी मस्तहि गजन की ॥ ३६ ॥

तबहि सतायुध चितहि विचारो इह विधे । सहज शस्त्रकर दुर्जय अरि एनाहि सधे ॥ जग प्रसिद्ध ये वैरी दोऊ जानिये । दिव्य शास्त्र कर तातें इनको हानिये ॥ ३७ ॥

गदादिव्य तब सुमरी सूंपे सुतायुधी । ताही छिनकर आई ज्यों दासी बधी ॥ विद्यु दंड सम देख गदा को चमकती । तबहि पार्थ प्रति बोलो यों लक्ष्मी पती ॥ ३८ ॥

कठिन कार्य यह तोपै सधेगो नहीं । दीव्य शस्त्र ते मोमन संशय है सही । हतूं याहि मैं अब निज बल विज्ञानते । तिष्ट पार्थतू निश्चल ह्वै धनुवानते ॥ ३९ ॥

बहुरि विष्णु यों बोले सत आयुध प्रती । गदा मूंचेरे मो

पर बिलम नकर रती ॥ सुनत एम चित चिन्त्यो भूप सतायुधी । विष्णु पार्थये दोऊ महा अरि है क्रुधी ॥ ४० ॥

इनहि मारके रणमें जय दीजे गदा । हाथजीत दुर्योधनकी सुखसों तदा । यों विचार चित मांहि गदा सु फिराय के ॥ दई विष्णु के उरहि महा दृढ़ धायके ॥ ४१ ॥

कुसुम दाम शुभ गंधमई व्है अनुसरी । हरहि अर्च पुनि जाय अरी के सिर परी ॥ पूर्व पुन्य ते हरिको विघ्न निवारये । गदा जाय के उलट सता युध मारिये ॥ ४२ ॥

तबहि सैन सब छिनमें कौरव नृपन की । पार्थ विष्णु ने छीन करी हत मरन की॥ उड़त रेणुजिमि गगनहि मारी पवनकी । त्यों उड़ात नर मरते सैना अरिन की ॥ ४३ ॥

कहो विष्णु ने ऐसे पारथ प्रति भले । भये अश्वरथ के अति तृषितनहीं चले ॥ रथहि छोड़के ताते या मारग विषे । चरनन हीते हम तुम अब चलिये सुखे ॥४४॥

शत्रु नाश के काज पयादे होयके । युद्ध कीजिये खड़गहि हाथ संजोयके । कहो पार्थ तब ऐसे सुन माधव अब । कहूं बात मैं तुम सों जो सांची सबै ॥४५॥

॥ दोहा ॥

जब में दाहो खंड बन, महा दिव्य तहँ बान ।
दीनो मोहि प्रसन्न व्है, सुरगन आज्ञा मान ॥ ४६ ॥
ताते अबया छिन विषै, तिसी बान परभाय ।
गंगाजल आनूं यहां, याही संगर ठाय ॥ ४७ ॥
ऐसी कहकर दिब्य सर, हनो धनुष ले बाहु ।
धंसोबान जय भूमि में, निकसो गंग प्रवाहु ॥ ४८ ॥
कल्लोलाकुल अमल जल, जोलहिये बहु नांहि ।
सो अर्जुन ने छिन विषै, आनो भारत मांहि ॥ ४९ ॥

तामें तुरंग न्हवायके, मुदित किये जल प्याय।
तबहि गगन में देव गन, धुन कीनी इहभाय ॥ ५० ॥

॥ अडिल्ल ॥

जिन पताल ते आनो जल धरनी विषै। महा मूढ़ जन तासों लखे को अखे। उठो युद्धको माधव व्है के सारथी। रथहि बैठ धनु सरले धायो पारथी ॥ ५१ ॥

लक्षबान तब छोड़े अरिगन पै महां। रथ पदाति गज वाजी सब छेदी तहां। भये नष्ट भट कौरव बलके सर्व ही। तबहि आय दुर्योधन बोलो गर्व ही ॥ ५२ ॥

भागत हो तुम क्योंरे कायर व्है अती। संजयन्न तब बोलो सुन कौरव पती।

पार्थ विष्णु ने सैन सबै तुम छेदके। दी भगाय छिन मांहि दसों दिशि खेदके ॥ ५३ ॥

बल निरस्त कर दुर्मुख अबहि भगाईयो। द्वितिय भ्रात दुःसासन सो नाहिं आईयो। दयो छोड़ गुरु द्रोण सु गुरु ही जानके। और सुर कृतवर्मा आदिक हानके ॥ ५४ ॥

दक्षिण दिन बहु सुःख हते कुरवे महां। करी ध्वस्त सत आयुध वाननते तहां ॥ वृन्द विन्द नृप दोऊ छेदे भालते। बहुरि पार्थने आनी गंग पतालते ॥५५ ॥

पार्थ और नारायण अतिबल बंडए। कहा जान ए करहैं क्याक्या चंडए॥ क्रुध होय दुर्योधन बोलो गुरु प्रते। करत निंद बहु मुखसों हैं क्षोभित अते ५६ ॥

अहो द्रोण यह काज कहा तुमने ठयो। अरि प्रवेश चक्र व्यूह विषै करने दियो ॥ सकल शत्रुने माने रणके सन्मुखे। हृदय मांहि तुम पक्ष धरत पांडव रूखे ॥ ५७ ॥

धरत बुद्धि तू ऐसी जगमें निंद जो। तब विषाद चित

बोलो गुरु गुन वृन्दसों ॥ भयो विद्ध मैं नरके बाननते सही ।
तास तुल्यता मोपे रंचक है नहीं ॥ ५८ ॥

तरुण पार्थ मैं वृद्ध सु कैसे युद्ध है । तरुण देहते तासों कर रण क्रुद्ध है ॥ नृप दुर्योध यों सुनके चाप चढ़ावतो । चलो युद्ध को उद्यत गर्व बढ़ावतो ॥ ५९ ॥

अब अपार्थ हों करिहौं पारथ को सही । कहत एव बहु हर्षित है धायो तही ॥ इन्द्र पुत्र दुर्योधन जुध करने लगे । बीर वर्ग संग लीने रण शोभा पगे ॥ ६० ॥

नृप दुर्योधन तहँ पारथ सर छेद तो । बहुरि गर्ज हंस बोलो अरि बल भेद तो ॥ अहो पार्थ कहँ खोयो बल गांडीव को । धनुर्वेद बहु सीखो तैं जु सदीव को ॥ ६१ ॥

तबहि विष्णु हंस बोलो भो पारथ बली । श्रान्त होय के तिष्टन को अब क्या चली ॥ आय शीश पै पहुंचो अरि सर मारतो । रहो बैठ तू रणमें आलस धार तो ॥ ६२ ॥

यही बात सुन बोलो अर्जुन हरि प्रते । कठिन काज नहिं कोई मोको तो छते ॥ भयो खेद तन मेरे हनते अरीन को । रहो बैठ थिर ताते थिरता कीन को ॥ ६३ ॥

अबहि देख बल मेरो सब अरि नासहों । कौरव को पुनि जीत लहूं यशरासहों ॥ यही बात कहि हरिसों पारथ सर लये ॥ पनिच खेंच आकर्णहि कौरव के दये ॥ ६४ ॥

लगे बज्र समवान सु पारथ के जबै । भयो भग्न दुर्योधन खेदित है तबै ॥ कौरव की सब सेना भयको धार के । गई भाग निज नाथहि साथ सुहार के ॥ ६५ ॥

हृषी केशने तौलों शंख बजाइयो । पांच जन्य धुनिते नभ भूमि गुंजाइयो ॥ सुन जयार्द्ध तिस नाद सु कोपित अति ठयो । अस्व थाम भय मान सु कम्पित तन भयो ॥ ६६ ॥

सकल सैन कुरु भूपतकी उद्यत खरी। पुन्य जोग इक पारथ ने प्राजित करी॥ बहुरि विष्णुके आगे अरि दल क्या रहे। दारु पुंज जिम दावानल छिनमें दहे॥६७॥

भयो रुद्र रण अतिही जूझत सूरही। रुंड मुंड धरनी धर नाचें भूरही॥ भये पुंज जहँ मृतकनके प्रानो बिना। रुधिर मास मई भूम भई बहु वा दिना॥ ६८॥

लाल भूमि नभ लालहि लाल सु वस्त्रही। लाल लाल बहु सूरनको कर शस्त्र ही॥ लाल अस्व रथ लाल सुभट भी लाल ही। लाल लाल गज कुंभ विदारत भाल ही। ६९।

बहत रक्त की सरिता तामें भट तिरें। डूब डूब गज उछरत मकराकृति धरें॥ तीक्षण मीन सम आयुधकर जो धानके रचो बीर रस हर नर अरि दल हान के॥ ७०॥

तहां जयार्द्ध को देख सु पारथ क्रुद्ध है। मर्म भेद के बैन भने यों रुद्ध है॥ रे जयार्द्ध तें युद्ध विषे अभिमान तें। मो सु पुत्र अभिमन्यु बिदारो बान ते॥ ७१॥

अब दिखाव तू अपनी भट विद्या सबै। जो सु बालके बीच पराक्रम की फबै॥ सकल कौरवन देख सु रन बिकराल में। आज तोहि मैं देखो बहु चिरकाल में॥ ७२॥

शक्ति है जु कछु तो मैं तो या रण बिषे। शस्त्र साजि के ठाड़ो रहु मो सन्मुखे॥ एम बाक्य करि पारथ तोषत सुरन को। बानन ते तसु छेदे धनु धुज हयन को॥ ७३॥

टूक टूक कर भेद्यो अरि सन्नाह भी। बाननते रण मांहि लगायो दाह भी॥ तबहि विष्णु यों बोले हित को धारके। कहो पार्थ बच मेरे उरहि बिचार के॥ ७४॥

अस्त होय नहिं तौलों दिन या गगन ते। सिर जयार्द्ध को छेदहु तौलों सरन ते॥ महा नाग सर बापी जल में जो भयो। सर्प रूप करि सासन देवी ने दयो॥ ७५॥

वहीं बान ले पारथ धनु आरोपि के । शत्रु शीश पै छोड़ो अति ही कोपि के ॥ नाग बान तैं अरि को मस्तक छेदियो । ले अकाश वो ताही छिन में खेदियो । ७६ ।

॥ दोहा ॥

पिता सुता को तापसी, बैठो बन के ठाय ।
ताके कर आंजुलि विषै, परो शीस सो जाय ॥ ७७ ॥
ज्यों सरसी में हंस कर, परत पद्म है छिन्न ।
यों लख सुतके शीश को, परो पिता है खिन्न ॥ ७८ ॥
नृप जयार्द्ध के हतन ते, पांडव सेना मांहि ।
हर्षित है सारे नृपति, जय जयकार करांहि । ७६ ।
कीर्त्ति पार्थ की जगत में, भ्रमत भई जय पाय ।
कौरव सेना के विषै, हा हा कार कराय ॥ ८० ॥
मृत जयार्द्ध को जान के, दुर्योधन दुख लीन ।
रुदन करत निज नैन भर, मुख भाषत निज दीन ।८१।
शून्य सैन कौरवन की, भई सुनो बिन आज ।
अब हम कौरव नृपन को, कौन सुधारत काज ॥ ८२ ॥
अश्वथाम तब यों कहो, सुन दुर्योधन राय ।
पारथ को हनके अबै, कहा करत दुख भाय ॥८३॥

॥ अडिल्ल ॥

यही बात कहि धनुसर धरके धाईयो । पारथ संग रण हेत सुगुरु सुत आइयो । क्रुद्ध होयके युद्ध करो नरसों तहां । अस्वथाम ने मारे नर पै सर महां ॥ ८४ ॥

चाप पार्थ को छेदो पनिच समुद्रही । और चाप करलीनी पारथ क्रुधही ॥ फर फरात मुख दन्ताहि अधर चबायके । चलो शत्रु गन ऊपर मोंह चढ़ायके ॥ ८५ ॥

ज्योंमृगेन्द्र मदमत्त गयंदन पै परे । इन्द्र पुत्र त्यों ताछिन

अरिगन को हरे। छहेबान धनु साध चलाये पारथी॥ अस्व थाम को मार गिरायो स्वारथी॥ ८६॥

अस्वथाम है घायल मूर्छा खायके। परो भूम पर नैनहु ता जल आयके॥ तजो जान गुरु पुत्रहि नर गुनवान है। हते और नृपनाग सु गरुड़ समान है॥ ८७॥

जिन्हे धायकर भारत सरकी चोटही। मरत सूरतते ठौरहि धरनी लोटही। तोर तोर रथ चक्रहि हय पग खंड ही। छेद छेद भट शीश गजन की सुंडही॥ ८८॥

करो सैन चकचूर अरिनकी अरजुना। भयो अस्तरात्रि तोलों मनु रण बर्जना॥ दृहु सैन त्रिचरात परी रण बर्जती। दया देख मनु आई अधको तर्जती॥ ८९॥

गये भूप तब निज निज थानक खिन्न है। दुहूं सैन के सूर सु सोये भिन्न है। अर्जुन को बल बर्णत पांडव सैन में। बध जयार्द्ध को सुमिरत कौरव रैनमें॥९०॥

धरत इर्षा क्रोध दुर्योधन रायही। भनो द्रोण गुरु सेती ऐसी भायही॥ अहो तात तुम सत्य कहो एतो नहीं॥ आज पार्थ को मारग जो देते नहीं॥ ९१॥

श्रेष्टबाज गज सुभटन त्यों क्यों मारतो। पार्थ व्यर्थ है सहज प्रतिज्ञा हारतो॥ तबहि द्रोण यों बोलो क्रोधहि ठान के। अर्जुन ने हों छोड़े द्विज गुरु जानके॥ ९२॥

करहु युद्ध तुम चत्री चत्री सन्मुखे। पार्थ आज तुम छोरो क्यों रण के विषे। नहीं देखो रे तुम निज कृत दोषको। अत दुराग्रही भानी धारत रोषको॥ ९३॥

लखो पुर्व ही नरबल में बहु बारही। धनुर्धार बहु मोसे तासों हारही रुचे चित्त कछु जो तुम कीजे सो अबै॥ नृप दुर्यो धन इम सुन के बोलो तबै॥ ९४॥

मोक्षभयो भो तात सबै अपराधके। गुरु महान महतन करहै आराधते॥ तबहि रातको सैन सहित हम तुम चलें। सोवन ही आरिगन को छलकर दल भलें॥ ९५॥

दोहा

यही मंत्र नृप कर्ण सों, कहो तिन्हें समुदाय।
निर्दय उद्धत रात ही, निकसे कौरव राय॥ ९६॥
कल कलाट करते उठे, तबहि सुभट रण काज।
चले अनीति कौरवा, संग लये गज बाज॥ ९७॥
पांडव दल में सोवने, काग कौरवा जोय।
कांउं कांउं कोनी अधिक, कागन ही की भाय। ९८।
छेदी कौरव नृपति ने, पांडव सेना सोय।
नाना विधि सर छोड़ही, खेंच खेंच धनु जोय। ९९।
कौरव आगे छिनक भी, तिष्ठन को असमर्थ।
भये भूप पांडवन के, इत उत भरमत व्यर्थ॥ १००।

छन्द भुजगनी

दमें बान लागे तबै भीम सेनें। सुभुद्री सुतो के तथा तीनि तीनों॥ घटो कच्छवेध्यो दसे बान तीछन। तथा पंच हीते भयो छीन अर्जुन॥ १॥

छहे तीस खंडी छहे बिद्ध देहा। लगे धृष्ट धुम्ने सरासन्न एहा॥ भये रुद्रथ के सो तथा पंच बाना। तबै युद्ध काजे युधिष्ठिर उठाना॥ २॥

सरो छेदि डारो सु दुर्योधिताही। परो भूम मांही सु मूर्छा लहाही॥ तबै साम ही को चलो द्रोण धाई। धंसो पांडवी सैन मांही महाई॥ ३॥

मनो व्योम माही उठो सूर एही। घने सूर कीने सरोतम

देही ॥ भयो भोर तौलों उदय सूर पायो । तबै द्रोण ने भूर अरगन हटायो ॥ ४ ॥

परो पारथी की तबै दृष्टि मांही । महा ब्रह्म बाने लगो बाध ताही ॥ गुरू मान पूजो तजो सो ततच्छण । महा शस्त्र बेधी सु अर्जुन बिचच्छण ॥ ५ ॥

तजो युद्ध द्रोणां कृपावन्त ह्वै के । छिना एक बैठे छिमा चित्त ले के ॥ तबै सारथी यों कही पारथी त्यों । जहां कर्ण दुर्योध वाही रथी त्यों ॥ ६ ॥

अबै अस्वथामा जहां युद्ध माही । रथे ले धकाहो हमारो तहां ही ॥ तबै राय दुर्योध भय भीत ह्वै के । कहो कर्ण सों यो रथे हाथ ले के ॥ ७ ॥

अहो कर्ण भ्राता सुनो हो विख्याता । चढ़ो युद्ध को एह अर्जुन बिधाता ॥ सबै बल हमारो भयो नष्ट याते । रथे आपनो थाम राखो सु ताते ॥ ८ ॥

तबै भानु नंदन भनै मै निकंदन । करो तुम बिषादे हृदय माहि रंचन ॥ हनो आज अर्जुन पठो और अरिगन । यहै है प्रतिज्ञा अबै भ्रात मोमन ॥ ९ ॥

तबै कर्ण अर्जुन लगे युद्ध कोए । धरें चित्त मांही महा क्रुद्ध कोए ॥ उठे युद्धको सर्व कौरव अनेके । रहो रोक राजा युधिष्ठिर सुएके ॥ १० ॥

तहां जंग योधा सु खेंचे सरासन । गगन मांहि छाये महा तीर तीच्छन ॥ वधिर ह्वै गई दिग् दशों तास रनमें । भयो अन्धकारा सु सूझे न दिन में ॥ ११ ॥

करो कर्णको भग्न स्यन्दन सरोते । मनो वज्र छूटें सु अर्जुन करोंते ॥ चले पारथी के महा सप्त बाना । पलक में करण को पनिच चाप हाना । १२ ।

रथे बैठ द्रोणा सरासन संभारो । बली धृष्ट द्युम्नो सुता ने हंकारो । भने द्रोणारे धृष्ट द्युम्ना सुकाजे । करों मृत्यु तेरी सही सत्त आजे । १३ ।

तबै धृष्ट ने द्रोण के बान भेदे । गुरू केसरा आवते सर्व छेदे । तबै द्रोण ने बान मारे महाई । करो धृष्ट को छिन्न स्यंदन धुजाई ॥ १४ ॥

तबै द्रोण कीनी महा घोर मारा । हते और क्षत्री सु बीसे हजारा । हते मस्त हस्ती महा बान जोई । तिनों की जु संख्या कहे कौन लोई ॥ १५ ॥

जिसी ओर द्रोणा धंसे युद्ध मांही । भटासों तहींके धरें धीर नाहीं । दहे दारु पंजे महा जो हुतासी । इके छोहनी सैन त्यों द्रोण नासी । १६ ।

दोहा

सुर बानी तब गगन की, भई द्रोणा प्रति एम ।
अघ करके सज्जन संगे, करत बिरोध सु केम ॥ १७ ॥
आत्र स्वच्छता धार के, लेहु ब्रह्म पद भव्य ।
हिंसा में क्या लेहुंगे, तो हिय है कर्तव्य ॥ १८ ॥
तबै भीम यों आय के, कहो बिप्ररे द्रोण ।
कहा पाप इतनो करत, यह दुर्गति को भौन ॥ १९ ॥
राज छीन पांडवन ते, देकर कौरव एव ।
चाहत तू जो सुखी भयो, कहा भली यह देव । २० ।
यों सुन बोले द्रोण गुरु, अपने जीवत आज ।
करी प्रतिज्ञा निज चिते, कौरव दूं सब राज ।२१।

छन्द भुजंगी

महा सूर तीलों धरे क्रुद्धही को । गुरू धृष्ट द्युम्ना लगे युद्धही को । लरे एकसे एक योधा ये दोऊ । इन्हींमें कहीं हार माने न कोऊ ॥ २२ ॥

तहां अस्व थामा घटूका हंकारो । महा बानते घात भूं मांहि डारो ॥ मरो भीमनंदन सुनो पांडु पूता । लगे रोवने को महा दुःख जूता ॥ २३ ॥

तबै विष्णु बोलो सुनो पांडु पुत्रा । यहां शोक अवसर नहीं भो पवित्रा ॥ मरे युद्ध मांही महा सूर सोई । करे शोक ताको न क्षत्री न कोई ॥ २४ ॥

ठये पांडवा सोचवन्तासु तौलों । उठे युद्धको कौरवा भूप जौलों ॥ तबै भीम ने अस्वथामा हंकारो । कहो रे गुरुपुत्र हैतू हमारो ॥ २५ ॥

तजो जीव तो आज मैं तोहि ताते । यही भाषके ताहि मारी गदा ते ॥ परो अस्वथामा सुमूर्च्छाध्व है सो । करी अस्व थामा जरासिंधु कैसों ॥ २६ ॥

तिसे पांडवोमार भूंमांहि डारो । करो शोर ए अश्वथामा विदारो ॥ मरो अश्वथामा मरो अश्वथामा । भने सैन सारी यही एक नामा ॥ २७ ॥

तबै धर्म राजा प्रते सर्व सेना । करे जोर नत्वा कहे एक बैना ॥ सुनो देव दे चित्त एकेम ताये । हतो अस्वथामा करी को हताये ॥ २८ ॥

हनी द्रोण ने आज सेना तुम्हारी । करी जर्जरी भूत बानो संघारी ॥ घटा बायु ते बज्र ते ज्यों पहारी । उड़े सूर ऐसे महा शस्त्र धारी ॥ २९ ॥

नहीं कोइ ऐसो बली जो हमारो । धनुर्वेद धारी जु याको निवारो ॥ यहै एकही है जु याको उपाया । कृपा धार ताको करो धर्म राया ॥ ३० ॥

हतो अस्व थामा सुदन्ती हमो हे । कहो जो अबै अस्व अस्वथामा हतो है ॥ केहते जु ऐसे नसो द्रोण ऐहे । तजे युद्ध को जाय बैठे सु गेहे ॥ ३१ ॥

तबै धर्म राजा कही बात ऐसे। महा पाप दायी कहूं कूट कैसे ॥ तिन्हे है हटी मांहि क्योंहूं सु क्योंहूं। तबै राज काजे मनायो सु त्योंहूं ॥ ३२ ॥

तबै धर्म नंदन बरन सों कही यों। रणे अस्वथामा हतो ए सही त्यों ॥ परी द्रोण काने यही बात लरते। डिगी चाप मूंडी गिरे बान करते ॥ ३३ ॥

जबै दुःख व्यापो हृदय मांहि घोरे। लगो रोवने द्रोण ही जोरे जोरे। तबै फेर ऐसे कही धर्म पूता। हतो कुंजरोनो नरो द्रोन सूता ॥ ३४ ॥

सुने बैन ऐसे तबै धीर आयो। भयो स्वस्थ है शोकते कम्प कायो ॥ गहे हाथ द्रोणा धनुर्बान जौलों। सु धृष्टी सु खंगे लुनों शीश तौलों ॥ ३५ ॥

दोहा

धृष्टार्जुन के हाथ ते, मरो द्रोण को जान।
कौरव पांडव रोवने, लागे शोक उर आन ॥ ३६ ॥
ताछिन बैठे युद्ध तज, सुमिरत गुरु गुन एव।
गई छत्र छाया अहो, तो बिन आजहि देव ॥ ३७ ॥
हम अकीर्त जुग अन्त लों, भई महा दुखदाय।
दुर्योधन संगत करे, फल पायो इह भाय ॥ ३८ ॥
तबहि पार्थ अति क्रुद्ध है, धर्मज प्रति भन एव।
नहिं धृष्टार्जुन भृत्यु तुम, नहीं स्वलक हम देव ॥३९॥
इन क्यों मारो सर्व गुरु, द्रोणा चारज इष्ट।
तातें हम यह शत्रु है, धृष्ट द्युम्न अति दुष्ट ॥ ४० ॥
धृष्टार्जुन तब यों कहो, दोष नहीं तुम रंच।
युद्ध करत योधा मुवे, जूझत सन्मुख संच ॥ ४१ ॥
यों सुन के नर शान्त है, अन्तर भयो विषाद।
तौलों सेना कौरवी, उठी युद्ध को साद ॥ ४२ ॥

भुजंगी छन्द ॥

नभे आयते सोरतें सूर धाये । पगे ध्वंसते भूपको भूरि आये ॥ करी जो प्रतिज्ञा महा धर्म राई । बिराटेहि आगे वही याद आई ॥ ४३ ॥

लुनों बानते सल्यको सीस ठीके । कहो आपनोंही करो एवनीके ॥ धनुर्वान तौलों धनंजय संभारो । सुराके हजारां हि राजा संघारे ॥ ४४ ॥

लरे सूर ऐसे सुराते दिनाहीं । । परे नींदतें घुमके भूप मांही । फिरं ते लुढ़ ठोंकरों लाग ऐसे । शिला पर्वतों की प्रलय मांहि जैसे ॥ ४५ ॥

भयो युद्ध यों शत्रु है घोसताई । दुहू ओरते हैं महा भीत दाई । अठारे दिना प्रातही सैन दोऊ । लगे घोर संग्राम को सूर लोऊ ॥ ४६ ॥

चमूचार चौरंग सारी मिलाई । रचो मक्र आकार व्यूहे महाई ॥ गजा मत्त गाजें मनो मेघ गर्जें । हया हिन हिनावें अरी को सु तर्जें ॥ ४७ ॥

भटेंके सु हाथे महा खड्ग चमकें । मनो दामिनी आय भू मांहि दमकें । कुरुखेत हों कार है कार ठाये । चढ़े युद्ध को कौरवा पांडवाए ॥ ४८ ॥

लगे युद्धको आयुधा हाथ ले ले । लरे सामही शत्रु के सीस देदे । करें घात योधा दुहूं के परस्पर । कटें सीस धरसे सों नाचें धरा पर ॥ ४९ ॥

घने वाहना शस्त्रभी ने महाए । भरे रक्तसों कौरवा सागराए ॥ तहां भीमसेना रथे पोत बैठो । बली शत्रुहन्ता गदा ले सु पैठो ॥ ५० ॥

युधिष्ठिर तनी जीत लेने चलो सो । अरी नकचक्रे महाई हलो सो ॥ जहां भीम जाई तहांके भटाए । फटें बायुते ज्यों सरद की घटाए ॥ ५१ ॥

जिसी सेन मांही परे भीम जाई । हटे देखके जों फटे नीर काई । जिसे धाय मारे भुजाते गदा की । लहे युद्धकी नेम सोई सदाकी ॥ ५२ ॥

जिन्हों पै फिरावे गदा हाथ ले ले । मुखे आंगुरी दे करे सो जु है है ॥ जिन्हें भीम देखे तिन्हे कम्प आवे । जिन्हे भीम मारे तिन्हें को जिवावे ॥ ५३ ॥

तबै कर्ण अर्जुन लगे युद्ध को ए । धनुर्बान लीन्हें धरे क्रुद्ध को ए ॥ सरे पार्थ ने कर्ण को चाप छेदो । तबै कर्ण ने शत्रु को छत्र बेधो ॥ ५४ ॥

हते फेर स्यंदन तुरंगम परस्पर । दुहू के करों ते चले तेज ही सर ॥ तबै कर्ण छोड़े महा लच्छबाना । तिन्हें पार्थ के हाथ को चाप हाना ॥ ५५ ॥

तबै पारथी और को दंड ले के । कहो कर्ण सों यों महा चंड ह्वै के ॥ सो मो भ्रात तू कर्ण नामा विख्याता । पिता गेह में जो जनो कुन्ति माता ॥ ५६ ॥

अबै मो भुजा ते सहो घोर घाता । अहो तिष्ठ तिष्ठो रणे कर्ण भ्राता ॥ घनी बार छोड़ों तुझे युद्ध मांहीं । अबै ठौर मारूं तजूं तोहि नाहीं ॥ ५७ ॥

अहो सज्ज ह्वै सामही आज आवो । रणे त्यागवा आपने गेह जावो ॥ भनो यो सुने ते सु कर्णे महा ए । अरे मूढ़ अर्जुन कहो ते कहा ए ॥ ५८ ॥

कहां तोरे आगे भजो हों डरे के । रणे ध्वस्त कीने नृपा मैं अनेके ॥ सुल्यावो प्रहारा जुदे आद हीतू । कहे के मृदु बैन रे बाद हीतू ॥ ५९ ॥

इसी अन्तरे ही भने विष्णु बैना । अहो कर्ण तो पुत्र जो विश्व सेना ॥ मरो जूझ के युद्ध मांही अबै सो । सुनो यौं जबै कर्ण सोचो तबै सो ॥ ६० ॥

कहो जोर हाकार छाती जरे ते । भयो चित्त दुःखितहि चिन्ता करेते ॥ अहो भ्रात भ्राते हते राज काजा । करे यौं बिचारे चिते कर्ण राजा ॥ ६१ ॥

तबै राज दुर्योध बोलो सु यों ही । अहो कर्ण अवसर नहीं शोक को ही ॥ अबै पार्थ को कर्ण बानो हनी जे । हते जास के राज को ए करी जे ॥ ६२ ॥

कछु शोक चिते मरे को न कीजे । अरी सौं रणे मांड के वैर लीजे ॥ सुने बैन ऐसे तबै युद्ध को ए । लगे कर्ण अर्जुन धेरे क्रुद्ध को ए ॥ ६३ ॥

तजें ते निरन्तर महा बान तीक्ष्ण । अबै विष्णु बोलो सुनो भूप अर्जुन ॥ हतो सायको तें सबै शत्रु थाना । तबै क्रुद्ध अर्जुन तजे और बाना ॥ ६४ ॥

तबै कर्ण ही के धनुर्वान छेदे । तथा कर्ण ने पार्थ के भी सु भेदे ॥ तबै पार्थ लीनो महा दिव्य अस्त्रा । कहे विष्ट बैना सुनो भो सु शस्त्रा ॥ ६५ ॥

धनुर्वान तुम हो महा दिव्य देहा । तुम्हें सत्य है जो करो काज एहा ॥ जू तो मैं सही सो चहों वंश रच्चा । जुतो धर्म पूता धरे धर्म पच्चा ॥ ६६ ॥

हतो शत्रुको तुम तदा तीक्ष्ण ह्वै के । यही भाष के सो तजो बान ले के ॥ करो कर्ण को शीस तासों तदाई । परो भूमि ह्वै के कबंधे जुदाई ॥ ६७ ॥

मरो जूझ के कर्ण राजा जबै ही । लगे रोवने भूप सारे तबै ही ॥ परो आज ही चंड मार्तंड आई । गिरो है नभै टूट के भूमि ठाई । ६८ ।

॥ दोहा ॥

तो बिन पारथ सनमुखे, लरो कौन रण मांहि ।
तो बिन अरि के हनन को, समरथ कोऊ नांहि ॥६९॥
हा रवि नन्दन हा वली, हा अवनी पति कर्ण ।
कहां गये तुम तज हमें, हा तुम सब की शर्ण । ७० ।
जौलों इह विधि रोवही, कुरु सेना तिह ठाम ।
तौलों भीम महा बली, कियो घोर संग्राम ॥ ७१ ॥

छंदभुजंगी

लये शस्त्र हाथे तबै युद्ध ठाये । सु दुःसासना आदि सौ भ्रात आये ॥ परे भीम की दृष्टि में दुष्ट सारे । तबै एक ऊंमा सौऊ भ्रात मारे । ७२ ।

सु दे दे गदा के करे चूर चूरा । भये जायके सो सबै यम हजूरा ॥ यथा वृक्ष सूखे महा दाव जारे । तथा कौरवाते करे भीम छारे ॥ ७३ ॥

तबै क्रुद्ध ह्वै भूप बोले सु ऐसे । मृगों को हते धायके सिंह जैसे ॥ हने भीम सैना महा क्रुद्ध तासों ॥ हने कौरवोंको महा मृत्यु तासों ॥ ७४ ॥

तबै आयके कोई दुर्योधना सो । कही बांधवों की महा मृत्यु तासों ॥ अहोराय दुर्योधनो भ्रात सारे । किया त्याग के भीम ने ते विदारे ॥ ७५ ॥

सुनेते यही बात दुर्योधनाई । मनो शीस मांही लगो वज्र आई ॥ भयो खिन्न चेता सु भै भीति जोरे । हृदय मांहि व्यापो महा दुःख घोरे ॥ ७६ ॥

परे भ्रात जाहां गयो सो तहांही । तबै सारथी भूप सों यों कहाही । अहोराय देखो परे भ्रात तेरे । हते भीमने जो सियारो सु घेरे ॥ ७७ ॥

लखे भूपने भ्रात शस्त्रों सु छेदे। पिशाच महा भूत को त्रासतेदे। तबै भूप सों सारथी यों कहीये। यहां युद्ध को अब अवसर नहीं है ॥ ॥ ७८ ॥

रनैं त्याग ताते चलो गृहताई। कहो मानलीजो सु दुर्योध राई ॥ भयो सो सुने ते महा क्रुद्ध राजा। रथै थाम के सारथी फेर गाजा ॥ ७६ ॥

सुनो राय दुर्योध मेरे सु बैना। सु अद्यापि ऐही हटे तू तजेना। अरध राज तैं पांडवों को नदीनो। रणों मांड सौ भ्रात को नाश कीनो ॥ ८० ॥

गजावाज सूरा अनेके जुहाने। इन्हों को प्रमाने नही कोई जाने ॥ सुबुद्धी हि अद्यापि भोनाथ धारो। उपद्रे नह्वे जो विरुद्धे निवारो ॥ ८१ ॥

॥ दोहा ॥

तब बोलो दुर्योधना, रे सारथ रे मूढ़।
मो आगे तू कहत क्या, कायर बचन अरूढ़ ॥ ८२ ॥
हत के सब पांडवन को, मरिहूं मैं तब ठीक।
और भांति में नाहि मरूं, यही बात तहकीक ॥ ८३॥
ऐसे कह कौरव पती, चले युद्ध को धाय।
पांडव सैना सन्मुखे, क्रोध प्रचंड बढ़ाय ॥ ८४ ॥

॥ छन्द भुजङ्ग नि ॥

दुहूं सेन धाई अहंकार धारे। लये खड्ग हाथे परस्पर हंकारे ॥ कहे कोई ऐसे अरे ल्याव ल्यावो। लगे बान सों बान आकाश छावो ॥ ८५ ॥

कहे मार मारो अहो छेद छेदो। इसे चीर चीरो उसे भेद भेदो ॥ कहे कोई ऐसे अरे देह देहो। नहीं जान पावे इसे मारलेहो ॥ ८६ ॥

कहीं तोर तोरे कहीं फोर फोरे। कहीं जोर जोरे कहीं घोर घोरे ॥ झड़ा झड़ तड़ा तड़ भड़ा भड़ कहींहो। धमा धम गदा गद कड़ा कड़ कहीं हो ॥ ८७ ॥

बजें सार सारे सजें सूर सूरे। जुई होय कायर भगें सोई दूरे। धनुर्बान आरोप केई चलावें । लये हाथ शक्ती सु केई फिरावें ॥ ८८ ॥

महायुद्ध लरने सु दुर्योधआयो। तिसे देखके सामही भीम धायो ॥ बली जोरहे कर्णके तीन पूता। रणे मांहि तेऊ नकुल संग जूता ॥ ८९ ॥

नकुल से बली खड्ग लीनेही दौरे। तिन्हों के भटा अष्ट मारे सुठौरे ॥ तिन्हों सों नकुल जोरही युद्ध ठाना। तबै भीम को चाप दुर्योध हाना ॥ ९० ॥

तबै भीम ने शक्ति लेकर चलाई। लगी जाय दुर्योध के वक्ष ठाई। गिरो मूर्च्छ ह्वै कै जबैही उठाना। चलो एजबै भीम पै जोर वाना ॥ ९१ ॥

जले भी थले भी अकाशेही छायो। सबै ठौर दुर्योध के बान छायो ॥ लगे भीम की देह माहीं जबैही। गयो भीमको टूट बख्तर तबैही ॥ ९२ ॥

तब भीम सना महा क्रोध धारा। गदा ले हते सुर बीसे हजारा। सु आठे हजारा रथोचर कीने। गजाभी हयाभी घने मारलीने ॥ ९३ ॥ ॥

जहांही जहांही बली भीम जाई। रहे नाहिं कोई तहांहीं तहांही ॥ भये भीमते भूप भय भीत सारे। रहे युद्ध को सामहीते विदारे ॥ ९४ ॥

जिसेही जिसेही लखे भीम धीरा। मरे सोई सोई महा पाय पीरा ॥ मृगों के गनों को हते जों मृगारी। सुत्यों भीमनें शत्रु सेना विदारी ॥ ९५ ॥

गई भाग दुर्योध की सर्व सेना। जिते भीम होई तिते को रहेना ॥ रह्यो एकलो राय दुर्योधरूता ॥ पहुचों तहां आय के धर्म थूता ॥ ९६ ॥

॥ दोहा ॥

रण उद्यत दुर्योधसों, कहो युधिष्ठरराय ।
सुख सो एहि अद्यापितू, मो सेवक है भाय ॥ ९७ ॥
आज्ञा मेरी मान के, लेहु महा गज वाज ।
सिंहासन आरूढ़है, छत्र सहित करराज ॥ ९८ ॥
अब भी मोसो मित्रता, भजो दुष्टता डार ।
यों सुन के धृतराष्ट सुत, बोलो गर्व हि धार ॥ ९९ ॥
भयो जन्मते वेर यह, अति ही हम तुम मांहि ।
निश्चय ते हे धर्म सुत, सोअब मिटहै नांहि ॥ १०० ॥
रण मे सब पांडवन को, हतिहों मैं ही एक ।
सकल राज भूगतूं सही, यह मेर मन टेंक ॥ १ ॥
बांट न देहूं राज में, पांडव भोगन काज ।
रह्यो दूर ए बात अब, आवहु युद्ध हि साज ॥ २ ॥

छंद भुजंगनि

यही भाष दुर्योध हो क्रुद्ध धारी। दई भूप केखड्गकी चोट भारी तवै धर्म नन्दन गहे खड्ग जौलों। इसी अन्तरे आइयो भीम तौ लों समस्ते अरी सैन के ध्वंस्त ताई। भयो भीषनाकार भोंहे चढ़ाई सवेही कुरोकी चमोको हंकारे। अरे तिष्ठ तिष्ठो सुऐसे पुकारे। ४। तवे भीम सेना गदाले फिराई। किधों दामिनी की छटा हाथ आई किधोंनागकन्याकिधोंजीभजमकी। किधों देवहिंसागदाहोयदमकी छुटी भीमके हाथसे सो गदाई। परी राय दुर्योध माथे तदाई। गिरो भूमपे है तवे कंठ प्राना। भयो शक्ति हीना सुदुर्योध राना ६

तबै राय दुर्योध बोलो निसंके। बली कोइ है कौरवी सैन अंके।
हते पांडवोंको अबै जीव तामें। तबै कोइ बोलो कि अस्व थामें ७
सुने अस्वथामा हते कौरवाए। जरासिंधु सों जाय ऐसे कहाए।
अहो अर्द्धचक्री सुनोएह बाता। परो जूझ दुर्योध राजा विख्याता
सहस्रा दशों और भूपा महाई। मरे जूझ तासंग तेरे सहाई।
सुनीएतबै सोच व्यापोअधीसा। भयोव्याकुलाचित्तसाचक्कईसा ६
सुसेनापती संगही अस्वथामा। दुहूं को दयो एह आदेशनामा।
अबै पांडवा सों करो युद्ध जोरे। हतो सर्व शत्रून को आज ठौरे१०
तबै अस्वथामागयो सो तहाहीं। परो जो जोरहोय दुर्युधजहाहीं।
कहोरोवतेयोंकहो ताततोता। भयो तोबिना देशसूनोविख्याता११
हमें तो प्रसादे घणा राज भोगा। कहो सो अबैही करूं नाथजोगा
सुतौलों जरासिन्धु ने चर्म पट्ट। मधू भूपके शीस बांधो सुपट्ट १२
दई साथ ताके चमू चातुरंगा। पठायो तबैही यहू ताके संगा।
तबै फेर दुर्योध सेती कहीयों। सुनो कृष्णासीसे अबैही सहीयों१३
यही भाषके सोचलोयुद्ध काजा। तबै यों भनो ताहि दुर्योध राजा
अबै तो सिरैमें महा पट्ट बंधा। हतो जाय संग्राममें शत्रु खंधा१४

दोहा

अस्व थाम निज सैन तें, पांडव दलको जाय।
चर लयो चहुँओरते, अरिगन को भयदाय ॥१५॥
सु. । विद्या ईसुरी, द्रोण पुत्र तिहि ठौर।
चंद्रभाल तिरसूल ले, ़ढ़ौ शत्रुपै दौर ॥ १६ ॥
तिस विद्या माहात्ममें, एक छिनकमें सर्व।
चमू विष्णु पांडवनकी, भाग गई तज गर्व ॥ १७ ॥
चिरलों चूरण करि चमू, अस्व थामने आप।
गज रथ हय नृप बहु दले, विद्या के परताप ॥ १८ ॥
तहां भूप पंचालको, सिर छेदो तहँ धाय।

सो दिखयो दुर्योधना, रणमें जीतहि पाय ॥ १९ ॥
सिरको लख कौरव भने, इसी भूमिमें कोय।
ऐसो है जुसमर्थ नर, हते पांडवो जोय ॥ २० ॥
जिनहो छिनमें नर मुग, कीने सकल निरस्त ।
द्रोण करणते अति बली, करे युद्धमें ध्वस्त ॥२१॥
एक भीमने हां हतो, और हते जे भूरि ।
कोन कहे तिनकी कथा, कीने बहु चकचूर ॥ २२ ॥
रहे जीवते पांडवा, जा पांचो भू माहिं ।
हतो भूप पंचालको, कछु सिद्ध है नाहिं ।

॥ सोरठा ॥

पांडव दुखको पाय, सुनके मृत्यु पंचाल की ।
रुदन करत अधिकाय, तबहरि ऐसे बोलियो ॥२४॥
शोक नहीं करतव्य, छत्रिन को रणमें मरे ।
यह योंही भवतव्य, योंनिज हिरदे धारिये ॥ २५ ॥
जोहम जीये आज, अहा पांडवा सत्यसों ।
करहों पुरन राज, हतके सब वैरीन को ॥ २६ ॥

॥ दोहा ॥

पांडव अरु बलभद्र को, संगलिये हरि ईश ।
गुरु सुत अरु सनानको, छेदो तुरत हि शीश ॥ २७॥

॥ अडिल्ल ॥

जरा सिन्धु तब क्रोधित ह्वै के धाईयो । प्रलय कालको सागर मानो आईयो ॥ असुर देव तब बोलो विष्णु नरेश को । मत विलम्ब कर केशव हत मगदेश को ॥ २८ ॥

होन हार तुम उदय महा सु अनूप ए । तबहि विष्णु ने सबहि बुलाये भूपये ॥ जरासिंधु यदु दल को लखके सामही सोम दूत प्रति पूछो यों तिह ठान ही ॥ २९ ॥

सकल भूपजो ठाड़े रणको ठानके । कही चिन्ह अरु नाम तिन्हों के जान के ॥ भनो दूत सुन राय समुद्र बिजै यही । स्वर्ण वर्ण यह जाके हरि ध्वज राजही ॥ ३० ॥

अनूज नेम को हय रथ नेम बिराज ए । हरित बर्ण यह रथ के बृष ध्वज साजए । सकल सैनके आगे यह कमला पती । ताके केतु यह सेतु विराजत है अती ॥ ३१ ॥

लाल केतु अरु नील वर्ण के अस्वही । यही राम गुण धाम सु परघट विश्वही ॥ अश्व नीलही जाके रथहि प्रमा निये ॥ पांडू पुत्र ए राय युधिष्टर जानिये ॥ ३२ ॥

रथविचित्रमें बैठो सकल अनी तहां । यही भीम भू भूषण भारत भी तहां । यही शक्र सुत सेत तुंरगम कपि ध्वजा । उग्र सेन को तुंड बरन हयरथ सजा ॥ ३३ ॥

जरापुत्र यह राजत स्वर्ण तुंगही । महा सूर मृगकेतु विराजत संगही ॥ कपिल रक्त हयरथ के चलत अनूप ही । सिशुमार ध्वज धारे मेरु सु भूप ही ॥ ३४ ॥

लगे बाजिका बाजी जाके स्यंदना । सूक्षम राम नृप सोई हरि ध्वज लक्षना ॥ पद्म वर्ण बर बाजी रथके जा धरे । भूप पद्म रथ सोई सूरन में सिरे ॥ ३५ ॥

स्याम अस्व गज केतु चमू पति जानिये । अनावृष्टि यहनामी जगत बखानिये ॥ भयो क्रुद्ध यों सुनके चक्री जोरही । कहो विष्णु सों चिरलों रण घन घोरही ॥ ३६ ॥

तजे बानते दोऊ हरि अरु प्रति हरी । भू अकाश टंकोर पनिच की अनुसरी ॥ साध साध्र सर मुंचत दोऊ राजही । मनो सिंह जुग बनमें रण को साजही ॥ ३७ ॥

वान्हिवान ते अरिबल हरिने जारियो । बारि बानते चक्री तबहि निवारियो ॥ नागपांस पुनि छोड़ी चक्री तुरत ही । ताक्ष्यबान ते हरने छेदी परत ही ॥ ३८ ॥

जरासिन्धु तब विद्या ए प्रकटी घनी। बहुत रूप निरख-भ्रमन चक्रनि सूलनी ॥ विविध रूपकर मोही अरि की सैन ही। रहे होय के चकित नरसुर नैनही ॥ ३९ ॥

महा मंत्र कर हरिने नाशी ते सबै। भयो चक्रि पति खेदित चित अतिही तबै ॥ गई देख बहु रूपनिको मगधेशही। करो आदि चित चक्र किधों दिन ए सही ॥ ४० ॥

छिनक मांहि सो आई पहूंचो कर विषै। चक्रि चर्च के छोड़ो हर के सन्मुखे ॥ करत त्रस्त जदुबल को गगनहि धाइयो। मनु प्रचंड मार्तंड प्रलयको आइयो ॥ ४१ ॥

भये नष्ट तिहि ठौर सबै नर नाथही। रहो कृष्ण थिर हल धर पांडव साथही ॥ दे परीक्रमा तीन सु हरि दक्षिण करे। ठयो चक्र थिर होय महा द्युति को धरे ॥ ४२ ॥

तबहि यादवी सैन विषै जय रवि कहो। मधुर बैन मघधेश प्रते माधव कहो ॥ नमस्कार कर मेरे पद जुगको अहो। भृत्य होयके अब भी नृप पदको लहो ॥ ४३ ॥

जरासिन्धु यों सुनके बोलो क्रुद्धही। अरे गोप तू भाषत बचन विरुद्धही ॥ है महीश मैं ग्वालहि क्यों करके नमूं। तीन खंड के भूपन की प्रभुता धमूं ॥ ४४ ॥

चक्रि गर्वकर गर्वित मत है तू वृथा। कुम्भकारभी चक्रहि धारत है यथा ॥ जाहि जाहि रे तू अब मो तटते भले। मो भुजान ते मरहों मत दुखको गले ॥ ४५ ॥

सदा भृत्य मो भूप समुद्र विजै यहे। तो पिता सु बसुदेव सु मो आगे रहे ॥ गोप पुत्र तू गोपहि मरि है आजही। कहत ढीठ वच मो सों तोहि न लाजही ॥ ४६ ॥

दोहा।

जरासिन्धु के बचन इम, सुनकर अतिहि कठोर।
चक्र चलायो कृष्ण ने, मनु यम बदनहिं घोर ॥ ४७ ॥

प्रति हरको सर छेदके, पुनि आयो हरि तीर।
तीन खंड प्रभुता लिये, शोभित यदुपति धीर ॥ ४८॥

अडिल्ल।

कुसुम वृष्टि सुर करत गगनते यों कही। तुम त्रिखंडपति नवमें उपजे हो सही ॥ पूर्वे पुन्यते पालो पृथ्वी राज ही। एक पुन्यते सब सुख सहजे साजही ॥ ४९॥

युद्ध भूमिका सोधत तबही हर चलो। जरासिंधु को देखो शस्त्रन ते दलो ॥ पांडु पुत्र तिस देख विषादित चित भयो। परो राय दुर्योधन ससकत तहँ गयो ॥ ५०॥

धर्म पुत्र ने भाषो यों दुरयोध को। भजो धर्म करुणामय तजके क्रोध को ॥ सुखी होय तुम जाते भव भव के विषे। तब निर्लज है क्रुद्ध दुर्योधन यों अखे ॥ ५१॥

जुतो जीवतो मैं निश्चयते आजही। सुतो मार तो तुमको ले तो राजही ॥ वचन द्वेष मय ऐसे सुनत प्रमानियो। तिन्ही ठीक सो ताहि अधर्मी जानियो ॥ ५२॥

अधिक धर्म कर हीन दुर्योधन ससकतो। गयो दुर्ग ते मरके दुर लेस्या सतो ॥ बहुरि द्रोण अरु कर्ण परे लख के तहां। लगे रोवने पांडव शोकित है महां ॥ ५३॥

विष्णु और बल आदिक शोकित है सबै। अगर चन्द नहिं तिनको दहन करो तबै ॥ इसी अन्तरे प्रति हरके मंत्री महां। जरासिन्धु के सुतको ले आये तहां ॥ ५४॥

नाम तास को कहिये है सहदेवही। कृष्ण अंक में डारो ताको एवही ॥ माधव ने पुनि ताहि बहुत आश्वासए। मगध देश को राज दियो कर दास ए ॥ ५५॥

दोहा

महतन के चित को यहै, जौं लग रिपु के मान।
मान गये अपमान तिस, करत न जैनी जान ॥ ५६॥

तीन खंड भरताधिपति, हैं है हलधर साथ ।
आनंद दुंदुभि बाजते, गये द्वारका नाथ ॥ ५७ ॥
पांडव पांचो जीत के, गये नागपुर मद्ध ।
धरम करम करते सदा, लहत शर्म की सिद्ध । ५८ ।

पद्धड़ी छन्द

जिन धर्म प्रतापहि धरम पूत। अरि चक्र बिदारे बल संजूत।
पुन सक्र तुल्य सु बिभूति पाय। शुभ राज करत गजपुर सुठाय।५९।
रिपु भीत हरन बर भीमसेन। रण भूमि मांहि जय पाइ जेन॥
दुर्योध आदि सब शत्रु नाश। प्रगटे सु तेज जस जग प्रकाश।६०।
पृथु पार्थ सार्थ साधित सु अर्थ। कीने सु व्यर्थ जिन अरि अनर्थ।
गुन गावत जिस जग बिबुध बृंद। सुगते सु भोग नित सुख अनंद
मद्री सु पुत्र जुग अति पवित्र। शुभ राज करत जुग एक छत्र॥
सु कुलीन नकुल अरि नकुल कीन। सहदेव एव जिन सेव लीन ६२
इह भांत पंच ए पांडु पूत। इम धर्म जोग सम जग संजूत।
कीन्यो सु राज तहँ सुचिर काल। जैनी सु जान इम धर्म पाल ६३।

इति श्री मन्महाशीलाभरण भूषित जैनी नामांकितायां लाला बुलाकीदास बिरचितायां भारत भाषायां जरासिन्धु बध वर्णनोनाम एकःविंशत् प्रभावः

अथ द्रोपदी हरण कृष्ण पांडव

द्वीप गमन द्रोपदी प्राप्ति वर्णन्

मङ्गलाचरण मल्ल नाथजी की स्तुति । सवैया तेइसा

मल्ल जिनेश्वर मल्ल महा जिन मल्ल हतो मदनेश महाई ।
मोह महा रिपु को हत के बर केवल की लच्छमी प्रगटाई ॥
जाके बिलोकित शोक नसे सु त्रिलोकि बिषै सबको सुखदाई ।
जैनुल बाल त्रिकाल नमें सुविशाल सदा निज भाल निवाई ॥१॥

चौपाई

एक समै अब गजपुर ठाय। विष्ठर ठये युधिष्ठिर राय॥
भीमादिक भ्राता कर पूज। जासम और नहीं नृप दूज ॥२॥
लसे इन्द्र सम नृप तिन बीच। चंवर ढरे मनु चंद्र मरीच॥
छत्र छबे छबि रविकी छीन। कीनी मुखते ससि दुति दीन ॥३॥
कबहूं नारद आये तहां। पांडव सभा बिराजे जहां॥
पांडु सुतो अति आदर कियो। उठ ठाड़ो है आसन दियो॥४॥
पांडु सुतन सो बिध सुन नहीं। बिबिध भांति की बातें कही॥
पुन उठके अन्तेवर जीत। पहुंचो नारद तहँ शुभ चीत ॥ ५॥
द्रुपदी सदन लखो इन तहां। स्वर्ण मयी सु झरोखे जहां॥
तहँ बैठी सिंहासन सार। कीने सोड़ महा सिंगार ॥ ६॥
शीशफूल राजत जिम शीश। प्राची दिश पर मनु दिन ईश॥
भाल विशाल तिलकको धेर। मुक्ता बेसर नाना बेरे ॥ ७॥
तार हार उर धारन सार। भुज बंधन नव ग्रह आकार॥
कंकन बलय समुद्रिक अस्त। कोमल लसत कमल दल हस्त।८।
कटि मेखल मणि किंकण सजे। नील रतन मय नेवर बजे॥
रंग बिरंगे चीर बिशिष्ठ। मानों इन्द्र धनुष की जिष्ठ ॥ ९॥
नारद को सो देखत खगी। दरपन बदन बिलोकन लगी॥
उठी न आदर नमन न ठयो। तातें नारद क्रोधित भयो। १०।
तास सदन ते निकसो सोय। शीश धुनत चित कोपित होय॥
मुखरित मुखले दीरघ सांस। भ्रम्यो भ्रमत ह्वै चढ़ आकास।११।
कहूं न रत तिन पाई जबै। गयो बिजन बन तुरतहि तबै॥
चित महि चितवत ऐसे तही। बिन बाजे हों नाचूं सही ।१२।
क्यों न नचे अब बाजे बजे। द्रुपदी मोह अनादर सजे॥
इन करके मेरो अपमान। अति दुःखित मो कीनो जान ।१३।

अब मैं याह करूं अति दुखी । जो मेरा चितहै अति सुखी ।
निज पिय संगम हितको पाय । भयी निरंकुश यह अघकाय १४
तातैं और पुरुषकर इसे । हरन कराऊं ज्यों दुख फंसे ।
अघ हो मोको याके बधे । ताते हतनो जुगतन रते ॥ १५ ॥
प्रबल पट्ट करके चित्राम । याहि हराय धरो पर धाम ।
हरि बल आदि अपर सब राय । तिनकर बंदितहमअधिकाय१६
सबहीको मैं हूं गुरु एव । श्रीजिनको सुविशेषहि सेव ।
देखहुं याको अति धृष्टत्व । कष्ट दयो मुझको दुष्टत्व ॥१७॥
मोको अवगन के मद पगी । बैठी दरपन देखन लगी ।
बल्लभते अति बल्लभ सार । याहि लगत इक रस श्रंगार॥१८॥
सब शृंगारन से इस जथा । काज करूं मैं अबही तथा ।
सकल मनोरथ मेरे मुदा । पूरन होहैं निश्चय तदा ॥ १९ ॥
सब सुहाग इस नाशे जबै । मोमन निश्चय लहिहै तबै ।
दुख अपमानन ते मो ताद । याको हरन लखूं मैं जदा ॥२०॥
यौं बिचार चित चित्रत रूप । पट्ट रचो तिस अधिक अनूप।
ले कर ताही कोपित होय । चलो गगन मग नारद सोय २१॥
पर तिय लंपट नर जे सही । तिनको देखत भरमो मही ।
जौंलौ लंपट लखो न कोय । तौलौं सुख नहिं पावत सोय २२॥
परनारी रत नर पति जोय । ताहि चहत चितमें रिस सोय ।
धातु की खंड सु भूषित मही । गयो सुनारद भरमत तही ॥२३॥
चारलाख योजन बिस्तारा । तहं पूरब दिशि मंदिर सार ॥
जोजन सहस्र चौरासी उतंग । राजत भूदर बहु बन संग ॥२४॥
भरत क्षेत्र तहँ दक्षिण दिसे । षट खंटक भू मंडित लसे ।
तामे पुर सुरपुर सम बरा । सुर कंका बहु सुख की करा ॥२५॥
पद्मनाभ नृपतहं बलबंड । जिन अरि करे भुजनते खंड ॥
मनमथते अति सुन्दर रूप । जास करत थुतिनुति बहु भूप २६॥

दोहा ।

तास निकट रिष जाय के, दिखयो पट चित्राम ।
दुतितें जीतो दिन पती, रचो चित्त अभिराम ॥ २७ ॥
अतिपति लखि के पट्ट तिय, कणक बरन मन हार ।
चित्तमें चितवत प्रगट यह, रची कौन की नार ॥ २८ ॥

चौपाई ।

किधों सुरगते आई सची । कै पद्मा के रोहनी रची ।
कै भूपर आई रवि तिया । कै रति के किन्नरि खचरिया ॥२९॥
कै बनिता के मोहन लता । यों चितवत ही मूर्च्छा रता ।
हाहा रवि कर नृपगन तबै । आय ठये तट ताके सबै ॥३०॥
क्योंहूं क्योंहूं चेतन पाय । बिधि सुतसों पूछो इह भाय ।
अहो तात या पट में भली । कौन रची तिय बिभ्रम रली ॥३१॥
सत्य कहो तुम भो भवनेश । बोलो रिष तब सुन नर एश ।
पठ रूप यह बरनो सबै । जो तेरो चित थिर ह्वै अबै ॥ ३२॥
दीपन मध्य बिराजत महा । जम्बू द्वीप मनोहर जहां ।
वलय वृत्तकर जोतो चन्द । मानो मुनि राजे गुण वृन्द ॥३३॥
जामें मेरु सु दर्शन नाम । लख जोजन उन्नत अभिराम ।
दच्छिण दिशि तहँ भर्त सु खंड । धनुषाकार धरे षट्खंड ॥३४॥
देश तहां कुरुजंगल लसे । हस्तनागपुर तामें बसे ।
गजगन गाजत मदसों तहीं । सुरसरिता सो राजत सही ॥३५॥
नृपति युधिष्ठिर ह्वै तिह ठौर । जाके तेज डरत नृप और ।
धरनी धारन को सम रिद्ध । साधत धरम धरत धन वृद्ध ॥ ३६॥
द्रुपदि नाम यही तिस रानि । पट्ट लिखी बहु गुनकी खानि।
तास अनुज शुभ पारथ नाम । शुभ बिश्रुत वर विद्या धाम ॥३७॥
जो तुम चित बहु सुखको चाह। तो निज हृदय लगावो याह।

या विनभो नृप निश्चय मान । जीवन भी अन जीवन जान॥३८॥
जो तुमको रोचे सो करो । और विधी मत मनमें धरो ।
ऐसी कह ऋषि गगनहि गयो। पद देखत नृप हत चित भयो॥३६॥
द्रुपदीको चित सुमरत छिना। अति दुःखितसो नरपति ठना।
तब भूपति उठ बनमें जाय । मंत्र अराधन तहार भाय ॥४०॥
संगम नाना सुर तिह ठाय । साध्यो तुरतहि संगम दाय।
सिद्ध भये नृप तट शुभ वेश । सुरआयो जांचत आदेश॥४१॥
जो तुम हिरदे चाहो इष्ट । सोई काज करो सु विशिष्ट ।
तब नृप बोलो सुरप्रतिवान । द्रुपदी दीजे मुझ हर आन॥४२॥
यों सुनकर सुर तुरतहि चलो । काज करत अनुरागहि रलो।
चलत गगनके मारग मंधि। जोजन द्वै लख उदधि उलंघ॥४३॥
नागपुरे जहँ द्रुपदी गेह । तिम में जाय तहां सुर एह ।
मनहु सुरी श्री सोवत एह । तुरतहि हरि आनी सो देव ॥४४॥
तास सदन क्रीड़ा बन जहां । समय सहित सो राखी तहां ।
निद्रा बसन रहें या हेय । कछु बन जानत भेया भेय ॥४५॥
सुर तबजाय नृपतिको कही । सुनतहि भूपति आयो सही।
सोवत निरखी सुन्दर नार । कनक बरन शशि दुत उनहार॥४६॥
पीत तनी मृग नैनी सोय। बोलो नृप तिस छवि अवलोय।
भी भद्रे निशि वीती सब । समय प्रभात भयाहै अबै ॥४७॥
उठो उठो अब जागी रानि। हे शशि बदनी हे गुन खानि।
अहो सुबुद्धिनि सुखकी दान। मो संग बोलो मधुरी बान॥४८॥
ऐसे बच कह अमृत समा । नींद निवार जगाई रमा ।
लोल नयन मनु डरती मृगी । दश दिशिको अवलोकन लगी ।४६।
कौनदेश यह बोलत कोन । को उद्यान सुकाको भोन ।
इहाविध चिन्ता व्यापी तिसे। निश्चय जानु कि सुपनो दिसे ॥५०॥

यह विचार निज आनन झंप । सोय रहो पुनी नैन अकम्प ।
भूपति तास हृदय की जान । मदना हत ह्वै बोलो बान ॥५१॥
कमल लोचनी निरखो ठीक । नहिं सुपना यह सा परतीक ।
तब द्रोपदी जानो चितमांह । अब मो को यहानिद्रा नाह ॥५२॥
दशदिशि देखत देखो व्यक्त । गगन जानके किन संयुक्त ।
लम्पट विकट कपट को धाम । पद्मनाभ बोलो सुन भाम ॥५३॥
द्वीप मांहि यह धातु की खंड । चारलाख जोजन परचंड ।
कालो दधि कर बेढित लसे । कर कंका यह नगरी बसे ॥५४॥
स्वर्ण मयी यह राजन गेह । मणि मुक्ता कर पूरण एह ।
ताम नृपति अरि नाशक दच्छ । पद्मनाभ मह ही परतच्छ ॥५५॥
तुम कारन भो भामनी इष्ठ । सुर साध्यो बहु करके कष्ट ।
रुचे न भोजन मोको भले । तो बिन लागत सब विषरले ॥५६॥
तेरे विरह मृतक सम भयो । सुर तुझ आन सुखी मैं ठयो ।
ह्वै प्रसन्न अब तातें रानि । मो संग भोग करो सुख दान ॥५७॥
देश कोसपुर पाटन गाम । चमर छत्र सिंहासन धाम ।
रतनाभूषन ले बहुभन्त । दन्ति तुरंगम रथ सामन्त ॥५८॥
विरह अगन मो जारत देह । रतिचल सींच सिरावो येह ।
मनमथ युद्ध विषै हम संग । नेहदृष्टी करि लावो अंग ॥५९॥
होऊ बल्लभ मो रानी निवाद । भव्य भाव धरले सुख स्वाद ।
ऐसी सुन तब द्रोपद सुता । शोकित ह्वै तन कम्पित जुता ॥ ६० ॥
छाती फटत रुदन को लगी नैन झरत बहु दुख सों पगी ।
हाहा जेठ युधिष्टर सार । धरम बुद्धि धरनी आधार ॥ ६१ ॥
भीम सेन हा पावन धीर । बीरन मांहि महाबल धीर ।
हा पारथ हा नाथ समर्थ । तुमरण मांहि करे अरि व्यर्थ ॥६२॥
दुःख काल मुझ व्यापो राय । अब मोको को राखे आय ।
तुम बिन कथा सु ह्वैहै अब मोहि । मो सुधि को पहुंचावे तोहि ।६३।

सोवत सैन सहित मैं हरी । मुरने पर नरके घर धरी ।
ऐसे रुदन करत तहँ ठई । द्रुपद सुता तहँ विहवल भई ॥६४॥

दोहा

पद्मनाम बहु भक्ति कर, कहत द्रुपदि प्रति एम ।
हे केहरि कटि सुन्दरी, मोवच सुन धर प्रेम ॥६५॥
सुख निमित्त तज शोक को, मो संग तुरतर मोंहि ।
आशा तज के पार्थ को, जल अंजुल दे ताहि ॥६६॥
तज विषाद अब भो प्रिये, होउ भोग आलीन ।
वृथा खेद तुम किम करत, रोय रोय मुख दीन ॥६७॥

चौपाई

शील भंग बच सुन इहभेव । द्रुपदी चित्त विचारो ऐव ।
शील रतन यह जग मे महा । सत्पुरुषन को भूषन कहा ॥ ६५ ॥
शील प्रभा में किन्नर आय । होंय सुरा सुर अरु नर राय ।
लहत शीलते निर्मल देह । उत्तम कुल में जनम सु लेह ॥६९॥
शील संयोग सुरग सुख लहे । पुनि चयके चक्री पदगहे ।
सबतिय सोहे शीलहि अङ्ग । शीलहि सलिल अनिल के संग ७०
शीलहि सहित सुलोचन खरी । स्वपर सहित सुरसरिता बरी ।
जलते थल है शीलहि घरे । जलनिधि गोपदशम अनुसरे ।७१।
शीलरतन चित सीता गहो । अगन कुण्डसरवर समभयो ।
सेठ सुदर्शन कामजु देव । शील धरतसु पूजो एव ॥ ७२ ॥
शील बिना अपकीरतिलहे । मरके दुर्गति सहजे गहे ।
शील सहित जो प्रानी मरे । भव भव में सो सुख अनुसरे ।७३।
ताते मृत्यु उपस्थित भये । शील नत्यागुं जीवन लये ॥
यों बिचारल दीरघ स्वांस । बोली द्रुपद सुता इमतास ॥७४॥
सुनरे नृप तू मेरी बात । पांडव पांच प्रगट हैं भ्रात ।
जिनके करकौ दंड अखंड । खंड खंड कीने अरिचंड ॥ ७५ ॥

जिन प्रभावते कम्पित देव । रणहि अरिनकर दुर्जय एव ।
पुनि हरिबल जिनके हैं भ्रात । तीन खंड नायक विख्यात ७६॥
जिनहिं सुरासुर नरपति नमें । भरत क्षेत्र के भूषन पमें ।
मेरे शील बिनाश निमित्त । कीचक ने हो बंछी चित्त ॥ ७७॥
भीम बलीने अपने हाथ । ताहि हतो सौ भ्राता साथ ।
अब तू मोहित चित हो मती । मोसों सुख नहिं तोको रती ७८॥
मैं आनी ते ग्रहमें बृथा । नागी अरु बिषबेली यथा ।
मास एक मो आशा त्याग । थिरहै तिष्ठ अरे निर्भाग ॥ ७९ ॥
इतके काल ठये परयन्त । जो भवितव्य सुहै है अन्त ।
क्योंहू बिधिते पांडव महा । आवहिंगे जो नाहीं यहां ॥ ८० ॥
तो इक मास ब्यतीती जोय । जो तुमरुचे सो कीजे सोय ।
ऐसी सुनके भूपति ठयो । इहविधि चितहि विचारत भयो ॥८१॥
उतर जलधको पांडव कहां । आवेंगे वे कैसो इहां ।
ऐसी जान नृपत थित होय । जिन मन्दिर में तिष्ठे सोय ॥८२॥
तादिनते तज पान अहार । भई द्रौपदी निर लंकार ।
दृढ़ करके सिर बेनी बांध । ठई प्रतिज्ञा ऐसी सांध ॥ ८३ ॥
प्रात भए तब गजपुर माह । द्रुपदी पांडव देखी नाह ।
ताकी सुध नहिं पाई कहीं । पुन पुन ढूंढी तिनहों तहीं ॥८४॥
तब द्वाराबति नगरी जिते । किनहूं जाय कही हरिप्रते ।
प्रथम करौ हरिको परणाम । द्रुपदी हरन भनो पुन ताम ॥८५॥
छिन इक केशब दुःखित ठयो । पुन रणको अति क्रोधित भयो ।
रण दुंदुभि बजवाई तबै । जुर आई घन सेना सबै ॥ ८६ ॥
हिनहिनाट कर घोटक घटा । तिन ऊपर चढ़ आये भटा ।
अंजन गिरि सम गरजत गजा । तिनपर राजत उन्नत धुजा ८७
रथके चक्र करत चिंकार । चले सु चंचल मदनाकार ।

पत्ति चले बहु नाना रंग। खेटक खडग लये कर संग ॥ ८८ ॥
के इक कुन्त फिरावत हाथ। के इक धनुष धरें सर साथ।
इह विधि सबहि पहर सन्नाह। आये नृप के आंगन मांह ॥८९॥
जौलों दल चतुरंगहि लीन। चलिबेको हरि उद्यम कीन।
तौलों नारद आयो तहां। अमर सुकंका नगरी जहां ॥ ९०॥
लखी द्रौपदी ऋषिने तहीं। अंसुवन धोवन मुखको सही।
तप्तहेम छबि तन आलीन। छुटके केश कृतोदरि दीन ॥ ९१ ॥
कमल पत्र सम कोमल हस्त। तापर अमल कपोल विनस्त।
क्रिया रहित मनु प्रतिमा रची। शक्र बिवर्जित जानो सची ९२॥
इह बिध लखके नारद चिते। ऐसे चिन्तयो करुणा रते।
अहो सती यह संकट थान। भारी में धर माया मान ॥९३॥
मैं पापी बहु कीने पाप। उत्तम तिय यहि दियो सन्ताप।
यों बिचार के आयो तहां। विष्णु भयो रण उद्यत जहां ॥९४॥
विकट कटक मोहरि किम अर्थ। इकठो करत महा तुम व्यर्थ।
धातकी खंड सुकंका पुरी। तहां द्रुपदी हम देखी हरी ॥ ९५ ॥
पद्म नाभ नृपराजे तहां। दुर्जन बंश बिनाशक महा।
तिन सुर साध हरी सो एम। सीता को दश आनन जेम ॥९६॥
ऐसो बली न जग में कोय। जाने को जहँ समरथ जोय।
याते है यह दुर्धर काज। तुम तिष्ठो तज उद्यम राज ॥ ९७ ॥
यों सुनके तहँ सब दल थाप। रथ चढ़ गजपुर आये आप।
सन्मुख हरिके पांडव आय। द्रौपदि हरन कहो सिरनाय ९८॥
तहां मंत्रकरके ते चले। आयो लवणो दधि तटरले।
लवणो दधि प्रति स्वस्तक देव। त्रयव्रत कर हर साधो ऐव ९९॥
तब सुर दीने छह रथ भले। तिन ऊपर चढ़ सब ऐचले।
जलध तरो इक छिन में महां। पहुचे पुर सुर कंका जहां ॥१००॥

पांडव पंच सहित हर राय । गरजे पंचानन सम भाय ॥
साधे धनुष टंकोरो हरी । जा धुनने भू कंपित करी ॥ १ ॥
भीम भमाइ तबही गदा । विद्युलता मनु दम की तदा ॥
नकुल कुंत अपने कर लयो । अरि छेदनको उद्यत भयो ॥ २ ॥
पुनि सहदेव सु दीपतवान । वर कृपाण ले पकरो पान ॥
धरम पुत्र ले तीक्षण शक्ति । कराते गगन हिलाई व्यक्ति ॥३॥

दोहा

अर्जुन बोलो नमन कर, अग्रज प्रति तब एव ।
तुम छिन तिष्ठो सब यहां, हौं अरि जीतूं देव । ४ ।
यों कह कर को दंड ले, रथ चढ़ पारथ राय ।
देवदंत बर शंख तहँ, पूरो रण को धाय । ५ ।
पंचायन पूरो हरी, अरि जनको भय कार ।
सुन धुनि पुरते भूप सों, निकसो बहु बल धार । ६ ।

चौपाई

रण दुंदभि बाजत तिस संग । बधिर करत दसहूं दिशि रंग ॥
रेणु उड़त नभ छायो जोर । पद्म नाभ रण कीनो घोर ॥ ७ ॥
पारथ ने सर तीक्षण मार । जर्जर ह्वै तब भागो हार ॥
रणको तज तब पुरमें जाय । दरवाजे दे बैठो राय ॥ ८ ॥
हरिने कठिन चरन परहार । तोड़ो डार छिनकमें बार ॥
अर्जुन को उपजावत त्रास । धसे नगरमें सब बल रास । ९ ।
भीम गदाते छिनमें तहां । ढाहे मंदिर ताके महां ॥
सुंदर सम थिर सुंदर देह । लही मंदिरा सब तिस गेह ॥१०॥
नष्ट भये सब जिन तब तास । नृप भी भागो लहके त्रास ॥
राख राखयों भाषित चलो । जाय द्रुपदि की सरने रलो ॥११॥
द्रुपदी हरत करो जो पाप । तिस फल सब अब पायो आप ॥

तब द्रुपदी यों बोलो तास । सुन रे मूः महा अघरास ॥ १२ ॥
पहिले ही मैं तो सों कही । आवहिंगे वे पांडव सही ॥
दुर्योधन आदिक मह सूर । छिनमें तिन्हहु जीते भूर ॥ १३ ॥
तिन आगे तेरी क्या चली । जिनहूं जीते ऐसे बली ॥
ते सब तौलों आये तहां । मनो निरंकुश दंती महा ॥ १४ ॥
नमू भयो तिनको लख राय । रच्छ रच्छ यों भाषत भाय ॥
द्रुपदी शरण परापत भयो । भय आतुर ह्वै बोलन ठयो ॥१५॥
तुम अखंड शुभ शीला एव । अभय दान मुझ देवो देव ॥
तब द्रुपदी ने देवो तहीं । अभय दान तिन पोसो सही ॥१६॥
तब हरि चरनहिं प्रनम्यो सोय । औरु पांडवहि विनई होय ॥
यथा योग पुन कीनो विनें । भोजन आदिक सब ही तिनें ॥१७॥
ते द्रौपदि को लेके तदा । अरहत चरण न्हवनकर मुदा ॥
जिन पद पूज करायो सही । द्रुपदी को शुभ भोजन तही ॥१८॥

दोहा

इह विधि पांचो पांडवा, औरु विष्णु परवीन ।
द्रुपद सुता को पाय के, तिष्ठे सुख आलीन ॥ १९ ॥

पद्धडी छन्द

जिन धर्म प्रभावे धर्म पुत्र । तर सागर पांडव लहि पवित्र ॥
पुन पद्मनाभको जीत युद्ध । जस पाई महा तहँ गह सुरिद्ध ॥२०॥
इक धर्म जोग सब सधे काज । सुर सेठ करत बहु विनय साज ॥
जैनी सु जान फल धर्म एव । त्रयकाल त्रिशुद्धे भजहु सेव ॥२१॥

इति श्री मन्महाशीला भरणभूषित जैनीनामांकितायां लाला बुलाकी दास विरचितायांभारत भाषायां द्रौपदीहरण विष्णु पांडव द्वीप गमन द्रौपदी प्राप्ति वर्णनम् द्वाविंशतः प्रभावः ॥ २२ ॥

अथश्रीनेमनाथदीक्षाग्रहण केवलोत्पत्ति

द्वारका दहन कृष्ण परलोक गमन

बलदेव दीक्षा ग्रहण वर्णन प्रारम्भः

मङ्गलाचरण मुनि सुव्रत नाथ स्तुति ॥ सवैया तेईसा ॥

पाप निकंदन दुःख विनाशन है सुख कारन शिवपुर गामी।
ध्यान धरुं चितज्ञान प्रकाशक मो शुभ दायक अन्तरयामी ॥
धीर गंभीर महाबल बीरज धारक हैं मुनि सूव्रत नामी।
नासकरे श्रुत जैनुलदे सुत मोहिभली मति दीजिये स्वामी ॥१॥

चौपाई

अब हरि चरनन को सिरनाय। बोले पांडव हरषे राय।
तुम प्रभावते हम अनुसरी। द्रुपद सुता जो अरिने हरी ॥२॥
ऐसे कहकर रथ चढ़ चले। द्रुपदी कोले आनंद रले।
पांच जन्म तब पूरो हरी। धन गरजन सम धुनि अनुसरी ॥३॥
तब ताभरथहि चम्मापुरे। कपिल त्रिखंडी हरि पद धरे।
विपुलनाम जिन वन्दन हेत। सो आयो बहु भगति समेत ॥४॥
ताके समोशरन में ठयो। शंख शब्द सुन पूछत भयो।
भो भगवन यह शंख अपार। किन कीनो मो सम इहठार ॥५॥
तब जिनवर सो बोलेबान। जम्बूद्वीप भरत परवान।
तहँ द्वारावत राजत पुरी। कृष्णनाम नृप प्रभुतावरी ॥ ६ ॥
तीन खंड पति भरताधीश। नारायन पद धर चक्रीश।
ताका पितृ स्वसाका पूत। पारथ नाम सुमति संजूत ॥ ७ ॥
तो सेवक कंका पुर राय। पारथ तिया तिन आनी भाय।
ताके हेत सु आयो हरी। तिनयह शंख महाधुनि करी ॥ ८ ॥
यों सुनके तिस देखन काज। उद्यम वन्तभयो हित साज।
तब जिनपति तिस ऐसे अखे। चक्रीको चक्री नाहिं लखे ॥९॥
पुनहरिको हरि देखे नाहि। सहज नयोग यहै जग मांहि।

जिनपति सों नहिं जिनपति मिले। हलधर सों नहिं हलधर रले १०
चिहनमात्र तुम दरशन तास। होय यहै सुख दायक आस।
तोभी कपिल गयो अविचार। तिस देखन को इच्छा धार ॥११॥
आपस में भुज देखो गुनी। पूरि शंख धुनि तिनहू सुनी।
हरिको गयो जलधि में जान। फिरो कपिल तब सहजे आन।१२।
आयचक्र पति चम्पा पूरे। पद्मनाभ को डारो खरे।
पुन सुख सों सो निवसो तहां। तीन खंड भरते सुरमहा॥ १३ ॥
अब ए सबही पहिली भाय। जलधिहितर बैठ तट आय।
लक्ष्मी पति बोलो तिहठाव। भो पांडव तुम आगे जाव ॥१४॥
जौलों स्वस्थिर सुरको बिदा। करके अब हम आवें मुदा।
तौलों तुम जमना तर पार। भेजो हमको नौका सार॥ १५ ॥
यों सुनके ए पांडव धीर। द्रुपदी सहित गये सरतीर।
नौकाचढ़ सो उतरे पार। बैठ रहे तट छल को धार ॥ १६॥
भीमसेन धूरत ता करी। पठई नांहि हरीको तरी।
कालिंद्री किम उतरे आज। हरिको भुजबल देखन काज ॥१८॥
यों विचार तट बैठे तदा। तौलों हरि सुरको कर बिदा।
आये जमना तटपै जवै। जल अगाध हर देखो तबै ॥ १८ ॥
पांडु सुतन सों बोलो एम। तुरत सरित तुम उतरे केम।
यों सुन के तब पांडव भने। हिरदे अनिहौ छलको ठने ॥१९॥
हम भुज दंडन को बलधार। सरिता जलतर उतरे पार।
यों सुनके तह दोऊ भुजे। उतरी सरिता बल को सजे ॥२०॥
सरल चित्त हरितर सरतीर। पहुंचे छल नहिं समझे धीर।
हरिकोलखै ए पांडव सबै। खिल खिलायकर हंसिये तबै ॥२१॥
पांडु सुतन को हंसतो देख। चक्र पती यों बोले पेख।
भो पांडव तुम हंस क्योंपरे। कहियेसांच बचन मुझखरे ॥२२॥

तब बोले ए पांडव धीर। हम नौका चढ़ उतरे तीर ॥
तुम भुज बलको देखन काज। नाव छिपाई हम ने राज।२३।
भो नरिन्द्र यह प्रघटित काम। प्रघट करो ए इम गुण धाम॥
तुम अरि कुंभी कुंभ विदार। सत्य हरी हर सब बलधार।२४।
ऐसी सुन क्रोधे हर राय। कम्पित अधर कहो इह भाय॥
रे पांडव तुम अति अविचार। सदा अनिष्ट कलहके कार।२५।
सुजन नेहकर तुम निरमुक्त। महा दुष्टताकर संयुक्त ॥
सरिता तरन विषै अब कहा। मेरो बल तुम देखो महा॥२६॥
गोवरधन गिर धारूं करे। नाग दलो कालिंद्री सरे ॥
तोरो मल्ल महा चानूर। मारो कंश करो छिन दूर ॥ २७ ॥
जरासिंधु को भ्राता जोय। अपराजित मैं नामो सोय॥
आराधो सुर गौतम तवै। द्वारापुरी बसाई जबै ॥ २८ ॥
रुक्मणि हरण करो जिह काल। रणको मांड हतो शिशु पाल ॥
चक्र रतन जब आयो कर। जरासिंध तब मारो खेर ॥ २९ ॥
तीन खंडको लीनो राज। निज भुजते ए साधे काज॥
यह बल तुम नहिं देखो महा। सरिता तरित लखो तुम कहा।३०।
अबलों भी तुम दुष्टो तनी। जात नहीं है जड़ता घनी॥
ताते अब तुम दूर बसाहु। सौ जोजन के अंतर जाहु॥३१॥
दक्षिण मथुरा नगरि विशाल। भो पांडव तिष्ठो चिरकाल॥
जब ऐसे हर भाषत भये। तब दुःखित ह्वै गजपुर गये॥३२॥

॥ दोहा ॥

तहां पुत्र अभिमन्यु को, जनो उत्तरा देव।
नृप विराटको दोहितो, नाम परीक्षित एव ॥ ३३ ॥
राज विषै तिस थाप के, गये द्वार हरि नाथ।
पांडव मथुरा को मिले, सब कुटुम्बले साथ ॥ ३४ ॥

चौपाई

अब हरि सभा सु द्वारा वर्ती । नेमनाथ तहँ राजे अती ॥
तहँ बल वर्णत अति ही बली । नेम कुंवर ही बरनो हली । ३५ ।
तब कनिष्ठका अंगुरी संग । नेम झुलायो हरिको अंग ॥
तब केशव यों चितयो चित्ते । मेरो राज नहीं या छते ॥ ३६ ॥
कबहुक सर जल क्रीड़ा विखे । चीर निचोरन को जिन अखे ॥
जामवती कीनो अभिमान । मानी नाहिं जिनेश्वर आन । ३७ ।
आयुधशाला जिनवर जाय । नाग सेज दल बैठो धाय ॥
सारंग धनुष चढ़ायो खरे । शंख बजावत नासा सुरे ॥ ३८ ॥
तब हर आप नयो तिस पाय । करत प्रशंसा मुख अधिकाय ॥
पानि ग्रहन को विनती ठान । उग्रसेन की तनुजा जान ॥ ३९ ॥
नेमनाथ के व्याहन काज । जांची राज मती हर साज ॥
राज लोभ कर के सब छली । बहुपशु बांध करी खल बली । ४० ।
तिनके रक्षक पूछत एव । भये विरक्त सु जिनवर देव ॥
अनुप्रेक्षा जिन सुमरी जबै । लौकांतिक सुर आये तबै । ४१ ।
सुर कुर्जा नामा शिव कासु । चढ़ि के चले जिनेश्वर तासु ॥
सहस्र आम्र बनमें थिति ठान । दीक्षा ली नेमीश्वर जान ॥ ४२ ॥
सावन सुदि तिथि छटके दिना । थिर थापो पटम बृत जिना ।
मन परजय धर जिनवर भये । तप कल्याणकका सुर गये । ४३ ।
नृप कनका शुभ द्वारावती । तिन आवत देखे जिन जती ॥
जाग जुगति ते कर परिगाह । गृह भीतर लीने जिन नाह । ४४ ।
उन्नत आसन दे थित करे । पग प्रक्षाल पूजन नुत करे ।
मन बच काय शुद्धता साथ । शुद्ध अन्न दीनों जिन हाथ ॥
श्रद्धा सहित सकल गुन संग । शुभ विध दान दयो निरभंग ॥
पंचाचार्य भये तिस गेह । सो सुन श्रेणिक अबही एह ॥ ४६ ॥
कोटि बारहा साढ़े भले । सुर बर्साये मणि निर्मले ।
स्वर्ण पौन गंधोदक वृष्ट । सुर ताडित दुंदुभि धुन इष्ट । ४७ ।

पारनकर जिन बनमें गयो । चिदानंद चित चितवत भयो ।
छप्पन दिन छद्मस्त बिताय । रेवतका चल बैठे आय ॥४८॥
धार तहां षष्टम उपवास । गुन अलंकृत समति निवास ।
क्षायक श्रेणि चढ़े जिन नाह । इटा वरण प्रकृति सब दाह ॥४६॥
क्रोधमान माया अरु लोभ । संज्वलनको सो नाशो क्षोभ ।
घातक चार हरतहीं छना । केवल ज्ञान प्रकाशो जिना ॥५०॥
आश्विन मास शुदि प्रति पदा । ज्ञान कल्याणक कीने तदा ।
बरदत्तादिक गणधर तहां । राजत ग्यारह ज्ञानी महां ॥५१॥
समवशरण शुभ धनद रुचा । अनुपम शोभा मणिमई खचो ।
प्रथम साल पुनिवेदी जान । पुनि बेदी पुनि साल प्रमान ।५२
पुनबेदी पुन साल उतंग । पुनबेदी पुन साल अभंग ।
पुनबेदी राजे क्रम जहां । हेम रतन मय शोभा महां ॥५३॥
प्रथमहि शोभित जहां प्रसाद । पुनि परिषा पुन उपा नाद ।
पुनि धुज पंकत पुन सुर बृच्छ । पुनि महावली जहां गुण इच्छ ५४
पुनि सिंहासन शोभा रले । मान थम्भ पुन उन्नत भले ।
नाट्य शाल पुनि उन्नत तूप । पुन मारग राजत घट धूप ।५५।
धुजा सरोवर राजे जहां । मध्य प्रदेश जिनेश्वर तहां ।
प्रात हार्ज वसु भूषित ईश । साजत अतिशय सुख चौंतीस ।५६॥
द्वादश सभा बिराजे तहीं । तिनके नाम सुनो अब सही ।
प्रथमसभा बैठे मुनि राय । बहुरि स्वर्गकी अपसर आय ॥५८॥
त्रितिय अर्जका शोभित देह । जोतिष तिया सु चौथा ग्रेह ।
व्यंतर बनिता पंचम जान । भवन तिया षष्टम परवान ॥५८॥
भवनपती सुर सातम एव । अष्टम गिनिये व्यंतर देव ।
जोतिष वासी नवमो गने । कल्प वासि सुर दश में भने ।५६।
राज सभा ग्यारह परवीन । द्वादश में तिर जग आलीन ।
सभा बारहें इन करि साथ । चतुरानन शोभित अति नाथ ।६०॥

तहँ वरदत्त गणाधिप प्रते। परम धरम धुनि भाषत अते।
सप्त तत्व भाष जिन नेम। नव पदार्थ षट द्रव्य सु पेम ॥६१॥
अधो मद्ध ऊरधके भेद। तीन लोक बरने बिन खेद।
आयु कायसे धरत समेत। बरने सप्त नरकके खेत ॥ ६२॥
दीप उदधि गिरि समता जान। बरनो सकल भूमि संठान।
नाकलोक जो नाना भन्त। कहो सिद्ध आलय पर जन्त।६३।
गति चारों इन्द्रिय पंचोग। षट काया पुनि पंद्रह जोग।
बेद तीन पच्चीस कषाय। अष्ट ज्ञान संजम सप्ताय ॥६४॥
दर्शन चतु षट लेस्या उक्त। भव्य भेद द्वैषट सम्यक्त।
संज्ञा पून अहारिक जान। पून चौदह गुन थान प्रमान।६५॥
षट परजापति प्राण दसे। संज्ञा चार लिंग त्रय लसे।
द्वादश विध बरनो उपजोग। पुन बरने कुल कोटन जोग।६६।
द्वै प्रकार भाषो पुन धर्म। जति गोचर अरु श्रावक कर्म॥
इह विधि सुनसो जिनवर उक्त। केइक भव्य लहो सम्यक्त ६७
केइक ग्यारह प्रतिमा जान। श्रावक व्रत लीने परमान।
केइक संयम धारत भये। परिग्रह त्याग महा व्रत लये।६८॥

॥ दोहा ॥

धर्म वृष्टि इह बिधि करत, आरज देश सु देश।
भव्यन को सम्बोधते, विहरे नेम जिनेश ॥ ६९ ॥
देश समस्तहि बिहर कर, उर्जयन्त गिर शीश।
समवशरण लक्षमी लए, पुन आये नेमीश ॥ ७ ॥
तहँ आये जिन जान के, यादव उद्यम धार।
आये बन्दनको मुदित, बल आदिक नृप सार।७१।

चौपाई

नुति थुति कर जिनको सब राय। सुनकर धर्म ठये शुभ भाय।
तहँ जिनको नुति करके हली। बहुरि बिनयसों बोलो बली।७२।

भो स्वामी यह हरको राज। कबलों रहिहै पूरन साज।
सुर पुनीत पुर द्वारावती। कितने काल कहो या थिति ॥७३॥
यों सुनके बोले जिनदेव। द्वादश वर्षहि मदते एव।
ऋषि द्वीपायन कारन पाय। द्वारापुरि यह जरहे राय ॥७४॥
जरद कुमार करे सरलाग। हरी मरें बनमें तन त्याग।
यों सुनके द्वीपायन सार। दूर गयो संयमको धार ॥ ७५ ॥
त्योंही जरद कुमार सुजाय। निवसो कोसांबी बन ठाय।
ता पीछे पुनि जिनवर देव। जात भये देशान्तर एव ॥७६॥
काल पाय पुनि तौलों तहीं। मुनि द्वीपायन आये सही।
यादव सुत मतवाले होय। क्रोधित कीनो दुखदे सोय ॥७७॥
द्वीपायन तब क्रोधहि धार। करी द्वारका छिन में छार।
जिन भाषित नहिं होय अलीक। होय वही जो भाषित ठीक ७८
तब बलि विष्णु निकसके गये। कोसांबी बन मांही ठये।
त्रिषित भए तहँ अति हर एव। जलको लेन गये बलदेव ७६॥
जरदकुमार के सरते तहीं। मरे सुताही छिनमें सही।
बल जलकोने आये जबै। गत जीवत हर निरखे तबै ॥८०॥
मोहित ह्वै बलले तन तास। कांधे धरे फिरो षट मास।
सिद्धारथ सुर बोधो आहि। तदपि हरीं मृत जानी नाहिं ८१॥
तब यह जरदकुमार सुजाय। पांडव निकट कहो इह भाय।
निज करते हरिकी मृतकही। सुनकर पांडव रोये सही ॥ ८२ ॥
पुन कुन्ती अति रोवत भई। बिस्मय पाय विषादित ठई।
हलधरके तब देखन काज। पांडव चले सुहितको साज ॥८३॥
जरद कुमर को आगे धार। संग कुटुम्ब लिये सब सार।
केतक दिन मग चलते एव। पहुँचे जहँ बनमें बलदेव ॥८४॥

देखतही हलधर को तहां। रुदन करे हैं दुःखित महां।
इनको लखहल उठके मिलो। कुन्ती प्रनमन प्रथमहि रलो ८५॥
तहां छिन इक थिर करके तबै। बोले बल प्रति पांडव सबै।
शोक तजो अब हरको राय। सावधान मन हैं जो भाय ॥८६
लख विचित्रता भवकी एह। दहीये दामोदर की देह।
जब सुनियो दाहनको नाम। क्रोध अधिक चितधारो राम८७
तिन प्रति बोलो मोहित चित्त। तुम अपने सुत बंधव मित्त।
दाह करो अब इनको जाय। रचके चिता मसाने ठाय ॥ ८८ ॥
इह विध पांडव मनमे तही। प्राविट काल बितायो सही।
बच अनुकूल हली सो भने। ज्यों भापे ए त्योंही ठने ॥ ८९ ॥
पांडव बनमें हलधर संग। प्रत बोधत तिष्ठे निरभंग।
जबही समय पुरो अनुसरो। तब सिद्धारथ बोधत करो ॥९०॥
तब पांडव प्रति बोलो हली। तुम आये यह कीनी भली।
तुंगी गिरपर हरकी देह। दाही पांडव मिलके एह ॥ ९१ ॥

दोहा

पिहिताश्रव मुनिके निकट हलधर संयम धार।
द्वैविधि परिग्रह टारके, भये दिगम्बर सार ॥ ९२ ॥

पद्धड़ी छंद

तज राज परीग्रह नेमनाथ। बर नेमधार संजम सुसाथ।
त्यागी सुराज मति रम्य देह। हनि काम मल्लधरि मुक्ति नेह।९३।
हत घातहि केवल बोध लीन। गिरनार शिखर पर थितिसुकीन।
सुर राय सबै जिस नमत पाय। जैनी सुकरत तिस सेव धाय ९४

इतिश्री मन्महाशीलाभरण भूषित जैनी नामांकितायां लाल बुलाकी
दास विरचितायां भारतभाषायां श्रीनेमनाथदीक्षाग्रहण केवलो
त्पत्ति द्वारकादहन कृष्णपरलोकगमन बलदेव दीक्षा
ग्रहण वर्णनोनामत्रयोविंशति प्रभावः ।२३॥

नेमनाथ धर्मोपदेश पांडवभवांतरवर्णन

मंगलाचरण ॥ श्रीनेमनाथ स्तुति ॥ सवैया तेईसा ।

ज्ञान निधान सबै सुखखान जु नाशक ज्ञान सुध्यान सुधारी।
जासुस्वभावन है शिवकारन आपतरो अरु है परतारी । सा नमि
नाथ अनाथनि नाथ सुजासु सुसाथ सु भारत कारी । स्वारथ मो
परमारथ को पथ दीजे यथारथ मन्मथ हारी ॥ १ ॥

चौपाई

जरा पुत्रको आगे करे । गये पांडवा द्वारा पुरे ।
बहुरि द्वारिका रचके साज । जरदकुमारहि थापो राज ॥ २ ॥
कुन्ता सहित सुपांचे भ्रात । सुमरत चितहि पुरातन बात ।
हरिबलको बहराज विथार । विविध भोगते भोगत सार ॥ ३ ॥
सो अब सबही विनशके गये । ऐसे सोचत शोकित भये ।
अहो पुरी जो सुर निरमई । सो छिनमाहिं भस्म होगई ॥४॥
गगनपुरी सम भई अदृश्य । जोउपजी सो नशो अवश्य ।
समुद्र विजै आदिक दस भ्रात । कहां गयेते सुख की पांत ।५।
दोऊ भ्रात बहुरि गुन धार । मदन कुवर अरु सम्ब कुमार ।
विविध भोगते भोगनहार । तिनको नाहिं कहूं आकार ॥ ६ ॥
होते नित जिनते आनंद । ते सब गए कुंवरके वंद ।
रुक्मिणि आदि कगनी पट्ट । तिनके सदन भये दह वट्ट ॥७॥
जे नित करती हास्य विलास । विनस गई ज्यों नीरदरास ।
अहोसुजनकी संगति रमा । छिनक छई है सरिता समा ॥८॥
जल अंजुलि सम नरकी आयु । जतन करतही है विनसायु ।
अहो अंगना संगम राग । रक्त महा विषयारस पाग ॥ ९ ॥
है विरक्त जो जावकरंग । कहां सुनिहचल मति तिय संग ।
जे अपने सुत दीसत सर्व । ते नहिं अपने हैं पर दर्व ॥ १० ॥
केवल कर्म करत करतार । कल्पित दुख सुख रूप असार ।

ग्रह सम ग्रह पुरुषनको लगो। परसों प्रीत सुआपद पगो ११॥
सकल सम्पदा सुपना सभी। को सुतको दाराको रमी।
नाना विध जो पोषी देह। सोभी होय न अपनी येह ॥१२॥
काल पाय सो ह्वै विपरीत। दुखदे ज्यों दुरजनकी प्रीत।
सात धातु मय काया एम। तासों थिरमत करनी केम ॥१३॥
अहो अनंगहि रागी रगे। रमत रम्य रामा सों पगो।
इन्द्रिय सुख तहँ केतक कहो। मधुकी बूंद कुवामें लहो १४॥
विषयन हते मरत बहु जन्तु। दुर्गति विषे परत बहु भंत।
पुन तिनहीको सेवत धाय। महा मूढ़ता नरकी भाय ॥ १५ ॥
इन्द्रिय करि इक जीते जीव। मोहित ह्वै कर मरत सदीव।
जिम ठग लूटत मम मन मोह। जिम इन्द्रिय एमारत तोहि १६
विषय छिनकता भाषे येसु। सुख दुख रूप वर्णावे येसु।
सोगत मत पोषत इह भन्त। जिनहो त्यागे तेई सन्त ॥१७॥
इन्द्रिय देह मित्र अरु दर्ब। एकहि देखे सुस्थिर सर्व।
भोगी सम ए चंचल भोग। भव्यनको दायक भय रोग ॥१८॥
भोगत भोगहि तृष्णा बंधे। इनते त्रप्त न कबहूं सधे।
खाज खुजावत ईंधन आग। त्यों ए बढ़हि करत अनुराग १९॥
पंच प्रकार महा संसार। भरमत जीव न पावे पारं।
रच रच चित्त विविध परपंच। पच पच मरत महा दुख संच २०
काल अनादि बसत उपजाय। मिथ्यामति मोहित अधिकाय।
जानत नाहिं हिताहित आप। भठकत जीव सहे आताप २१
विषया विषते लोलुप चित्त। द्वादश अविरत सेवत नित्त।
ताहीते कुमती पद पाय। करत कषाय कुगति को जाय २२॥
तातें तजिये शिव सुख हेत। सब परमाद कषाय समेत।
इह विधि धावत पांचो वीर। पहुँचे नेम जिनेश्वर तीर ॥२३॥

देव अदेव करत जिससेव । तीन छत्र शोभित नितसेव ।
तीनलोक की प्रभुता बरे। तीन सिंहासन शोभा धरे ॥ २४ ॥
तरु अशोक पुनि सुमन सुवृष्ट। जय जय धुनि भाषत सुर इष्ट ।
कर्म शत्रु जीतेजय पाय । सुर दुंदुभि बाजत अधिकाय ॥२५॥
अष्टादश भाषा आलीन । दिव्य सुधुन भासत परवीन ।
सूर कोटि सम पूरन भास । भामंडल भासत जिनपास ॥२६॥

दोहा

इह विध लख नेमीशके, पूजे धर पद भाव ।
थुति आरम्भी पांडवा, करत चित्त इक ठाय ॥ २७ ॥

चौपाई

अहोनाथ तुम नाव समान । भव सागर तारक परमान ।
तीन भवन पति तुमहि विशाल । परम उदय तुमही जगपाल २८
तुम परमेश्वर तुम हितकार । केवल भाषा तुमही सार ।
तुमही परम गुरू गुणवन्त । तुम प्रसाद भवपार लहन्त ।२६।
तुम सेवत यह जीव अपार। अव्यय पद पावत अविकार ।
तुम भर्ता सुरपद भगवान । भव्यन को निर्भय करजान ॥३०॥
तुमहि मुनिन्द नमत नित एव । तुम सर्वज्ञ चिदातम देव ।
बालपने भी तुम चित्त प्रीत । राज विषै नहि कीनी प्रीत ॥३१॥
काम सरपं को दरप विनाश । तुमही गरुड़ सही सुखरास ।
नमहु अनन्त सुबोध विराज। नमहु विशुद्ध महासुखसाज ॥३२॥
तरुन पन में तुम शुभमती । राज मती सी त्यागी सती ।
बालक रवि सम जाकी प्रभा । जाके लखत शकित ह्वै सभा ॥३३॥
पूरण चंद बदन तन अंग । रति रूपनि दुति दामिनि संग ।
निर्दोषी रस पूरण सजी । गुणकी आकर सो तुम तजी ॥३४॥

दोहा

ताते तीनों जगत में, हे प्रभु तुम गुन अर्थ ।
वर्णन करवे को पुरुष । बरते कौन समर्थ ॥ ३५ ॥

ऐसे थुति करके नृपति, बैठे सभा मंझार ।
तब जिन पति जिन धर्म को, बोले इह विध सार ॥३६॥
भो पांडव अब जत्न तें, सुनो धर्म सुखदाय ।
ज्ञान सहित हिरदे धरो, जीव दया षट काय ॥ ३७॥

चौपाई

द्वै विध धर्म कहो तिन देव । जाति गोचर पुन श्रावक एव ।
पंचाचार्य चरित जिन धर्म । जासों बेग लहो शिव शर्म ॥३८॥
निरमल दरशन धारे सार । सो कहिये दर्शन आचार ।
जिन भाषित जहँ पढिये ज्ञान । ज्ञान चार कहो सो जान ॥३६॥
तेरह विधि जहँ चारित चरें । चरना चार सु मुनिवर बरें ।
द्वादश विधि तप तपिये जहां । तप आचार कहावे तहां ॥४०॥
जो जिन बीर्य प्रकट कर मुनी । महा अचारन बरिये गुनी ।
नेम जिनिंद कहो सो सही । बीजी चार कहावे यही ॥४१॥
त्रिविध धर्म पुन भाषो देव । दर्शन ज्ञान चरन यहि भेव ।
शंकादिक दूषण निरमुक्त । अष्टअंग पूरण सम्यक्त ॥४२॥
तत्व अरथ धारत श्रद्धान । यह लच्छण दर्शन को जान ॥
निमल रम्य जिनोकिन ज्ञान । द्रव्यभाव आश्रित परमान ४३॥
तेरह विध शुभ चारित कहो । शिवपद साधन मुनिवर लहो ।
पुनि जिनभाषित दशबिध धर्म । छमाप्रमुख शुभसाधनसर्म॥४४॥
क्रोध निवार छमा जहँ आन । मार्दव सोई मोचक मान ॥
आर्जव माया त्यागे जहीं । शौच लोभ को बर्जन तहीं ॥४५॥
सत्य बचन में सत्यहि जान । जन्तु दया में संजम मान ॥
देह तपनमें तप अनुराग । वित्त बिवर्जित बरते त्याग ॥ ४६ ॥
निर्ममत्व तन आदिक माहि । आकिंचन गुन कहिये ताहि ॥
निज स्वरूपमें रत जो होय । ब्रह्मचर्य ब्रत कहिये सोय ॥ ४७॥

अथवा तजत सबै तिय जोय। ब्रह्मचर्य व्यवहारी सोय।
दश विधि धर्म कहो इह भन्त। जासों शिवपद साधत सन्त।४८।
अथवा धर्म परम यह जान। निज सरूप में थिति को ठान।
मोह सहित सब विकलप टाल। निर्मल आतम लहि तत्काल ४९
केवल शुद्ध शान्त चिद्रूप। उपजोगी सर्वज्ञ स्वरूप।
यह स्वरूप है मेरो सही। कहिये धर्म सु चितवत यही ॥५०॥
जो जीवनको भवते तार। मुक्त विषै अब धारत सार।
धर्म शब्दको अर्थ सु एह। कहो जिनेश्वर सुखको गेह ॥५१॥

दोहा।

सब विधि ऐसे धर्म सुन, कुन्ता सुत शुभ चित्त।
निज भव पूछे नेम प्रत, आतम शुद्ध निमित्त ॥ ५२ ॥
कौन पुन्य हमने करो, जाते बहु बलवन्त।
भये नेह संयुक्त सब, निर्मल मानुष सन्त ॥ ५३ ॥
कौन पुन्यते द्रौपदी, भई स्वरूपा इष्ट।
को अघते यह दोष लहि, पंच पुरुष को निष्ट ॥५४॥

चौपाई।

यों सुन के बोले जिनराज। भव्यन को उद्धारन काज।
जम्बु सहित शुभ द्वीप अनूप। भरत क्षेत्र परशंसा रूप ॥५५॥
महादेव तहँ अंग अभंग। शुभ लच्छण मनु अंगी अंग।
पुन विपच्छ कर है दूर लच्छ। अच्छप छोणी छित परतच्छ ॥५६॥
तहां पावनी चम्पा पुरी। पानव माल बसो बहु भरी।
बेढ़त है परिषा प्राकार। भू तल मांहि बिराजत सार ॥५७॥
तहाँ कुरुवंशी भूपत बनों। घन बाहन घनबाहन मनो।
सोमदेव नामा द्विज तहां। बिमल विपुल गुण पूरन महा।५८।
तास सोमिला अबला भली। स्याम बरन बहु शोभा रली।
तनुज तीन तिस उपजे खरे। सोमदत्त है तिनमें बड़े ॥५९॥

सो मिल दूजो शोभा धाम । सोम शत्रु भू तृति अभिराम ।
भ्राता भलो सोमिलो तनो । अग्नि भूत नामा गुण सुनो ॥६७।
तासु अग्नि लावाला भली । तीन सुता तिस बहु गुन रली ।
आदि धनश्री शोभा भरी । मित्राश्री की सुरिहै नरी ॥६१॥
नाग श्री शुभ श्रीकी पांत । ते परनी कनते तृय भ्रांत ।
सोमदेव द्विज कवहुक सोय । भवतन भोगहि बिरकत होय ॥६२॥
धरी प्रवृज्या गुरुके तीर । मिथ्या मारग त्यागो धीर ।
भव्य भक्त ये तीनों भ्रात । श्रावक ध्ययन पढ़त दिन रात ।६३
मल निरमुक्त सु शिमला माय । समकित बृत धारत अधिकाय ॥
धर्म सुननको उद्यत चित्त । बहु बनको यों सिखवे नित्त ।६४॥
धर्म अहिंसा पालो सार । मिथ्या बच अरु चोरी टार ।
परिग्रह आशा त्यागो सदा । ब्रह्मचर्य बृत धारो मुदा ॥६५॥
खंडिनये खनि चूल्ही देख । जल गालन विध धारिये पेख ।
पात्र दान दीजे मन लाय । ज्यों सुख लहिये परभव जाय ६६
होय वहू बच ताके तदा । तुरतहि धारे हिरदे मुदा ।
नाग श्री बच मानत नहीं । मिथ्या मलते दूषित रही ।६७॥
कोपिन कलहिन दुष्टा अता । काम कलंक लिप्त अघ रता ।
तबहि सोमिला बोली एश । सुनो नाग श्री मो उपदेश ।६८॥
तज कोटिल्य सालता धरो । छोड़ मिथ्यात सु समकित बरो ।
मिथ्या मत मोहित नर जेह । धर्म न श्रद्धा धारें तेह ॥ ६९ ॥
ज्यों जुरपात्ति धरे तन मांहि । पय मिश्री तिस भावे नांहि ।
शुद्ध धर्म उपदेशो संच । पापी जीव नरोचे रंच ॥७० ॥
ज्यों रवि उदय फटत तब जाल । अंध रहे उल्लू को बाल ।
मिथ्या मद मोहित तन धार । भरमें नृत्य करत संसार ।७१।
कबहु न कबहू सुखको पर्मे । मृग तृष्णा लख मृग ज्यों भ्रमें ॥
सदा त्याज्य मिथ्या तप रेत । भव्य जनों कर निज हित हेत ।७२।

इह बिध धर्म तनो उपदेश। ताके चित न रहो लवलेश ॥
ज्यों जल बिंदु कमल दल मांहि। सहज जतनकर तिष्ठे नांहि ।७३।
और समय इक मुनिवर महां। नाम धर्म रुचि आये तहां ॥
सोमदत्त निज गृह में मुनी। आये लखकर हरषो गुनी ॥ ७४ ॥
परि गाहनकर नायो भाल। उच्चासन दे पद प्रच्छाल ॥
नागश्रीय बिध दान सिखाय। गयो सु बाड़व कारज पाय ।७५।
सासु सोमला बोली एहु। दान बहू या मुनि को देहु ॥
नवधा भक्ति करो मन लाय। जासों सुगति लहो सुखदाय ।७६।
मिथ्या मद उनमत्ता सोय। निज चित चितयो क्रोधित होय ॥
अहो नगन मुनि कोई एह। याको दान तनो फल केह ॥ ७७ ॥
अन्न बसे बिनसे सब काज। नगन जिमावत आवे लाज।
को बिधिको फलको यह दान। कौन पुन्य यामें अघखान।७८।
को यह कम्पित तन है नीच। विष डारो तिन भोजन बीच ॥
नागनि गरलहि मारत जेम। नाग श्री विष डारो एम ॥ ७९ ॥
लरल बुद्धि ते याकी सास। विष डारो नहिं जाने तास।
पात्र दान ते केवल पुन्न। उपजायो तिन देके अन्न ॥ ८० ॥
विष ते व्याध बिषम मुनि देह। ताही छिनमें बाढ़ी एह।
तरु आश्रय बिन बल्ली बृंद। वर्षा मांहि गिरत जिम छंद। ८१।
मुनि निज देह बिषै विष जान। धर्म ध्यान धारो उर आन।
सावधान है धर सन्यास। चरत भयो सु परम तप रास। ८२।
चतुराराधन चित्त आराध। प्रान तजे मन बच क्रम साध।
शुद्ध बुद्धकी धरि समृद्धि। पहुंचे जा सरवारथ सिद्धि ॥८३ ॥
सोमदत्त आदिक त्रिय भ्रात। नाग श्री कृत जानी बात ॥
भव भोजनमें बिरकत भये। वरुण नाम गुरु के तट गये ।८४।
अंतर बाहिज परी ग्रह हार। भये मुनीश्वर परम बृत धार ॥
दोय ब्राह्मणी प्रीत बिशेष। नाग श्री की कृतको देख। ८५।

महा अरजका गुरवानि नार। तानट दीचा ली अभिराम॥
युगम अर्जका तीनों मुनी। पांचों धरम अराधें गुनी ॥ ८६ ॥
अंत विषै सन्यासहि धार। प्राण सु तज तीनों मुनि सार।
पहुंचे आरुण अच्युत ठाउ। जहँ बाईस उदधि की आउ॥ ८७॥
बहुरि अर्जका एसी शुद्ध। चरन आचरो चिर अविरुद्ध ॥
एक पाटकी साड़ी सेत। डील ढकत निज शीलहु हेत ॥८८॥
मनहु नरी ह्वै करुना छिमा। राजत परम धरमकी रमा॥
दरशन बल छेदो तिय लिंग। गह सन्यास तजो सब संग ।८६।
इह विधि दोऊ तज निज अंग। ताही ठौर गये निरभंग ॥
पुन्न फले पद पाय उतंग। सुर वपु धारो सुरम सुरंग ॥ ६० ॥
सामानिक पद उत्तम पाय। पांचों सुख भुगते इह भाय।
उपपादिक सज्जा उपसंग। दिव्य देह धारित दुति वंत। ६१।
अवध ज्ञान पूरव बिरतंत। जानत सबही नाना भंत।
शुद्ध नीर स्नान करंत। विधि ते जिन पूजत बुधवन्त ।६२।
निर्तकि निर्त निहारत सदा। शंका रहित बिशोकित मुदा।
जिनहि अमर बिनमित बहु पाय। अतिहि पवित्र भये सुरराय।६३।
बीतत वरष सहस बाईश। मनसा हार करत तब ईश॥
द्वाविंशत जब पच्छ वतीत। तब उसास की धारे रीत । ६४।

दोहा

इह विध धर्म प्रभावते, मोह शत्रु बिन साय।
अमरनि कर कर सेव्य ए, भये देव द्विज जाय। ६५।
जिन यात्रा या जगत में, करत सदा मन लाय।
लीने संग सुरंगना, सुख भोगत अधिकाय। ६६।

॥ पद्धड़ी छन्द ॥

जिनधर्म प्रतापहि नसत पाप। किनमाहिं महासुख मिलतआप॥
जिनधर्म जोग तन लहि अरोग। मन वांछित सुख भुगते सुभोग॥

जिन धर्म धरत धरनीश होय। दिन रैन रही तर तिगन सोय।
जिन धर्म सुमिर द्विज तीन एव। भुन होय लहो पद कलप देव ६८
पुन दोय तीय तन सुत पधार। हानि लिंग नार पुलिंग सार।
गनि पंच देव षोडषम सुर्ग। भन जैन धर्म सु प्रभाव वर्ग।६६।
जुत सेव करत देवी स्वरूप। उत्कृष्ट आउ आया अनूप।
जैनी सुजान इम जैन धर्म। दैनी सुबुद्धि शिव धर्म पर्म ॥१००॥

दोहा।

जैनी द्विज जिन धर्मते, पहुंचे अच्युत बास।
ताते ऐसी जान के, भजो धर्म सु प्रकास ॥ १०१

इति श्री मन्महाशोलाभरण भूषित जैनीनामांकितायां लाला बुलाकीदास विरचितायां भारतभाषायां नेम नाथ धर्मोपदेश पांडवभवांतर वर्णनम् चतुरविंशति प्रभावः ॥ २४ ॥

अथ पांडव द्रोपदी भवांतर वर्णन

मंगलाचरण ॥ श्री नेमनाथजी स्तुति ॥ दोहा ॥

परम धर्म रत चक्रिवर, नेम नेमि जिन नेम।
नमत करत जुग मुदित चित, लहत सुगति सुख प्रेम।१।

चौपाई।

नाग श्री अब अघके जोग। प्रगटहि निंदा सबही लोग।
जष्ट मुष्टकर मारी जोर। पीडित कर दुख दीने घोर ॥ २ ॥
मुंडि सु मुंड खर आरोय। पुरहि फिराय निकासी सोय।
काष्ट लोष्ट कर मारी घने। भ्रष्ट कष्ट कर नाठी बने ॥ ३ ॥
कुष्ठ न होइ मरी सो निष्ट। गई अनिष्टा भूमिर कष्ट।
छेदन भेदन शूला रोह। तहँ पाये बहु दुःख सन्दोह ॥ ४ ॥
सत्रह उदधि गई जब आउ। निकसी छोड़ नरककी ठाउ।
दीप स्वयं प्रभु द्रग विष सर्प। उपजो हिंसक कुपित कुदर्प।५।
चंचल रसना लोचन लाल। तम लेश्या तम तनु मन काल।

अतिही भीषण फण फुंकार। फुरत पूंछ जम जिह्वा कार ।६।
अघ विपाकते आई घूम। गयो सुमरके बूजी भूम।
तीन उदधि तहँ पूरी आउ। दुख परि पूरित परसी ठाउ।७।
तातैं निकस भूमि संसार। त्रस थावर गति बहु परकार।
किंचत ऊन उदधि जब दोय। बीते तब तहँ निकसी सोय।८।
चम्पापुर मातंगी भई। क्षोभित दुखित चित मंदित ठई।
और समे सु उदम्बर हेत। भ्रमन करत पहुंची बन खेत।९।
नाम समाध गुपत मनु महां। बैठे ध्यान धरत गुरु तहां।
सनै सनै लख मुनि तट चली। निज सुख इच्छत समता रली १०
तन तन निरखत किंचित एह। करत कछू नहिं थिर ह्वै देह।
थिर थानक बैठे बर मौन। कहो करत तुम कारज कौन ।११।
यों पूछी इन मुनिसों जबै। लागे गुरु उपदेशन तबै॥
भो भव्ये भवमें भवि जीव। होत भयानक भ्रमत सदीव।१२।
पाप करत दुर्गतिमें परे। जनम जरा दुख भोगत खरे॥
नर परजाइ कठिनकर पाय। धरम बिना गत नीची जाय।१३
मध्य मांस मधु ऊंबर त्याग। करे न सत्त बिसन अनुराग॥
रजनी भोजन बर्जित सदा। नीर न लेय अगालित कदा।१४।
माखन खाय नबीधों नाज। तजे कुसुम साधारण साज॥
त्रस कायनकी रक्षा करे। धर्म अहिंसा मन में धरे॥ १५॥
बचन असत्य गनहि पर दर्ब। शीलह सजि तज परिग्रह गर्ब।
जिन प्रति मारगसों श्रद्धान। सुमिरत सदा सुमत उर आन।१६।
पंच परम पद ध्यावत चिते। जास जपत छिन घन अघ हते॥
इह विध ताको करनी सबै। इन सुनके उर आनो तबै ।१७।
सुनत तहीं इन पांचों मंत्र। गहे परम सुख दायक तंत्र॥
प्रथमकार तज अनु बृत धार। भई पवित्र सकल अघ टार।१८।
मृतको पाई सुउपजी आय। चम्पापुर बानिक गृह ठाय।

नाम सुबंध महा धनवान। जास वचन नृपकरत प्रमान॥१६॥
सकल स्वजन जिस सेवत सदा। तास प्रिया धन देवी तदा।
ताके आय भई सो सुता। दुरगंधा दुरगंधे जुता ॥ २० ॥
और बनिक इक तहँ धनदेव। धनसों रहित दरिद्री एव।
ताकी तिय अशोका नाम। तिन द्वै पुत्र जने अभिराम ॥२१॥
तहां बड़ो जिनदेव सुजान। जिनदत्तक दूजो गुनवान।
करत सुदोऊ विद्या भ्यास। जोबन धारो सुखकी रास ॥ २२ ॥
तब सुबंधने जांचो एव। मो बच सुनो अहो धनदेव।
दुरगंधाके व्याहन काज। तुम सुतको हम दीनी आज ॥२३॥
राजमान बच छेदे कौन। तातें इन सुन धारी मौन।
सो चित है चित्यो इह भाय। होनहार नहिं मेटीजाय॥ २४ ॥
पुन सुबंध ने जाचन करो। ताही भांत बचन अनुसरो।
तब धनदेव कही यों हार। योंही होउ बचन तुम सार ॥२५॥

दोहा

अहो दर्ब दाछिन्यतें, कहा करत नर दच्छ।
धन बिन दच्छन दच्छता, सबको कहत अदच्छ॥२६॥
द्रव्यवन्तकी बातको, छेद सकहि नहिं कोउ।
सुनतहि सकल सभा विषै, योंही योंही होउ ॥ २७ ॥

चौपाई

यह सब बात सुनी जिनदेव। हिरदे माहिं विचारो एव।
जो दुरगंधा मो तिय होय। तो पापी नहिं मो सम कोय २८॥
तादुरगंधा संगम करे। मो जीवन निरफल अनुसरे।
कंठ अजाके थन है जथा। दूध दुहिये दीसे वृथा ॥ २९ ॥
तास पिता हैं लछमीवन्त। नृपसों मंत्र करत बहु भन्त।
ताके बचन निवारन ईता। नाहीं समरथ मेरो पिता ॥ ३० ॥
जो दुरगंधा गंधालीन। दुरभागनि दुःखन चित दीन।

होय त्रिया ऐसी यह क्रूर। तो मुझ भोग रहो ए दूर ॥ ३१॥
अप संगति ते मरनो भलो। जौंलग जीवे तौं लग जलो।
यों चितवत मति विहवल भई। क्षुधा तृषा रति निद्रा गई ॥३२॥
मात पिता सो बिनही भने। गृहसों निकस गयो सो बने।
जाय समाध गुपत मुनि तीर। नुत कर बैठो सन्मुख धीर।३३।
पूछो धर्म तहां जिनदेव। तब मुनिवर बोलो इह भेव।
सावधान मन है सुन भव्य। समकित धर्म प्रथम कर्तव्य ३४॥
यह षट्कायन रक्षा धर्म। सत्य धर्मते उपजत सर्म।
परधन पर दारा रति त्याग। यह जिन भाषित धर्म सुभाग ३५॥
वस्तु सार लहिये वृषजोग। वृषते होय परम सुख भोग।
वृषतें सुरग सुरंगम पर्मे। बैठ विमान गगनमें भ्रमें ॥ ३६ ॥
यह जिनदेव सुनो उपदेश। वृत धर भयो दिगम्बर वेश।
तब सुबंधने हटते सुता। जिनदत्तही व्याही विध जुता ॥३७॥
सो जिनदत्त नवोढ़ा पाय। आलिंगनकी इच्छा भाय।
सेज सदनमें तबही जाय। दोऊ बैठे एकहि ठाय ॥ ३८ ॥
तब ताके तनकी दुरगंध। सह न सको नासा सुरगंध।
प्रातहि मात पिताको बूझ। भाग गयो देशान्तर गूझ ॥३९॥
दुरगंधा चित दुःखित पगी। आपनको तब निन्दन लगी।
हाहा विध मैं क्या अघ कीन। पर दुख दीनों करुणा हीन ४०
जास उदय बिछुरो भरतार। तन दुरगंध धरो दुख भार।
जननी ताको भागो जान। सुता सुराखी निजगृह आन ४१॥
हे वत्से धारो जिन धर्म। जासों बेग नसे अघ कर्म।
ता तनकी दुरगंधे जोग। दुखित भये सब बन्धू लोग ॥४२॥
तब तिनहो न्यारे घरमांहि। राखी देय दिलासा ताहि।
और समय सुधरमकी दान। महा अर्जका गुनकी खान ॥४३॥
आई तास पिताके गेह। तहां गई दुरगंधा एह।
नुत करके पर गाही सोय। भोजन दीनो उज्वल होय ॥४४॥

दोहा

निर विकिसित अरु गुन सहित, आर्या समकित धार।
दुरगंधाके हाथसे, लीनो वर आहार ॥ ४४ ॥
ले अहार सम भावकर, छिन इक थित तहँ कीन।
आर्जवधारा अर्जका, चमा कान्त कालीन ॥ ४५ ॥
तव दुरगंधा देख के, कीनों परसन एम।
अहो शान्त के तरुन तुम, दीक्षा कारन केम ॥४६॥

चौपाई

भने अर्जका सुनिये मर्म। प्रथम नाक निवसे सौ धर्म।
तिम तिय हैं ए पूरव भवे। विमला अपर सुपरभा हवे॥ ४७ ॥
और समयते नाथ समेत। नंदीसुर पूजन के हेत।
उद्यत है धारो आनंद। जाय नमें जिनपद अरविन्द ॥ ४८ ॥
दिव्य अम्बु अम्बुज गंधाति। पूजा करत भई बसु भांति।
गीत नृत्य कर दोऊ तहां। करी प्रतिज्ञा ऐसी महां ॥ ४६ ॥
पाय मनुष भवतपको करे। निश्चय भोग सकल परिहरे।
द्वीप यही पुर अयोध्या महा। नृप श्रीखेन बिराजे तहां ॥५०॥
श्री कान्ता बनिता गुन जुता। तिनके दोय भई ए सुता॥
हरि सेना श्री खेना जान। प्रगट भई ए गुनकी खान ॥ ५१ ॥
जोवन भूषित देह अनूप। सुन्दर रम्य मदन के रूप॥
जोवन मांहि इनों को देख। रचो स्वयम्बर नृप अविशेख ।५२।
मंडप मांहि सु मंडित भूप। मंडन मंडित सुंदर रूप॥
दूत पठाय बुलाये जोय। बहु देशन ते आये सोय ॥ ५३ ॥
कमला नाम सखी ले साथ। शोभित बेत छड़ी जिस हाथ॥
मंडप में ते आई जबै। नृप गन देख बिरक्की तबै ॥ ५४ ॥
गई सु बन में मुनिके तीर। ज्ञान सु सागर नामा धीर॥
धारो संयम मस्तक नाय। जो फिर होय न तिय परजाय।५५।

तब विचरत ए आई इहा। इस कारन दीक्षा पद ग्रहा ॥
सो इन के बच सुनके चिते। भई विरक्त दुरगंधा अंते ॥ ५६ ॥
अहो अतीव स्वरूपा एह। राज सुता अति कौरी देह।
भोगनको तज दीक्षा गही। धन्य जनम है इनको सही ॥५७॥
हो दुरगंधा दुखनी नित्त। तृष्णा विषै न मूचो चित्त।
ऐसे कहि ताके पद नई। संयमको सो जांचत भई ॥ ५८ ॥
जनकादिक को बहु सम्बोध। गहो परम तप परिग्रह रोध॥
गुरनी संग भ्रमत भू सोध। छिमा विचारत टारत कोध। ५६।
तीव्र तपस्या तनको साध। सहत परीषह मन को बाध।
एक समय सु अशुभके उदै। बन में गणका देखी कुदै ॥ ६० ॥
नाम बसंत सु सेना तास। पंच विठन कर बेढ़ित आस।
ताको देख विचारत सोय। या विधको पद मोको होय। ६१।
सो दुरगंधा बाला एव। करो निदान महाबल भेव ॥
पुनि पाछे पछतानी घनी। धिक् मो मनको मो क्या अनी।६२।
दुष्कृत यह मैं सोचो जोय। सो अबही सब मिथ्या होय।
पांच मास तप कीनों घोर। तउ वन दूटो अघको ओर ॥६३॥

॥ दोहा ॥

अंत समय सन्यास ते, प्रान तजे क्रम धार।
सोम भूत चर सुर तनी, भई वल्लभा सार ॥ ६४ ॥
पल्लव चावन आउ थित, प्रवीचार मन संग।
नहिं वियोग संयोग नित, भुगते सुख निरभंग ॥ ६५ ॥

पद्धड़ी

अब हस्तपुरे नृप पांडु गेह। कुन्ता समुद्रवति तासु देह ॥
तिनके सु पुत्रते पंच देव। उपजे सु आय क्रम सुतहु एव।६६।
जो पूर्व कहो द्विज सोमदत्त। तुम आय युधिष्ठिर भयउ सत्त॥
दूजो जु तास सोमिल भ्रात। सो भीम भयो भय रहित सात।६७।

जो सोम भूत अर्जुन सु दच्छ। जित सर्व विपच्छ सुलच्छ रच्छ॥
इह भांत भये तुम तीन भ्रात। वर पुन्य जोग उन्नत विख्यात ६८
जो देव धन्न श्री वरसु आय। यह नकुल नाम मही उपाय।
पुन मित्र श्री चर देव सोइ। सव देव एव तव अनुज सोय।६९।
नृप द्रुपद नाम पंचाल देश। तिह दिढ़हि रथा रानी स्वभेश।
वह नाग श्री भई तासु पुत्रि। द्रुपदी सु आय उपजी पवित्र।७०।
इन पूर्व भवे निर्मल चरित्त। व्रत गुप्त समित वर भाव कित्त।
ताके प्रभाव यह अति स्वरूप। भोगोप भोग लह भुव अनूप।७१।
लखके वसंत सेना सुहाग। लह पाप बंध चित ह्वै सराग॥
ताके प्रभाव जग अयश एव। नित पंच भर्त द्रुपदी रमेव ॥ ७२ ॥
मन बैन काय अर जीत कर्म। तिह भांत सुफल को लहि असर्म॥
जिम बीज बोवे जो लुने सोय। अघ कर्म करो ताते न कोय।७३।

दोहा

जो तुम पुर्वे आचरो, चारित उज्वल चित्त।
तातें जस यह सत्य को, लहो युधिष्ठिर मित्त ॥ ७४ ॥
साधन को पूरव भवे, बैया वृत बहु कीन।
तातें यह बलवन्त अति, भयो भीम भय हीन ॥ ७५ ॥
पुरे शुद्ध चारित्र गह, धरो ध्यान मन लाय।
ता प्रभावते धनुष धर, भयो धनंजय राय ॥ ७६ ॥
नाग श्री के नेह ते, पारथ द्रुपदी लुब्ध।
जन्तुन को अति नेह है, सो पूछे सनरब्ध ॥ ७७ ॥
दोय ब्रह्मनी जो पुरे, कारि दुर्धर तप एव।
सम्यक दर्श प्रभावतें, भये नकुल सहदेव ॥ ७८ ॥

सोरठा

सुनके पांडव पंच, पूरब भव इम नेम तट।
रहो प्रपंच नरंच, भयो शान्त चित अन्तरे ॥ ७९ ॥

अडिल्ल

परम भावके भावक भव वन दाव जे। वीतराग के भक्त विरक्त सु भावजे॥ सुभाकार सुख धार बिकार बिमुक्त के। कर्म दारुके दारक सम्यक जुक्त ए॥ ८०॥

द्विज भव ते तप चीर करी जे सुन महा। छेद पाय चय अच्युत सुर पद सुख लहा॥ भोग भोग तहं चयके नृप पद संचये। जीत शत्रु गन ते भी पांडव पंच ए॥ ८१॥

सवैया तेईसा

जे दुर्युद्ध दुर्योधन आदिक शत्रु हते हरि पाय सहाये।
जाय तरी सरिता बर अम्बुध अम्बु तरो सुर अम्बुध आये॥
पाय दरोपदि धातु की दीपहि चोर अरी बलवंड हराये।
नेम सु प्रेम धरो पुन पांडव ताते नमो नित नेमके पाये॥८२॥

इतिश्री मम्मङ्गलशीलाभरण भूषित जैनी नामांकितायां लालाबुलाकी दास विरचितायां भारतभाषायां पांडव द्रोपदी भवान्तर वर्णनोनाम पंचविंशति प्रभावः

पांडवोपसर्ग सहन त्रयंकेवलोत्पत्ति

सिद्ध गमन द्वय सरवार्थ सिद्धी वर्णन्

मङ्गलाचरण। सुपार्श्वनाथ स्तुति। दोहा

जिन सुपार्श्व के पास बसि, बासुक नसत सु बास।
अब सुवास के बसन को, नमत बुलाकी दास॥१॥

चौपाई

अब पांडव प्रणमित धर प्रेम। करत नेम प्रति बिनती एम॥
कर जुग जोर निवाये सीस। थुति भाषत मुखते अबनीश॥ २॥
रोगादिक दावानल दाह। देह मही रुह घनबन माह॥
काल व्याल निवसे बिकराल। दुर्गम दुर्ग सुदुर्नय जाल॥ ३॥

दुष्ट भाव बिलबम्बय व्याध। मृग इन्द्री मृग तृष्णा आध॥
क्रूरकर्म ये तिर्यंग दुष्ट। विषयामिष के भक्षक रुष्ट॥ ४॥
मदन भिल्लरति पल्ली अती। मोह महागिर सरिता पती।
भ्रमत भीत जे भव बन ठोर। तुम बिन तिनहि सहाय न और॥५॥
नाना जनम जहां जलखार। लंघी दशदिशि जास बिथार।
लोल कल्लोल कलेसन जाल। विविध कर्म बाड़वसुविशाल॥ ६॥
आशा अनल प्रबल जिस मांहिं। रतिसरि ताते तिरपति नांहि॥
नक्र चक्र बरतें दुर भाव। गहि डारत अघ ऊरघ ठाउ॥ ७॥
भव जलनिधि तारक जलजान। तुमही हो पंचम बुधवान।
मर्म हस्त अवलम्बन देय। भव कूपहि हमको उधे लेय॥ ८॥
भव बनमें वृष पंथ बताय। हमको शिवपुर दो पहुंचाय।
अहो दच्छ शुभ दीक्षा देहु। तो प्रसाद निवसें शिव गेह॥९॥
इह विधि जिन अनुमतको जांच। दीक्षा लेन लगे नृप पांच।
दयो पुत्रको राजत राज। तजो परीग्रह दश विध साज॥१०॥
क्षेत्र वास धन आदिक जान। बाहिज परिग्रह अघकी खान।
मिथ्या बेद राग षटहास। चार कषाय दुरत की रास॥ ११॥
अन्तर उपध चतुरदश भन्त। सो सब त्यागो पांडव सन्त।
कचचय लुंच दिगम्बर भये। तेरह विध चारित धर ठये॥१२॥
राजमती तट कुन्ती जाय। कुन्तल निज करतें दुख दाय।
इक पट पट सूतनमें करो। भुगत उदंड अनूवृत धरो॥१३॥
द्रुपदी और सुभद्रारान। संयम लीनों दीक्षा ठान।
राजा रानी बहूते और। संजम गृहत भये तिह ठौर॥१४॥

॥ दोहा ॥

रहत अनिष्ट युधिष्ठिरो, गुन गरिष्ट सु विशिष्ट।
मोह मल्ल निष्ठुर हतो, तामें महा बलिष्ट॥ १५॥
भव अरि भंजक भीम भट, भय भेदी अघ भीत।

भारत करत विभाव सों, निज स्वभाव सो मीत ॥१६॥
मुक्त बधू रति पार्थ वर, भये अधिक चित आय ।
राधा नाम अराधना, बेद ध्यान सर पाय । १७ ।
कर्म कुलिन की निकुलता, करत न कुल मुनिराय ।
सकल भाव आत्मीक गुन, प्रति पालक सुखदाय ।१८।
सत्य सहित सुमिरत सदा, सौम्य देव सहदेव ।
ज्ञान देव पर्याय निज, चरित सु चारित एव । १९ ।

चौपाई

समित महा बृत पंचे पंच । इन्द्रिय पंच निरोधक संच ॥
षट आवश्यक साधे सदा । कर तिन काला निक्रिम कदा ।२०।
लुंचत शीश बसन सों हीन । करत सनान नमत सम लीन ।
भूमरूपन नित निस अनुसरे । देत समल दातोंन न करे ।२१।
एक बार थित भोजन गहे । रसना स्वाद न रंचक लहे ।
इह विधि पांडव पांचो मुनी । मूल सुगुन ए पालक गुनी ॥२२॥
बहु विधि उत्तर गुन जे अन्य । धरम ध्यान धर धारे अन्य ।
तीन गुपतकर गोपित अंग । द्वादशांग गावत निरभंग । २३।
बलको प्रकट विकट तप करे । नेम निकट संकट परि हरे ।
षष्टम अष्टम आदिक भेद । बृतको करत अबृतको छेद ॥२४॥
ग्रास बतीस मनुष आहार । कहत विबुध जन आगमसार ॥
तातें उन गहें जे कोई । आमोदर्य अहारक सोय ॥२५॥
मग में अथवा एके गेह । केवी थी इक राखे एह ॥
इन ठौरन जो भोजन मिले । तो भुगते नहिं अनसन रले ।२६।
निर विकार है रसको त्याग । कंजक अन्न लहे तन राग ।
सुन्यागार गुहामन थले । चौपट कोटरि गिरि बन रले ॥२७॥
भयदायक निरजन निर जन्तु । ध्यान धरत तहँ निर्भय सन्तु ।
सयनाशुनते भजत बिरक्त । काय कलेशी वपुष बिरक्त ॥२८॥

वाहिज तप षट बिध विधसार। धरत विविध उपाय बिचार।
वृत शुद्धार्थ लहे प्राचीत। विनय अधिक करीये या वृत।२९
वाचन आप्रछन्न आमना। अनूप्रेचा सु धर्म देशना।
पंच विधे साधत स्वाध्याय। ध्यान सिद्ध कारन मुनिराय ॥३०॥
कायोत्सर्ग धरत थित ध्यान। तन आदिकको ममता हान।
धरत चतुर्विध धर्महि ध्यान। तिनके नाम सुनो दे कान।३१।
आज्ञा पाय विपाके आन। शंसय थान विचयंतक जान।
शुक्ल ध्यान आरम्भते सार। जो प्रथक्त आदिकहि बिचार ३२
षट बिधि तप आभ्यन्तर एम। पालत कर्म शिथल है जेम।
जैसे उरग गरुड़के तीर। भाजत कायर ह्वै तज धीर।३३।
तपते रिद्ध बढ़ी तिन मांहि। तपते लहिये क्या क्या नांहि॥
सब जीवन सों मैत्रीभाव। गुणजनमाहिं हरष अधिकाव ॥३४॥
दुखियनको लख धारत दया। विपरीते समभावे लया।
इन भावनते भावत शुद्ध। निजआतम निरञ्जनबुद्ध॥ ३५॥
रत्नत्रय मय उज्वल भये। मोहि विरषके नासक ठये॥
नर सुर तिर्यक कृत उपसर्ग। सहित सदा कारण अपवर्ग॥३६॥
छुधा पिपासा आदिक लहे। एबावीस परीषह सहे॥
ब्रह्मचर्य पालक मह धीर। इम सम निर्भय विचरत बीर ॥ ३७॥
इर्जापत सोधत मुनपंच। जीव दया वृत पालक संच॥
आरतदेश करत गत भोग। भव जिनको छेदित भव रोग ३८

दोहा

बिहरत पहुंचे पाण्डवा, गिर सेतुंजय श्रृङ्ग।
ध्यान धरो उत्सर्ग धरि, महा दिगम्बर अङ्ग॥ ३९॥
सुमिरत हिरदे परमपद, गहि आतापन जोग।
सहनशील उपसर्ग को, लहो सिद्ध उपयोग ॥ ४०॥
जौलों तिष्ठे पांडवा, निर्मल चित संजोय।

लौखों ताही गिर विषै, आये अरि अवलोय ॥ ४१ ॥
दुर्योधन को भानजो, क्रूरकूर्य धर भाव।
मुनि पांचों को देखके, चिन्तो चित्तइ भाव ॥ ४२ ॥
मेरे मांतुल मारके, इनहो लीनो राज।
कहांजाय अब भाग ये, विधे लखे मैं आज ॥ ४३ ॥
अब अवसर है बैर को, एम विचारो मूढ़।
अब न करे ए युद्ध को, बैठे योगारूढ़ ॥ ४४ ॥
षोडष भूषण लोह मय, करे अगन में लाल।
पांचों मुनिके तन विषे पहराये तत्काल ॥ ४५ ॥

सोरठा।

मुकट शीश पर धार, गले हार कुण्डल श्रवन।
कटि कटि मेखल धार, अंगुर मुन्दरि कटक कर ॥ ४६ ॥
बेड़ी पग पहराय, दई परीषह घोरई।
उठो दाह अधिकाय, भूषण अगन संजो[illegible]
पांडव पांच प्रवीन, देह [illegible] ॥ ४७ ॥
[illegible] करे। नेम [illegible] निज देखके।
[illegible]तीस मन्[illegible]। सलिल आलीन, भावत बारह भावना ॥४८॥

कड़खा छन्द

पांच परचंड बलबंड पांडव महा जिन हतो दुर्योध राजा।
ध्यान संधान धनुबान बरभावना हानिदुर्भाव भारत सुकाजा॥टेक
दारु तृण भार ज्यों काई बलती लखी अनल आभर्ण जब अरि लगाई। नीर उत्तम क्षमा सींच सियरी करत कोपकी अगन नहिं जगन पाई। देह इह खेह मयनेह यासों नहीं अनल सों जलत रिपु दगल निकाई। गेहके दहनते दहत नहिं गगनभी रूप उपजोग मय हम सदाई॥ पांच परचंड ॥ ४९ ॥
कायस्थिर मानिये राय जयरथ यही ज्ञान अभिमन्यु कुंवरे विदारो। भरम और वसी कर्मकी जोटसों कोट विकल पंचकाव्यूह

सारो ॥ देह जल बुन्द छाय तरु जोबन धान धन बिषय धन सम बिथारो । जान निज रूप थिर अथिर पुद्गल बिभो चूर संदेह दल अरि संहारो ॥ पंच परचंड ॥ ५० ॥

दुरको दौर वो द्रोण दुर्जन यही छौनी जसरन पर सरन माने । धार दुरध्यान धनुबान अबबेकले मानके उदै गुन सुजन सहाने ॥ मत्त गजराज भट वीर सायुध घने रहत चहूंओर जहां सावधाने । जन्तुको गहत तिनमाहिं यमराज ज्यों विष्ट तकी आयु भोग आपुभाने ॥ पंच परचंड० ॥ ५१ ॥

अथ अशरणानुप्रेक्षा

सिंह जिम हनत मृग साव बनमाहिं त्यों जीवको घोर यम राज आने । आउ बिन कालते होत रच्छा नहीं कोट जो इन्द्र उपकार ठाने । नाहिं संसारमें शरन कोई अपर छूट चिद्रूप जो कोई जाने । धार अनभो खडग मूढ़ सुबिबेक गाहि द्रोण दुर ध्यान बिधाने ॥ पंच परचंड० ॥५२॥

अथ संसारानुप्रेक्षा

पंचप्रकार संसार मूरचेलगे संच परपंच सों कुमति लीने । दर्व अरु खेत गनि काल भव भावही बंध के जोर नहीं जाय छीने ॥ होहु चिद्रूप थिर अथिर सो किम रमें तुम जग अनन्त परिवर्तन दिने । हाथ गह एम वैराग भारि गदा मोरचे तोर मैंदान कीने ॥ पंच परचंड० ॥ ५३ ॥

अथ एकत्व अनुप्रेक्षा

दूत भ्रम मय अनेकत्व अरिको महागहत परिछलाहि लच्छ चीन्हे । बन्धुसुत मित्र परिवार मेरो कहत मांगे तामें सुकर कर तार दीन्हे ॥ जनमरे मरण अरु लाभ सुख दुख सबै आप उपजाय सिर आप लीन्हे । दूतको डाटि इम होय चिद्रुप थिर एकतालीन स्वाधीन कीन्हे । पंच परचंड० ॥५४॥

अथ अन्यत्वानुप्रेक्षा ।

जीव किरिया करम भिन्न नहिं अरिधुजा कुमतके रूप यह है अभेदी । लगत मन पौन फर हरत इन्द्री विषै जाइ नहीं भेद बुध बिन उछेदी ॥ भिन्न यह देह जिम चीरिवा हर लगो भिन्न एक इम किम होय खेदी । सर्व सौ अन्न इम जान तोरी धुजा ध्वसत शिव उर चिद्रूप वेदी ॥ पंच परचंड० ॥५५॥

अथ अशुचियानुप्रेक्षा ।

देह चतुरंग मय अशुच अरु सैन है मास अघ मेघ अस्थे विथारी । चर्म कच कवच दिठ विविध नख सम मुठी सघन संघट चहूं ओर भारी ॥ होत जिस लगत शुभ दुरगंध मय सोच की शत्रु अपवीत्र सारी । देहकी प्रीत विपरीत दुर्जन चमू विरत बरछी सुचित धर विदारी ॥ पंच परचंड० ॥ ५६ ॥

अथ आस्रवानुप्रेक्षा ।

लारित अरि सैनपति भेष आश्रव धरे भेव सतावने सुभट जोगा । पंच मिथ्यात्व पुनद्वादशे अविरत कषाय पचीस शतक जोगा ॥ नाव छिद्रत बैठ बुड़त जिम जलधमें जीव भव मांहि तिम कर्म जोगा । रोकियो सैनपति गुरुज संयम लिये भजत चिद्रूप तज विषय भोगा ॥ पंच परचंड० ॥ ५७ ॥

अथ संवरानुप्रेक्षा ।

सैनपति रोधते आस लहे जीतकी मोख कौमीत सम्वर मिलानो । संग जिस सुर निज अंग सत्तावने गुपति तृय धर्म दश विध बखानो ॥ पंच तहँ समितवर भावना द्वादशे पंच व्रत बीस दुई परीषह हानो । इष्ट पद ध्यान निर छिद्र नौका चढ़े घोर संसारको पार जानो ॥ ५८ ॥

अथ निर्जरानुप्रेक्षा ।

रतन त्रय जटित दिढ़ मूढ़ तब कर गही निर्जरा रूप तर

बार पाकी । ज्ञानके स्यान चढ़ भई अति तिक्षनी पाक अवि-
पाक दुरधार जाकी ॥ पूर्व कृत कर्म दुर सुर प्यादे महा दुरित
के दासते सु कृत आकी । नीर जिम सोखिये सेख सरवर
सबै मार घमसान तिम करे खाकी ॥ पंच परचंड० ॥ ५९ ॥

अथ लोकानुप्रेक्षा

तबही जासु समन बांध हाथिलयों लोककी भेद तिन सब
बतायो । पाई छकराय कर युगम कटी पै धरे पुरुष आकार
यहलोक जायो ॥ आदि अरु अन्तसों रहित कृत भन्नही उर्द्ध
अध मद्धि त्रिय भांत गायो । हारके भ्रमनंत जगत वे चित्र
लख धार निज ध्यान शिवराह पायो ॥ पंच परचंड० ॥ ६० ॥

अथ बोधदुर्लभानुप्रेक्षा

क्रोध धनुष को धरे भ्रमत चहुं गत विषै प्रगट दुर्बोध यह
कर्ण जोधा । भव्यता मनुष्य पद शुकुल में जनम ले विमल
जिन धर्म धर विषै रोधा ॥ तदपि निजरूप चिद्रूप कों जान
वो कहत एक दुर्लभ सु बोधा । बौध के वान हत कर्ण दुर्बोध
को होय थिर चेत कुरु खेत सोधा । पंच परचंड० ।६१।

अथ धर्मानुप्रेक्षा

विविध पाखंड मय धरम मिथ्या धरे कौरवा रूप सौ भ्रात
क्रूरा । लोभ में अन्ध मति धुधंल रते फिरें भरमके भाव सों
अधम सूरा ॥ उधर संसार तें धरत शिवपद विषै धरम सों
सत्य जिन धर्म पूरा । शुद्ध निज धर्म अविकल्प मुदगर लिये
शत्रु चक चूर कर करे दूरा । पंच परचंड० ॥६२॥

भाई धर्म भावना ध्यान दृढ़ता लई भटनकी रीत यह स-
हज लाई । देह सों नेह तज गेह शिव के चले पाय पियुष
विष कौ नसाई ॥ रोक मन जोग को शुद्ध उपयोग लेखपक
के रथ चढ़े तीन भाई । ध्यान धर शुद्ध अधिकरण आराधके
सुथिर है अपूरब करण ठाई । पांच परचंड० ॥६३॥

श्रा पुत्र परहित अनिवृत करणे लगे तेरह नाम की दुर कीनी। मोह दगछत अउवीस छेदी जवै ज्ञान आवरण की पंच छीनी ॥ दर्शनावरण नो पंच गानि। विघन की त्रेसठे प्रकृति इम चूर वीनी। प्रथम त्रय भ्रात ते छिन्न कषाय ते ज्ञान लह अन्त मो जीत लीनी। पांच परचंड० ॥६४ ॥

मोह दुर्योध को खोज सवही गयो जीत के मितवादीत्र वाजे। ग्यान की आन परमान जगमें फिरी राज के तेजते तिहूं लोक लाजे ॥ चार अरि अन्त के पुन अघाती हते अंत कृत केवली नाम साजे। पंच लघु वर्ण उचार थित के विषै सिद्ध है शिव पुरे जा विराजे। पंच परचंड० ॥३५॥

ध्यान निर्वाण कल्याण उत सों तवै जान अघ नासकर सुरों साजा। भनत इम बूल शिशु सुनत जैनी सदा भाव संग्राम जिन राज छाजा ॥ पंच परचंड बलवंड पांडव महा जिन हतो मोह दुर्योध राजा। ध्यान संधान धनुवान बर भावना हानी दुरभाव भारत सु काजा ॥ ६६ ॥

दोहा

जुग भ्राता मद्री तनुज, किंचित धर शुभ भाव।
सरवारथ सिद्धे गये, लह उतकृष्टी आव। ६७।
पुन चयके नर लोक में, उत्तम नरभव धार।
सकल ध्यान ते तप सहित, लह है शिव पद सार।६८।
घट में भारत इह विधी, ज्ञानवन्त के होत।
कायर जड़ जाने नहीं, ज्यों जन मंद उदोत ॥ ६९ ॥
अध्यातम भारत महा, बूल चंद परकास।
भवि जन सुन मन करन दे, लहत परम सुख रास।७०।

इति अध्यातम भारत सम्पूर्णम्

चौपाई

महा अर्जका राजे मती। कुन्ती द्रुपद सु भद्रा सती।
समकित सहित चरनले संग। मन बच क्रम छेदो तिय लिंग ७१
दुर्धर तप धारो चिर काल। अन्त समै सन्यासहि पाल।
सुरग सोलवें उपजो एव। पुरुष लिंग सामानिक देव ॥७२॥
द्वाविंशत सागर पर जंत। भोग सुखनको चयके अन्त।
नर लोके पुनि नर पद धार। तप तपके लहहैं शिव सार।७३।
पुन नेमीश्वर जिन जगदीश। विविध विषय बर बिहर मुनीश।
रेवतका चल पहुंचे ठाउ। एकहि मास रही जब आउ ॥७४॥
रहत जोग धुन बिक्रय ठये। परजंकासन संगत भये।
गुन थानक अंतिम अब धार। प्रकृति पचासी कीनी छार।७५।
सुकल सप्तमी तिथ सुचि मास। नेमीश्वर पहुंचे शिव बास।
पंच शतक परि अधिक छतीस। मुकत गये जिन संग मुनीश।७६
तबही सुरासुर आवत भये। कल्याणक पंचम कर गये।
जैनी जिम गुण बरणे एव। त्रिविध त्रिकाल नमों जिन देव ७७

सवैया तेईसा।

भीम भयो नगविंध्य विषै वर बाणिक वर्ज गुणा गुण धामा।
देव गजध्वज चिन्त गती खग जाय महिन्द ठयो शुभ नामा ॥
भूप परीजित अच्युत नायक औ सु प्रतिष्ठि भयो नृप तामा।
सो अहि मिंद जयन्त जयो जग नेम जिनेश भये अभिरामा ७८
जे द्विज जीव सदीव सो बोधत घोर तपैं तप अच्युत देवा।
आय भये वृष नंदन भीम सु पारथ नकुल और सहदेवा ॥
ध्यान धरें त्रय भ्रात भये शिव दो सरवारथ सिद्धत देवा।
ते मुनि पंच करो हमको थिर साधनको शुभ श्री शिव सेवा ॥७९॥

इति श्री सम्यक्त्वशीलाभरण भूषित जैनीनामांकितायां लाला बुलाकीदास विरचितायां भारतभाषायां पांडवपुराणे सहज अयंकेवलोत्पत्तिसिद्धगमन सर्वार्थसिद्धिप्राप्ति वर्णनं नाम षटविंशति प्रभावः २८

अथ ग्रंथ कर्त्तालघु ताई वर्णन्

नेमनाथ स्तुति ॥ सवैया इकतीसा ॥

धर्मके धुरन्धर सु नेमि नेम नेमीश्वर, दोष दुख दाहन को दावानल रूपहै । काम बेल मंडपको कुंदन कुदाल दंड, मंड़ित अखंड शील पंडित अनूप हो ॥ मोख मग मंडन हो रोषके विहन्डन हो, बैन अवलम्बन दे काढ़न भव्य कूप हो । कीजे उपकार भव सागरको पार अब, दीजे सुखास प्रभु चारित के भूप हो ॥ ८० ॥

पद्धड़ी छन्द

कहँ पांडव चरित बिशाल चार । श्री गौतमादि भाषत सुसार ।
कहँ मो प्रबोधयह अलप छीन । बलहीन तदपि वर्णन सुकीन ८१॥
जिम बाल गगन उड़गन करोत । जलसिन्धु प्रमाणक भेषपोत ।
तिन ग्रंथ करो निजबुद्ध जोग । नहिं दोष ग्रहत वर दच्छ लोग ॥८२॥
जेनर असंत परदोष संच । तिन संग न हमको काज रंच ।
विषमय पियूषते नर कराहिं । लहि पाप महा मरि नरक जाहिं ८३
जे साधु महा परकाज रत्त । पर यद्यपि देखहि दोष सत्त ।
नहिं धारहि तदपि बिकार भाव । नेही उमहा जस हम सहाव ८४
जिम शरदचन्द उडवंश बीच । अति शोभा करत दे निज मरीच ।
परिगुन समूह तिन सन्त देख । निर्दोष करत उपमा बिशेख ॥८५॥
रचके विचित्र पावन पुरान । नहिं वंछो नर सुखसुर निधान ।
इस भक्ति तनो फलहो सुएहु । पद मुक्त परम सुखरास देहु ।८६॥
पुनि रुक्ति जुक्ति लच्छन सुछन्द । जहँ भूलो वर्णत वर्ण बिंदु ।
तहँ शोध पढ़ो जे बुध अनंद । नहिं निन्द करत ते सुगुन वृंद ८७
अलंकार गनागन छन्द भेद । नहिं जानूं रंचक अलप वेद ।
कछु भूल देख इह ग्रंथ मद्ध । मति कोईकरे कवि विपुलबुद्ध ८८

अथ मूलाचार्य वर्णन् ॥ सवैया इकतीसा ॥

संगनमें मूल संगी पद्मनंद नाम भये, ताके पद सकलादि कीरति बखानिये । कीरत भुवन तातें ताके भये चंदसूरि, कीराति

बिजय तासु पद परवानिये ॥ ताके पद शुभचंद सुयश आनंद कंद, पांडव पुरान परकाश कर मानिये । मतको उद्योत तास पायके बुलाकीदास भारत बिलास कियो भाषा कवि जानिये ८६

अथ बादशाही बंश वर्णनम् ॥ सवैया इकतीसा ॥

बंस मुगलानेमाहीं दिल्लीपति पादशाही, तिमिरलिंग मीर सुत बाबर सुभयो है । ताको है हिमायुं सुत ताहिते अकबर है, जहांगीर ताकेधीर शाहजहां ठयो है ॥ ताज महल अंगना अगज उतंग महाबलो औरंगशाह शाहिनमें जयो है । ताकी छत्र छाह पाई सुमत के उदय आई, भारत रचाय भाषा जैनी यश लहो है ॥ ९० ॥

अथ ग्रंथकरता आशीर्वाद ।सवैया इकतीसा

जौलों रहे तारागन सदन भूर ईस को, सागर सु भूमि रहे द्युति भानु चंद की । भूमि वासी भवन वासी गिर गिरी वासी वसे, थिर जोत जौलों रहे शशि के बिमान की॥ गंगा आदि नदी नद कर्म भूम कल्प तरु, रहे आन जौलों जग बीतराग ज्ञान की । भारत सुखेत मांहि तौलों सुविकाश लहो, भारत बिलास भाषा पांडव पुरान की ॥ ९१ ॥

अथ ग्रंथ बाचक आशीर्वाद । सवैया तेईसा

जे नर भव्य भनाइ भने भनि भावन सों यह भारत भाषा ।
आदर धार लिखाय लिखे लिख देइ सुनाय सुनो सुन साखा ॥
शोध सुधाय सुधारि सुधारहि सत्य सुधारस को बुध चाखा ।
तेई नरिन्द्र सुरिंद्र महा पद पावहु है शिव के अभिलाखा ॥ ९२ ॥

अथ सरस्वती स्तुति । दोहा

जिन बदनी सदनी सुमत, अनुशरनी शिव शीव ।
जस जननी जैनी भनी, हरनी कुमत सदीव ॥ ९३ ॥

सवैया इकतीसा

बीरानन सरनी हरनी दुःख दोषन की, भरनी रस अनुभो देनी शिव भार्नी है । गौतम गुरु बरनी रमनी है चेतन की

कुमति की कतरनी पैनी परवानी है ॥ दुरत ते उधरनी धरना धन धर्मन की, तरनी भव सागरकी छैनी भै महानी है। सुमत सूर कीरनी रजनी कर वदनी, जननी हमारी जग जैनी सुख दानी है ॥ ९४ ॥

अथ धन्यवाद । दोहा

इह बिध भाषा भारती, सुन जैनुल दे माय।
धन्य धन्य सुत सो कही, धर्म सनेह बढ़ाय ॥ ९५ ॥
जननी जैनुल धन्य है, जिन रचवाय पुरान।
सुगम करो भाषा मई, समझें सकल सु जान । ९६ ।
अरुन रतन गुरु धन्य हैं, जाके बचन प्रभाव।
संस्कृत ते भाषा रचो, पाय शब्द अरथाव। ९७।
वीर नाथ जिन धन्य है, जाके चरन प्रसाद।
इह पुरान पूरन भयो, सुख दायक शिव आद। ९८।

अथ ग्रंथ छन्द प्रमाण कथन॥ सवैया इकतीसा

छपै एक करखे अठारे इकतीसे बीस, चालीसरू ये सोरठे ई परमानिये। छयालीस तेईसे पाधड़ी पचासी गन, वेही भुजंग छन्द जैनी जगतानिये ॥ तीन सौ तिरासी अडिल्ल नौ सौ तीस दोहा भनि, अठइस सतानवें सु चौपाई बखानिये। सारे इक ठौरे कर गिनिये बुलाकी दास, पंच सौ हज़ार चार पद्य सर्व आनिये ॥ ९९ ॥

अथ श्लोक संख्या। दोहा

संख्या श्लोक अनुष्ठ ही, गनिये ग्रंथ लिखाय।
षट् सहस्र षट् सतक पुनि, पचपन अधिक मिलाय।१००।

अथ संवत्सर संख्या। दोहा

सम्बत सत्रह सौ चउन, सुदि अषाढ़ तिथि दोज।
पुष्प रिष्य गुरु बार को, कीनो भारत चौज ॥ १०१॥

इति श्री बुलाकीदास कृत भाषा पांडव पुराण महाभारत नाम सम्पूर्णम्

चौपाई

महा अर्जका राजे मती । कुन्ती द्रुपद सु भद्रा सती ।
समकित सहित चरनले संग । मन बच क्रम छेदो तिय लिंग ७१
दुर्धर तप धारो चिर काल । अन्त समै सन्यासहि पाल ।
सुरग सोलवें उपजो एव । पुरुष लिंग सामानिक देव ॥७२॥
द्वाविंशत सागर पर जंत । भोग सुखनको चपके अन्त ।
नर लोके पुनि नर पद धार । तप तपके लहहैं शिव सार।७३।
पुन नेमीश्वर जिन जगदीश। विविध विषय वर बिहर मुनीश।
रेवतका चल पहुंचे ठाउ । एकहि मास रही जब आउ ॥७४॥
रहत जोग धुन विकृय ठये । परजंकासन संगत भये ।
गुन थानक अंतिम अब धार । प्रकृति पचासी कीनी छार।७५।
सुकल सप्तमी तिथ सुचि मास । नेमीश्वर पहुंचे शिव बास।
पंच शतक परि अधिक छतीस । मुकत गये जिन संग मुनीश ।७६
तबहीं सुरासुर आवत भये । कल्याणक पंचम कर गये ।
जैनी जिम गुण बरणे एव । त्रिविध त्रिकाल नमों जिन देव ७७

सवैया तेईसा ।

भीम भयो नगविंध्य विषै वर बाणिक वर्ज गुणा गुण धामा ।
देव गजध्वज चिन्त गती खग जाय महिन्द ठयो शुभ नामा ॥
भूप परीजित अच्युत नायक औ सु प्रातिष्ठि भयो नृप तामा ।
सो अहि मिंद जयन्त जयो जग नेम जिनेश भये अभिरामा ७८
जे द्विज जीव सदीव सो बोधत घोर तपैं तप अच्युत देवा ।
आय भये बृष नंदन भीम सु पारथ नकुल और सहदेवा ॥
ध्यान धरें त्रय भ्रात भये शिव दो सरवारथ सिद्धत देवा ।
ते मुनि पंच करो हमको थिर साधनको शुभ श्री शिव सेवा ॥७९॥

इति श्री मन्महाशोलाभरण भूषित जैनीनामांकितायां लाला
बुलाकीदास विरचितायां भारतभाषायां पांडवोपसर्ग सहन
त्रयंकेवलोत्पत्तिसिद्ध गमन द्वै सर्वार्थ सिद्धो प्राप्ति
वर्णन नाम षटविंशति प्रभावः २८

अथ ग्रंथ कर्त्ता लघु ताई वर्णन

नेमनाथ स्तुति ॥ सवैया इकतीसा ॥

धर्मके धुरन्धर सु नेमि नेम नेमीश्वर, दोष दुख दाहन को दावानल रूपहै । काम बेल मंडपको कुंदन कुदाल दंड, मंडित अखंड शील पंडित अनूप हो ॥ मोख मग मंडत हो रोषके विहन्डन हो, बैन अवलम्बन दे काढ़न भव्य कूप हो । कीजे उपकार भव सागरको पार अब, दीजे सुरवास प्रभु चारित के भूप हो ॥ ८० ॥

पद्धड़ी छन्द

कहँ पांडव चरित विशाल चार । श्री गौतमादि भाषत सुसार ।
कहँ मो प्रबोधयह अलप छीन । बलहीन तदपि बर्णन सुकीन ८१॥
जिम बाल गगन उड़गन करोत । जलसिंन्धु प्रमाणक भेषपोत ।
तिन ग्रंथ करो निजबुद्ध जोग । नहिं दोष ग्रहत वर दक्ष लोग ॥८२॥
जेनर असंत परदोष मंच । तिन संग न [illegible] रंच ।
विषमय पियूषते नर कराहि । लहि पाप महा मरि नरक जाहिं८३
जे साधु महा परकाज रत्त । पर यद्यपि देखहि दोष सत्त ।
नहिं धारहि तदपि बिकार भाव । तेही उमहा जस हम सहाव ८४
जिम शरदचन्द उडवंश बीच । अति शोभा करत दे निज मरीच ।
परिगुन समूह तिन सन्त देख । निर्दोष करत उपमा बिशेख ॥८५॥
रचके विचित्र पावन पुरान । नहिं वंछो नर सुखसुर निधान ।
इस भक्ति तनो फलहो सुएहु । पद मुक्त परम सुखरास देहु ।८६॥
पुनि रुक्ति जुक्ति लच्छन मुछन्द । जहँ भूलो वर्णत वर्ण बिंदु ।
तहँ शोध पढ़ो जे बुध अनंद । नहिं निन्द करत ते सुगुन वृंद ८७
अलंकार गनागन छन्द भेद । नहिं जानूं रंचक अलप वेद ।
कछु भूल देख इह ग्रंथ मद्ध । मति कोईकरे कवि विपुलबुद्ध ८८

अथ मूलाचार्य वर्णन ॥ सवैया इकतीसा ॥

संगनमें मूल संगी पद्मनंद नाम भये, ताके पद सकलादि कीरति बखानिये । कीरत भुवन तातें ताके भये चंदसूरि, कीरति

बिजय तासु पद परवानिये ॥ ताके पद शुभचंद सुयश आनंद कंद, पांडव पुरान परकाश कर मानिये । मतको उद्योत तास पायके बुलाकीदास भारत बिलास कियो भाषा कवि जानिये८६

अथ बादशाही बंश वर्णनम् ॥ सवैया इकतीसा ॥

बंस मुगलानेमाहीं दिल्लीपति पादशाही, तिमिरलिंग मीर सुत बाबर सुभयो है । ताको है हिमायुं सुत ताहिते अकबर है, जहांगीर ताकेधीर शाहजहां ठयो है ॥ ताज महल अंगना अगज उतंग महाबलो औरंगशाह शाहिनमें जयो है । ताकी छत्र छाह पाई सुमत के उदय आई, भारत रचाय भाषा जैनी यश लहो है ॥ ९० ॥

अथ ग्रंथकरता आशीर्वाद ।सवैया इकतीसा

जौलों रहे तारागन सदन भूर ईस को, सागर सु भूमि रहे छुले भानु चंद की । भूमि बासी भवन बासी गिर गिरी बासी बसे, थिर जोत जौलों रहे शशि के बिमान की॥ गंगा आदि नदी नद कर्म भूम कल्प तरु, रहे आन जौलों जग बीतराग ज्ञान की । भारत सुखेत मांहि तौलों सुविकाश लहो, भारत बिलास भाषा पांडव पुरान की ॥ ९१ ॥

अथ ग्रंथ बाचक आशीर्वाद । सवैया तेईसा

जे नर भव्य भनाई भने भनि भावन सों यह भारत भाषा ।
आदर धार लिखाय लिखे लिख देइ सुनाय सुनो सुन साखा ॥
शोध सुधाय सुधारि सुधारहि सत्य सुधारस को बुध चाखा ।
तेई नरिन्द सुरिंद्र महा पद पावहु है शिव के अभिलाखा ॥ ९२ ॥

अथ सरस्वती स्तुति । दोहा

जिन बदनी सदनी सुमत, अनुशरनी शिव शीव ।
जस जननी जैनी भनी, हरनी कुमत सदीव ॥ ९३ ॥

सवैया इकतीसा

बीरानन सरनी हरनी दुःख दोषन की, भरनी रस अनुभो देनी शिव भानी है । गौतम गुरु बरनी रमनी है चेतन की

कुमति की कतरनी पैनी पावानी है ॥ दुरत ते उधरनी धर्म धन धर्मन की, तरनी भव सागरकी छैनी भै महानी है । मत सूर कीरनी रजनी कर बदनी, जननी हमारी जग जैनी सुख दानी है ॥ ९४ ॥

अथ धन्यवाद । दोहा

इह विध भाषा भारती, सुन जैनुल दे माय ।
धन्य धन्य सुत सों कही, धर्म सनेह बढ़ाय ॥ ९५ ॥
जननी जैनुल धन्य है, जिन रचवाय पुरान ।
सुगम करी भाषा मई, समझें सकल सु जान । ९६
अरुन रतन गुरु धन्य हैं, जाके बचन प्रभाव ।
संस्कृत ते भाषा रचो, पाय शब्द अरथाव । ९७ ।
बीर नाथ जिन धन्य है, जाके चरन प्रसाद ।
इह पुरान पूरन भयो, सुख दायक शिव आद । ९८

अथ ग्रंथ छन्द प्रमाण कथन ॥ सवैया इकतीसा

छपै एक करखे अठारे इकतीसे बीस, चालीसरू ये सो ई परमानिये । छयालीस तेईसे पाधड़ी पचासी गन, वेही रु जंग छन्द जैनी जगतानिये ॥ तीन सौ तिरासी अडिल्ल नें सौ तीस दोहा भनि, अइस सतानवें सु चौपाई बखानिये सारे इक ठौरे कर गिनिये बुलाकी दास, पंच सौ हज़ार चा पद्य सबै आनिये ॥ ९९ ॥

अथ श्लोक संख्या । दोहा

संख्या श्लोक अनुष्ठ ही, गनिये ग्रंथ लिखाय ।
षट् सहस्र षट् सतक पुनि, पचपन अधिक मिलाय।१००

अथ सम्वत्सर संख्या । दोहा

सम्वत सत्रह सौ चउन, सुदि असाढ़ तिथि दोज।
पुष्य रिष्य गुरु वार को, कीनो भारत चौज ॥ १०१॥

इति श्री बुलाकीदास कृत भाषा पांडव पुराण महाभारत नाम सम्पूर्ण।